भूमिका

'गुर्जर इतिहास' जैसा यथा-तथ्य एव प्रमाणिक रूप से लिखा गया ग्रन्थ कोई एक दो वर्ष के प्रयत्न का परिणाम नहीं है, प्राय सभी प्राप्य ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर दीर्घकालीन गम्भीर अध्ययन, मनन और विवेचन के बाद एक तरुण तपस्वी ने बीस बरस की निरन्तर साधना तथा अध्ययन द्वारा इसकी रचना की है। ससार की एक महान जाति (गूजर) का इतिहास लिखने के लिये एक महान साधक की आवश्यकता थी, जातीय सौभाग्य एव देश के अभ्युदय के कारण अपने बीच हमने एक ऐसा पथ प्रदर्शक 'प्रकाश स्तम्भ' पाया जिसके जीवन का प्रत्येक क्षण और शरीर का प्रत्येक कण जाति-जागरण और देश भक्ति मे व्यतीत हो रहा है।

अपनी साधनहीन अवस्था में भाई यतीन्द्रकुमार वर्मा ने जो महानतम कार्य सम्पादित किया है, वह आने वाली सन्तति को सदियों तक सत्प्रेरणा प्रदान करेगा, क्योंकि इस इतिहास का एक-एक पृष्ठ उपदेश एव जीवन प्रद ऐतिहासिक घटनाओं और तत्वों से परिपूर्ण है।

आज की इस बीसवीं सदी मे कौन विश्वास कर सकता है कि जाति तथा देश के लिये घर बार फूंक, सर्वस्व अर्पण करके एक नवयुवक आत्म प्रशसा से लाखों कोस दूर बैठा हुआ सतयुग के यतियों के समान भगवान बुद्ध के सच्चे भक्तों की भांति आत्मत्याग और सर्वस्व दान का आदर्श प्रस्तुत कर रहा है, जो आज के ससार मे अभूत पूर्व है। दिव्य साधक अपनी साधना का कोई बदला नहीं चाहा करते, वे तो कृष्णार्पण कर्म करके शाश्वत आनन्द प्राप्त कर लिया करते हैं, हमारे कुवर यतीन्द्रकुमार भगवान कृष्ण के वशज हैं उन्होने जो मर्यादा आज के युग मे स्थापित की है, वह इतिहास सम्बन्धी तथा अन्य प्रयत्नों द्वारा आगामी सन्तति के गौरव में चार चाद लगा देगी।

इस महान ग्रन्थ की सार्थकता सहृदय पाठकों से छिपी नहीं रह सकती, यह तसवीर खुद बोलती है। तत्कालीन एव आधुनिक ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर जिस अध्यवसाय और पुरुषार्थ से यह

तसवीर तैयार की गई है. वह किसी साधारण चितेरे का काम न था। महान क्षत्रिय जाति के विकास के समय की, जो निर्मूल भ्रान्तियां आज के अनेक इतिहासकारों ने फैला रक्खी थीं, उसका निराकरण इस इतिहास द्वारा इसी प्रकार होगया है, जिस प्रकार सूर्योदय होने पर अन्धकार का।

वस्तुत मध्यकालीन और उससे पूर्व भी इतिहास काल के प्रारम्भ से ही भारत का इतिहास क्षत्रियों से ही सम्बन्ध रखता है और इसके बाद भी भारत के ऐतिहासिक रंगमंच पर उनका प्रमुख स्थान रहा है। मध्यकालीन भारत में ये ही शासक कुल गुर्जर-राजपूत नाम से इतिहास में प्रसिद्ध होते हैं। राजवंश स्थापना की होड में देश की सुरक्षा के साथ उत्कर्ष प्राप्त करते हुए प्राचीन क्षत्रिय कुलों, परिवारों ने अपने को एक निश्चित परम्परा के साथ बांध कर नवीन नामों से प्रसिद्ध किया, जिनकी परम्परा आचार-विचार, भाषा, वैभव, उत्कर्ष, सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक, साहचर्य एवं भावनाएं समान थीं और तत्कालीन राष्ट्र रूपी शरीर को बचाकर यह इतिहास में अपने नवीन नामों से प्रसिद्धि प्राप्त कर गये। उनके कुल-वंश, गोत्र एवं प्रवर तथा प्राचीन राजन्य (क्षत्रिय) वंशों की परम्परा से भी यही सिद्ध होता है। क्षत्रियों में विभिन्न जाति उपजाति एवं कुलों की प्रसिद्धि में मानव जीवन की प्राकृतिक एवं सरल स्वाभाविक आकांक्षा सन्निहित है। प्रत्येक यह चाहता है कि औरों की अपेक्षा मेरा मानव गौरव अधिक समझा जाय और इसी के लिये अपने वंश का संगठन समान कुलों से करके अपने को नवीन नाम से प्रसिद्ध करता है। अपनी महत्वाकांक्षा के साथ गौरवपूर्ण कार्यों द्वारा विशिष्ट प्रदर्शित करना ही इन क्षत्रिय जाति की अनेक जाति उपजातियों की उत्पत्ति का खास कारण है, किन्तु आधुनिक इतिहास लेखकों के लिये यह महान क्षत्रिय कुल अपनी वैदिक एवं इतिहास कालीन (रामायण महाभारत) अपनी गौरव गाथाओं को छोडकर संसार से सदैव के लिये लुप्त हो जाता है और शक, यूची, सीथियन (हूण) आदि से तत्कालीन क्षत्रियों की उत्पत्ति की कथा घड ली जाती है। प्रत्येक विदेशी विद्वान इतिहास लेखक और उनकी देखा देखी आधुनिक भारतीय इतिहास के विद्वान राजपूत, गुर्जर आदि के सम्बन्ध में अपना एक नया सिद्धान्त लिये बैठा है।[1]

[1] आधुनिक इतिहास लेखक सर रमेशचन्द्र दत्त अपने civilization

प्राचीन भारत के गौरवशाली क्षत्रियों के लिये यह कैसा असह्य मिथ्या कलंक है ? उनके वास्तविक आत्मसम्मान को उनमें भुलावा देने के सिवाय इसका और क्या अर्थ हो सकता है ? फिर भला हम क्षत्रियों में अपने पूर्वजों की गौरव गाथाओं में से नवजीवन संचार का बल ही कहाँ रह जाता है ?

यह प्रसन्नता की बात है कि इस इतिहास ग्रन्थ में इस सम्बन्ध में प्रारम्भ से अन्त तक काफी विवेचन किया है और गुर्जरों, राजपूतों को प्राचीन क्षत्रियों का वास्तविक उत्तराधिकारी सिद्ध करते हुए विदेशी मानी जाने वाली दलीलों की निस्सारता प्रमाणित करते हुए भ्रान्ति-पूर्ण सिद्धान्तों, कल्पनाओं का सफलतापूर्वक निराकरण किया है। वास्तव में राजपूत, गुर्जर, मरहठा, जाट, अहीर आदि आधुनिक क्षत्रिय जातियां बिना किसी सन्देह के वैदिक क्षत्रियों के वास्तविक उत्तराधिकारी

---

in Ancient India नामक ग्रन्थ में भाग २ पृष्ठ १६४ पर लिखते हैं कि "आठवीं शताब्दि से पूर्व राजपूत जाति आर्य हिन्दू नहीं समझी जाती थी। देश के साहित्य तथा विदेशी पर्यटकों के भ्रमण वृत्तान्तों में उनके नामों का उल्लेख हमें नहीं मिलता और न उनकी किसी पूर्व संस्कृति के चिन्ह ही देखने में आते हैं। डाक्टर एच० एच० विलसन ने यह निर्णय किया है कि ये राजपूत उन शक आदि विदेशी आक्रमणकारियों के वंशधर हैं, जो विक्रमादित्य से पहले सदियों तक भारत में झुण्ड के झुण्ड आये थे।"
इसी प्रकार इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान स्मिथ, अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'अर्ली हिस्ट्री आफ इण्डिया' पृष्ठ ३२१-३२२ में यह मानते हैं कि "प्राचीन लेखों में हूणों के साथ गुर्जरों का भी जो आजकल की गूजर जाति है, और हिन्दुस्तान के उत्तर पश्चिमी विभागों में फैली हुई है, नाम मिलता है। अनुमान होता है पुराने गूजर बाहर से आये हुए थे, उनका श्वेत हूणों से निकट सम्बन्ध होना सम्भव है। इन गुर्जरों ने अपना राज्य स्थापित कर आबू से ५० मील उत्तर पश्चिम में अपनी राजधानी भीनमाल को बनाया। समय पाकर भीनमाल के प्रतिहार गुर्जर राजाओं ने कन्नौज को जीत कर उत्तर भारत में अपने साम्राज्य की स्थापना की। भड़ोंच का छोटा गुर्जर राज्य भीनमाल के बड़े राज्य की शाखा थी।

जनरल कनिंघम ने अपनी 'आर्चियालाजिकल सर्वे आफ इण्डिया' की रिपोर्ट जि० २ पृष्ठ ७० में गूजरों को यूची कुशान लोगों में स्वीकार करते हुए इन्डो सीथियन समूह का माना है। वे गूजरों का सम्बन्ध कुशान, यूची

हैं। विदेशी विद्वान पौराणिक गाथाओं, कथानकों एवं चारण गाथाओं में से वास्तविक खोज न निकालने के कारण भारी भ्रम में पड़ गये इस समय और इससे पूर्व भी वस्तुतः क्षत्रिय जाति का इतिहास ही समूचे भारत का इतिहास है। उनकी परम्परा सारे भारत की परम्परा है। इनकी जागृति में सारे देश का निर्माण है। महाभारत में यथार्थ ही कहा है—

"सर्वेयोगा राजधर्मेषु युक्ता, सर्वेधर्मा राजधर्मेषु दृष्टा।
सर्वेविद्या राजधर्मे प्रयुक्ताः, सर्वादीक्षा राजधर्मेषु चोक्ताः॥"

जिस जाति में भगवान श्रीकृष्ण, मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम जैसे महान् अवतार पुरुष उत्पन्न हुए हैं, उनके वंश समाप्त हो जाय यह सर्वथा निर्मूल कल्पना है।

प्रसङ्गवश मेरा यह कहना अत्युक्तिपूर्ण न होगा कि गुर्जर (गूजर) जाति समस्त क्षत्रिय वंशों में अग्रणीय है। महिमा तो सभी नक्षत्रों की है किन्तु चन्द्रमा का महत्व ईश्वर प्रदत्त है। उसे कम करना मनुष्य के वस की बात नहीं। गुर्जर जाति ने अपने प्रारम्भिक विकास काल में देश तथा राष्ट्र निर्माण के लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर किया है। *अरब के शक्तिशाली खलीफाओं की सेनाओं से युद्ध करते हुए* सर्वस्व की बाजी लगाकर आत्मत्याग और बलिदान का अपूर्व आदर्श उपस्थित किया है। मुगल साम्राज्य काल और इसके बाद अंग्रेजी

या पूर्वी तातार के खोचारी वंश से मानते हैं, जिनके प्रधान ने १०० वर्ष ई० पूर्व काबुल और पेशावर का देश जीत लिया था।

डाक्टर भण्डारकर, सर जेम्स केम्पबेल तथा पन्डित भगवान लाल इन्द्रजी आदि विद्वान गूजरों को खजरों की एक शाखा अथवा मध्य एशिया की एक जाति 'खजर' लोगों में से मानते हैं। बम्बई गजेटियर भाग ६ जिल्द १ में वे लिखते हैं कि 'भारत में गूजरों के प्रारम्भिक इतिहास के विषय में जो कुछ जाना गया है उससे पता चलता है कि पांचवीं सदी के अन्त में या छटी शताब्दी के प्रारम्भ में यहां आये।" इससे ज्ञात होता है कि गूजर जुवान, जवान या अवाराज और ऐफ्थेलिटस, याटस या श्वेत हूणों के साथ भारी तादाद में आये और यह उन्हीं का महत्वपूर्ण विभाग था। गूजरों का छटी शताब्दी के प्रारम्भ में भारत में आना किस प्रकार से सम्मत है, यह खजरों के इतिहास से ठीक प्रकार से मालूम हो जाता है। एशिया के विभिन्न भागों में खजर शब्द विभिन्न मिलते जुलते शब्दों में व्यवहार में

शासन के प्रारम्भ काल १८५७ ई० के स्वतन्त्रता संग्राम एवं अन्य समय समय पर होने वाली राष्ट्रीय महत्त्वपूर्ण क्रान्तियों में खास भाग लेकर देश के प्रति अपना कर्तव्यपूर्ण किया है। हिन्दू और मुसलमान गूजर एक झन्डे के नीचे गूजर महासभा के अन्तर्गत समय समय पर एकत्रित होते रहे हैं। उनमें एकता, आत्मसम्मान तथा राष्ट्रीय हितों की रक्षा की भावना समान रूप से है, धार्मिक असहिष्णुता से वे कोसों दूर हैं। उन्होंने सेना में पहले पंजाबी मुसलमान तथा सिक्खों के साथ और बाद में राजपूतों के साथ रहते हुए इटली, मेसोपोटामिया, सुमालीलैन्ड, उत्तर पश्चिमी भारत की सीमा पर एवं काश्मीर में अपूर्व वीरता प्रदर्शित की है।

देश के संकट काल में जिस जाति ने अपना सर्वस्व होम किया हो, जिसने राष्ट्र निर्माण में अपने सुख का बलिदान दिया हो, वह जाति इतिहास में सदा अमर रहती है। आगामी सन्तति अपने पूर्वजों के इतिहास से ही तो जीवन प्राप्त किया करती है। मनुष्य की अपनी व्यक्तिगत भावनाएँ उसकी निजी धारणाओं से निर्मित होती हैं। उसमें अपनी दुर्बलतायें और आसक्तियां होती हैं। उत्थान के बाद पतन अवश्यम्भावी नहीं है। जातियों में पतन और अवनति का प्रादुर्भाव हमारी व्यक्तिगत चरित्र की हीनता, विलासता और विषयासक्ति से होता है। पूर्वजों की महिमा को पढ़ कर जातिया विलास वैभव की

लाया जाता है। चीन में कोसा, रूस में स्वालियास, वेजेन्टाईनो में चोजर या खोजर, इसकी अन्य नामों की विविधता गूजरो से मिलती जुलती है। उनमें एक खास गजर है जो खजर का रूप उत्तरीय श्रासक समुद्र के पास व्यवहार में लाया जाता है। जो खजर यहूदी हो गये हैं उनका नाम बेसर है और काकेशस के लेसघिसयान में खजर के लिये घूसर शब्द का प्रयोग होता है। हावर्थ इन्साईक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के लेखक, क्लेप रोथ का अनुसरण करते हुए श्वेत हूणों को खजर मानते हैं। इस बात को स्वीकार करते हुए कि श्वेत हूण और खजर एक ही हैं इस सम्बन्ध में यह विचारणीय है कि खजरों की दो विभिन्न किस्म है एक सुन्दर किस्म के मक खजर जिन्हें इतिहासकारों ने बेजन्टाइन के मकट सिरोई या खजरोई कहा है और दूसरे काले खजर शरीर के छोटे थे और कुरूप काले ठीक आदिम भारतीयों की तरह से थे।

छाया से दूर होकर अपना व्यक्तित्व समष्टि में लीन कर देश जाति के लिये सर्वस्व समर्पण करते हुए अपने को अमर कर देती हैं। अतीत के प्रकाश में ही मनुष्य वर्तमान का निर्माण कर सकता है। अतीत का अध्ययन जाति के विकास को वह गौरव प्रदान करता है, जिसे हम 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' कहकर पुकारते हैं। इतिहास के बिना जाति उन्नतोन्मुख नहीं हो सकती। जिन जातियों की इतिहास में कमी होती है और ऐतिहासिक तथ्य यदि उनकी जातिय उन्नति में बाधक होते हों तो इतिहास को बदल कर नये सिरे से निर्माण करने के लिये महान् हिटलर ने एक स्थान पर लिखा है। सम्भव है इस महान व्यक्ति को अपने इतिहास में कुछ त्रुटि दिखाई दी होगी, किन्तु सौभाग्यवश आर्य जाति, क्षत्रिय वंश का इतिहास बड़ा गौरवपूर्ण है, जिसकी महिमा सभी देशी विदेशी विद्वानों ने मुक्त कण्ठ से की है। क्षत्रियों के त्याग बलिदान की कहानी से तो इतिहास के पृष्ठ रंगे पड़े हैं, किन्तु उनके आत्मीय सेवकों ने नमक हलाली और आत्मत्याग का जो आदर्श उपस्थित किया है, वह संसार में बे जोड़ है। क्या पन्ना धाय संसार के किसी दूसरे इतिहास में हो सकी है? अपने जीवन की आशाओं के केन्द्र सर्वस्व इकलौते बेटे को स्वामी पुत्र के लिये हसते २ कटवा देना मानवजाति के इतिहास में अकेली घटना है।

विश्व प्रसिद्ध दार्शनिक अब्दुर्रहमान इब्न मुहम्मद-इब्न-खल्दून अल-हद्रामी ने स्थायी राज्य की अवस्था एक सौ बीस या अधिक से अधिक एक सौ साठ वर्ष की मानी है? इससे बढ़कर

वे लोग मैदानों के उपयोगन थ और स्थानीय सैनिक रूप थे। श्वेत खजर या श्वेत हूण सुन्दर त्वचा, काले बाल और खूबसूरत थे। उनकी महिलायें नवी दसवीं शताब्दि में भी बैजन्टाइन और बगदाद में मिलती हैं। कैम्प रोय के अनुसार एनसाईक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के लेखक ने एक दृष्टिकोण उपस्थित किया है कि श्वेत खजर श्वेत जातियों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो कि ईस्वी सन् से पूर्व कैस्पियन समुद्र के आगे और बसते थे, जिनमें श्वेत बलगर थे। यह श्वेत (आर्य) जातियां यूरोप और एशिया की आर्य जातियों का माध्यम थी और यही लोग आक्रमणकारी बर्बर तातारों के समय-समय पर होने वाले हमलों को रोकते थे और उनके आक्रमणों प्रत्याक्रमणों में उनका विशेष भाग रहा। मारवाड़ की एक कहावत में सुन्दर जैसे हूण और गुजरात की कहावत में 'छोटा और पीला' 'हूणों जैसा' भी इसी बात

हमारा क्या गौरव हो सकता है कि हमारे पूर्वजों ने लाखों वर्ष इस पृथ्वी पर अखण्ड राज्य किया। सूर्य वंश के सम्राट मान्धाता अपने युग के प्रथम चक्रवर्ती सम्राट गिने गये हैं जिनके विषय में एक प्रसिद्धि है- "सूर्य जहां से उदय होता है और जहां अस्त होता है वह सम्पूर्ण देश यौवनाश्व मान्धाता का क्षेत्र कहलाता था।" इसी प्रकार राम, युधिष्ठिर के राज्य का स्वप्न सत्य है तो एकछत्र समस्त पृथ्वी के राज्याधिकारी होने का उनका नक्शा भी सही है।

वस्तुतः वर्ग विहीन समाज का नारा (Classless Societies) पश्चिम से उधार लिया हुआ है। वर्ग विहीनता तो पशुओं, पक्षियों एवं वृक्षों में भी असम्भव है। वास्तव में आर्य जाति, जो आज विभिन्न चार हजार जाति उपजातियों में बँटी हुई है वह फिर से चार वर्णों में आ जाय तो हमारी सामाजिक रोगों की चिकित्सा होकर मानव समाज के समस्त दुखों का हल हो सकता है। इसी के जागृत करने में आज के साहित्य का उपयोग होना चाहिये।

आज क्षत्रिय अनेक वर्गों-जातियों के रूप में बंटे हुए हैं यह देश तथा क्षत्रिय जाति का दुर्भाग्य है अगर संकुचित दृष्टिकोण त्याग कर राष्ट्रीयता का आदर्श स्थापित कर क्षत्रिय समाज संगठित हो जायं तो देश का कल्याण हो सकता है। गुर्जर, राजपूत, जाट एवं यादव मरहटा आदि जातियों ने विभिन्न देश की संकटपूर्ण परिस्थितियों में एक झन्डे के नीचे खड़े होकर देश, धर्म तथा जातियों को खतरे से बचाया है वही भावना अब भी जागृत होनी चाहिये। गुर्जरों का इन संघों में सैनिक

को प्रकट करता है। इन्हीं खजर—लोगों की हिन्दू किस्म गुर्जर है, जो कि छटी शताब्दि में खजरों के भारत में आने पर इस नाम से इतिहास में प्रसिद्ध हुए"।

सर जेम्स केम्पबेल की राय है "कि सिसोदिया या गहलौत राजपूत जो कि राजपूतों की महत्वपूर्ण शाखा है तथा दूसरे अन्य प्रसिद्ध वंश, अग्नि कुल के क्षत्रिय गुर्जर हैं। इसी प्रकार राजपूताने के प्रसिद्ध इतिहास टाड राजस्थान' की भूमिका में इतिहास के विद्वान सर विलियम क्रुक लिखते हैं.—'राजपूतों की उत्पत्ति के प्रश्न पर हाल के अनुसन्धानों से बहुत प्रकाश पड़ता है। वैदिक काल के क्षत्रियों और मध्य-युग के राजपूतों में इतनी भिन्नता देख पड़ती है कि दोनों का परस्पर सम्बन्ध जोड़ा ही नहीं जा सकता। अब यह स्पष्टतया सिद्ध हो गया है कि बहुत से राजपूत वंशों

कौशल त्याग अपूर्व रहा है, जिसका इस इतिहास मे विद्वान लेखक ने बड़े मार्मिक रूप से वर्णन किया है। आर्य, हिन्दू, सिक्ख, मुसलमान, जैन आदि सभी सम्प्रदायों—धर्मों में गूजरों का महत्व है। राजपूत मरहठों में गूजर राजवंश की महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा है। भारत तथा भारत के बाहर वे बड़ी संख्या में पाये जाते हैं, उनके अपूर्व सगठन पर सबको गर्व है। इस जातीय इतिहास को पढ़कर हमारे गूजर भाइयों के हृदय में नव-उत्साह का संचार होगा और महान् शक्तिशाली पूर्व पुरुषाओं के कार्यों का पदानुसरण करते हुए वे महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त कर देश की सर्वांगीण उन्नति में सहायक हों, यही कामना है। मैं स्वयं गूजरों का वफादार साथी हूँ। मेरे हृदय में इस जाति के प्रति बड़ी श्रद्धा है। इनका उत्थान ही क्षत्रिय जाति का उत्थान है और इसी प्रकार सारे विश्व का उत्थान है। मेरा हृदय वही है जो एक गूजर का हो सकता है। हिन्दू, जैन, सिक्ख और मुसलमान सभी गूजरों से मुझे बड़ा प्रेम है। मैं समझता हूँ कि

की उत्पत्ति शक या कुशान लोगों अथवा ई० सन् ४८० (सम्वत् ५३७) के लगभग गुप्त साम्राज्य का नाश करने वाले श्वेत हूणों से हुई है। हूणों से सम्बन्ध रखने वाले गुर्जरों ने हिन्दू धर्म स्वीकार किया और गुर्जरों के प्रमुख सरदारों से उच्च राजपूत वंशों की उत्पत्ति हुई। उन्हें जब राज्य वैभव प्राप्त हुआ और जब उन्होंने हिन्दू धर्म तथा हिन्दू समाज व्यवस्था को अपना लिया, तो स्वाभाविक रूप से ही उनका सम्बन्ध महाभारत और रामायण के प्रधान वीरों के साथ जोड़ने का प्रयत्न किया जाने लगा। इसी से सूर्य और चन्द्र से राजपूतों की उत्पत्ति होने की अद्भुत कल्पना की आख्यायों का उनके वृतान्त में समावेश हो गया।"

"राजपूत और क्षत्रिय नाम सामाजिक—अवस्था पर निर्भर था, कुल उत्पत्ति से उसका कोई सम्बन्ध नहीं था। जाति भेद की कल्पना उस समय अपूर्ण अवस्था में थी, इसी से उसे आाध्यतम पहुँच कर विदेशी जातियों का इस जाति में समावेश हो सका। परन्तु विदेशियों का स्वधर्म में मिला लेने की इस बात को पक्षपातानुकूल दन्तकथाओं के आवरण से छिपा देना आवश्यक था। इसी से यह कथा चल पड़ी कि बौद्ध धर्म तथा अन्य पाखण्डी मतों का उच्छेद करने में ब्राह्मणों की सहायता करने के लिये प्राचीन आर्य ऋषियों के नेतृत्व में शुद्धि समारोह कर अग्निकुण्ड से पैदा हुए कुलों का निर्माण किया गया। परमार, परिहार, चालुक्य और चौहान इन चार कुलों का अग्निकुल में समावेश किया जाता है।"

धर्म का संकीर्ण दृष्टिकोण रक्त के सामने कुछ महत्व नहीं रखता। अपने गूजर भाइयों में भी मैं—जैसा कि इस इतिहास के लेखक का और अधिकांश गूजर भाइयों का विश्वास है—आशा रखता हूँ कि वे अपना दृष्टिकोण इस सम्बन्ध में उदार तथा व्यापक रक्खेंगे।

पाश्चात्य विद्वान यह मानते हैं कि इतिहास में आर्थिक संघर्षों और जीविकोपार्जन के जद्दोजहद के सिवाय कुछ नहीं।

"The history of the world is the record of a man in quest of his daily bread and butter." किन्तु भारतीय दृष्टिकोण इससे सर्वथा भिन्न है। हमने राष्ट्र, धर्म एवं मानवता की रक्षा के लिए युद्ध किया है। जातिगत स्वार्थों के लिये और व्यक्तिगत विजिगीषा के लिये हमने कभी भी खून नहीं बहाया।

कुंवर यतीन्द्र कुमार ने इस महान् यज्ञ के सम्पादन में कोई चीज उठा नहीं रक्खी है। सर्वस्व दान और आत्मोत्सर्ग ही क्षात्र धर्म का आदर्श है। अन्त में मैं यतिवर के यज्ञ की सफलता की कामना करता हूँ। प्रभु करें कि मानव मात्र के कल्याण के लिये क्षत्रिय जाति एक बार फिर अग्रसर हो सके। भारत माता का मुख उज्वल करने में यह जाति उसी त्याग और वीरता का परिचय दे सके, जो अतीत में दिया था।

गुर्जर जाति में तो प्रत्येक भारतीय को विश्वास है किन्तु उसके इतिहास को स्पष्ट करने का यतिवर को वही श्रेय है, जो भगवान राम के गुणगान में कवि कुल चूड़ामणि गोस्वामी तुलसीदास जी को। भक्त न हो तो भगवान का गुणगान कौन करे? भक्त की आत्मिक अभिलाषा ने ही तो भगवद्‌काव्य को अमर किया है उर्दू में एक कवि ने कहा है—

"दास्तां उनकी निगाहों की है रंगी लेकिन,
उसमें कुछ खूने तमन्ना भी है शामिल मेरा"

पटियाला
भाद्रपद पूर्णिमा रविवार
सम्वत् २०११ वि०

देश जाति का सेवक—
यशपाल सिंह

आधुनिक पुरातत्ववेत्ताओं द्वारा अन्वेषण और भी कठिनाइयों में डाल देना है। इतिहास की अज्ञात कड़ियों को जोड़ने वाले विद्वान नये सिद्धान्तों का प्रतिपादन कर भारतीय इतिहास के रंगमंच पर से क्षत्रियों का अस्तित्व ही समाप्त कर देते हैं और इस काल के इतिहास के रंग मंच पर उत्साह के साथ भारतीय संस्कृति तथा भारतीयता के महत्व को प्रदर्शित करने वाले गुर्जर (गूजर) तथा राजपूत (राजपुत्र) क्षत्रिय वंशों की महत्वपूर्ण जातियों को विदेशी बर्बर (Barbarian) कबीलों (Hordes) की देन सिद्ध करने में लग जाते हैं। कल्पना के बल पर आश्रित इन सिद्धान्तों ने भारतीयता के पोषक विद्वान और भी अधिक उलझन हमारे सामने उपस्थित करते हुए जाति की परम्परा को समाप्त करते हुए गुर्जर शब्द को देशवाचक सिद्ध करने का असफल प्रयत्न करते हुए एक भ्रमपूर्ण दृष्टिकोण उपस्थित कर रहे हैं। इस इतिहास के प्रथम चार अध्यायों में इन्हीं सब बातों पर विस्तार के साथ समालोचनात्मक दृष्टिकोण से तथा आधुनिकतम वैज्ञानिक ठोस सिद्धान्तों के आधार पर विचार किया गया है। हमारा निर्णय पहले के विद्वानों से मेल खावे या न खावे हमारा तो इतिहास लिखते समय यह कर्तव्य है कि हम अपने इतिहास में से असन्दिग्ध, असत्य और अनिश्चित भावना को पृथक करके अपना स्पष्ट निर्णय देवें। इस गुर्जर इतिहास में कुछ ऐसी ही कठिनाइयों को सुलझाने का प्रयत्न किया गया है। वास्तव में गुर्जर, राजपूत एवं अन्य ऐसी जातियां आर्यों के प्राचीन सूर्य चन्द्र तथा यदुवंश की टोली का प्राचीन क्षत्रिय वर्ण की जातियां हैं, जिन्होंने अपना विशेष महत्व प्रदर्शित करते हुए अर्थ सहित नाम को नवीन रूप में प्रसिद्ध किया है। पहले ही से ऐतिहासिक संस्मरणों, गुण, स्थान अथवा कार्य विशेष के महत्व के कारण नवीन नामों की प्रसिद्धि का सिलसिला इतिहास में पाया जाता है किन्तु इससे वे ऐसी नवीन जातियां नहीं बन जातीं, जिनके कारण उनके महत्व में कोई कमी आ जाय।

इतिहास में छिपा हुआ है। जाति को जीवित, जागृत रखने, उन्नतिपथ पर आगे बढ़ने के लिये इतिहास सब से बड़ा साधन है। जाति में सजीवन मंत्र फूंक कर सोती हुई जाति को जगाने के लिये इतिहास के गौरवमय प्राचीन वृत्तान्त ही सबसे श्रेष्ठ साधन हैं। इस गुर्जर इतिहास लिखने का एक मात्र उद्देश्य यही है कि हम आपस के तथा दूसरी जातियों के पारस्परिक क्षुद्र भेद-भाव मिटा कर आज के जनतन्त्र युग में अपनी शक्ति का—सब शक्ति के साथ सर्वोच्च विकास करते हुए राष्ट्रीयता से आबद्ध हो आदर्श प्रजातन्त्र पद्धति के निर्माण में सफल हों। अपने पूर्वजों का आदर्श ग्रहण करते हुए जाति में नव उत्साह का संचार हो।

मेरा इसमें कुछ नहीं है। पिछली शताब्दि में इतिहास के विद्वानों ने जो महत्व पूर्ण रिकार्ड भारतीय इतिहास तथा गुर्जर जाति के सम्बन्ध में एकत्रित किए हैं यह इन्हीं के परिश्रम का फल है। मेरे हृदय में विगत ५५ वर्ष से इनका अध्ययन करते समय जो भावना व विचार उत्पन्न हुए उनको प्रकाशित करते हुये बड़ी प्रसन्नता पैदा हो रही है जिसका एकमात्र उद्देश्य जाति के विकास का मार्ग प्रशस्त करना है। सम्पूर्ण पुस्तक ४ खण्ड १६०० पृष्ठों में प्रकाशित हो रही है। प्रत्येक खण्ड इतिहास के सम्बन्ध में स्वतन्त्र तथा पूर्ण इकाई है।

इस पुस्तक के लिखने में इतिहास के जिन विद्वानों की अमूल्य सामग्री की सहायता ली गई है उनका अत्यन्त अनुग्रहीत हूँ। उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। वास्तव में उन्हीं की बहुमूल्य खोजों के आधारपर इस महान् कार्य को करने में मैं सफल हुआ।

क्षत्रिय समाज के प्रसिद्ध विद्वान नेता, राजपूत जाति के जाज्वल्यमान गौरव के प्रतीक भारत के राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के आन्दोलन में स्वयं तथा समस्त परिवार के साथ सर्वस्व की आहुति देने वाले, दरिद्रनारायण के उपासक उदारचेता कर्मवीर ठाकुर यशपालसिंह जी एम० ए० पनियाला निवासी ने जो इस पुस्तक की भूमिका लिखने के साथ साथ उसके लेखन में महत्वपूर्ण सुझाव, उदार सहायता प्रदान की है उसके लिए लेखक उनका कृतज्ञ है। उनके दिवगत पिता महात्मा सुमेरसिंह जी वाली कमली वाला का वरद हस्त लेखक पर बचपन से रहा है और मेरे समान हजारों गुर्जर परिवारों ने ही नहीं, किन्तु मामों ने उनसे नवजीवन-प्रेरणा प्राप्त की है उनके प्रति हार्दिक श्रद्धांजलि प्रकट करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। इस पुस्तक

दो शब्द

हमारा पवित्र देश भारतवर्ष इस समय नवीन युग में अवतीर्ण है। शताब्दियों तक निरन्तर क्रान्ति एवं संघर्ष करते हुए अब हमने पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करली है। अब देश एवं उसमें बसने वाली जातियों के पुनरुत्थान का समय है। प्रत्येक देश-जाति के अभ्युत्थान में उसका अतीत गौरव एवं उज्वल संस्कृति ही मुख्यतया सहायक होती है। इस लिये अपने गौरवमय अतीत के अध्ययन-ज्ञान के लिये इतिहास का खोज-प्रसार देश में बसने वाली जातियों के लिये परम उपयोगी एवं हितकर है। साथ ही अपने गत वैभव के कारण जाति एवं राष्ट्र की जीवन संस्कृति के प्रति स्वाभाविक प्रेम होने से उस पर पदानुसरण करने की कामना जागृत होकर, जो जातियों का विकास एवं कल्याण होता है वह अन्य किसी उपाय द्वारा सम्भव नहीं है।

आज हम ऐतिहासिक विद्वानों की आधुनिकतम अन्वेषण शैली द्वारा भारतीय संस्कृति की एक विशिष्ट परम्परा के अनुसार भारतीय इतिहास की महत्वपूर्ण प्रतिष्टपन्न आर्य जाति के प्राचीन राजन्य क्षत्रिय वर्ग के महत्वपूर्ण एवं जातीय दृष्टिकोण से पूर्णतया सुसंगठित इतिहास प्रसिद्ध एवं भारतीय राजनीतिक क्षितिज में प्रकाशमान गुर्जर अथवा गूजर जाति का अन्वेषण उपस्थित कर रहे हैं। जाति राष्ट्र के विभिन्न अंगों के समान होती हैं, जिनके द्वारा राष्ट्र रूपी शरीर पुष्ट परिवर्धित एवं जीवित रहता है और जिनके पतन से राष्ट्र की सत्ता समाप्त हो जाती है। इसलिये संकीर्ण दृष्टिकोण त्याग कर गुर्जर (गूजर) जाति को प्रत्येक स्थिति में दृढ़ एवं शक्तिशाली बनाये रखने के लिये गुर्जर इतिहास की आवश्यकता बहुत समय से अनुभव करते हुये यह बृहद् ग्रन्थ उपस्थित किया जा रहा है।

गूजर आज भी भारतवर्ष की बहुसंख्यक महान ऐतिहासिक जाति है और हिमालय तथा विन्ध्याचल के बीच में—जिसे प्राचीन काल में आर्यावर्त कहा जाता है—बसने वाली आर्य जातियों में अपना महत्व-पूर्ण स्थान रखती है, ये अपनी स्पष्ट आकृति में (लम्बा आकार, गोरा रंग

लम्बी नाक, लम्बा सिर एवं चौड़ा ललाट) भारत एवं पाकिस्तान की विभाजन रेखा मे दोनों देशों में बटे हुये हैं। सिन्ध से गंगा तक, काश्मीर के ऊपर गिलगिट तथा अफगानिस्तान से लेकर स्वतन्त्र-कबायली इलाकों तथा पेशावर, हजारा पहाड से लेकर-बम्बई के समुद्र तट तक उनकी महत्वपूर्ण अर्थयन्द आबादियां उपनिवेशों के रूप में अनेक वंश-कुल-गोत्रों के रूप मे बसी हुई हैं। भारतीय प्राचीन साहित्य और इतिहास में मध्य एशिया तक के जिस देश को वृहत्तर भारत के रूप में स्मरण किया जाता है और जो कम्बोज, ऋषिक, किरात, लौहित, उलूक, बाल्हिक एवं काश्कर आदि नामों से प्राचीन इतिहास में प्रसिद्ध है, गूजर अपने अपने महत्वपूर्ण पशु धन, मान तथा प्रतिष्ठा के सबसे महत्वपूर्ण कारण भूम्याधिकार से सुरक्षित ग्रामों की बसावट व संगठन व्यवस्था के संचालक रूप में विद्यमान हैं। इसन अवशाल मेहयाद्रि की पहाडी उनमे जागृत रहती है, उनकी आबादी के साथ उनके नाम पर स्थान, देश एवं प्रान्तों, नगरों की प्रसिद्धि उनकी एक विशिष्ट परम्परा की द्योतक है। हिन्दू कुश के ढलाव पर रोजल के पास छोटा गुंजल तथा मुख्य गुंजल, मध्य एशिया में बुलमन्द पर गुर्जिस्तान और गूजर खासी, गजनी के पास गरजानी, गुजरानी, गुर्जिस्तान; तुर्किस्तान तथा काबुल के गूजर खील कबीले की प्रसिद्धि उनके नाम पर है। पंजाब में गुजरात गुजरानवाला, गूजरखान काठियावाड के समीप का गुजरात तथा ग्वालियर का गूजरधार एवं उत्तर पश्चिम भारत के अनेक प्रदेशों की गुजरात के नाम से प्रसिद्धि उनके महत्व को प्रकट करती है। मध्यकालीन भारतीय इतिहास में 'गुर्जर' कन्नौज के विशाल साम्राज्य की प्रसिद्धि अलमसूदी, इदरसी और इब्नखुर्दबाह ने गूजरों के कारण दी है। इसके अतिरिक्त भीनमाल, भड़ौंच, उज्जैन आदि अनेक महत्वपूर्ण राजधानियां उनके कारण प्रसिद्धि मे आईं, जिनका इतिहास आज खण्डहरों, शिलालेखों में छिपा पड़ा है। ऐतिहासिक अन्वेषण द्वारा इन अवशेषों की खोज करना, रक्षा करना तत्कालीन इतिहास को जीवित रखना भारतीय इतिहास को जीवित रखना है और इसे नष्ट करने पर हम अपनी अमूल्य संस्कृति पर कुठाराघात करेंगे, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में उत्कर्ष प्राप्त करने वाले गुर्जरों के इतिहास लिखने वाले व्यक्ति के सामने अनेक कठिनाइयां उपस्थित हैं, उसे ऐसी अनेक अज्ञात कड़ियां जोड़नी हैं, जिनका पाया जाना

के छापने में विजय प्रिन्टिङ्ग प्रेस के कर्मचारी व व्यवस्थापक श्री जयप्रकाश रस्तोगी का मैं अत्यन्त अनुग्रहीत हूं। उन्हीं के अमूल्य सुझाव, समय और श्रम के कारण यह पुस्तक इस रूप में प्रकाशित होसकी है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

अन्त में मैं महाकवि भवभूति के सन्देश में विश्वास रखते हुए इस पुस्तक को प्रारम्भ करता हूँ " समय अनन्त है, पृथ्वी विस्तीर्ण है किसी दिन अवश्य कोई पैदा होगा, जो मेरी इन बातों की प्रतिष्ठा करेगा। विद्वानों से प्रार्थना है कि निर्भीक सत्य के प्रेमी होने के नाते इस इतिहास ग्रन्थ की—जो उनके असीम ज्ञान के सामने कुछ नहीं है, जांच करें। प्रूफ संशोधन सम्बन्धी जो त्रुटि पुस्तक में हैं अथवा अन्य ज्ञान सम्बन्धी जो कमी है उसके लिये पाठकों—विद्वानों के सन्मुख अनुभव करते हुए क्षमा प्रार्थी हूँ।

आश्विन कृष्णा ४ गुरुवार

सम्वत् २०११ वि०

यतीन्द्र कुमार

गुर्जर इतिहास

पहला अध्याय

गुर्जर (गूजर) और गुजरात

(१)

अत्यन्त प्राचीन काल के भारतीय इतिहास में गुर्जर अथवा गूजर नाम की किसी जाति विशिष्ट का वर्णन हमें नहीं मिलता। जिस मध्य युगीन इतिहास काल में (पांचवी, छठी शताब्दि में) हमें, गुर्जरों (गूजरों) का वर्णन मिलता है, वह उनके उत्कर्ष काल का वर्णन है जिसमें वे अपनी जातीय स्थिति को गुर्जर राष्ट्र, गुर्जर, गुर्जरत्रा (गुजरात) गुर्जरेश्वर, गुर्जर भूमि के रूप में उपस्थित कर रहे हैं। यह उनके उस वीर रूप का वर्णन है जिसे वैदिक कालीन वर्ण व्यवस्था ने क्षत्रिय संज्ञा दी है; जो भारतीय इतिहास की प्राचीन शैली वीर पूजा की गाथा के रूप में हमारे सामने आती है। इस काल में वैदिकयुग के क्षत्रियों के अनेक नये-नये वंश या कुल भारत भूमि पर अवतीर्ण होते हैं, जिनमें से अनेकों का अस्तित्व लुप्त प्राय: है, किन्तु गुर्जरों का उत्कर्ष उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ दृष्टिगोचर हो रहा है। विकास की सबसे ऊंची श्रेणी जातियों द्वारा राज्य का रूप धारण करना है और यह स्थिति संगठित उच्च राजनैतिक उन्नति की चरम सीमा है, जिसका वर्णन हम विशेष रूप से पांचवीं छठी शताब्दि से बारहवीं शताब्दि तक और उसके बाद भी परम्परागत रूप

से आज तक भी गुर्जरों में पाते हैं। पहले का गुर्जर, गुर्जरत्रा (गुजरात), गुर्जर मण्डल, गुर्जर भूमि, गुर्जरेश्वर के रूप में और आज तक का गूजर, गुजरात, गूजर घार गुजरावाला, इसी प्रकार की एक निश्चित परम्परा को नियमित रूप से बनाये हुए हैं।

(२)

ईसवी सन् ५०० वर्ष पूर्व, वर्तमान सीमाप्रांत के आधुनिक पठानों के देश युसुफजई के शलातुर गाँव में व्याकरण के आचार्य महावैयाकरण पाणिनि का जन्म हुआ; उस काल के उनके सूत्रग्रन्थ अष्टाध्यायी से इतिहास के एक मुख्य दृष्टिकोण का पता चलता है। उनके सूत्रों में ७० प्रदेशों के नाम मिलते हैं, जिनमें राजतन्त्र के अलावा गणतन्त्रों का भी उल्लेख है। 'जनपद शब्दात् क्षत्रियादञ्', एक सूत्र से यह पता चलता है कि देशों की प्रसिद्धि का आधार क्षत्रिय वंश होते थे और देश से क्षत्रिय जाति का (वंशों का) बोध होता है।[1] प्रारम्भिक समय से ही देशों की प्रसिद्धि का कारण क्षत्रिय राजवंशों का प्रभुत्व तथा प्रभाव है। इतिहास में इसके अनेक उदाहरण हैं। इसका सबसे पहला उदाहरण आर्य जाति का देश आर्यावर्त तथा भारतवर्ष है, जिसके लिये विष्णु पुराण और वायु पुराण में यह उल्लेख मिलता है कि "समुद्र के उत्तर और हिमालय के दक्षिण का देश वर्ष (भारत) कहलाता है क्योंकि यहां भारतीय सन्तति बसती है। यह भारतीय सन्तति, वास्तव में आर्यों के सूर्यवंश की भरत

---

१ जनपद शब्दात् क्षत्रियादञ् ४।१।१६८ पाणिनि सूत्रम ११८६ भट्टोजी दीक्षित सिद्धान्त कौमुदी की व्याख्या इसके लिये निम्न प्रकार है—

,, जनपद क्षत्रियोवाचकादञ् स्यादपत्यदण्डिनाय नैनि सूत्रे त्रिया तनहि लोप ऐक्ष्वाक, एक्ष्वाको।

,, क्षत्रियसमानशब्दाज्जनपदात्तस्य राजन्य पत्यवत ॥

,, भपत्य में भण मालवीराजा।

,, सम्राज वा यक्षाण स्वराज इत्य वर्ष सभा सामर्थ्यात् पश्चालानाम राजा पाश्चाल पूरोरण वक्तव्य पौरव पाण्डोश्यणुं पाण्डव। (जनपद देश वाचक शब्द क्षत्रिय तुल्य होते ह) २८७ पृ॰ सिद्धान्त कौमुदी बम्बई।

जाति ही थी, जो शौर्य और पराक्रम मे दूसरों से अग्रणीय थी, उसने इस भू खण्ड को विजित करने और वैदिक साहित्य की रचना करने में आर्यों का नेतृत्व किया था। इसी जाति के नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा।[2] वायु पुराण का निम्न श्लोक इस कथन का साक्षी है —

उत्तर यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्ष तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्तति" ॥

युद्ध प्रिय भरतों की शक्ति के अवसान पर जब कुरु और पांचालों का प्रभुत्व बढ़ा और ऋग्वेदीय पुरु और भरत कुरुओं में आत्म-सात् हो गये और श्रजयों का भी समावेश इनमें हो गया तो कुरु राज्य अर्वाचीन थानेश्वर, दिल्ली तथा उपरले अन्तर्वेद तक कहलाया, जिसकी राजधानी आसन्दीवन्त (हस्तिनापुर) थी और उन्हीं के नाम पर यह कुरु प्रदेश प्रसिद्ध हो गया। पांचालों के पाञ्चाल जनपद (जिनमें पंचालों का राजा प्रवाहण जैवलि, राजा द्रुपद जिसकी पुत्री द्रौपदी पाचाली कहलाई, प्रसिद्ध राजा हुए) राज्य का विस्तार उनके राज्य की सीमा के बढ़ाव के अनुसार एक समय वर्तमान फरुखाबाद तथा रुहेलखण्ड के सीमांश तक था। इसी प्रकार विदेहों (विदेह जनपद), गन्धार, कैकय, मद्र, मत्स्य, अंग बंग आदि अनेक वंशों के नाम से राज्यों का उल्लेख हमें मिलता है।[3] प्राचीन आर्यों के राजनैतिक एकता के प्रतीक गुर्जरों ने जहाँ अपने नाम से देशों की प्रसिद्धि में योग दिया, वहा राज्य तथा साम्राज्य स्थापित करने की युगों की होड़ में भी वे पीछे नहीं रहे और अपने पूर्वकालीन क्षत्रियों की तरह दिग्विजयों द्वारा भारत को एक सूत्र मे बान्धने में और गुर्जर साम्राज्य स्थापित करने में वे सफल हुए। इससे हम इस परिणाम पर पहुचे बिना नहीं रह सकते कि गुर्जर प्राचीन क्षत्रियों की परम्परा के प्रतीक हैं और उन्होंने भारतीय इतिहास के संकट कालीन समय में भारत के महत्वपूर्ण-उत्तर में दक्षिण काठियावाड तक और पश्चिम समुद्र तट से बंगाल तक के अनेक विस्तृत भू भागों को अपने शौर्य, पराक्रम

२ भारत का चित्र-मय इतिहास महावीर प्रसाद गैरोला[?] पृष्ठ १

३ आदि भारत (प्रो० अर्जुन चौबे काश्यप) पृष्ठ ८२-८८

और उत्तम शासन व्यवस्था द्वारा अपने नाम से गुर्जरा से रचित गुर्जरत्रा (गुजरात) नाम से प्रसिद्ध किया।[४]

मध्यकालीन भारतीय इतिहास के ताम्रपत्र शिलालेख एवं काव्यों में जो गुर्जर (गूजर) और उससे सम्बन्धित विशेषण युक्त शब्दों का वर्णन आया है, वह बड़ा महत्त्वपूर्ण है। आधुनिकतम नवीन खोजों ने यह सिद्ध कर दिया है कि गुर्जर शब्द गुर्जर अथवा गूजर जाति के राजवंश के राजाओं, उनके अधीन देशों तथा उनके द्वारा स्थापित नगरों के लिए ही प्रयोग में आया है।[५]

(३)

वास्तव में जाति, जनपद एवं राष्ट्र तीनों को प्राचीन आर्यों के दृष्टिकोण से समझने की आवश्यकता है तभी हम तत्कालीन भारतीय इतिहास में गुर्जर जाति, गुर्जर जनपद और गुर्जर राष्ट्र की महत्ता और जाति पदवाचक गुर्जर शब्द का महत्व समझकर सही निर्णय कर सकेंगे।

गौतम ने अपने न्याय सूत्र में जाति की जो व्याख्या की है वह निम्न प्रकार है "समान प्रसवात्मिका जाति" अर्थात जाति से तात्पर्य उस व्यक्ति समूह का है जिनका मूल समान हो और साथ ही साथ साहचर्य भावनाएं भी समान हों। इसका आशय यह है कि जाति का निर्माण उनसे होता है, जिनकी परम्परा समान हो, एक ही प्रकार का स्वभाव हो और जो समान महत्वाकांक्षाओं से सम्बन्धित हों। इस प्रकार एकत्व द्वारा जाति बनती है।

गुर्जरों (गूजरों) ने क्षत्रियों की एक क्रमागत संस्कृति, सभ्यता एवं विशिष्ट परम्परा की रक्षा करने के लिये तत्कालीन संकट के समय आर्य, धर्म और संस्कृति को बचाने के लिए इस जाति का निर्माण क्षत्रियों के विभिन्न कुलों को—जो समान थे—संगठित करके किया और उसे विशिष्ट

४ बम्बई गजेटियर (सर जेम्स केम्पबल) भाग ६ जि० १ पृष्ठ ४७६
५ राजपूताने का इतिहास प्रथम भाग (गौरीशंकर हीराचन्द ओझा) पृष्ठ १४८

अर्थ का महत्व देते हुए इस नाम से प्रसिद्ध किया। देशकाल की परिस्थिति देखते हुए यह नव निर्माण महत्वाकांक्षा के साथ साथ अनिवार्य था, क्योंकि विदेशी जातियों ने क्षत्रियों की अचेतन अवस्था में उनकी जननी जन्मभूमि के वक्षस्थल पर बार-बार प्रहार करके अपना आधिपत्य स्थापित कर दिया था। भारत भूमि के वे स्वामी थे और आबू के आस पास उनका नवीन वंश गुर्जर अपने नाम से गुजरात और गुर्जर को प्रसिद्ध करता हुआ, शत्रुओं को नष्ट भ्रष्ट करता हुआ, आगे बढ़ता चला गया। यही उनकी प्रसिद्धि का क्रम गुर्जर जनपद के महत्त्व का कारण बना।

जनपद अर्थात जाति का स्थान विशेष जिसकी व्याख्या निम्न प्रकार से की गई—"जनस्य वर्णाश्रम लक्षणस्य द्रव्योत्पत्ती स्थान मिति" अर्थात स्थान विशेष जहां वर्ण तथा आश्रमों द्वारा लक्षित एक जाति अपने को समृद्ध करती है। गुर्जर जाति क्षत्रिय कर्म नियमों का पालन आदि वर्ण व्यवस्था का अनुसरण करती हुई, उसी प्राचीन वैदिक कालीन धर्म नीति युक्त संस्कृति को स्वीकार कर, स्थान विशेष को अपने नाम से समृद्ध करती है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि गुर्जर जाति को अपनी निश्चित योजनानुसार लक्ष्य पूरा करने के लिये जनपद अथवा स्थान विशेष की अत्यन्त आवश्यकता थी, जहां पर रहते हुए वह अपने को समृद्ध करती, समान निश्चित परम्परा वाले संस्कृति सम्पन्न क्षत्रिय कुलों को पुष्ट करती है, जिनके गुण, कर्म तथा स्वभाव के अनुसार कुल परम्परा, आचार विचार, उनकी मूल भावनाओं के अनुरूप है, जिसका यही रूप गुर्जर देश, गुर्जर राष्ट्र, गुजरात एवं गुर्जर के रूप में हमारे सामने उपस्थित है।

"पशु धान्यहिरण्यसम्पदा राजते शोभते इति राष्ट्रम्"

राष्ट्र की उन्नति का चरम लक्ष्य गुर्जरों के सम्मुख था और उसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये देश को पशु धान्य और सुवर्ण की सम्पदा से शोभित राष्ट्र रखने के लिये उन्होंने जाति और जनपद को गुर्जर रूप दिया।

(४)

ब्राह्मण क्षत्रियों के संघर्ष में जहां एक समय ऐसा आया कि क्षत्रिय राज्य बिखर कर गणराज्यों का रूप धारण कर गये वहां ब्राह्मणों पर भी संकट काल उपस्थित होगया। जायज नाजायज हर तरीके से ब्राह्मणों ने रहे सहे मध्य देश के क्षत्रिय राज्यों को नष्ट करने के लिये 'महापद्मानन्द' शूद्र सम्राट को सहारा दिया और 'सर्व क्षत्रान्तक' की उपाधि प्रदान की। बाद में नन्द वंश के शूद्र साम्राज्य में ब्राह्मणों का अस्तित्व खतरे में पड़ गया और कुटिल राजनीतिज्ञ चाणक्य ने फिर मगध के राज्य की सार्वभौम सत्ता क्षत्रियों के हाथ में दे दी और उसे भारत का सबसे बड़ा साम्राज्य बना दिया किन्तु आड़े हाथों शासन सूत्र अपने हाथों में ही सम्भाले रहा। इस बीच में उसके द्वारा क्षत्रियों के गणराज्य नष्ट करके तितर बितर कर दिये गये। निरन्तर साम्राज्य से टक्कर लेते हुए पंजाब के मालव राजपूताने में और यौधेय क्षत्रिय पश्चिम में सरक गये। राजस्थान के मरु प्रदेश और मालवे की भूमि ने उन्हें मगध की धर पकड़ के बाहर कर दिया, किन्तु बाद में विदेशी हमलों की निरन्तर बाढ़ ने क्षत्रिय साम्राज्य को जर्जर कर दिया।

अन्तिम मौर्य सम्राट बृहद्रथ के ब्राह्मण पुरोहित और सेनापति पुष्यमित्र शुङ्ग ने महा भाष्याकार पतञ्जलि के साथ ब्राह्मणवाद का षडयन्त्र रचकर खुले मैदान में अपने स्वामी को बाण से मार डाला और शुङ्ग ब्राह्मण साम्राज्य की नींव डाली जो चाणक्य और उसके पूर्ववर्ती ब्राह्मणों की राजनैतिक पटुता थी। शुङ्ग और कण्व वंशधारी ब्राह्मणों के वंशों की स्थिति पुष्यमित्र के साथ ही उन्नत रही। उसके बाद उनके रचे हुए ब्राह्मण युक्त दृष्टिकोण से मनुष्य-मनुष्य वर्ण-वर्ण, वर्ग वर्ग में भेद उत्पन्न होगया था, जिसके कारण क्या ब्राह्मण, क्या क्षत्रिय क्या वैश्य, और क्या शूद्र ! सारा भारत जर्जरित होगया। साथ ही विदेशी हमलों ने भारत की राजनैतिक स्थिति डांवाडोल करदी और देश संकट में पड़ गया। ब्राह्मण और क्षत्रियों के विशिष्ट नेताओं के सम्मिलित यत्नों द्वारा पुनः ब्राह्मण तथा क्षत्रियों का एकीकरण

हुआ और आबू पर्वत के अग्निकुण्ड पर ४० दिन तक महासम्मेलन और यज्ञ द्वारा भारत तथा भारतीयता की रक्षा की प्रतिज्ञा की गई। अनेक नवीन नामों से क्षत्रिय वंशों की प्रतिष्ठा पुनः स्थापित हुई। अग्निकुल के नवीन दीक्षित प्राचीन क्षत्रियों के अनेक ऐसे ही वंशों का संघ गुर्जर है। ये किसी विदेशी जाति के नहीं हैं। उपरोक्त परिस्थितियों में ही इस जाति का निर्माण हुआ। गुर्जर जाति में गुर्जर देशवाचक नामों की प्रसिद्धि हुई जो पूर्ण प्रमाणिक है।

आधुनिकतम इतिहास के विशेषज्ञों ने अपनी महत्वपूर्ण अन्वेषण शैली द्वारा, ताम्रपत्रों, शिलालेखों, यात्रा सम्बन्धी विवरणों एवं काव्यों से जो निष्कर्ष गुर्जरों के सम्बन्ध में प्रकट किये हैं, उससे भी हम इस परिणाम पर पहुँचे बिना नहीं रह सकते कि वैदिक कालीन क्षत्रियों, मध्ययुगीन गुर्जरों एवं वर्तमान गूजर जाति में एक नितान्त साम्यता है। ऐतिहासिक परम्परा, शीर्षमापन शास्त्र, भाषा विज्ञान एवं रक्त विज्ञान के नवीनतम सर्वश्रेष्ठ सिद्धान्तों द्वारा भी यह बात पूरी तरह सिद्ध होती है। प्राचीन भारतीय इतिहास के न मिलने पर भी अन्धकारयुगीन इतिहास की गुर्जर कड़ी का पता उपरोक्त वर्णनों में मिलता है और उससे इस बात पर पूरा पूरा प्रकाश पड़ता है कि गुर्जर अथवा गूजर जाति वैदिक कालीन आर्यजाति के राजन्य (क्षत्रिय) वर्ग का एक विभाग है। उसको विदेशी या किसी दूसरी जाति या कबीले का मानना बिलकुल निस्सार कल्पना है।

(४)

गुजरात के प्रसिद्ध साहित्यकार एवं गुजरात इतिहास के सबसे नवीन अन्वेषक महामहिम राज्यपाल उत्तरप्रदेश, माननीय कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी ने अपनी नवीन इतिहास की प्रसिद्ध पुस्तक "दी ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश" में एक नवीन सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है, जो इससे पूर्व की अन्वेषण शैली के विपरीत 'गुर्जर' शब्द को इतिहास में मुख्य रूप से देशवाचक मानते हैं और प्रारम्भ में किसी जाति विशेष

का महत्व नहीं मानते। यद्यपि शब्दों की खींचतान और प्रान्तीयता के भावुक प्रवाह के अतिरिक्त उसका कुछ महत्व नहीं है, किन्तु गुर्जर जाति के महत्वपूर्ण वर्णन एवं गूजर इतिहास के अन्वेषण में अनेक दृष्टियों से उस पर विचार करना तथा उन शंकाओं का समाधान करना आवश्यक है।

यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि माननीय मुन्शी महोदय के इस सिद्धान्त से हम पूरे तौर से सहमत हैं कि "छटी शताब्दि के प्रारम्भ में जब गुर्जर देश के क्षत्रियों का इतिहास में उत्कर्ष बढा तो वे भारत मे आर्य संस्कृति की उच्च परम्परा से संयुक्त थे और वे अपनी उत्पत्ति का कोई दूसरा बाहरी स्थान या मातृभूमि नहीं मानते थे और गुर्जरों के बाहर से आने की कल्पना सन्देहजनक है, तथा गुर्जरों और उसीके आधारपर राजपूतों के सम्बन्ध में विदेशी जातिकी कल्पना अप्रमाणित एवं अशुद्ध तौर से लेखों के पढ़ने के आधार पर आश्रित है।"[६]

हम प्रमाण पूर्वक इस निश्चय पर पहुंच चुके हैं कि गुर्जर हूणों से पहले या उसके बाद भारत में विदेशों से नहीं आये और न ये बाहर की किसी अनार्य जाति की शाखा ही हैं। भारत का मध्ययुगीन इतिहास तथा आजकल के गुर्जरों (गूजरों) का अवयव गठन देख कर नृतत्त्व शास्त्र[७] एवं उनकी भाषा गूजरी आर्य भाषा जो सौर सैनी मालवी और उनके द्वारा प्रारम्भ की हुई गुजराती का रूप है[८], ने स्पष्टतया उनको आर्य सिद्ध किया है।

मुन्शी महोदय के सिद्धान्त को हम गुर्जरों की ऐतिहासिक परम्परा,

---

६ दी ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश भाग (३) भूमिका ३—४ पृष्ठ

७ दी पीपुल आफ इंडिया (सर हरबर्ट रिसले के० सी० आई० ई० सी० एस० आई० डाइरेक्टर एथ्नोग्राफी (जनविज्ञान) आफ इंडिया पृष्ठ ३६६

८ भारतीय संस्कृति में आर्येतरांश शिव शंकर एम० ए०, (भारतीय संस्कृति एवं संस्कृत) प्राच्य विभाग लखनऊ विश्व विद्यालय पृष्ठ २१—२२ तथा भारत भूमि तथा उसके निवासी जयचन्द विद्यालंकार पृष्ठ २४६

शिलालेख, ताम्रपत्र, काव्यों एवं आधुनिक विद्वानों के गवेषणापूर्ण लेखों के आधार पर, बिलकुल अप्रमाणिक मानते हैं कि गुर्जर नाम की किसी जाति विशेष का अस्तित्व भारतीय मध्यकालीन ऐतिहासिक काल में शिलालेख, ताम्रपत्र, काव्यों एवं भारतीय तत्कालीन इतिहास में नहीं था और उनका इस काल के इतिहास में गुर्जर जाति के अस्तित्व को न मानना वर्तमान भारत की प्रसिद्ध ऐतिहासिक जाति के मध्ययुगीन इतिहासकाल के राजवंशों एवं उनके गौरवपूर्ण महत्त्व में एक भारी बाधा उपस्थित करना है, जिसका निर्णय उन्होंने ऐतिहासिक प्रमाणों एवं गुर्जरों की परम्परा के विरुद्ध किया है। वे लिखते हैं कि—

"मैं साहस के साथ इस बात को कह सकता हूं कि कोई भी दृढ़ प्रमाण इस बात को सिद्ध करने के लिये नहीं मिलता कि जिससे यह जाना जाय कि 'गुर्जर' शब्द किसी जाति विशेष के लिये कहीं प्रयोग में आया हो।" *

"सातवीं शताब्दि में आधुनिक राजपूताने के एक प्रदेश का नाम गुर्जर था, इसके निवासी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चार वर्णों में बटे हुए थे और इनकी वर्ण व्यवस्था तथा सभ्यता उत्तरीय भारत के समान थी। वे लाट आनर्त, सौराष्ट्र मालवा और उज्जैयनी के निवासियों के साथ समान रूप से घुल मिल गये। इस गुर्जर प्रदेश के रहने वाले मनुष्य जब भी देश के किसी दूसरे भाग में जाकर बसे तो वे अपनी मातृभूमि के नाम पर गुर्जर कहलाये। ठीक उसी प्रकार जैसे गौड़ लाट, द्राविड़ आदि लोग अपनी मातृ भूमि के नाम पर प्रसिद्ध हुए। गुर्जर देश के राजाओं ने राजनैतिक दृष्टि से गुर्जर देश के अपने समीपस्थ प्रदेशों को एक प्रकार की रीति-रिवाज वाली प्रजा होने से एकता के सूत्र में बांध दिया। इसके परिणामस्वरूप गुर्जर देश अपने गुर्जर राजाओं की राजधानियों के राज्य विस्तार के साथ बढ़ता चला गया। भौगोलिक दृष्टि से आजकल जो देश गुजरात के नाम से प्रसिद्ध है और जिसका सम्बन्ध गुर्जर शब्द से है और जो अपने समीपस्थ प्रदेशों के गुर्जर राज्यों के नष्ट हो जाने के पश्चात भी अपना वही नाम धारण किये हुए है: पहले समय के विशाल गुर्जर देश का एक

भाग था या अपने को गुर्जर कहलाने वाले मनुष्यों से बनाये गये या अधिकार किये हुए (बसे हुए) शहर और किलों का समूह था।

"इस सबका परिणाम यह निकला कि उन वर्णों और जातियों ने जो गुर्जर नाम धारण किया हुआ है और वे राजा जो अपने को गुर्जर कहते थे, यह नाम अपनी मातृभूमि से लिया।"[1]

"फिर गुजरात, गुर्जर देश या गुर्जर एक नाम भी नहीं है। छठी शताब्दि के मध्य से गुर्जर शब्द इतिहास में राष्ट्र की भांति प्रयुक्त हुआ था, जिसकी राजधानी भीनमाल थी। इसकी दक्षिणी सीमा पर सरस्वती नदी के पास ही कहीं थी, जिस पर पाटन शहर (बड़ौदा का) बसा है। इसकी उत्तरी सीमा आधुनिक जोधपुर के बाहर थी, इसी प्रदेश का नाम गुर्जर पड़ा। उन देशों के नाम, जो इसे सीमाओं द्वारा घेरे हुए थे जो अब गुजरात के भाग हैं, आबादी के दृष्टिकोण से भिन्न नहीं थे, किन्तु सीमा रूप में भिन्न-भिन्न थे। नासिक महाराष्ट्र का नासिक था। बलसार से भड़ौंच तक भृगु कच्छ या दक्षिण लाट था। भड़ौंच से माही तक जिसमें बड़ौदा प्रान्त शामिल है मालवा था। माही से साबरमती तक खेटक (खेड़ा) और अहमदाबाद जिले का भाग असावल्ली (गाँव असावली के पास) कहलाते हैं। इसके उत्तर में आनर्त था, जिसकी राजधानी आनन्दपुर (वेदनगर) थी।

"काठियावाड़ और वल्लभी सौराष्ट्र में बटा हुआ था। कच्छ का उस समय भी यही नाम था जो अब मालवा कहलाता है. उसे अवन्ति या उज्जैयनी कहते थे. प्राचीन गुर्जर का दक्षिणी भाग जो अब गुजरात में मिला दिया गया है जो इस उत्तरीय विभाग सिरोही और सरस्वती के मध्य स्थित है। "६४१ ई० में भौगोलिक दृष्टि से बलसार से जोधपुर और द्वारिका से भिलमा तक का राज्य इन विभागों में बटा हुआ था। सब उनमें एक प्रकार की जातियां रहती थी जिनकी भाषा पहिनावा लिखने का ढंग और सामाजिक व्यवस्था एक थी। गुर्जर देश के बारे में यह सारभूत सत्य था कि इसके भागों में अर्थात

आधुनिक राजपूताना, गुजरात और मालवे में एक ऐसी जाति रहती थी जो महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश की जातियों से पृथक थी। वैदिक काल में हैहय, तालजंघ की मिली हुई जातियां इसी प्रदेश में आकर बसी थीं। हैहयों ने (जिन्हें कलचूरि भी कहते हैं जिन्होंने भड़ौंच प्राचीन अनूपदेश पर राज्याधिकार किया था) छठी शताब्दि के उत्तरार्ध में अपना अधिकार इस पर से खो दिया, इसलिये पहले समय से ६४१ ई० तक—जब चीनी यात्री यहां आया—यहां की भाषा और व्यक्तित्व एक ही परिपाटी में पनपती गई।[११]"

"१५० वर्ष बाद छोटे से 'गुर्जर' राज्य को हम उसकी राजधानी भिल्लमाल (भीनमाल) के साथ इतिहास में प्रभुत्वशाली गुर्जर देश के नाम से विकसित पाते हैं। इन प्रदेशों के, समान जातिगत व्यवस्था वाले मनुष्यों ने, शक्तिशाली योद्धाओं, राजनीतिज्ञ नेताओं के नेतृत्व में, महान यश प्राप्त किया था। जिनकी वंश परम्परा उन मनुष्यों में बनाई गई थी जो आबू पर्वत की थोड़ी सी मीलों की परिधि में अपनी दृढ़ स्थिति बनाये हुये थे। इन राजाओं ने गुर्जरदेश की सीमाओं को ही नहीं बढ़ाया बल्कि कालान्तर में एक शक्तिशाली साम्राज्य स्थापित किया। उन शक्तिशाली गुर्जर सम्राटों ने इस काल में अपनी राजधानी भीनमाल से जालौर, जालौर से उज्जैयनी और उज्जैयनी से कान्यकुब्ज (कन्नौज) को बनाया जो इस काल में भारतीय साम्राज्य की राजधानी थी।[१२]"

"प्रथम राजवंश के ये गुर्जर प्रतिहार सम्राट, जिन्हें आधुनिक इतिहासकार कन्नौज के प्रतिहार कहते हैं, गुर्जर देश को अपनी मातृ भूमि मानते थे। इसी कारण यह गुर्जर कहलाये। महान मिहिर भोज के शासनकाल में गुर्जर देश पश्चिम में पञ्जाब के पृथोदक से जोधपुर तक, जोधपुर से आबू तक, आबू से सरस्वती के मुहाने तक फैल गया। यहां तक कि वढ्वान का पूर्वीय भाग भी इससे मिल गया। सरस्वती उत्तरीय सीमा का अन्त था और सम्भवतया आनर्त भी गुर्जर देश में आ गया था। वर्तमान विस्तृत मालवा ने भी उसके विस्तार

को बढ़ाया। सौराष्ट्र और कच्छ गुजरात में शामिल नहीं थे, फिर भी गुर्जर सम्राट इन पर शासन करते थे। खेटक मण्डल आधुनिक खेड़ा (सम्भवतया माही से कावेरी तक का प्रदेश) जो सूरत प्रान्त में था, गुर्जर देश में शामिल नहीं था. इसे इस काल में भी लाट कहते थे। लाट गुर्जर देश के प्रतिहार राजाओं की और कर्नाटक के राष्ट्रकूट राजाओं की रणभूमि थी।"[११]

"गुर्जर देश पर राष्ट्रकूटों के दो लगातार आक्रमण हुए। पहला ६१५ ई० में और दूसरा ६३० ई० में। इसके कारण प्रतिहार राजवंश के जिन गुर्जर सम्राटों ने—जिस राजनैतिक दृष्टि से भारत-देश में गुर्जर साम्राज्य का निर्माण किया था—वह छिन्न-भिन्न हो गया। इसकी प्रत्येक अधीन जागीरें स्वाधीन हो गईं। मातृभूमि के नाम से प्रसिद्ध गुर्जर राजाओं का राज्य छोटे-छोटे राज्यों का रणांगन बन गया। गुर्जर साम्राज्य के अन्तर्गत निम्न राज्य मुख्य रूप से थे। देहली के सपादलक्ष, जिसकी राजधानी शाकम्भरी (साम्भर) थी, गोपगिरी (ग्वालियर), किराडू जो जोधपुर के पास था, मारवाड़ जिसकी राजधानी मडूल थी, मेदपाट जिसकी राजधानी चित्रकूट या चित्तौड़ थी, जाबालिपुर (जाबली या जालौर), आबू जिसकी राजधानी चन्द्रावती थी, सारस्वत मंडल या सरस्वती की घाटी जिसकी राजधानी अनहिल वाड़ा (पाटन) थी, वागड़, डूंगरपुर, बांसवाड़ा राज्य और मालवा जिसकी राजधानी धारा थी।"[११]

"अपने प्रथम प्रभुत्व के उत्कर्ष के समय गुर्जर साम्राज्य काल में गुर्जर देश में कई प्रान्त और शामिल थे। कन्नौज के पास का राज्य कान्यकुब्ज वैश्य, काशी के पास का राज्य प्रतिष्ठान वैश्य, जैजाकभूक्ति या बुन्देलखंड, सौराष्ट्र और कच्छ। यह सब आधीन राज्य भी पृथक होकर स्वतन्त्र राज्य की भांति हो गये और इन सबके पृथक होने से स्वतन्त्र गुर्जर राज्य की सीमायें समाप्त हो गईं।"[११]

"इस हलचल में चालुक्य वंश के संस्थापक मूलराज ने गुर्जर देश के ऊपर, दक्षिणी भाग में अपना अधिकार स्थापित करा लिया और स्वयं अनहिलवाड़ा—पाटन में बस गया। पहले इसका छोटा

सा राज्य सारस्वत मण्डल के नाम से पुकारा गया, गुर्जर देश के नाम से नहीं।

"जब इस छोटे से राज्य की स्थापना हुई तब आधुनिक मालवा, खेटक मंडल और लाट के भागों पर राज्य करने वाला परमार राजा 'गुर्जर' कहलाता था। लेकिन गुर्जरेश्वर की उपाधि मूलराज तथा उसके वंशजों एवं उत्तराधिकारियों पर थी, जो पाटन में राज्य करते थे। निःसन्देह सारस्वत मण्डल और सत्यपुरा मण्डल तथा पार्श्ववर्ती आबू का प्रदेश जिस पर उसने शीघ्र ही अधिकार कर लिया था, प्राचीन गुर्जर देश के भाग थे। ६४० ई० के पश्चात, जिस प्रदेश पर गुजरात के चालुक्य राज्य करते थे, उसका नाम गुर्जर भूमि पड़ा और ज्यों ज्यों इनके राज्य की सीमा महाराजा कर्ण, जयसिंह सिद्धराज और कुमारपाल के आधिपत्य में बढ़ती गई, यह सभी पृथक-पृथक वृद्धियां—एक रूप में ढल कर—गुर्जर भूमि या गुजरात कहलाई। यद्यपि गुर्जर साम्राज्य में उसके प्रत्येक भाग का अलग अलग नाम था किन्तु वह प्रदेश—जिसकी सीमा उत्तर में आबू से लेकर (घटी हुई दक्षिणी सीमा तक) माही तक और नर्मदा तक और उसके बाद दामन गङ्गा तक थी—प्रधानतया गुजरात के नाम से प्रसिद्ध हुई और अनहिलवाड़ा पाटन के राजा स्थायी रूप से गुर्जरेश्वर रहे।"[९]

"माही और दामन गङ्गा के बीच का भाग—जिसे लाट कहते थे, धीरे धीरे (यह नाम) समाप्त हो गया और ईसवी सन् ११७४ में कुमारपाल की जिस समय मृत्यु हुई तब, गुर्जर भूमि की दक्षिणी सीमा दामन गङ्गा तक थी। जिस समय मुसलमानों ने अनहिलवाड़ा पाटन पर अधिकार किया तो जो राज्य उन्हें पाटन के चालुक्यों से मिला उसे गुजरात राज्य कहते थे। इस प्रकार मूलराज और उसके उत्तराधिकारी सम्राट ही ऐसे थे जिन्होंने गुर्जर देश के एक भाग पर अधिकार करके गुर्जरेश्वर की उपाधि धारण की थी और उसी समय—द्वीप समान—इस विस्तृत प्रदेश का नाम गुजरात पड़ा।"[१०]

९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, १६, १७ दी ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश भाग ३ अध्याय प्रथम का १ भाग ४, ५, ६, २, ३, ४,

मुन्शी महोदय ने अपने इस लम्बे चौड़े अवतरण मे यह परिणाम प्रदर्शित किया है कि गुजरात, गुर्जर भूमि, गुर्जरेश्वर तथा गुर्जर यह सब अलग-अलग काल के अलग-अलग नाम हैं, जिनका प्रयोग गुर्जर जाति के नाम पर नहीं हुआ, बल्कि देश के नाम पर प्रसिद्धि पाई गई या यह गुर्जर देश के राजाओं की उपाधि थी, जिसे उन्होंने अपनी मातृभूमि से लिया, और गुर्जर शब्द उस काल में व्यक्तियों के लिये, या जाति विशेष के लिये प्रयोग में नहीं आया। राजाओं तथा सम्राटों की गुर्जर गुर्जरेश्वर उपाधि अपने देश के नाम पर थी। कन्नौज का प्रतिहार वंश या पवार वंश, या चालुक्य वंश, या दूसरे अन्य चौहान वंशों को प्रसिद्धि में गुर्जर शब्द देश के राजा स्वामी होने के कारण आया है। इन राजाओं की मातृभूमि गुर्जर थी इसलिये वे 'गुर्जर' कहलाये। भीनमाल के आसपास आबू प्रदेश के राजाओं ने गुर्जर नाम की प्रसिद्धि और नागभट्ट आदि राजाओं ने भी गुर्जर नाम की प्रसिद्धि अपनी मातृभूमि के नाम पर की, जहाँ इस प्रकार के एक भाषा, एक धर्म, एक सामाजिक स्थिति ही के मनुष्य रहते थे, जिन्हें हुएनत्साग ने तथा दूसरे लोगों ने भी यही नाम दिया है।

मुन्शी महोदय के उक्त प्रमाणों को सही न मानते हुए इतिहास के प्रसिद्ध विद्वानों का, इसके विपरीत, एक दूसरा मत है, जो इस सिद्धान्त के सर्वथा प्रतिकूल है और जिससे यह स्वयं सिद्ध होजाता है कि पहले से ही, देशों की प्रसिद्धि का कारण जातियों के नाम से है और इसका उदाहरण संसार और विशेषकर भारत का इतिहास है। अत्यन्त प्राचीन भारत के अनेक उदाहरण हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं कि स्वयं भारतवर्ष नाम भरतवंशी सूर्यकुल की जाति के नाम से प्रसिद्ध हुआ और कुरु, पांचाल, मत्स्य, सिन्धु, गान्धार आदि जातियों के नामों से प्रान्तों की

प्रसिद्धि इसके उदाहरण हैं और पाणिनि ने भी इसका उल्लेख अपने सूत्र 'जनपद शब्दात् क्षत्रियादञ्' में किया है, जिसमें इससे भी आगे की यह स्थिति प्रकट होती है कि देशों के नामों की प्रसिद्धि का क्रम देश पर शासन करने वाली क्षत्रिय जातियों के कारण है, अन्यथा क्षत्रिय वंशों के अभाव में देशों के नवीन नाम प्रसिद्धि में नहीं आ सकते थे।

यह सिद्धान्त जैसा कि मुन्शी महोदय समझते हैं, किसी अन्धविश्वास या विदेशी जाति मानने वालों के आधार पर नहीं है, बल्कि एक परम्परा और निश्चित सिद्धान्तों एवं गवेषणा के आधार पर उन विद्वानों ने भी माना है, जो गुर्जरों को भारतीय जाति की आर्य शाखा का एक विभाग मानते हैं। महामहोपाध्याय रायबहादुर गौरी शङ्कर हीराचन्द ओझा तथा चिन्तामणि विनायक वैद्य इस सिद्धान्त के ऐसे ही मानने वाले हैं। इन दोनों विद्वानों ने गुर्जर (गूज़र) जाति को आर्यों का प्रसिद्ध राजवंश मानते हुए यह माना है कि इनके उत्कर्ष एवं प्रभुत्व के कारण इस देश के अनेक भागों का नाम गुर्जरत्रा—गुजरात आदि प्रसिद्ध हुआ। सबसे प्रथम हम ओझा महोदय के सिद्धान्तों को, जो पूर्ण प्रमाणों के आधार पर हैं, उपस्थित करते हैं।

"राजपूताना नाम अङ्गरेजों का रक्खा हुआ है जिस समय इनका सम्बन्ध इस देश से हुआ उस समय इस सारे देश के—भरतपुर राज्य को छोड़कर—राजपूत राजाओं के आधीन होने से गोंडवाना, तिलिंगाना आदि के ढंग पर उन्होंने इस का नाम भी राजपूताना अर्थात् राजपूतों का देश रक्खा। इसके भिन्न भिन्न अंशों के तो प्राचीन काल से समय समय पर विभिन्न नाम थे।"[१८]

"गुर्जरों (गूज़रों) के आधीन का, जोधपुर राज्य की उत्तरी सीमा से लगाकर दक्षिणी सीमा तक का सारा मारवाड़, गुर्जरत्रा या गुर्जर (गुजरात) के नाम से प्रसिद्ध है।"[१९]

१८, १९ राजपूताने का इतिहास (प्रथम भाग) द्वितीय संस्करण राय बहादुर महामहोपाध्याय गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा पृष्ठ १, २

"प्राचीन काल में गुर्जर नाम का एक राजवंश था जिसके मूल पुरुष के नाम पर उसके वंशधर गुर्जर (गूजर) कहलाये और इनके आधीन देश गुर्जर-देश अथवा गुर्जत्रा (गूजरों से रक्षित देश), गुर्जर, गुजरात के नाम से प्रसिद्ध हुआ।"[२०]

"इतिहास सम्बन्धी प्राचीन अनुसन्धान से यह बात स्पष्ट होती है कि पहले ही से प्रान्तों की प्रसिद्धि तत्कालीन राजवंशों के नाम से होती आई है, जैसे कि जयपुर के कछवाहों के वंशधर शेखा तथा इनके वंशजों का देश शेखावाटी, झाला के वंशजों से झालावाड, मेवाड के राजा गुहिल के वंशजों का देश गोहिलवाड़ा कहलाया।[२१] साथ ही इनमें जो देश काठियों के अधिकार में रहा, वह काठियावाड कहलाया। अति प्राचीनकाल में यदु के भाई—अनु के वंशज—राजा बलि के पांचों पुत्रों (अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, पुन्ड्र और सुह्य) हुए और उन्हीं के नाम से भिन्न भिन्न प्रान्त प्रसिद्ध हुए।"[२२]

"अङ्गो: वङ्ग कलिंगश्च पुन्ड्रः सुह्यश्च ते सुताः।
तेषां देशा समाख्याता स्वनामकथिता भुवि ॥ ५३ ॥
अङ्गस्यांगो भवेद्देशो वङ्गो वंगस्य च स्मृतः।
कलिंगविषयश्चैव कलिंगस्य च स स्मृतः ॥ ५४ ॥"[२३]

---

२० नागरी प्रचारणि पत्रिका 'गुजरात देश और उसपर कन्नौज के गुर्जर राजाओं का अधिकार' (रा० ब० म० पा० गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा) भाग १० पृष्ठ ३०६

२१ "उदयपुर राज्य (मेवाड) का प्राचीन नाम मिविदेश था, चित्तौड से ७ मील उत्तर में उसके खण्डहर हैं, वहां पर मेव जाति का अधिकार होने से उक्त देश का नाम मेदपाट या मेवाड कहलाया।" (राजपूताने का इतिहास प्रथम भाग पृष्ठ २)

२२ ना० प्र० पत्रिका पृष्ठ ३०६

२३ महाभारत आदि पर्व अध्याय १०४ श्लोक ५३-५४

"इसी प्रकार गुर्जर नामक राजवंश के आधीन देश गुर्जर देश अथवा गुर्जरत्रा (गूजरों से रक्षित) नाम से प्रसिद्ध हुआ। आज तक भी पंजाब प्रान्त का गुजरात, गुजरांवाला तथा बम्बई का गजरात—इस बात को प्रकट करता है कि किसी समय गुजरों (गूजरों) का अधिकार इन देशों पर पूरे गौरव पर रहा है। पहले समय में गुजरात बड़ा विस्तृत देश था और वर्तमान राजपूताने का अधिकांश भाग गुजरात में सम्मिलित था। वर्तमान जोधपुर का उत्तर से दक्षिण का सारा पूर्वीय भाग गुजरात में था।[११] वर्तमान समय में राजपूताने के दक्षिण के जिस देश को गुजरात कहते हैं, उसकी सीमा पालनपुर राज्य की उत्तरी सीमा से लेकर दक्षिण में थाना जिले की उत्तरी सीमा तक है तथा पश्चिम का काठियावाड़ भी उसमें सम्मिलित है। इस सीमा के परिवर्तन तथा घटाव-बढ़ाव का कारण यह था कि पहले देश की सीमा उस देश के स्वामियों के राज्य के घटाव बढ़ाव के अनुसार ही होती रहती थी।"[२४]

'इतिहासज्ञों का अनुमान है कि विक्रमी सम्वत् २०७ के बाद गुर्जरों का राज्य भीनमाल मे हुआ क्योंकि उस समय के पूर्व के रुद्रदामा के शिलालेखों मे जहां उसके आधीन देशों के नाम दिखाये हैं, वहाँ गुर्जर नाम न होकर श्वभ्र और मरू (पूर्वापरा करावन्त्यनूपानर्त सुराष्ट्र श्वभ्र मरू कच्छ सिन्धु सौवीर कुकुरापरान्तनिषादादिनाम समग्राणाम्) नाम गिनाये हैं। उसके पीछे किसी समय गुर्जर राज्य की स्थापना का अनुमान है। क्षत्रपों के राज्य के पीछे किसी समय गुर्जर जाति के आधीन जो देश रहा वह गुर्जर देश या गुर्जरत्रा (गुजरात) कहलाया। हुएनत्सांग गुर्जर देश की परिधि ८३३ मील बताता है।"[२५]

२४ महामहोपाध्याय राय बहादुर गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा लिखित नागरी प्रचारिणी पत्रिका "गुजरात प्रदेश और उस पर कन्नौज के राजाओं का अधिकार" लेख भाग १० पृष्ठ ३०६—३०७—३०८।

"गुर्जरों का विक्रमी सम्वत् ४०० में भी पूर्व या उसके आसपास भीनमाल पर शासन करना सम्भव हो सकता है। अनुमानतः उस समय के १६० वर्ष पीछे विक्रमी सम्वत् ५६७ (ई० सन् ५१०) के लगभग हूणों का अधिकार राजपूताने पर हुआ, इस अवस्था में गुर्जरों का हूण मानना केवल कपोल कल्पना है।"[२७]

"इस समय गुर्जर अर्थात गूजर जाति के लोग विशेष कर खेती या पशु पालन से अपना जीवन निर्वाह करते हैं, परन्तु पहले उनकी गणना राजवंशियों में थी, अब तो उनका केवल एक राज्य समथर (बुन्देलखण्ड) और कुछ जमींदारियां संयुक्त प्रदेश आदि में रह गई। पहले पंजाब, राजपूताना तथा गुजरात में उनके राज्य थे। चीनी यात्री हुएनत्सांग विक्रमी सम्वत् की सातवीं शताब्दि के उत्तरार्ध में हिन्दुस्तान में आया। उसने अपनी यात्रा की पुस्तक में गुर्जर देश का वर्णन किया है और उसकी राजधानी भीनमाल-भिल्लमाल-श्रीमाल जोधपुर राज्य के दक्षिणी विभाग में बतलाया है। हुएनत्सांग का गुर्जर देश ८३३ मील का है। इससे पाया जाता है कि वह देश बहुत बड़ा था और उसकी लम्बाई अनुमानतः ३०० मील या उससे भी अधिक होनी चाहिये। शिलालेखों से पाया जाता है कि ७वीं विक्रमी शताब्दि से ६वीं शताब्दि तक का, जोधपुर राज्य का उत्तर से दक्षिण तथा सारा पूर्वी हिस्सा गुर्जर देश (गुर्जत्रा-गुजरात) के अन्तर्गत था। इसी तरह दक्षिण और लाट के राठौरों तथा प्रतिहारों के बीच की लड़ाइयों के वृतान्त से जाना जाता है कि गुर्जर देश की दक्षिणी सीमा लाट देश में जा मिलती थी।"[२८]

---

२५ राजपूताने का इतिहास प्रथम भाग (गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा) पृष्ठ १५१

२६ वही पृष्ठ १४८

२७ वही पृष्ठ ६४

२८ वही पृष्ठ १४८–४६

"भीनमाल का गुर्जर राज्य चावड़ों के हस्तगत होने के पीछे, विक्रमी सम्वत् की ११वीं शताब्दि के प्रारम्भ में, अलवर राज्य के पश्चिमी विभाग तथा उसके निकटवर्ती प्रदेशों पर, गुर्जरों के एक और राज्य के होने का भी पता चलता है। अलवर राज्य के राजौरगढ़ नामक प्राचीन किले से मिले हुए विक्रमी सम्वत् १०१६ (ई० सन् ६६०) माघ सुदि १३ के शिलालेख से पाया जाता है कि उस समय राज्यपुर (राजौरगढ़) पर प्रतिहार गोत्र का गुर्जर (गूजर) महाराजाधिराज सावट का पुत्र महाराजाधिराज परमेश्वर क्षितिपाल (महिपाल) का सामन्त था। उसके शिलालेख में मथनदेव को महाराजाधिराज परमेश्वर लिखा है, जिससे अनुमान होता है कि यह क्षितिपाल देव (महीपाल) के बड़े सामन्तों में रहा होगा। उसी लेख से यह भी जाना जाता है कि उस समय वहां पर गुर्जर जाति के किसान भी थे। (शिलालेख निम्न प्रकार है—श्रीराज्यपुरावस्थितो महाराजाधिराजपरमेश्वर श्री मथनदेवो महाराजाधिराज श्रीसावटसूनुगुर्ज्जरप्रतिहारान्वय ·· ··· ··· ··· सतथैवैतत्प्रत्यासन्नः श्री गुर्ज्जरवाहितसमस्त क्षेत्र समेतश्च)।"[१६]

ओझा महोदय ने तरलतरतारतरवारिदारितोदितसैन्धव कच्छेल्ल सौराष्ट्रचावोटकमौर्य्यगुर्जरादिराज्ये शिलालेख सामन्त पुलकेशि के कलचूरि सम्वत् ४६० (ई० सन् ७३६) के दानपत्र, से यह निष्कर्ष निकाला है कि चापवंश गुर्जरवंश से भिन्न वंश उस काल में प्रसिद्धि में आगया था। "वर्तमान गुजरात के भड़ौंच नगर पर भी गुर्जरों का राज्य विक्रमी सम्वत् की सातवीं आठवीं शताब्दि में रहने का पता उनके दानपत्रों से लगता है। सम्भव है कि उक्त सम्वतों के पीछे भी उनका राज्य वहां रहा हो। आश्चर्य नहीं है कि भीनमाल के गुर्जरों का राज्य ही भड़ौंच तक फैल गया हो और भीनमाल का राज्य उनके हाथ से निकल जाने पर भी, भड़ौंच के राज्य पर उनका या उनके कुटुम्बियों का अधिकार बना रहा हो। भड़ौंच के गुर्जर राजाओं के दानपत्रों से प्रकट होता है कि उस समय गुर्जर राज्य के अन्तर्गत, भड़ौंच जिला, सूरत जिले

के ओरपाड चौरासी और बारडोली के परगने तथा उसके पास वाले बड़ौदा राज्य, रेवाकांठा और सचीन राज्य के इलाके भी रहे होंगे।" १०

"नवसारी से मिले हुए भड़ौच के गुर्जरवंशी राजा जयभट (तीसरे) कलचूरि सम्वत् ४५६ विक्रमी सम्वत् ७६२ के दानपत्र में गुर्जरों का, महाराजा कर्ण (भारत प्रसिद्ध) के वंश में होना लिखा है।" ११

इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान ओझा महोदय के उपरोक्त अवतरण से, यह बिलकुल स्पष्ट रूप से मालूम पड़ता है कि आजकल की भांति पहले ही से गुर्जर शब्द का सम्बन्ध गूजर अथवा गुर्जर जाति से है। मध्यकालीन भारतीय इतिहास के सम्बन्ध में अन्वेषण द्वारा शिलालेख, ताम्रपत्र, काव्यों एवं पर्यटकों के वृतान्तों में जो 'गुर्जर' शब्द अथवा इससे मिलते जुलते विशेषण युक्त अनेक शब्द आये हैं, उनका सीधा सम्बन्ध गुर्जर जाति एवं गुर्जर राजवंश के राजाओं से है। गुर्जर देश अथवा भूमि के सम्बन्ध में यह शब्द उसी काल में प्रयोग में आया है, जबकि गुर्जर जाति के व्यक्तियों का उससे प्रत्यक्ष या परोक्ष सम्बन्ध स्थापित हुआ हो। आम बोलचाल की भाषा में भी गूजर अथवा गुर्जर शब्द एक खास जाति का सम्बन्ध प्रकट करता है। गुजरात शब्द का संस्कृत भाषा में शुद्ध रूप गुर्जरत्रा है, जिसका एक ही अर्थ है, जिसे इतिहास के विद्वानों ने 'गुर्जरों से रक्षित प्रदेश' प्रसिद्ध किया है।

इतिहास द्वारा भी यही पता चलता है कि मध्यकालीन भारत में गूजर नामक एक क्षत्रिय राजवंश था, उसके राजाओं ने अपनी जातीय सैनिक स्थिति से जिन प्रदेशों पर अधिकार स्थापित करके राज्य स्थापित किया, वे राज्य गुर्जर जाति द्वारा रक्षित होने के

२६-३०-३१ वही पृष्ठ, १४६-५० (शिलालेखों के लिये देखिये, एपिग्राफिका-इन्डिका जिल्द ३ पृष्ठ २६६)

कारण गुर्जरत्रा (गुजरात) कहलाए। स्वदेशी राजा होने के कारण, प्रजा ने, इन गुर्जर क्षत्रियों के आधीन देशों में अपने को बाहरी आक्रमणों से सुरक्षित एवं आन्तरिक निरापद व्यवस्था में प्रसन्न होकर यह नाम दिया।[३२]

जातियों की महत्त्वपूर्ण स्थिति के कारण, देशों के नामों की प्रसिद्धि का क्रम बहुत विस्तृत है। इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान श्री चन्द्रगुप्त वेदालङ्कार ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'वृहत्तर भारत' में इस सिद्धान्त को निम्न शब्दों में स्पष्ट किया है— "जिस प्रकार गुर्जरों के नाम पर गुजरात, भोटों के नाम पर भूटान, मंगोलों के नाम पर मंगोलिया और तुर्कों के नाम से टर्की आदि देशों के नाम पड़े, ऐसे ही सुवर्ण (सुमेर जाति) जाति के लोगों के नाम से सुराष्ट्र (सौराष्ट्र) नाम पड़ा। यह सुराष्ट्र या सुमेर जाति इस सुवर्ण सदृश सौराष्ट्र में निवास करती थी।[३३]

मुन्शी महोदय के साहसपूर्ण वक्तव्य के विरोध में इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान चिन्तामणि विनायक वैद्य ने इस प्रश्न पर विशेष रूप से विचार किया है और उन्होंने भी इसी सिद्धान्त की पुष्टि की है कि गुर्जर शब्द जाति के लिए ही मध्यकालीन भारतीय इतिहास में प्रयोग में आया है। इस सिलसिले में यह स्पष्ट कर देना अत्यन्त आवश्यक है कि इतिहास के ये विद्वान गुर्जरों को किसी विदेशी कबीले का स्वीकार नहीं करते और मुन्शी महोदय जो यह लिखते हैं कि "गुर्जर जाति विषयक सिद्धान्त गुर्जरों को विदेशी जाति मानने वालों की कल्पना करने वालों के ही आधार पर ही है"[३४] सही नहीं है। महामहोपाध्याय राय बहादुर गौरी शङ्कर हीराचन्द ओझा एवं चिन्तामणि विनायक वैद्य गुर्जरों (गूजरों) को मध्यकालीन भारत का ऐतिहासिक राजवंश मानते हैं और उन्हें

३२ मेडिवल हिन्दू इण्डिया प्रथम भाग पृष्ठ २५१–२५२

३३ वृहत्तर भारत (चन्द्रगुप्त वेदालंकार) पृष्ठ ४५६

३४ दी ग्लौरी दैट वाज गुर्जर देश भाग ३ पृष्ठ ७

आर्य जाति के क्षत्रिय वर्ग में पूर्णतया सम्मिलित पाते हैं।[३४]

वास्तव में गुर्जर अथवा गूजर वैदिक कालीन आर्यराजन्य (क्षत्रिय) समूह का राजपूतों के समान उपविभाग है। जिनके ऋषि, गोत्र, कुल वंश-परम्परा उन्हीं के समान है।[३६] इतिहास में विद्वानों ने जो कल्पना वैदिक क्षत्रियों के लोप होने की, अपने मनमाने ढंग पर करली है, वह किसी भी समय में नहीं हुई है।[३७] उनमें, समय समय पर जिसका इतिहास साक्षी है, ऐसे महान पुरुष उत्पन्न होते रहे हैं, जिन्होंने महर्षि तक के पद प्राप्त किये हैं।[३८] गुर्जर आर्य जाति के उन्हीं क्षत्रियों की सन्तान हैं और राजपूत जाति के साथ उनके वंशों की तथा आज तक उनकी नितान्त साम्यता है। उन्होंने इतिहास में राजपूतों से अनेक सदियों पूर्व महत्वपूर्ण उत्कर्ष प्राप्त किया है और प्राचीन क्षत्रिय एवं वर्तमान राजपूतों के बीच में उनकी साम्राज्य रचना और भारतीय संस्कृति के लिये महत्वपूर्ण क्रियाशीलता आदर्श रूप में रही है।

वैद्य महोदय लिखते हैं कि:—

"अभी तक यह देश गुजरात सिर्फ इसलिये कहलाता है कि यहाँ पर गुर्जर (गूजर) राजवंश ने—जिनके दानपत्रों में स्वयं उन्होंने अपने को गूजर जाति अथवा वंश का होना प्रकट किया है—२०० वर्ष के लगभग सफलता के साथ शासन किया है।"[३६]

---

३५ राजपूताने का इतिहास जिल्द १ पृष्ठ १४७

३५ मेडिवल हिन्दू इन्डिया जिल्द १ पृष्ठ २१, २५, २४१, ७१, ८३

३६ बम्बई गजेटियर जि० १२—६४—६६। जिल्द ९ पृष्ठ ४८२—८६। सहारनपुर गजेटियर पृष्ठ १०२। ट्राईब्स एण्ड कास्टस क्रूक भाग २ पृष्ठ ४४७। इलियट ग्लैसरी पृष्ठ ९९। ट्राईब्स एण्ड कास्टस (शेरिंग) पृष्ठ २३५। ट्राईब्स एण्ड कास्टस सी० पी० (रसल) गूजर। पंजाब कास्टस (इबटसन) पृष्ठ १८६

३७ मेडियल हिन्दू इण्डिया (वैद्य) भाग १ पृष्ठ ३५६

३८ प्राचीन भारत का इतिहास (रमाशङ्कर त्रिपाठी) पृष्ठ ३९-४०

"पुराने नाम को हटाकर उन्होंने लाट, आनर्त एवं कैवर्त के स्थान पर अपना नाम गुजरात दिया है, इससे प्रकट है कि उनका सफल शासन, उत्तम व्यवस्थापूर्ण एवं वल्लभी लोगों के समान प्रसन्नता एवं आनन्द से परिपूर्ण था। यद्यपि अनेक परिस्थितिवश उनका इतिहास सम्बन्धी विस्तृत विवरण, उनके राज्य में स्थित सुख समृद्धि का विस्तार से वृत्तान्त नहीं मिलता, लेकिन गुजरात नाम सम्बन्धी—उनकी प्रजा द्वारा की गई—यादगार से, उनके उत्तम शासन का पता चलता है, जिसे प्रजा ने प्रसन्न रहते हुए (संस्कृतकालीन समय में) गुर्जरत्रा—गुर्जरों से रक्षित प्रदेश—गुजरात, यह नाम देकर उनकी स्थायी स्मृति इस प्रदेश में कर दी। साथ ही गुर्जरों ने अपनी प्रभावशाली भाषा भी अपनी आकर्षक स्मृति के रूप गुर्जर नाम के साथ (गुजराती) वहाँ की प्रजा पर अपना स्थायी प्रभाव रखने के लिये छोड़ दी। वर्तमान गुजराती भाषा वह है जिसे गुर्जर (गूजर) अपने साथ उत्तरीय भारत से लाये और अनेक राज्यकाल से वहाँ उसका प्रयोग चला आरहा है।"[४०]

वैद्य महोदय ने ओझा की तरह, गुर्जर शब्द से गूजर जाति का अस्तित्व मानते हुए, गुर्जर शब्द को पूरी तरह जातिवाचक माना है। और उन्होंने गुर्जर जाति को हुएनत्सांग द्वारा क्षत्रिय लिखा जाना बिलकुल यथार्थ माना है, जिस पर कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिये।[४१] मध्ययुगीन भारतीय-इतिहास में जो गुर्जर शब्द आया है, वैद्य महोदय उसका मूल कारण गुर्जर जाति के राज्यों, राजाओं और उनके आधीन प्रदेशों के कारण ही मानते हैं। इस सम्बन्ध में उन्होंने गूजर, जाट, मरहठा इन तीनों शब्दों पर खास तौर से विचार

३६-४० मडिवल हिन्दू इन्डिया भाग १ सी०वी० वैद्य पृष्ठ २५४-२५७

४१ वही पृष्ठ ६५— "And it is well-known that among the many sub sections of Rajputs there is at present a section by the name of Gurjars, the mention by Hiuen-Tsang of a Kshatriya King in Gurjars need not therefore surprise us"

किया है और दोनों जातियों को भारतीय-आर्य स्वीकार करते हुए ऐतिहासिक परम्परा, नृ-वंश, विज्ञान, वर्तमान स्थिति तथा पुरातत्व वेत्ताओं के अन्वेषण के आधार पर जाट और गूजर का खास तौर से जातिवाचक महत्व स्वीकार करते हुए, इनके प्राचीन रूप जर्टा (जाट) गुर्जर (गूजर) को आर्य जाति के वंश प्रमाणों के आधार पर स्वीकार किया है कि यह शब्द जातियों के सिवाय किसी भी प्रकार, किसी और किसी दूसरे अर्थ को प्रकट करने वाले नहीं हैं। इसको स्पष्ट करते हुए वे लिखते हैं कि—

"यद्यपि जाट, गूजर और मरहठा शब्दों की प्रसिद्धि मध्यकालीन भारत के प्रारम्भिक इतिहास काल में ही हुई है, किन्तु इससे यह मानना ठीक नहीं है कि यह कोई नवीन जातियां थीं, जो भारत में इस काल में या, इससे कुछ पूर्व आईं। नये नामों की प्रसिद्धि और उत्पत्ति के कितने ही कारण प्रकाश में आने के होते हैं, इससे हमें इतिहास में छटी सातवीं शताब्दि से पूर्व से आने वाले जाट, गूजर और मरहठा नामों के इतिहास में प्रकट होने पर आश्चर्यान्वित नहीं होना चाहिये। 'जाट' शब्द पहले पहल 'अजयज्जर्टो हूणान' चन्द्र के व्याकरण में, अधूरे विशेषण के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।"

गुर्जर और महाराष्ट्र शब्द, दो राज्यों का वर्णन करते हुए हुएनत्सांग ने अपनी यात्रा पुस्तक में प्रयोग किये हैं। बाण महाकवि ने भी 'गुर्जर' शब्द का प्रयोग जाति या राजा के लिये 'गुर्जर प्रजागर' रूप में जिसका आशय 'गुर्जरों की निद्रा भग करने वाला,' लिखा है। इसके अलावा दद्दा के दानपत्र में भी गुर्जर शब्द वंश अथवा जाति के लिये (विपुल गुर्जर नृपान्वयप्रदीपनो) आया है।[४३]

४२-४३ हिस्ट्री आफ मेडिवल हिन्दू इन्डिया भाग १ सी० वी० वैद्य पृष्ठ ६४-६५

"Though these names, it must be admitted, came into use or prominence at this time, this cannot be an argument to hold that they were new races come into India at or a little before this

"यद्यपि महाराष्ट्री भाषा का वर्णन वररुचि ने किया, लेकिन महाराष्ट्र शब्द प्राचीन समूहों में प्रयोग में नहीं आया और वराहमिहिर ने भी इसके लिये और ही शब्द प्रयोग किया है। हुएन त्सांग ने इसे सबसे पहिले अपनी यात्रा काल मे वर्णन किया है। महाराष्ट्र शब्द संस्कृत भाषा का है, जो जाति और राज्य दोनों के लिये प्रयोग मे लाया गया है। लेकिन जाट और गूजर एवं उनका संस्कृत (जर्टा=जाट, गुर्जर=गूजर) निश्चय ही (जर्टा-गुर्जर) जातिवाचक है और देशवाचक तो यह किसी भी प्रकार नहीं हो सकते।"[३]

---

time. New names arise from various causes as we shall find in later history; and it need not surprise us that the names Jat, Gujar and Maratha came into use in the sixth or sometime before the seventh century. The word Jat is found, first in Chandra's grammar, where he uses the word in the *sentence अजयज्जर्टो हूणान given to illustrate the use of* the Imperfect. Gurjara and Maharashtra are words used by Hiuen Tsang to denote two kingdoms Bana also uses the word Gurjara as the name of a people or king in the word गुर्जरप्रजागर As already shown the word Gurjara appears in a grant of Dadda also. Maharashtra is a name which we do not find used earlier, though the language Maharashtri is mentioned even by Vararuchi of the first century A. D. As applied to the present Maratha country Maharashtra is used by Hiuen Tsang only, previous Indian writers such as Varaha Mihira using other names to denote it. The word Maharashtra is a Sanskrit word which can well be interpreted as denoting a people or a country but what do the

वैद्य महोदय के उपरोक्त अवतरण से भी यही बात सिद्ध होती है कि गुर्जर अथवा गूजर मध्ययुगीन भारत में आर्यों की एक ऐसी वीरकर्मा जाति थी, जिसने अपनी महत्वपूर्ण राजनैतिक स्थिति से लाभ उठाकर अपने आधीन अनेक प्रदेशों को गुर्जरत्रा (गुजरात) एवं गुर्जर आदि नामों से प्रसिद्ध किया। उनकी महत्त्वपूर्ण बसावट एवं राज्य-संस्थान से ही प्रदेशों की प्रसिद्धि का क्रम बढ़ता चला गया। गुजराती भाषा और गुर्जर देश यह गूजरों की देन है। प्रारम्भ का गुजरात राजपूताने की मरुभूमिका वह प्रदेश है जिसे रुद्रदामा गिरनार के शिलालेख ने 'स्वभ्र' तथा 'मरु' नाम दिया था और जिसे ह्युएनत्सांग ने ८३३ मील का गुर्जर देश बतलाया है। भोजदेव प्रथम के विक्रमी सम्वत् ६०० के तथा सेवाग्राम के ताम्रपत्र में (गुर्जरत्रा मन्डल-देश) जिसका उल्लेख मिलता है। यह प्रदेश जोधपुर राज्य का उत्तर से दक्षिण तक पूर्वी हिस्सा था। मुन्शी महोदय ने भी इसी का वर्णन गुर्जर (गुजरात) नाम से आबू पर्वत के समीप की भीनमाल राजधानी के आसपास की भूमि के प्रदेशों के लिये किया है। भाषा, विज्ञान और ऐतिहासिक स्रोतों से यह पता चलता है कि इस प्रदेश में गूजरों की उस काल में मुख्य बसावट और राजधानी थी और यहीं से नवीन संगठित बल प्राप्त करके उन्होंने अपना अलग नाम से उत्कर्ष प्रारम्भ किया।

(६)

भारतीय इतिहास के मध्ययुगीन काल में, गुर्जर जाति के कारण एक नये अध्याय का सूत्रपात हुआ। क्षत्रिय-ब्राह्मण-संघर्ष,

words Jat and Gujar or their Sanskrit originals Jarta and Gurajara mean? They are probably the names of peoples and not countries according to my view. History of Mediaeval Hindu India volume I (C V. Vaidya) Page 64–65.

बौद्धधर्म के प्रसार, सिकन्दर के हमले, शूद्र राजा महापद्मानन्द के तथा चन्द्रगुप्त मौर्य के विशाल साम्राज्यों के कारण, गणराज्य तथा छोटे छोटे राज्यों की समाप्ति तथा ग्रीक, पार्थियन, शक, कुशान-यूची एवं हूण जातियों के निरन्तर हमलों के कारण भारतवर्ष की राजनैतिक स्थिति में एवं राजवंशों में अनेक महान् अन्तर उपस्थित होगये। देश काल की परिस्थिति के अनुसार, प्राचीन वैदिक वर्ण व्यवस्था में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन प्रारम्भ होगये। उत्तर पश्चिमीय मार्गों से बाहरी होने वाले निरन्तर के हमलों ने हिमालय की रक्षा पंक्ति तोड़ दी और भारतीय क्षत्रिय-गुर्जर भी पञ्जाब के शस्य श्यामल प्रदेश से हटकर राजपूताने के रेगिस्तान तथा मालवा और दक्षिण पश्चिम में पहुंच गये। आबू पर्वत पर रहने वाले ऋषि मुनियों द्वारा होने वाले सामयिक यज्ञों से चेतनता के प्रतीक बनकर इन क्षत्रियों ने नव-जागृति का सन्देश प्राप्त किया। विदेशों से आने वाली जातियों को, यहां के निवासियों ने, कोई स्थायी महत्व नहीं दिया और वे आर्यजाति, भारतीय वर्णाश्रम व्यवस्था, संस्कृति, सभ्यता और भाषा रूप में एक होकर यहां की जातियों में घुल मिलकर एक रूप होगईं। भारतीय संस्कृति की यह एक महत्वपूर्ण विजय थी, जिसने उनकी राजनैतिक विजय एवं शौर्य को पराजय में परिणित कर दिया। क्षत्रियों के नेताओं और वैदिक धर्म के रक्षक ऋषि मुनियों को, इस काल में क्षत्रियों के नवीन संगठन की आवश्यकता अनुभव हुई, जो अपने खास रीति रिवाजों द्वारा, इन जातियों को आत्मसात करके, धार्मिक और सामाजिक दृष्टिकोण से, अपने जातीय रंग रूप में एक रूप करके मिलाले और अपने पराक्रम शौर्य द्वारा भविष्य में होने वाले आक्रमणों से देश की रक्षा करके शत्रुओं को नष्ट करने की प्रसिद्धि प्राप्त करें। राजपूत, गूजर, जाट इस काल की ऐसी ही लड़ाकू जातियां थीं, जिनकी भीतरी व्यवस्था और नियमों को ब्राह्मणों ने चुपचाप स्वीकार कर लिया और यह ब्राह्मणों को गुरु मान कर उनकी

प्रतिष्ठा समझौते के अनुसार करने लगे। [44] इसी काल के अनेक लड़ाकू वीर जाति एवं क्षत्रियों के अनेक वंशों का संगठित आर्य जाति का वर्तमान समूह गुर्जर है, जिनको उनकी महत्वपूर्ण सामाजिक एवं राजनैतिक स्थिति के कारण अलग जातीय सत्ता और क्षत्रिय वंश की प्रसिद्धि प्राप्त हुई और अपनी युद्ध प्रवृत्ति तथा संघर्ष शक्ति द्वारा विदेशी जातियों पर विजय प्राप्त करने और आर्येतर धर्मों के विद्वेषी होने के कारण इतिहास में प्रसिद्ध होगये।

गुर्जरों के नाम पर गुर्जर देश और गुजरात तथा इसी प्रकार की प्रसिद्धि के क्रम को इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान स्मिथ, भण्डारकर, क्रूक, इलियट, रसल, हीरालाल, जेक्सन, जेम्स केम्पबेल, कनिंघम, भगवतशरण उपाध्याय, रमाशङ्कर त्रिपाठी, राय चौधरी, सत्यकेतु विद्यालङ्कार, जयचन्द्र विद्यालङ्कार आदि सैंकड़ों इतिहास के प्रकाण्ड पण्डितों ने स्वीकार किया है। [45] इसलिये श्री मुन्शी महोदय का गुर्जर शब्द इतिहास में जाति के लिये पाये जाने का दावा कोई आधार नहीं रखता और उनका यह लिखना कि गुर्जर नाम की जाति के कारण मध्यकालीन भारत में या किसी समय गुजरात गुर्जर, आदि अनेक शब्द गुर्जर जाति के कारण प्रसिद्धि में नहीं आये वरन् यह शब्द मातृभूमि गुर्जर देश गुजरात से जाति ने लिया है, एक निस्सार कल्पना है।

---

४४ प्राचीन भारतीय परम्परा और इतिहास (गण नास्तिक युग) पृष्ठ ४४३ (रांगेय राघव)

४५—आर्चियालोजिकल रिपोर्ट २ पृष्ठ ६१। बम्बई गजेटियर जि० १-पृष्ठ १३८ व जि० ६ भाग १ पृष्ठ ४८८। ट्राईब्स एन्ड कास्टस क्रूक पृष्ठ ४४१। रसल हीरालाल गूजर लेख के प्रारम्भ में, इलियट ६६, प्राचीन भारत का इतिहास भगवतशरण उपाध्याय पृष्ठ ३११, इन्डियन एन्टी क्वेरी भाग ११ पृष्ठ २४, जि० ४० पृष्ठ २२ तथा १६०५ का बम्बई रायल एशियाटिक सोसाइयटी जनल ४१३-३३ (एक्सट्रा नम्बर)

(७)

गुर्जर देश का जो परिभाषा संस्कृत के विद्वानों ने की है, वह हमारे इसी सिद्धान्त की पुष्टि करती है। वह इस बात के महत्व को प्रकट करती है कि असाधारण परिस्थितियों में देश, धर्म एवं जनता जनार्दन की रक्षा करके, क्षत्रिय वंश के अधिनायकों ने अपना अलग जातीय नाम 'गुर्जर' अपने महत्व के कारण प्रारम्भ में प्रसिद्ध किया था, जो इस जाति का महत्व प्रकट करता है। भीनमाल और उसके आस पास की, आबू पर्वत एवं बाद के गुजरात की राजधानी—भड़ौंच की गुर्जर राज्य स्थिति—इस बात को प्रकट करती है कि उस समय इन स्थानों पर बसने वाली वीर जाति गुर्जरों के द्वारा ही बाहरी जातियों से देश धर्म की रक्षा हो पाई है।

वसिष्ठ के अग्निकुण्ड से उत्पन्न, क्षत्रिय वीरों की कथा का भी महत्व यही है कि शत्रुओं को नष्ट करने वाले वीर पुरुष, जो क्षत्रिय वंशों के थे—अपने तेजस्वी वीर रूप में अग्नि के समक्ष—यज्ञ-विधि से दीक्षा लेकर, शत्रुओं को नष्ट करने के लिये उपस्थित हुए थे और उनके कुल गुरुओं ने, देश के सुख, सौभाग्य एवं समृद्धि की रक्षा करने और शत्रुओं को नष्ट करने का आदेश दिया था। पवार, प्रतिहार, सोलंकी, चौहान वंश (जिनका अस्तित्व पहले भी था) की अग्निकुन्ड की उत्पत्ति इसीलिये प्रसिद्ध हुई और इन्हीं बातों से यह अग्निकुल के क्षत्रिय कहलाये। यद्यपि सूर्य, चन्द्रमा से मनुष्यों की उत्पत्ति असम्भव है किन्तु उसका आशय उनकी तेजस्विता एवं उनके पूर्व और उत्तर के राज्यों का सूचक है। उसी प्रकार अग्निकुल, अग्निकुण्ड से उत्पन्न नहीं बल्कि अग्निकुल के सामने प्रतिज्ञाबद्ध क्षत्रिय कुलों का सूचक था। इन्हीं नवीन अग्निकुल के क्षत्रियों का समावेश गुर्जर जाति में हुआ और उन्होंने अपने नाम से देशों की प्रसिद्धि का क्रम अपनी गौरवपूर्ण विजय एवं उत्तम शासन द्वारा प्रचलित किया। पवार वंश की चार चावड़ा शाखा का—जो प्रबल धनुर्धर थे और शङ्कर के धनुष को हाथ में लेकर देश रक्षा के लिये प्रतिज्ञाबद्ध थे—इसकाल के गुर्जर

इतिहास में महत्वपूर्ण पद था और भीनमाल, भड़ौंच, वढवान, अनहिलवाड़ा पाटन आदि अनेक स्थानों में यह गुर्जर क्षत्रिय वंश भारत की रक्षा पंक्ति में अग्रणीय रहे। वर्तमान गूजरों (गुर्जरों) में भी यह पाचों वंश महत्वपूर्ण रीति में पाये जाते हैं, जो गुर्जरों की तत्कालीन समय की जाति सम्बन्धी स्थिति प्रकट करते हैं।

गूजर शब्द संस्कृत के गुर्जर (गुज्जर) से है। गुर्जर देश के सम्बन्ध में ऐतिहासिक विवरणों से एवं संस्कृत भाषा के प्रसिद्ध कोष 'शब्द कल्पद्रुम' [४६] से तथा अन्य विद्वानों से यह पता चलता है कि जिस समय गुर्जर देश प्रसिद्धि में आया, उस समय वहां

---

४६ शब्द कल्पद्रुम स्यार राजा राधाकान्त देव बहादुरेण विरचित शकाब्दा ११८१ खन्ड २ पृष्ठ ३४१ में गुर्ज्जर देश की उत्पत्ति निम्न प्रकार प्रदर्शित की है—

गुर्ज्जर (पुलिंग) गुर् धातु कृतताडन, वधोद्यमादिव वा उज्जरयति यो देश कलिङ्ग साहसिका इति बहुस्य जनेलसगेति ज्ञेयम्। गुज्जराट देश इति शब्द रत्नावली इसी प्रकार गुर्ज्जरी (स्त्रीलिंग) जु + णिच + अच। गुरिति धातु कृत ताडनादिकम् जर्ज्जीयंत्र इति अधिकरणे अच्। गुर्ज्जरः देश तस्यप्रियति ङीप्, यद्वा गुर्ज्जर देश प्रियोयस्या इति अण ङीप् च गुर्ज्जर देशवासिनी अतो गुर्ज्जरीति के चित् रागणी विशेष-गुर्ज्जरी —

रागणी विशेष- इति हलायुध इयन्तु भैरवरागस्य रागणीति बोध्यम् यथा संगीत दर्पणे रागविवेकाध्याय ॥१६

"भैरवी गुज्जरी" रामकिरी गुणक्रिरी तथा बाङ्गाली, सैन्धवी चैव भैरवस्य वराङ्गना ॥' अस्यागान वेला निर्णयो यथा तत्रैव ॥२० वेलावली च मल्लारी वल्लारी सोम गुर्जरी इयहि ग्रीष्मऋतौ स्वस्वामिनी भैरव रागणसह जीयेते यथा तत्रैव ॥२७॥ 'भैरव सह सहायस्तु ऋतौ ग्रीष्मे प्रगीयते।' इति सोमेश्वर मतम्। हनुमन्मते तु इयमेव मघ रागस्यस्त्री यथा तत्रैव ॥३७॥

'मल्लारी देशकारी च भूपाली गुर्ज्जरी तथा।
मद्गा च पञ्चमी भार्या मघरागस्य योषित ॥३

पर गुर्जर नाम की एक ऐसी क्षत्रिय जाति बसती थी, जो लगातार शत्रु के किये गये ताड़न मारन और उद्यम, वाणिज्य व्यापार आदि नष्ट करने वालों को साहस—बलपूर्वक रोक कर देश की रक्षा करने में समर्थ थे और उन्होंने लगातार होने वाले, शक, सिथियन, कुशान–यूची एवं हूण आदि से इस देश को—जिसकी विस्तृत परिधि हुएन्त्सांग के समय ८३३ माल थी—सुरक्षित रक्खा। विदेशियों के अत्याचारों की कहानियों से, एक समय सारा उत्तरीय भारत त्रस्त हो उठा था और क्षत्रिय परम्परा के अनुसार गुर्जरों ने शक्तिपूर्वक उनका प्रतिरोध ही नहीं किया, बल्कि उनसे देश को सदा के लिये सुरक्षित कर लिया और उन्हें आत्मसात कर दिया।[४७]

इय पुन रागार्णवमते पञ्चम रागाश्रया रागणीत्ययमर्थ। यथा तत्रैव ॥४०
'ललिता गुर्ज्जरी देशी वराडी रामकृत तथा।
मता रागार्णवे रागा पञ्चत पञ्चमाश्रया।

४७ 'बनारस के प्रसिद्ध विद्वान पण्डित वासुदेव प्रसाद शास्त्री नव्य व्याकरणाचार्य पुराणेतिहास तर्क धर्मशास्त्रात्मा एवं क्वीन्स कालेज गवर्मेन्ट संस्कृत कालिज काशी ने भी हमारे पास निम्न वक्तव्य संस्कृत साहित्य के आधार पर भेजा है —किंच यथा क्षत्रियापि गुज्जरा। गुजराणा क्षत्रियाणामभाव गुजराख्यो जनपद कथस्यात्। दृश्यन्ते हि बंगा मगो कलिंगादयो जनपदा क्षत्रिया स्वेव प्रसिद्धिंगता। स्पष्ट चैव जनपद शब्दात्क्षत्रियादञित्यादि पाणिनी सूत्रं गुजर व्याख्याच क्षत्रिय स्वैव मुख्याभवति ब्राह्मणादिषु देश सम्बन्धाज्जायते। तथाहि गुरी उद्यमन इति धातो सम्पदादि वादभावे क्विप्ला गुर शत्रु कलक शत्रोद्यम नजरयति नाशयति इति गुजरा शब्द कल्प द्रुमेऽप्यतादृशी व्युत्पत्ति प्रदर्शिता अर्थात् गुजर जाति वाचक शब्द है जो शब्द कल्पद्रुम के आशय को ही प्रकट करता है।

पुरातत्व विशारद पण्डित छोटेलाल शर्मा एम० आर० ए० एस० लिखते हैं कि गुजर शब्द गुर्जर क्षत्रिय वाचक शब्द से बिगड़ कर बना है जब इस जाति के क्षत्रिय शत्रुओं से बड़ी २ मुठभेड़ लेते थे तो शत्रुओं द्वारा इस गुर्जर महान् अधिक बलवान व शक्तिशाली जाति कहा गया। समय के

उपरोक्त विद्वानों की अन्वेषण शैली इस सम्बन्ध में बहुत अधिक सहायक हुई, जिससे यह स्पष्ट होगया कि गुर्जर शब्द संस्कृत का है और प्रारम्भ से ही यह वर्तमान गूजर जाति के पूर्वजों के (जो गुर्जर नाम से प्रसिद्ध थे) महत्वपूर्ण वर्णन के साथ आया है। देशों की प्रसिद्धि का क्रम भारत ही क्या—संसार भर में एक रूप में जातियों की महत्वपूर्ण स्थिति व राजनैतिक सत्ता स्थापित होने पर ही होता है। भाषा को भी प्रारम्भ में राज्य और अधिकांश रूप में बसने वाली जाति की महत्ता के कारण प्रसिद्धि प्राप्त होती है।

(८)

इतिहास में एक समय ऐसा अवश्य था कि आर्यों के सुगठित सौन्दर्य-शारीरिक बनावट वाली गूजर जाति का—जो परिश्रम में विश्वास रखने वाली दृढ़ता और गर्व से भरी हुई एक महत्वाकाँक्षी जाति है और जिसका नैतिक आदर्श—कृषि, पशुधन, कठोर परिश्रम, सैनिक स्थिति के रूप के साथ आवृत है—इस देश की राजनीति में महत्वपूर्ण स्थान था। क्योंकि वे भू भाग जिनमें गुर्जर बसे हुए हैं, भारत की महत्वपूर्ण राजनैतिक क्षितिज में अपना गौरवपूर्ण स्थान रखते हैं। उनकी जातीय परम्परा, उन भूभागों के साथ एक खास सम्बन्ध प्रकट करती है। गुर्जरों से

साथ साथ यही गुर्जर होगया जो अब गूजर कहलाता है। प्राचीन ग्रन्थों में गूर्जर शब्द क्षत्रियों के विशेषण में अनेक स्थानों पर आया है वाल्मीकि रामायण में २-७९-२ में गतो दशरथ स्वर्गयोनो गुरुतरो गुरु अर्थात् राजा दशरथ जो हम क्षत्रियों के बड़े थे स्वर्ग सिधार गये। जिस समय यह जाति सब प्रकार के ऐश्वर्य से सम्पन्न थी, विशाल राज्य की अधिकारिणी थी, व लोग महाबली, पौरुष शील एवं शक्तिशाली तथा युद्ध विद्या में दक्ष थे, व क्षत्रियों में गुरुजन उपाधि प्राप्त कर चुके थे, इसका गुर्जर का संस्कृतज्ञों द्वारा व्यवहार में लाया गया और वर्तमान रूप गूजर है जो इस जाति की युद्ध परायणता का सूचक है। (क्षत्रिय वंश प्रदीप पृष्ठ ८१२-१३ वर्ण व्यवस्था मण्डल पूना)

रक्षित प्रदेश (गुजरात) या गुर्जरदेश, गुर्जरमण्डल, गुर्जरभूमि का महत्व और उनका गुर्जर जाति से सम्पर्क, इस बात को और भी दृढ़ करता है कि यह शब्द—और इसका प्रयोग देशों के नाम के साथ समुद्र में आये ज्वारभाटे के समान बढ़ना और घटना रहा है। उसमें गुर्जरों की मुख्य बसावट, राजाओं की राजनीति में उनके देशों का राज्यविस्तार तथा राज्यों में जातियों का उखड़ना, बसना या राज्याधिकार हस्तान्तरित होना, सहायक रहा है।

जिस काल में गुर्जरों का जातीय उत्कर्ष बढ़ा हुआ था, तो इसके साथ इतनी आकर्षक, गौरव पूर्ण लोकप्रियता घर कर गई थी कि, देशों और दूसरी जातियों ने इसे अपने नामों के साथ माला में मोतियों की तरह पिरोया था। भाषा, महत्वपूर्ण संगीत की रागनियों, ग्राम्य गीतों, गहनों के रूप में, व्यक्तिगत नामों में इसे महत्वपूर्ण स्थान मिला। नगर और जनपद-प्रान्तों की प्रसिद्धि का सिलसिला भी उत्तरोत्तर बढ़ता चला गया।

भारत भर के गूजरों की एक बोली है, जिसे आमतौर पर गूजरी कहते हैं। जहां पश्तो और पंजाबी एवं काश्मीरी का बाहुल्य है वहां भी गूजरी भाषा—जो आर्य भाषा का रूप है और सौरसैनी, राजस्थानी, मालवी और गुजराती का रूप है—बोली जाती है। सारे स्वतन्त्र कबायली प्रदेश के अफगानिस्तान, गुर्जिस्तान, मंगोलिया तक पहुंचे हुए गूजर दरदी भाषा क्षेत्र में, हिमालय एवं शिवालिक की ऊंची ऊंची चोटियों पर बसने वाले, दक्षिण के देशों की —जहां महाराष्ट्र एवं द्राविड़ों की बोली है—गूजरों की आबादियों में गूजरी ही बोली जाती है, जो जाति के उस एकीकरण को प्रगट करती है, जिसको उन्होंने अपनी मुख्य बसावट में आबू के चारों ओर रहते हुए, प्रारम्भ और विकसित किया था। राजस्थान के इसी प्रदेश को तथा इसके आसपास के विस्तृत क्षेत्र को, अपने उत्कर्ष काल में, अपनी महत्वपूर्ण बसावट, प्रभाव एवं राज्यस्थिति से, गुर्जर नाम से विभूषित कर गुर्जरों ने अपनी उच्च महत्वाकांक्षा को पूर्ण किया था।

इतिहास के पृष्ठों में वर्तमान सिन्ध, गुजरात मालवा, मारवाड़ और पंजाब के कुछ भाग से संयुक्त होकर किसी समय गुर्जरों का देश गुर्जरत्रा बनता था, जहाँ उनकी महत्वपूर्ण आबादी और सार्वभौम सत्ता समस्त—उस प्रदेश पर थी। गुजरी गीतों और लोक कथाओं में गूजरी और गूजर का महत्वपूर्ण स्थान है, ब्रज की कथाओं और लोकगीतों में गूजर एक महत्वपूर्ण योद्धा है।[१८]

---

[१८] श्रीयुत् श्याम परमार ने इस सम्बन्ध में एक महत्वपूर्ण लेख गुजरी (लोकगीत) लिखा है जिसमें निम्न वर्णन इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है—'गूजरी मालवी लोकगीतों की एक ऐसी प्रेमिका है जो सर्वत्र पुरुषों को मोहने वाली चित्रित की गई है। अपने सौंदर्य और व्यवहार से प्रेम के विभिन्न गीतों में सौतिया डाह की भावना को जागृत करती है। चारित्रिक दृष्टि से पतन स्थानों से च्युत होने वाली नारी गूजरी कहीं भी नहीं बनी। 'गरबा' के गीतों में 'गूजरी' अवश्य ही कृष्ण के प्रति प्रेमाभिभूत होकर गोपिका का स्थान ग्रहण कर लेती है। कृष्ण के साथ दूध, दही, माखन के प्रसंग में उनका (गूजरी) वर्णन आना स्वाभाविक है। गरबा के अतिरिक्त लोकगीत सुपनो, बीजा, पणिहारी, गणगौर, सरवर आदि गीतों में गूजरी का अपना अलग स्थान है। गूजरी स्वस्थ सौंदर्य की साक्षात् प्रतीक, वह रूप गर्विता, अपने पगुपन पर विश्वास रखने वाली नारी है। मृगनयनी के गूजरी महल की भांति कण्ठों पर बसे हुए गीतों में वह सदा के लिए जीवित है। मालवा में 'तीज' (सावन और भादों तीज दोनों) के शृङ्गार के अवसर पर 'गूजरी' का गाया जाना परम्परात्मक है। तीज पार्वती का स्वरूप है, ऐसा प्रतीत होता है कि मानो दैवी सौन्दर्य को मानवीय सौन्दर्य से मिला (गूजरी में) वर्णित किया गया हो। 'गूजरी' रूप की परिपूर्णता से समृद्ध है उसका रूप वर्णन देखिये।

> म्हारो सीस नारेल हो गूजर गेंदोलनी
> म्हारो माथ सिन्दु की फाल हो गूजर गेंदोलनी
> म्हारी नाक सुआ की चोंच हो गूजर गेंदोलनी
> म्हारा दांत दाड़म रा बीज हो गूजर गेंदोलनी
> म्हारा हात चम्पा की डाल हो गूजर गेंदोलनी

इन लोकगीत, ग्राम्यगीत एवं लोक कहावतों में सदियों के इतिहास की एक ऐसी झलक है, जो जाति की एक विशिष्ट परम्परा एवं जातीय स्थिति को प्रकट करती है। यह लोकगीत कहीं वीर भावना से ओतप्रोत हैं और युद्ध की भयङ्कर मारकाट में गुर्जर जाति की शौर्य भावना को प्रकट करते हैं, कहीं राजा नल की कथाओं में उसके मित्र मनसुखा गूजर के रूप में आती है।[१४] कहीं बरसाने की—वृषभान की पुत्री वरवाल गोत्र की गूजरी—राधा और कृष्ण के अद्वैत भाव रूप प्रेम के मिस गूजरी के निहित सौन्दर्य को प्रकट करती है, जो जाति की आर्ययुगीन—हजारों वर्षों की—सभ्यता एवं संस्कृति से सम्बन्धित है। स्वयं मुन्शी महोदय ने काश्मीर के दस लाख जाति रूप में सगठित गूजरों के, ग्राम्यगीतों को—गुजरात के गीतों से समानता प्रकट की है। जिसमें अनायास ही जाति के भाषा और देश के सम्बन्धों

म्हारा पाव देवल रा खम्ब हो गूजरी गॅदोलनी
म्हारा पेट पवन रो पान हो गूजर गॅदोलनी

'गूजरी' गर्वीली नायिका है। उसे अपनी वस्तुओं पर—विशेषत अपने यौवन पर विश्वास है। वह अपने आप में आकृष्ट करने की ऐसी ठोस शक्ति लिये है जिसके पीछे सदियों का इतिहास श्रद्धा और रोमानी भावों का सहारा निहित है।

'लोक गीतों में गूजर अथवा गूजरी के जो उल्लेख मिलते हैं उनका आधार कपोल कल्पनाएँ नहीं है। आर्यों के गठित सौंदर्य का आभास इस जाति को देखने से हो सकता है। गुर्जर (गूजर) जाति की स्त्रियों के शरीर का ढलाव, मुख की पैनी बनावट और गौरवर्ण (आज भी) किसी भी पुरुष को आकर्षित करने के लिये पर्याप्त है। मूलतः मालवी स्त्रियों के सौंदर्य से अधिक परिश्रम के तेज से दीप्त गूजरियों का सौंदर्य हरियानी सौंदर्य की होड़ करता है। सिर पर उठे हुए जूड़े का बन्धन तथा ऊंचा घाघरा और लूगड़े का पहिरावा इस जाति की विशिष्ट रहन सहन की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं।

का स्पष्टीकरण होता है। संगठित रूप से गूजर जाति का भारत के अनेक प्रान्तों में, लाखों की संख्या में, बसकर अपने को भाषा एवं जातीयता के रूप में स्थिर रखना, उनकी दृढ़ जातीय स्थिति को प्रकट करता है। मानव-आत्मा की अर्थपूर्ण प्रार्थनाएं गूजरियों के मधुर कण्ठ में गुर्जर रागनियों के रूप में पनपी और विकसित हुई। इसका ताजा उदाहरण १६वीं शताब्दि की इतिहास प्रसिद्ध संगीत, सौन्दर्य एवं वीरता की रानी मृगनयनी (ग्वालियर के राई गाव की गुर्जर बाला) द्वारा प्रचलित गूजरी, मङ्गल गूजरी, बहुल गूजरी, माल गूजरी के रूप में है, जिसने ग्वालियर में गूजरी महल और 'गुर्जरी रागनी' द्वारा अपना जातीय महत्व प्रदर्शित किया।[१०]

जातीय महत्व प्रदर्शित करने की जातियों की एक विशेष परम्परा होती है, *जिसे गूजर जाति में विशेष या साधारण राजा या प्रजा,* धनी या निर्धन बुराई या भलाई, स्त्री या पुरुष, प्रत्येक अवस्था में प्रसिद्ध करने की परम्परा है। जिस काल में राजपूत जाति विकास एवं उन्नति के सर्वोच्च शिखर पर थी, मृगनयनी का स्वयं अलग महत्व रखना और राजपूत जाति के तवर राजा मानसिंह की महारानी होते हुए भी अपना अस्तित्व विलीन न होने देना जाति की विशिष्ट परम्परा के अतिरिक्त क्या है? इससे भी अधिक महत्व इसमें बढ़ जाता है कि उसके—द्वारा

कुछ गीतों में गूजरी 'गरब गहली' है। उसे अपनी गाया की शान पर और हाथियों के वैभव की तुलना में अपनी भूरी भैंसो पर गर्व है। अपने चाहने वाले के पुत्र की अपेक्षा उसे अपनी गायों के ग्वाले पर अधिक विश्वास है। इन्हीं भावों को व्यक्त करने वाला गीत है—

> ओ गुजरण तमारे बुलावे देवरो
> ओ गुजरण म्हारो ही मन्दर देखण आवियो
> तू गरब गहेली गुजरी
> ओ देवजी तमारा म न्दर को कई देखणो
> ओ देवजी जैसी म्हारी गाया की या शान

राई गांव मे-गूजर-किला गूजर जाति का अलग बनता है। उसके पुत्र राजे व वाले तंवर गूजरों के अलग गॉव बसावे हैं, जो मैंसोरा के साथ २७ गांव तंवर गूजरों के गांव (ग्वालियर) में प्रसिद्ध हैं और राज्य मे अधिक जाति को महत्व देते हैं, उनके साथ ग्वालियर के तंवर राजपूतों का भाईचारा है। गूजरी राग के समान गूजरी गहना. यह पायल है, जो पहले पहल गूजरी युवती के पैरों मे झन्झुन हो उठी थी और जिसे आभूषण-प्रिय ललनाओं ने, गूजरी के महत्व के साथ उसी (गूजरी) नाम मे प्रसिद्धि देकर ग्रहण किया।

सम्राट अकबर के समय मे चेची गूजरों ने अपने अलग महत्व को प्रदर्शित करते हुए, अलीखान गूजर सरदार के नेतृत्व मे, गुजरात शहर बसाया।[११] जाति के नाम से इस प्रसिद्धि का क्रम उत्कर्ष काल मे क्यों न होता ? जबकि आज दिन तक है।[१२] इसी प्रकार रामायण कालीन कथा प्रसंगों से लेकर, आज तक की अनेक धार्मिक देवी, देवी देवताओं, योद्धाओं, सहायकों, सन्तों, तीर्थ स्थानों के रूप में, गूजर जाति का महत्व प्रदर्शित करते हुए गुर्जर शब्द ने अपना एक मुख्य स्थान बना लिया है। इन सबसे आज की महान् ऐतिहासिक गूजर जाति का, एक परम्परा विशिष्ट सम्बन्ध प्रकट होता है। इसके लिये विशेष उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं। इतिहास में यह तथ्य स्पष्ट रूप से आगे के अध्याय में आयेगा।

ओ गड मथरा की गूजरी
ओ गूजरण तमारे बुलावे देवरो
ओ गूजरण म्हारा हो हत्तिया देखण आवियो
तू गरब गहली गूजरी

ओ देवजी तमारा हत्ती की कई देखणो
ओ देवजी जसी म्हारी भूरी या भेंस हो

ओ गड मथरा की गूजरी
ओ गूजरण तमारे बुलावे देवरो

हम पहले ही लिख चुके हैं कि प्रारम्भ का गुर्जर—इतिहास में श्राबू पर्वत के आसपास का भीनमाल की राजधानी का प्रदेश, गुर्जर (गूजर) जाति की महत्वपूर्ण सम्राट राज्य स्थिति के कारण है, जो जाति के विशिष्ट धर्म, भाषा, भाव, वर्ण तथा वेषभूषा और जातीय नाम गुर्जर से एक रूप में प्रसिद्ध थे। हाल के प्राप्त हुए शिलालेखों से यह भी पता चलता है कि गुर्जरों से पूर्व यहां पर क्षत्रपों (शक) का भारत के बहुत बड़े भूभाग पर राज्य था, किन्तु वे इस प्रदेश को अपने नाम से प्रसिद्धि नहीं दे सके। कारण, एक तो वे विदेशी थे, दूसरे उनका अलग महत्व प्रतिष्ठित नहीं हुआ था। तीसरे यहाँ की जनसंख्या में उनका कोई महत्व नहीं था। इसलिये उनके समय में मारवाड़-राजस्थान के गुर्जर प्रदेश को स्वभ्र और मरु नाम से प्रसिद्ध पाते हैं।

श्रो गूजरण म्हारा या घोड़िला देखन श्राविया
श्रो गरब गहेली गूजरी
श्रो देवजी तमारा घोड़िला को कई देखणा
श्रो देवजी जसी म्हारी दूमड गाय हो
श्रो गड मथरा की गूजरी
श्रो गूजरण तमारे बुलावे देवरो
श्रो गूजरण म्हारा हो पूत के देखन श्राविया
तू गरब गहेली गूजरी
श्रो देवजी तमारा पूत को कई देखणो
श्रो देवजी जसा म्हारा गायारा ग्वाल
श्रो गड मथरा की गूजरी
श्रो गूजरण केने दई धन माया
श्रो गूजरण केने दई बालू पूत हो
तू गरब गहेली गूजरी
श्रो देवजी करम-धरम की म्हारी धन माया
श्रो देवजी ने दयो बालू पूत
श्रो गड मथरा की गूजरी

विदेशी जातियों ने अनेक साम्राज्य स्थापित किये, किन्तु वे अपनी दिग्विजयों के कारण देशों को अपने नामों से प्रसिद्ध नहीं कर सके, इसका खास कारण यही था कि वे यहां की जनता जनार्दन के हृदय को नहीं जीत सकते थे। यह गौरव तो पहले ही से आर्य जाति को प्राप्त था, जिसने अपने नाम से आर्यावर्त की प्रसिद्धि दी और बाद को भरतवंश के क्षत्रियों ने भारतवर्ष नाम देकर प्रसिद्ध किया। अनेक प्रान्तों की प्रसिद्धि राजन्य (क्षत्रिय) वंशों के राज्य स्थापन एवं बसावट के कारण है जिसके अनेक उदाहरण दिये जा चुके हैं और आगे भी प्रसंगवश आते रहेंगे। गूजरों ने लाट, आनर्त, कैवर्न, श्वभ्र और मरु को ही अपने नाम की प्रसिद्धि नहीं दी, बल्कि एक समय पूर्वकाल से लेकर आज तक इसी रूप में उत्तरीय भारत के अनेक महत्वपूर्ण प्रान्तों, स्थानों को अपने गुर्जर नाम से, प्रसिद्ध करते रहे हैं, जो आर्य शैली का परिचायक है। सम्भवतया इस गुर्जर नाम की देशों की प्रसिद्धि से, जाति और देश के सम्बन्ध को उस समय तक न समझा जा सकेगा, जब तक विस्तारपूर्वक सामाजिक व्यवस्था के साथ जाति और देशों के सही-सम्बन्ध स्पष्ट न हो जायं।

(६)

आर्य जाति के प्राचीन इतिहास से पता चलता है कि

गर्वीली गूजरी श्रम से मन्दिर की अपेक्षा गायों की छान, हाथियों की अपेक्षा भूरी भैंस घोड़ियों की अपेक्षा 'दूमड़' गाय और पुत्र की अपेक्षा अपनी गायों के ग्वाले को उत्तम समझती है। वह अपनी धन-माया को ईश्वर प्रदत्त न मानकर अपने धर्म-कर्म का फल मानती है। परिश्रम में विश्वास रखने वाली कोई भी जाति अपनी कमाई हुई वस्तुओं को अनायास प्राप्त होने वाली वस्तुओं की अपेक्षा अधिक महत्व देती है। श्रम का मूल्य वह जानती है, इसलिए गर्व और दृढ़ता का संकेत उसकी बातों में मिलता है।

कृषि पशुधन, कठोर परिश्रम और नैतिक आदर्शों में गूजरी का व्यक्तित्व आवृत्त है। फिर इस कठोर आवृत से उद्भूत सौन्दर्य क्योंकर कम प्रभावशाली रहे? (आजकल अक्टूबर १९५३)

आर्यों का प्रारम्भिक समाज, एक गण संगठन था। इस संगठन के सब सदस्य रक्त से सम्बन्धित होते थे, वे सब कुल जाति में समान थे।[४९] गण, संगठन, कुलत्व और जन संगठन, एक ही वस्तु हैं। यह सामाजिक, आर्थिक संगठन का एक रूप था। इस कौटम्बिक संगठन के आधार पर ही राष्ट्रों का जन्म हुआ।[५०] इससे यह सिद्ध है कि राष्ट्र का आधार कुटुम्बों का संगठन ही है, जिसे जाति का रूप दिया गया। प्राचीन भारत में आर्यों के दश गणराज्य परस्पर कुल के आधार पर सम्बन्धित थे।

---

४९ ग्वालियर में नरवर के पास डोंगरा गांव में हुए गुर्जर हैं जो राणा कहलाते हैं उनके विषय में यह प्रसिद्ध है कि यह डोंगरी राना मनसुख का राज्य था। जिस समय राजा नल नरवरगढ़ में राज्य करता था, उस समय यहां (नल कथाओं में प्रसिद्ध उनके परम मित्र मनसुखा का जिकर आने वाले) गूजर राजा का राज्य था, जिसने नल की मदद की थी। अब भी इस गांव में उसी के वंशज रहते हैं।

५० कनिंघम आर्कियालोजिकल सर्वे आफ इन्डिया भाग २ पृष्ठ ६३—६४

संगीत की सृजन भूमि मध्य भारत, ज्ञानोदय अप्रैल १९५४ (सहारनपुर) अंक १० वर्ष ५ भारतीय ज्ञानपीठ बनारस द्वारा प्रकाशित श्रीअनन्त मराल शास्त्री एम० ए० द्वारा लिखित निम्न अंश पढ़िये पृष्ठ १९—

"राजा मानसिंह के दरबार में, जिनका समय (१४८६-१५१७) माना जाता है, अनेक उच्चकोटि के संगीतज्ञ थे। उन्होंने स्वयं नये-नये गीतों की रचना की है और वे ध्रुवपद के आविष्कारक भी कहे जाते हैं।"

"उनकी गूजरी रानी मृगनयनी भी उच्चकोटि की कलाकार थी। उसने चार संकीर्ण रागों की रचना की है, जिनके नाम गूजरी, बहुल गूजरी, मालगूजरी और मंगल गूजरी हैं।

यदु, तुर्वसु, द्रुह्य, अणु और पुरू यह पाच गण एक पिता ययाति और उसकी पत्नियां (देवयानी और शर्मिष्ठा) से उत्पन्न हुए थे। अङ्ग, वङ्ग, कलिङ्ग, पुन्ड्र और सुम्ह पाच गण पूर्वी और दक्षिणी पूर्वी भारत के थे और बलि के पुत्र कहे जाते थे। इस बात को लिखने का विशेष महत्व यह है कि इन लोगों में सामाजिक, आर्थिक सम्बन्धों के साथ एक रक्त सम्बन्ध भी था। इस प्रकार जनपद गणों का सगठन, रक्त सम्बन्ध पर होता था। गोत्रों की पद्धति भी रक्त सम्बन्ध को दृढ करती है, जो कुल में नहीं था और गोत्रों द्वारा रिश्तेदारी में सम्बन्धित नहीं था (क्योंकि आर्यों का कानून एक गोत्र के नर नारियो में विवाह की आज्ञा नहीं देता) वह शत्रु समझा जाता था। उसे यज्ञ में भी सम्मिलित नहीं करते थे, उसका नाश करना, उसकी सम्पत्ति का अपहरण करना उचित माना जाता था। इससे यह स्पष्ट होता है कि वँश के आधार पर ही गणराज्यों का सगठन हुआ और गणराज्य वंश के सम्बन्ध को प्रकट करते हैं। इसलिये वशों अथवा जातियो से राज्यों, जनपद देशों की प्रसिद्धि का क्रम चला। जब हम प्राचीन व्यवस्था से यह मान चुके कि प्रारम्भ का समाज रक्त वश पर आश्रित परिवार तथा जातियों का समूह था तो हमें यह भी मानना पडेगा कि प्रारम्भिक रक्त सम्बन्ध पर आश्रित परिवार ने अपने कुल या गोत्र के नाम से समाज को प्रसिद्ध करके अपनी बसावट के क्षेत्र को, अपने वश की महत्वपूर्ण स्थिति से प्रसिद्ध किया। जैसा कि दश कुलों के वर्णन से स्पष्ट है।

---

[११] आर्कियालाजिकल सर्वे आफ इण्डिया (कनिंघम) भाग २ पृष्ठ ६१

[१२] इम्पिरियल गजेटियर पृष्ठ ६६

[१३] जात्याच सदृशासर्वे कुलेन सदृशास्तथा शान्ति पर्व १०७ ३० रक्ताश्च नाम्य जनात कार्या कार्ये ६८ २६

[१४] भारत अमृतपाद डाग पृष्ठ ७३

वास्तव में शुरू में, आर्यों के अपने स्वत्वश पर समवन्धित कुशान, गणराज्य एवं राजतन्त्र राज्यों की सीमाओं को, अपने सगठित वशों के आधार पर ही प्रसिद्ध किया। दूसरे देशों में भी यही अवस्था पाई जाती है। अंग्रेज राजाओं की उपाधियों में जॉन प्रथम ने अपने को इंग्लैंड का सम्राट कहा है, लेकिन उससे पहिले उसके पूर्वज अपने को अंग्रेज जाति का राजा कहते थे। पहिले जहा अंग्रेज निवास करते थे या राज्य करते थे, वह देश इंग्लैंड कहलाता था। फ्रान्सीसी राजाओं की उपाधि भी यही प्रकट करती है कि वे पहिले फ्रेंच जाति के राजा कहलाते थे। देशों की प्रसिद्धि का क्रम जातियों से चलता है तथा बाद में राष्ट्र के नाम से जातियाँ प्रसिद्ध होती हैं।

शुरू में गुर्जर जाति ने अपना सगठन क्षत्रिय वर्ण के विभिन्न गोत्र और कुलों में किया जो समान लाभ एव स्वार्थों से सगठित होकर, गुर्जर राष्ट्र के निर्माण और गुर्जर राज्य स्थापित करने में समर्थ हो सके। चार गोत्र बचाकर समान कुलों में विवाह सम्बन्ध करने से इनमें अनेक क्षत्रिय कुलों का—कबीलों का समागम् होता चला आया। इस सगठन की आवश्यकता इतिहास के परिवर्तन काल में विदेशी आक्रमण और आर्य सभ्यता संस्कृति को बचाने के उद्देश्य से नितान्त आवश्यक थी, जैसा कि हम पहले भी लिख चुके हैं। एक भाषा, एक सभ्यता, एक संस्कृति एवं एक ही आचार विचार के—समान रूप से एक ही स्वत्वश पर आश्रित—व्यक्ति ही सफल हो कर नई आई मध्य एशिया की जातियों को, अपने में—उदरस्थ करते हुए—आत्मसात कर सकते थे। जाति से क्षेत्र-गत अवस्था को जातियां अवश्य पहुचती हैं, पर बाद में। प्रारम्भ में नहीं। अब अंग्रेज वे हैं जो इंग्लैंड में रहते हैं। फ्रान्सीसी भी वे हैं जो फ्रान्स में रहते हैं। पर पहिले जहा अंग्रेज निवास करते थे वह देश इंग्लैंड कहलाता था। फ्रेन्च जाति जिस देश में रहती थी उसका नाम फ्रांस प्रसिद्ध हुआ। इसी प्रकार सूर्यवंश की प्रथम आर्य जाति के क्षत्रिय कुल भरत सन्तति का देश भारतवर्ष कहलाया।

गूजर जाति अथवा गुर्जर लोग इतिहास में गुजरात देश के कारण प्रसिद्धि में नहीं आये, बल्कि गुर्जर जाति के कारण गुर्जरत्रा (गुजरात), गुर्जर, गुर्जर देश, गुर्जरत्रा मण्डल आदि की प्रसिद्धि हुई। चीन तथा अरब यात्रियों ने जो गुर्जर नाम दिया वह देश के कारण नहीं अपितु जाति के कारण ही लिखा है। कन्नौज के गुर्जरों ने कन्नौज का नाम गुर्जर जाति का साम्राज्य होने के कारण प्रसिद्ध किया। राष्ट्रकूटों ने अपने शिलालेखों में, अरब यात्रियों ने अपने वृत्तान्तों में, तत्कालीन कवियों ने अपने काव्यों में—इसी कारण उन्हें गुर्जर कहा है। कन्नौज साम्राज्य का नाम गुर्जर राजवंश से पहिले और पीछे गुर्जर कभी नहीं रहा। केवल गुर्जर प्रतिहार राजवंश के कारण गुर्जर कहा अथवा लिखा गया है। अगर इतने बड़े साम्राज्य का नाम वंश के आधार पर न होता तो कम से कम दूसरे राजवंश के प्रारम्भ में तो गुर्जर नाम देश के साथ अवश्य चलता। राज्यों तथा साम्राज्य पर अधिकार करने से गुर्जर राज्यकाल में ही इन देशों की प्रसिद्धि का क्रम, गुर्जर अथवा उससे मिलते-जुलते नामों से हुआ। उदाहरणस्वरूप हम देखते हैं कि एक समय भीनमाल, भड़ौंच, अनहिलवाड़ा-पाटन, धारा, मालवा ही गुजरात नहीं कहलाये, बल्कि पंजाब का काशमीर के पास का प्रदेश, करनाल का पेह्वा राजधानी का प्रदेश—अलवर, जयपुर का प्रदेश, जावरा का प्रदेश, गुर्जर जातिक राजाओं के अधिकार में आजाने से ही गुर्जर नाम से प्रसिद्धि प्राप्त करता है।

प्रसिद्ध यात्री अलबेरूनी के समय में भी, जयपुर का बरन् अथवा नारायण, जडवाह अथवा जावरा भी गुर्जर है, इन सबमें यह स्पष्ट है कि गुर्जर जाति के राजाओं ने, एवं गूजर जाति ने, अपने अभ्युदय काल में प्रारम्भ से ही अपने राजवंशों तथा राज प्रदेशों को अपने नाम (गुर्जर) से प्रसिद्ध किया। गुर्जरों पर विजय प्राप्त कर लेने के पश्चात भी राठौर या दूसरे राजवंश गुर्जरेश्वर की उपाधि धारण नहीं करते। भड़ौंच के गुर्जर, भृगु-कच्छ प्रदेश के नाग कुल को नष्ट करते हुए, हर्ष को पीछे हटाकर, त्रिकूट राजधानी के भवशेषों पर गुर्जर नाम से अपने महत्त्व द्वारा गुर्जरत्रा (गुजरात) प्रसिद्ध करते हैं। गूजरों के हाथ से राजसत्ता हटते ही गुर्जर

देश पहली पीढ़ी में ही छिन्न भिन्न हो जाता है। यह जाति सम्बन्धी देश की स्थिति पर विशेष प्रकाश डालता है और इसी कारण गुर्जर प्रान्तों पर विजय प्राप्त करने वाले अनेक राजा गुर्जर स्वामी और गुर्जरेश्वर की उपाधि धारण नहीं करते, बल्कि गुर्जरों को झुलसा देने वाली आग या गुर्जरों के शत्रु कहलाते हैं। इसीलिये अरब राजा एवं अरब यात्रियों का प्रतिहार या दूसरे गुर्जर वंश को जुर्ज अथवा गुर्जरों का राज्य कहना यथार्थ ही है।[११] धारा और पाटन के सोलंकी किस प्रकार नवीन प्रदेशों में भी गुर्जर तथा गुर्जरेश्वर की उपाधि ग्रहण कर लेते हैं। इसका अर्थ तथा महत्व केवल यही है कि यह गुर्जर जाति के राजाओं की एक विशेष उपाधि उनकी जातीयता के कारण थी क्योंकि इससे उनके जाति के महत्व का पता चलता है। राज्यों के नाम से देशों की प्रसिद्धि उस राजा की जातियों की महत्वपूर्ण स्थिति के साथ-साथ प्रजारंजन एवं रचनात्मक कार्यों के कारण भी होती है। विध्वंसात्मक नीति के कारण नहीं। जनता जनार्दन देश का नाम राजवंश की लोकप्रियता से अपने अन्तस्तल की प्रेरणा द्वारा ही देती है। इसलिए मुन्शी महोदय का यह सिद्धान्त कि प्रतिहार अपनी मातृभूमि के नाम के कारण अपने देश को गुजरात (गुर्जर देश) मानते थे, बिलकुल निस्सार मालूम होता है। प्रतिहार तो वे इसलिये कहलाते थे कि उन्होंने पश्चिम (सिन्ध) की तरफ से होने वाले अरबों के हमलों के समय भारत के प्रवेश द्वार पर इस देश की रक्षा की थी। इसी कारण वे भारत के इस ओर के प्रहरी, द्वार रक्षक थे। जिस प्रकार लक्ष्मण जी ने मेघनाथ आदि के विरुद्ध शक्ति प्रदर्शन करके (प्रतिहरण विधे प्रतिहारः) ये सार्थक नाम प्राप्त किया था वैसे ही इन्होंने राठौरों एवं पालों के विरुद्ध सफल शक्ति प्रदर्शित की थी। इसी कारण यह गुर्जर जाति के लोग प्रतिहार कहलाये और इन्हें गुर्जर इसलिये कहते थे कि वे गुर्जर जाति के थे। उनके कारण देशों की प्रसिद्धि का क्रम इसलिये चला कि उनके शासन काल में देश सर्वथा उपद्रवों से सुरक्षित था

---

[११] बाला दुरी की किताब "फतुह अल-बुल-दान" हवाला पृष्ठ २२८-२२९, दी ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश भाग ३ पृष्ठ ८७ के आधार पर।

गुर्जर सम्राट, नृपति एवं सामन्त गण प्रारम्भ से ही दुर्दान्त शत्रुओं से घिरे रहने के कारण सदैव युद्ध में लगे रहते हुए भी प्रजा रंजन एवं अपने आधीन देश में सुख समृद्धि का विशेष ध्यान रखते थे।

गुप्त साम्राज्य के अवनतिकाल में, जब उसके भग्नावशेष प्रगतिशील हो उठे तो, गूजर जाति ने अपना सिक्का पश्चिमी भारत में कुशान शक्ति को अपने में विलीन करके एवं हूणों को पूर्णरूप से आत्मसात करके जमाया। चत्रपों की राजधानी भीनमाल पर अधिकार करके उन्होंने भड़ौंच तक अपना राज्य विस्तार किया। इनके प्रतिहार वंश को, जिसने उज्जैन में भी राज्य किया था, एक समय गुर्जर राजा की उपाधि प्राप्त थी, उन्हें एक महान शक्ति सम्पन्न दृढ़ साम्राज्य स्थापित करने में सफलता प्राप्त हुई। कन्नौज के गुर्जर सम्राट प्रतिहार वंश के थे और प्रतिहार वंश गुर्जर जाति का था। इसका एक और प्रमाण मथनदेव का राजौर का शिलालेख है, जो 'गुर्जर प्रतिहारान्वय' अपने ६५६ ई० के लेख में लिखता है, जिससे प्रतिहारों का गुर्जर होना सिद्ध है।[१९] जिन विद्वानों ने प्रतिहारों को गुर्जर नहीं माना और गुर्जर देश और गुर्जर भूमि के रहने वाले लिखा है, उनका खण्डन करते हुये डाक्टर रमाशङ्कर त्रिपाठी ने लिखा है कि राजौर अभिलेख का "तथैतत् प्रत्यासन्नः श्री गुर्जर वाहित समस्त क्षेत्रम्मेत।" ये अंश स्पष्ट करता है कि प्रतिहार गुर्जर थे क्योंकि इसका अर्थ है कि "गुर्जरों द्वारा जोते हुये समस्त पार्श्ववर्ती खेतों के साथ"। राष्ट्रकूटों के कथनों द्वारा भी प्रतिहार गुर्जर ही ठहरते हैं। राष्ट्रकूटों के सम्राट अमोघवर्ष प्रथम के सञ्जन के दानपत्र में गूजरों को प्रतिहाराण गुर्जर राज कहा गया है।[२०]

---

[१९] ऐपिग्राफिका इन्डिका जिल्द ३ पृष्ट २६६-६७

[२०] प्राचीन भारत का इतिहास, डा० रमाशङ्कर त्रिपाठी एम०ए०, पी०एच०डी० अध्यक्ष इतिहास विभाग बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय पृष्ट २२६।

अरबी लेखकों—अबूज़ैद तथा अलमसूदी ने—जुर्ज (गुर्जर) गूजरों से अरब जाति के साथ हुए संघर्षों का वर्णन किया है अरबों ने राष्ट्रकूटों की सहायता गुर्जरों के विरोध में की थी। कन्नड़ कवि पम्प ने भी महिपाल महाराजा को गुर्जर कहा है, इससे यह स्वीकरणीय है कि कन्नौज का प्रतिहार राजवंश गुर्जरों (गूजरों) का था।[५८]

मुन्शी महोदय राजगढ़ के गुर्जर किसानों को भी गूजर जाति का न मानकर गुजरात में आया बताते हैं और 'मथन देव' गुर्जर को भी इसी प्रकार गुर्जर देश का होने से गुर्जर मानते हैं; लेकिन उनकी आधारभित्ति वही है जिसका वर्णन हम पीछे कर चुके हैं। स्वयं गुजरात के सबसे बढ़िया किसान लेवा, कड़वा, कुनबी और पाटीदार कहते हैं कि हम गूजर जाति के हैं और पंजाब की तरफ से इधर आये हैं। हमारी वंशावली पंजाबी गूजरों से मिलती है, अकाल ने हमें इधर धकेल दिया, राजपूताना मालवा होकर हम इधर २० पीढ़ी पूर्व आये हैं।[५९]

---

५८ वही पृष्ठ ८३९ .
५९ बम्बई गजेटियर भाग ९ जि० १ पृष्ठ ४९१—४९२

"The division of Lava Laur or Lor, together with the less important branch of Khari Khadia or Khadwa, have the special value of showing what has long been carefully concealed in Gujrat that the great body of Patidars and Kanbis in North Gujarat and in *Broach are Gujars by descent That* the Gujarat Kanbis are Gujjars is supported by the similarity, between the sharehold tenures in Punjab Gujar villages and the Bhagdar and Narvadar tenures in Kanbi villages in Kaira. Though the

इसी प्रकार खानदेश व निमाड़ के गूजर अपने को राजपूताना व मालवा से आए बताते हैं,[१०] तो भला गुजरात के शस्य श्यामल प्रदेश को छोड़ कर उस काल में गुजरात के किसानों का भारी संख्या में इधर आना बिना किसी खास परिस्थिति के कैसे सम्भव है? और भीनमाल से अलवर तक गुर्जर जाति, उस काल में बसती थी, जिसका प्रमाण आज तक भी वहां की गूजरों की महत्वपूर्ण बस्तियां हैं और राजवंश—अपनी जाति तथा वंश को—कन्नौज के सम्राट लोगों से सम्बन्धित मानना हुआ—प्रतिहार तथा गुर्जर कहने में गर्व अनुभव करता है। दूसरे प्रतिहारों का सम्बन्ध उनके शिलालेखों में जो सूर्यवंश से है, तथा उन्हें जो क्षत्रिय विशिष्ट पद मिला है, वह इस बात को भी सिद्ध करता है कि गुर्जर प्राचीन सूर्य तथा चन्द्रवंश के क्षत्रिय ही हैं। वर्तमान गूजरों में भी अनेक वंश आज भी अपने को रामचन्द्र जी (सूर्यवंश) से सम्बन्धित मानते हैं। जिनका वर्णन उनके कुल गोत्रों के वर्णन के साथ दिया गया है। कृष्ण जन्माष्टमी के कारण प्रत्येक अष्टमी-अमावस्या तथा गुरुवार को पवित्र दिन मानते हुए आज भी गुर्जर हल

---

divisions Lor and Khadwa have not been traced in the Punjab, it is not uncommon at Dwarka to find that Kanbis of north Gujrat and Gujars from the Punjab satisfy themselves that they are both of the same stock. The accuracy of this identification is of special interest as the Kanbi and Patidar of north Gujarat is the best class of husbandmen in the Bombay Presidency as well as the most important and characteristic element in the Population of Bombay Gujarat. The Gujars of north Khandesh, who during the 10th century, moved from Bhinmal in south Marwar through Malwa into Khandesh, include the following divisions Barad,

नहीं चलाते और व्रत रखते हुए सूर्य के पुजारी हैं, जिसमे वे परम्परागत भारतीय आर्य (क्षत्रिय वंश) सिद्ध होते हैं। सूर्य-पूजा आर्यों की प्राचीन पचायतन की पूजा है, जिसे भीनमाल, भडोंच के गूजर भी करते थे। उनके साम्राज्य विस्तार ने गुर्जर भूमि गुजरेश्वर, गुजरात एवं स्वयं गुजर को बहुत से रूपों में प्रचलित एवं विस्तृत कर दिया। यह विषय इतिहास का है जो आगे उनके वर्णन के साथ दिया जायगा।

Bare, Chawade, Dode, Lewe and Rewe. The following statement made at Junagadh in Jan 1889 by Mr Himabhai Ajabhai Vahivatdar of Junagadh a Nadiad Patidar by caste seems to settle the question of the Gujar *origin of the Patidars and Kanbis of Bombay Gujarat* I am satisfied the Gujarat Kanbis and Patidars both Lavas and Khadwas are Gujars We have nothing written about it, but the bards and family recorders know it Both Lavas and Khadwas came from the Punjab this is the old people's talk The Bhats and Wahiwanchars say we left the Punjab 20 generations ago A femine drove us from the Punjab into the land between the Jamna and the Ganges About 15 generations ago the Lavas came to Ahmedabad, it is said through Khandesh and brought with them Khandeshi tobacco The Kanbi weavers in Ahmedabad, Surat and Broach did not came with the Lavas The first place they *came to was Champaner We can still know that* we are the same as the Punjab, Gujars We have

यहां केवल इतना ही लिखना पर्याप्त है कि अरब प्रवासियों के वर्णन,[६०] राष्ट्रकूटों के लेख[६१] उन्हें गुर्जर मानते हैं। साथ ही इतिहास में यह पता चलता है कि प्रतिहारों की सेना अपनी जाति की गुर्जर सेना थी और ८६७ ई० में मिहिरभोज की सेना को इसी लिये गुर्जर सेना कहा गया है।[६२] ९१५ ई० में मिहिरभोज के पौत्र (महिपाल) को गरजने वाला गुर्जर कहा है।[६३] ९५० ई० में चन्देल राजा यशोवर्मन को (कन्नौज के प्रतिहार राजाओं को लक्ष्य करके) "गुर्जरों के लिये झुलसा देने वाली आग कहा है।[६४] कनाड़ी भाषा के सुप्रसिद्ध कवि पम्प के रचे हुए विक्रमार्जुन 'विजयपम्प भारत' नामक काव्य में महिपाल को गुर्जर राजा लिखा है।[६५]

इन सब प्रमाणों के तथा अन्य साक्षियों के आधार पर इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान् स्मिथ ने निश्चित रूप से, यह सिद्ध कर दिया है कि "भोज (८४०—८९०ई०) तथा उसके पूर्वज एवं उत्तराधिकारी, जो प्रतिहार या परिहार वंश के थे, गूजर जाति के थे।

---

the same way of the tillings Our plough is the same, our turban is the same and we use manure in the same way. Our marriage customs are the same, both of us wear swords at marriage Ramchandra had two sons. From Lava came the Levas and from Kush the Khadwas. I have talked with Punjab Gujars at Dwarka They say they have Bhagdari and Narvadari villages.

६० बम्बई गजेटियर भाग १२ खानदेश पृष्ठ ६३–६८
६१ गुर्जर इतिहास अध्याय १ पृष्ठ ४४
६२ ऐपिग्राफिका इन्डिका १८, पृष्ठ २४३-२५२ श्लोक ९
६३ इन्डियन ऐन्टीक्वेरी भाग १२ पृष्ठ १८१
६४ बम्बई गजेटियर जि० १ भाग १ पृष्ठ १२८
६५ ऐपिग्राफिका इन्डिका भाग १ पृष्ठ १२६
६६ जर्नल आफ दी रायल ऐशियाटिक सोसायटी १९०९–भाग ९ पृष्ठ ८८

प्रतिहार राजपूत भी गूजरों की एक शाखा है।[६७] इसी विषय को राजौर, घटियाला, राष्ट्रकूटों के ताम्रपत्र, दोहद के शिलालेख आदि के द्वारा तथा विदेशी पर्यटकों की प्रत्यक्ष साक्षी के आधार पर, डाक्टर भण्डारकर महोदय ने विस्तार के साथ लिखते हुए, प्रतिहार, परमार, चालुक्य या सोलंकी और चौहानों को पूर्णरूपेण गुर्जर सिद्ध किया है।[६८] हिन्दू समाज व्यवस्था में क्षत्रियों में गुर्जर, विदेशी लड़ाकू जातियों को आत्मसात करके अपने अलग नाम से प्रसिद्धि प्राप्त कर गये और लगातार विदेशी आक्रमणकारियों से युद्धरत रहते हुए इतिहास में प्रसिद्ध हो गये। इससे न उनके अस्तित्व में कुछ सन्देह है और न भारतीय होने में और गुर्जर जातीय राजाओं के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त प्रान्त पहले निर्जन नहीं थे— यह तो हम भी मानते हैं और सभी जातियाँ सभी देशों में रहती हैं, इसमें भी कुछ सन्देह नहीं है किन्तु यह निश्चित है कि क्षत्रिय वंशों के महत्त्व के कारण अपने वंश को अलग अलग नाम से प्रसिद्धि का क्रम इतिहास में कभी भी बन्द नहीं हुआ।

गुर्जर जातीय सैनिकों की संख्या पर जो सन्देह किया जाता है वह भ्रामक है। क्षत्रियों का बच्चा बच्चा सैनिक होता है और सैनिक परम्परा विशिष्ट व्यक्ति ही तो गुर्जर वंश की प्रसिद्धि के आधार बने थे। जब वे आज की दशा में सेना में—एक छोटे से प्रदेश से—२०-२५ हजार भरती हो सकते हैं तो राष्ट्र और जाति एवं धर्म के नाम पर बलिदान, आत्मत्याग की भावना से उन्हें बड़ी भारी सेना आत्मीय जनों की बनाने में कोई कठिनाई अनुभव नहीं हुई होगी और संगठन के आधार पर उन्होंने जाति व्यवस्था निर्माण करके जिन प्रदेशों में राज्य स्थापित किया, सुख समृद्धि पैदा की एवं आत्मीय जनों की व्यवस्था द्वारा बसावट की तो स्वभावतया उन प्रदेशों

---

६७ अर्ली हिस्ट्री आफ इंडिया (स्मिथ) तीसरा संस्करण पृष्ठ ४११

६८ बम्बई एशियाटिक सोसायटी जर्नल १९०५ एक्स्ट्रा नम्बर पृष्ठ ४१३-४३३ तथा इंडियन एंटीक्वेरी भाग १३ पृष्ठ ४१६

की उनके नाम से प्रसिद्धि होगई, जिस प्रकार आज भी पजाब, उत्तरप्रदेश मालवा में हुई है। रहा रिक्त स्थान होने का प्रश्न, सो मुन्शी महोदय को विदित होना चाहिये कि समरागण क्षेत्र में वीर जातियाँ ही ठहरती हैं या उनसे सुरक्षित वर्ग, वरना औरों की तो भगौड़ों सी स्थिति हो जाती है। देहली के चारों ओर की गुर्जरों की आबादी उस समय की है जब मुसलिम आक्रान्ताओं ने इन प्रदेशों को रौन्द कर नष्ट भ्रष्ट कर दिया था और यह सब राजपूताना, मालवा मे इधर आये और सघर्ष काल मे दोआबे पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। दूसरी जातियों के गांव के गॉव खाली होते चले गये, सतियों की समाधि, भग्न खण्डहरों के अवशेष, प्राचीन नाम साक्षी हैं, कि यहा पर अन्य जातिया वसती थीं। इसलिये गुर्जरों का आवागमन—पेशावर से नर्मदा तक—अनेक कालों में बराबर बना रहा। यौधेय लोग सहारनपुर तक फैले हुए थे, यह खास तौर से गुर्जर हैं। भद्रकों या भट्टारकों का रावी और चिनाब के बीच का देश भद्र था जो आज बटार रूप मे गुर्जरों के सैंकड़ो गावों में आबाद है। इसी भट्टारक वश ने वल्लभी के प्रसिद्ध राज्य की नींव डाली थी। इसी प्रकार पवार आदि अनेक श्रेणी उत्तर प्रदेश में थोड़े समय में ही आकर बस गई। इसलिये गुर्जरो या वीर जातियों का कोई खास प्रदेश स्थायी नहीं होता, वे तो अपनी पुरुषार्थ शक्ति एव पराक्रम से जिस स्थान को भी अपने अधिकार मे कर लेती हैं उसे ही अपने नाम से प्रसिद्ध कर देती हैं। गुर्जरों का पजाब के प्रदेशों से हिमालय के चरणों तक, राजपूताने के पवित्र आबू पर्वत के आस पास बसना, ऐतिहासिक कारणों से था और पेशावर से नर्मदा तक फैलना भी, खास महत्व रखता है और इन सब प्रदेशों में उनके नाम का महत्व आज तक विद्यमान है।

१०

'गुर्जर' शब्द की प्राचीन लेखो की जांच करते समय मुन्शी महोदय ने कुछ और महत्वपूर्ण लेखों की ओर सकेत किया है। वे लिखते हैं कि "प्रभाकर वर्धन की विजय प्रशस्ति मे अलकारयुक्त प्रसग स्पष्ट रूप से गुर्जर देश की ओर सकेत करते हैं।"[१] एक शिला

लेख जिसमें कहा गया है कि गुर्जर ने श्री हर्ष के राजपत्र की नक्काशी की, जो आजमगढ़ के उत्तर पूर्वी कोने में ३२ मील दूर एक गांव में मिला है।[१८] दूसरा गुर्जर शिल्पकला का निदर्शक 'कुचार कुडी हुई' मन्दिर है जिसका वर्णन छठी शताब्दि में तामिल की एक कविता 'मणि मेखलई' में मिला है[१९] और इन दोनों निदर्शों में यह निष्कर्ष निकलता है कि आदि रूप में गुर्जर शब्द देश के नाम पर व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त होता था।"

"सन् ४८० ई० में उत्तर में 'गुर्जर नृपति' ने लाट के भड़ौंच प्रदेश पर आक्रमण किया और इस प्रथम को उसके पोते ने अपने शिलालेख में 'गुर्जरनृपतिवंश' कहा है।[२०] आगे मुन्शी महोदय लिखते हैं कि इस शिलालेख में गुर्जर नृपति का समीकरण हरिश्चन्द्र ब्राह्मण के साथ हो जाता है, जिसने अपने भाग्य की स्थापना (प्रतिहार

---

१७ हर्ष चरित निर्णय सागर प्रेस १९३७ पृष्ठ १२०

हूणहरिणकेसरी सिन्धुराजज्वरो गूर्जरप्रजागरो गान्धाराधिपगन्धद्विपकूट पाकलो लाटपाटवपाटच्चरो मालवलक्ष्मीलता परशु प्रतापशील इति प्रथितापर नामा प्रभाकरवर्धनो नाम राजाधिराज

१८ ऐपिग्राफिका इन्डिका भाग १ पृष्ठ ७२

१९ ऐन० सी० मेहता दी पोलोटिकल मोटीफ इन एनसेन्ट इन्डियन लिटरेचर ४९४ पृष्ठ जर्नल आफ दी बिहार, उडीसा रिसर्च सोसायटी १२ भाग पृष्ठ ५०२, आर० सी० मजूमदार जर्नल आफ दी डिपार्टमेन्ट आफ लेटरस कलकता यूनिवर्सिटी भाग १० पृष्ठ ३ नोट २

२० इन्डियन ऐन्टीक्वेरी भाग १३ पृष्ठ ८२

शिलालेख निम्न प्रकार है—

सतत मविलङ्घिता वधी स्थैर्यंगा [-]भि(भी)र्य्यलावण्यवति महासत्वतया तु [f] दुरवगाहे गुर्ज्जरनृपतिवंशमह (ो)दधा(धौ) श्री सहजन्मा कृष्ण हृदयाहितास्तर कौस्तुभ मणिरिव विमलयशोदीधितिनिकरविनिहतकलि-तिमिरनिचय स रक्षो वैनतेय इवाकृष्टभुजगकुलसन्ततिरुत्पतित इव दिनकरचरणकमलप्रणामापवीवाशेष दुरितनिवह साम तदद्

परिवार) जोधपुर प्रदेश में की।[२१] विदेशी राजकुल के बजाय वेदज्ञ ब्राह्मण के कुल को यह महत्व मिलना चाहिये। सातवीं शताब्दि में ६७४ ई० के पुलकेशी द्वितीय के शिलालेख में लाट, मालवा और गुर्जर की पराजय का उल्लेख मिलता है। यह राजाओं के राज्यों के मान्य प्रमाण हैं।[२३] लाट का राजा गुर्जर नृपति वंश हरिश्चन्द्र का वंशज प्रतिहार वंश का था, जिसने गुर्जर देश की राजधानी भीनमाल पर शासन किया था।"

ई० सन् ७३६ में नवसारी का लेख पुलकेशी अवनिजन-ऐश्वर्य का, अरबों या ताजिकों की विजय का, वर्णन करता है, जिसमें सैन्धव, कच्छ, सौराष्ट्र, चावोटक, मौर्य और गुर्जर राजाओं का उल्लेख है।[२४] यद्यपि चावोटक और मौर्य शासन करने वाले राजाओं के परिवारों के नाम हैं। परन्तु कच्छ और सौराष्ट्र देशों के नाम हैं जो उनके राजाओं के लिये प्रयोग में आये हैं, इसलिये गुर्जर शब्द जाति नहीं बल्कि शासित देश का नाम समझना चाहिये।

"जैसा कि कहा गया है चीनी यात्री हुएनत्सांग के समय में पश्चिमी भारत दक्षिण से उत्तर तक निम्न विभागों में बंटा हुआ था—

(१) महाराष्ट्र

(२ भृगुकच्छ

(३) मालवा, नर्मदा और माही के बीच का प्रदेश और आधुनिक मालवा का पश्चिमी भाग।

(४) खेटक या आधुनिक खेड़ा जिला।

---

२१ जोधपुर का शिलालेख प्रतिहार ब–२ क का विक्रमी संवत् ८९४ था जर्नल रायल ऐशियाटिक सोसायटी १८९४ पृष्ठ ४–९

२३ इन्डियन ऐन्टीक्वेरी भाग ८ पृष्ठ २४२ प्रतापोपनता यस्यलाट-मालवगुर्जरा। दण्डोपनतसामन्तचर्य्या वर्य्याइवाभवन् ॥

२४ बम्बई गजेटियर भाग १ जि० १ पृष्ठ १०६ नोट २ तरभसीर मुद्गगोद्धारिणि तरल:रतारतरधारिदारितोदितसैन्धवकच्छेल्लसौराष्ट्र चावोटक-मौर्यगुर्जरादिए [ज्ये] नि शेष दाक्षिणात्यक्षितिपतिजि ·· ··

(५) आमावल्ली या अहमदाबाद प्रान्त।
(६) वल्लभी और सौराष्ट्र (प्रायद्वीप में)
(७) आनर्त उत्तरी गुजरात।
(८) गुर्जर
(९) उज्जैयनी।"[१९]

"सन् ७५४ ई० में जब राष्ट्रकूट विजयी सम्राट दान्तिदुर्ग ने, उज्जैयनी को विजय करके हिरण्यगर्भ महादान का उत्सव मनाया, तो गुर्जर देश के राजाओं में आदेशित राजाओं ने उसकी आधीनता स्वीकार की[२५] और इस समय उसने गुर्जर राजा का स्थान ग्रहण किया।[२६] यह दोनों शब्द गुर्जर देश व गुर्जर नागभट्ट के लिये प्रयोग किये जाते थे, जो गुर्जर देश का राजा था और इससे यह भी प्रकट होता है कि उज्जैयनी उस समय गुर्जर देश या गुर्जर राजाओं की राजधानी थी। फर्क के बड़ौदा के ताम्रपत्र (राष्ट्रकूटों के ई० सन् ८११-८१२) यह निर्देश करते हैं कि गुर्जर प्रतिहार राजा गुर्जरेश्वर होता था।"[२७]

"पंचतन्त्र में गुर्जर देश का उल्लेख है, जहां ऊंट मिलते हैं इससे सिद्ध है कि गुर्जर, राजपूताना से सम्बन्धित नाम है।"[२८]

"सन् ७७८-७९ ई० में जाबालिपुर में लिखे गये अपने ग्रन्थ 'कुवालय

---

६६ 'दी ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश भाग ३ अध्याय १ पृष्ठ ७–८

२५ हिरण्यगर्भं राजन्यैरुज्जयन्या यदासितम्। प्रतिहारीकृत यत्र गुर्जरेशादिराजकम् ॥६॥

सज्जन का ताम्रपत्र अमोघवर्ष शक संवत ७९३ ऐपिग्राफिका इन्डिका भाग १८ पृष्ठ २४३–२५७ का ९ वां श्लोक

२६ ऐपिग्राफिका इन्डिका ७वीं जिल्द १३वा परिशिष्ट

यस्याखण्डितविक्रमस्य कटकेनाक्रम्य तीरक्षितिम्। सौधेऽस्मिन्कृतगुर्जरेन्द्र-रुचिरे''' ॥

२७ इन्डियन ऐन्टीक्वेरी १२वीं जिल्द १६० पृष्ठ

गौडेन्द्रवगपतिनिर्ज्जयदुर्विदग्धसद्गुर्जरेश्वरदिगर्गलता च यस्य। नीत्वा

माला' में उद्योतन वर्तमान जालौर को मनोरम गुर्जर देश और वहां के निवासियों को 'गुर्जर' लिखता है।"[२९]

"७८३-८४ में जिनसेन ने अपनी पुस्तक 'जैन हरिवंश' में (वड़वान) उस देश का वर्णन किया है कि जिसके पूर्व में अवन्ती के राजा वत्स का राज्य था जो गुर्जर देश हो सकता है।"[३०]

"सन् ८३७ ई० मे प्रतिहार हरिश्चन्द्र का वंशज बऊक्क मन्डोर (जोधपुर) से तमाम गुर्जरत्रा भूमि पर शासन करता था।[३१] वहां

भुजं विहतमासवरक्षणार्थं स्वामी तथान्यमपि राज्यह(फ)लानि भुङ्क्ते

२८ पंचतन्त्र ४, पृष्ठ ६:

समीचीनोऽयं व्यापारः तव सम्मतिश्चेत्कुतोऽपि धनिकात्किञ्चिद् द्रव्यमादाय मया गुर्जरदेशे गन्तव्यं करभग्रहणाय। · ततश्च गुर्जरदेशं गत्वोष्ट्री गृहीत्वा स्वगृहमागतः।

२९ उद्योतन काव्यमाला ग्वालियर ओरियन्टल सीरीज के अपभ्रंश काव्यत्रयी से ग्रहण की गई जि०३२ के ६३ का‥‥‥ पयलो(ला)-लियपुट्ठे ग धम्मपरे संधिविग्गह णिउणे। 'णउरे भल्लउं' भणिरे ग्रह पेच्छइ गुज्जरे अवरे॥ ण्हाउलित्त-विलित्ते कयसीमते सुमोहियमुगत्ते। 'आइम्ह काई तुम्ह मित्तु' भणिरे पेच्छइ लाडे॥

३० इण्डियन ऐन्टीक्वेरी १५ पृष्ठ १४१

शाकेष्वब्दशतेषु सप्तसु दिशं पञ्चोत्तरेषूत्तरां पातीन्द्रायुधनाम्नि कृष्ण-नृपजे श्रीवल्लभे दक्षिणाम्। पूर्वां श्रीमदवन्तिभूभृति नृपे वत्साधिराजेऽपरां सौर्यानामधिमण्डले जययुते वीरे वराहेऽवति॥

३१ प्रतिहार राजा बऊक का जोधपुर का शिलालेख जर्नल-रायल ऐशियाटिक सोसायटी १८९४ पृष्ठ ४-६

नन्दावल्ल प्रहत्वा रिपुबलमतुलं मुद्गकूपप्रयातं दृष्ट्वा भग्नां स्वपक्षां द्विजनृपकुलजां सत्प्रतीहारभूपाम्।

धिग्भूतैकेन तस्मिन् पदस्थितयशसा श्रीमता बाउकेन स्पूर्जत् कृत्वा पदूरं तदनु नरमृगा घातिता हेतिनैव॥२७॥

कस्यान्यस्य प्रभग्नः ससचिवमनुजं त्यज्य राणे सुतत्र. केनैकेनाभिभीते दशदिशि तु बले स्तम्भ्यधारमानमेकम्।

यउक्क का नागभट्ट द्वितीय के समान अपने राज्य का उल्लेख है।"[१२]

"सन् ८४४ ई० का मिहिरभोज का शिलालेख उस राज्य की भूमि गुर्जरत्रा भूमि का उल्लेख करता है, जिसमें वर्तमान जोधपुर का डेन्डवानक गांव गुर्जरत्रा भूमि में माना जाता है।[१३] सन् ८५० ई० में आधुनिक जयपुर के अन्तर्गत मगलानक गांव गुर्जरत्रा मण्डल कहा जाता है।[१४] यह इसलिये कहा गया है कि गुर्जर देश मिहिरभोज की जन्मभूमि थी।"

"मिहिरभोज की ८४३ ई० की ग्वालियर की प्रशस्ति में,[१५] एवं अमोघवर्ष (सन् ८७१ ई०) की सञ्जन के दानपत्र में[१६] और राजशेखर के (सन् ९२० ई०) ग्रन्थों से[१७] तथा सोमेश्वर (सन्

धैर्यो गुरुत्वारवपृष्ठ क्षितितनवरगनागिहस्तेन धनु छित्वा भित्त्वा श्मशान कृतमतिममद बाउकान्यन तस्मिन् ॥२८॥

नवमण्डलनलनिचय मग्न हत्वा मयूरमविग्रहन । तदुन हृताविनरगा श्रीमद्बाउकनृसिमेन ॥२९॥

१२ एपिग्राफिका इन्डिका ९ पृष्ठ १९९

महाराजाधिराजपरमेश्वर श्रीवत्सराजदेवपादानुध्यातपरमभट्टारकमहाराजा धराजपरमेश्वरश्रीनागभटदेवस्य विषय प्रवर्द्धमानराज्य -

१३ एपिग्राफिका इन्डिका ५ पृष्ठ २११

गुर्जरत्राभूमौ डण्डवानकविषयसम्ब(म्ब)द्धसिवाग्रामाग्रहारे ।

१४ ऐपिग्राफिका इन्डका ५ भाग पृष्ठ २१० नोट ३

श्रीमद्गुर्ज्जरत्रामण्डलान्त पातिमगलानकविनिर्गत-

१५ मिहिरभोज की ग्वालियर प्रशस्ति

आत्मारामफलादुपाज्य विजर देवेन दैत्यद्विषा ज्योतिर्बीजमकृत्रिमे गुणवति क्षेत्रे यदुप्त पुरा ।

श्रय क दवपुस्तत समभवद्भास्वानतद्वचापरे म विक्ष्वाकुककुत्स्थमूलपृथव क्ष्मापालकल्पद्रुमा ॥२॥

तेषा वशे सुजन्मा क्रमनिहितपदे धाम्नि वज्रेषु घोरम्

११०४—१२५४ ई० तक) के लेखों[१८] से यह स्पष्ट है कि देश का नाम प्रायः इसके राजाओं के लिये प्रयुक्त हुआ करता था, जाति के लिये नहीं।"

"सन् ८५१ ई० में अरब यात्री सुलेमान ने मिहिरभोज को जुर्ज या गुर्जरों का शासक बताया है, जिससे वह यह सिद्ध करता है कि भारत के विशाल साम्राज्य का स्वामी होते हुए भी, वह मुख्य रूप से गुर्जर का राजा माना जाता था। अबुजैद-जुर्ज (गुर्जर) राज्य का अविस्तार कन्नौज नगर तक बताता है। इब्न खुरदाद व अल-मसूदी (सन ६०० ई०) अलइदरिसी और बालाधुरी जुर्ज साम्राज्य बताते हैं।"[१९]

राम पौलस्त्यहिंस्र हतविहति समित्कर्म चक्रे पलाशी।
श्लाघ्यस्तस्यानुभोऽजो मघवमुदमुषो मेघनादस्य सख्ये,
सौमित्रिस्तीव्रदण्ड प्रतिहरणविधेर्यं प्रतीहार आसीत् ॥ ३ ॥

तद्वंशे प्रतिहारकेतनभृति त्रैलोक्यरक्षास्पदे देवो नागभट पुरातनमुनेर्मूर्तिर्बभूवाद्भुतम्।

येनासौ सुकृतप्रमाथिवलनम्लेच्छाधिपाक्षौहिणी क्षुन्दानस्फुरदुग्रहेतिरुचिरैर्दोर्भिश्चतुर्भिर्बभौ ॥ ४ ॥

आर्कियालोजिकल सर्वे आफ इन्डिया १६०३–४ पृष्ठ २८० एपिग्राफिका इन्डिका भाग १८ पृष्ठ १०७–११४

१६ सज्जन प्लेट अमोघ वर्ष शक ७९३ एपिग्राफिका इन्डिका भाग १८ पृष्ठ २४३–२५३

इन्द्रराजस्ततो गृह्णात् यश्चालुक्यनृपात्मजाम्। राक्षसेन विवाहेन रणे खेटकमण्डपे ॥ ७ ॥

हिरण्यगर्भं राजन्यैरुज्जयन्यां तदासितम्। प्रतिहारीकृत येन गुर्जरेशादि राजकम् ॥ ६ ॥

अस्तत्केरलपाण्ड्यचौलिकनृपसपल्लवं पल्लव प्रम्लानिं गमयन्कलिंगमगधप्रायासको यासक.।

"सन ८६१ ई० मे मन्डौर के कक्कुक (उत्तराधिकारी कक्कुक) के शिलालेख में गुर्जरत्रा और गुजरात को राज्य कहा गया है।"[४०]

"सन ८६७ ई० में मिहिरभोज की सेना को गुर्जर सेना कहा गया है अर्थात् गुर्जर राज्य की सेना।"[४१]

"सन् ८६० ई० मे काश्मीर के राजा शङ्करवर्मन ने गुर्जर के राजा अलाखान को हराया, जो अफगानिस्तान के ब्राह्मणशाही राजाओं का मित्र था।"

"गुर्जर के राजा अलाखान के दृढ़ और व्यवस्थित भाग को उसने लड़ाई मे पलभर में उखाड़ दिया और उसे अपनी उन्नति के लिये अत्यन्त चिन्तित कर दिया।"

"गुर्जर शासक ने विनम्रता से उसे टक्क देश दे दिया और अपने इस तरीके से अपने देश की उसी प्रकार रक्षा की जैसे कोई अपनी अंगुली का बलिदान करके शरीर की रक्षा करले।"

गर्जदगुर्जरमौलीमौर्यविलयोलकायन्,योगस्तदविन्चशासनमतस्सद्विसमो विक्रम ॥ ३७ ॥

३७ राज शखर रचित बाल भारत निर्णय सागर प्रेस पृष्ठ ७-८

नमितमुरलमौलि पाकलो मेकलाना, रणकलितकलिङ्ग केलितर्केरलेन्दो यजति जितकुलूत कुन्तलाना कुठार हठाहृतरमठश्री श्रीमहीपालदेव ॥ तेन च रघुवंशमुक्तामणिनाऽर्यावर्तमहाराजाधिराजेन श्रीनिर्भयनरेन्द्रनन्दनना धिकृत सभासद सर्वान्

३८ सोमश्वर कीर्ति कौमुदी १ पृष्ठ २५

अपारपौरुषोद्गार त्वङ्गार गुरुमत्सर । सौराष्ट्र मिद्यानाजो करिग कैमरीर य ॥

३६ इलियट (भारत का इतिहास) १ भाग १२वा पृष्ठ

४० जोधपुर प्रशस्ति प्रतिहार कक्क ४६४ जर्नल रायल एशियाटिक सोसायटी १८६४ पृष्ठ ४-६

अत श्रीबाउको धीमान् स्वप्रतीहारवंशजान् । प्रशस्तो लेखयामास

"वीर राजा भोज ने थक्किय परिवार के वंशज से जिस राज्य को छीन लिया था, वह उसे वापिस दे दिया और उसे उसने अपना प्रधान राजकीय अध्यक्ष (सामन्त) नियुक्त कर दिया।"[४१]

"अलाखान का राज्य समतल दोआवे के ऊपरी भाग में था, जो दारवभिसार के दक्षिण झेलम और चुनाव नदियों के मध्य था और सम्भवतया पूर्वी पंजाब के मैदान का एक भाग था। मिहिरभोज उसका सम्राट था। यहां गुर्जर शब्द स्पष्टतया देश के लिये है, किसी जाति के लिये नहीं।" "यह उदाहरण और विदेशी यात्रियों के लेखों से स्पष्ट हो जाता है कि उस समय कान्यकुब्ज (कन्नौज) तक भी गुर्जर देश के साम्राज्य में था।"

"सन् ६१५ ई० में मिहिरभोज के पोते महिपाल को गरजने वाला गुर्जर कहा है।[४३] इसी काल में इस सम्राट को गुर्जर भी कहा है।"

"ई० सन् ६५० में चन्देल राजा यशोवर्मन को कन्नौज के प्रतिहार राजाओं को लक्ष्य करते हुए 'गुर्जरों को जला देने वाली आग' कहा है।"[४४]

श्रीयशोविक्रमान्वितान् ॥ ३ ॥

४१ इन्डियन एंन्टीक्वेरी १८१–३४१ (श्लोक)

गुर्जरखलमतित्रलवन् समुद्यत यूहित च कुल्येन । ऐकाकिनैव निहित पराङ्मुख लीलया येन ॥

४२ राजतरंगणी ५ पृष्ठ १४६-५ स्टीन का अनुवाद २०५

अचरानालखानस्य सखये गूर्जरभूभुज । बद्धमूलां लुणाल्लदर्मी शुच दीर्घामरोपयत् ॥ तस्मै दत्वा टक्कदेशं विनयादङ्गलीमिव । स्वशरीरमिवा-पासीन्मसटलं गूर्जराधिप ॥ हृत भोजाधिराजेन स साम्राज्यमदापयन् । प्रतीहारतया भृत्यीभूते थक्किय्यकान्वये ॥

४३ वम्बई गजेटियर जि० १ भाग १ पृष्ठ १२८ का नोट ४

धारासारिणि सेन्द्रचापवलये यस्येत्थमब्दागमें, गर्जद्गूर्जरसगरव्यनि-करं जीर्णो जन शंसति ॥

"सन् ६४२ ई० में मूलराज सोलंकी और उसके उत्तराधिकारियों ने गुर्जरेश्वर की उपाधि धारण कर रक्खी थी, शायद इसका कारण यह हो कि ये गुर्जर देश मे आये थे, या इसलिये कि सारस्वत और सत्यपुरा मण्डल का प्रान्त, जो कि गुर्जर देश का एक भाग था, मूलराज के आधीन था।"[४१]

"ई० सन् ६४३ में सियाक परमार राजा सम्पूर्ण मालवा के तथा सरस्वती मण्डल को छोड़कर तमाम वर्तमान गुजरात पर राज्य करता था और गुर्जर राजा कहलाता था।"[४२]

"कर्ण तृतीय के प्रधान सेनापति 'नरसिंह' को जिसने मालवा, वर्तमान गुजरात और राजपूताने के कुछ भागों को विजय किया था 'गुर्जराधिराज' गुर्जर राजा की उपाधि प्राप्त थी।"[४३]

"६४३ ई० में लगभग १८००० गुर्जर भीनमाल को छोड़कर उससे बाहर होगये।[४४] इनमें सारी जातियां थीं—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—इसलिये यहां गुर्जर शब्द का अर्थ सभी जातियों से लेना चाहिये—जैसा गौड़, द्राविड़ और कारमीर इत्यादि से है। इससे यह भी पता चलता है कि गुर्जर देश की प्रजा अपने को गुर्जर कहती थी।"

"सन् ६६० ई० में राजौर (अलवर) के मथनदेव ने अपने शिलालेख में अपने को गुर्जर प्रतिहारों का वंशज कहा है। गुर्जर जाति के प्रतिहार वंश की अपेक्षा गुर्जर प्रदेश के प्रतिहार ही इसका तात्पर्य हो सकता है। इसी शिलालेख में श्री गुर्ज्जर को खेतिहर (किसान) कहा गया है।[४५] इसका अर्थ यह हुआ कि आधुनिक अलवर रियासत गुर्जर देश की सीमाओं के बाहर थी, जिसमें गुर्जर देश से कुछ जातियां निकल कर जो

---

४४ ऐपिग्राफिका इन्डिका (१) पृष्ठ १२६

गौडक्रोड़ालनासितुलितक्षमन (व)लः कोशान कोशलानां, नश्यत्कश्मी(श्मी) रवीरः शिथिलितमिथिलः कालवन्मालवानाम्। सीद[न्मा] वद्यचेदिः कुरुष्वपु मरुरसंज्वरो गुर्जराणां, तस्मात्तस्यां स जज्ञे नृपकुलतिलकः श्रीयशोवर्म्मराज॥

अपनी मातृभूमि के नाम पर अपने को गुर्जर कहती थी तथा राजौर में खेती करती थी।

"सन् ८८६ में चेदि राजा ने कहा है कि उसके दादा ने गुर्जर राजा (शायद कन्नौज के प्रतिहार) को हराया था।"[७०]

"६६७ ई० में क्षेमेन्द्र की 'औचित्य विचार चर्चा' पुस्तक में मुंज (जिसे वाक्पति द्वितीय भी कहते हैं) और पाटन के मूलराज के बीच में होने वाले युद्ध का वर्णन है, जिसे मालवा के सिंह और गुर्जर राजा का युद्ध कहा गया है।[७१] सारस्वत और सत्यपुरा मंडल जिस पर मूलराज का राज्य था, प्राचीन गुर्जर देश के ऊपरी दक्षिणी भाग थे। राजपूताने के दूसरे भाग विभिन्न नामों से पुकारे जाते थे। धवल के हस्तिकुण्डी के शिलालेख में जो ६६७ ई० का है, मूलराज को फिर उसी प्रकार गुर्जरेश, गुर्जरों का राजा कहा है।"[७२]

---

[६५] इण्डियन ऐन्टीक्वेरी भाग ६, १६१ पृष्ठ का नोट।

चौलुकिकान्वयो महाराजाधिराज श्रीमूलराज. । महाराजाधिराज श्रीराजिसुत. ॥ निजभुजोपार्जितसारस्वतमण्डलो श्रीमोढेरकीयार्द्धाष्टमेषु कम्बोइकाग्रामे समस्तराजपुरुषान् ब्राह्मणोत्तरान् तन्निवासिजनपदाश्च बोधयत्यस्तु व सुविदित।

[६६] राष्ट्रकूटाज ऐन्ड देयर टाईम्स (ए० एस० अालेतकर) १२० पृष्ठ का नोट।

[६७] ऐपिग्राफिका इन्डिका ४ भाग पृष्ठ १७६

कृष्णराजोत्तरदिग्विजयविद्रुतगूर्जराधिराजस्य

[६८] बोम्बे गजेटियर भाग १ जि० १ पृष्ठ ४६६

[६९] ऐपिग्राफिका इण्डिका ३ भाग पृष्ठ २६६

श्रीराज्यपुरावस्थितो महाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीमथनदेवो महाराजाधिराज श्रीसावटसूनुर्गूर्ज्जरप्रतिहारान्वय .. एतयैवैतत्प्रत्यासन्न श्रीगुर्ज्जरवाहित समस्तक्षेत्रसमेतश्च।

[७०] ऐपिग्राफिका इन्डिका ११वां भाग पृष्ठ १४२

वङ्गालभङ्गनिपुणः परिभूतपा[ण्ड्य]ो, लाटेशलुण्ठनपटुर्जितगुर्ज्जरेन्द्र। काश्मीरवीरमुकुटार्चितपादपीठस्तेषु क्रमादजनि लक्ष्मणराजदेव ॥

"सन् १०४० में अलबरूनी 'गुजरात' देश को राजपूताने में बताता है, जिसकी राजधानी बज़न या नारायण थी।"[११]

'ई० सन् १०५० में भोजदेव ने अपनी पुस्तक 'सरस्वती कण्ठाभरण' गुर्जर को देश को प्रजा बनाया है।[१०] ई० सन् १०६७ में विल्हण आधुनिक उत्तरीय गुजरात के मनुष्यों को गुर्जर कहता है।"[११]

"ई० सन् ११२४ में 'गुर्जर' शब्द मुद्रित कुमुदचन्द्र नाटक में 'गुर्जर' शब्द प्रजा के लिये प्रयुक्त हुआ है।"[१६]

ई० सन् ११३६ में चन्द्रसूरि ने मुनिसुव्रत स्वामीचरित में 'गुर्जर देश' का वर्णन किया है।"[१०]

"सन् ११३६ ई० के दोहद के शिलालेख में जयसिंह सिद्धराज को 'गुर्जर मण्डल' का राजा वर्णन किया है।"[१८]

"११५४ ई० में जिनदत्त सूरि 'गुर्ज्जरत्ता' का वर्णन करता है।"[१६]

"हेमचन्द्र ने 'गुर्जर' शब्द का प्रयोग आधुनिक उत्तरीय गुजरात के निवासियों के लिये और पाटन के चालुक्य को 'गुर्जरेन्द्र' लिखा है।"[१०]

"११६८ ई० में कुमारपाल को यशपाल द्वारा 'गुर्जर पति' कहा गया है।"[११]

"ई० सन् ११८४ में सोमप्रभा ने अपनी 'कुमारपाल प्रति बोध' पुस्तक में गुर्ज्जर देश का भूमिरूप में वर्णन किया है।"[१२]

---

[११] काव्यमाला पृष्ट १३६ नोट

त्वत्पादाब्जरज: प्रसादकणिकालोभोन्मुखस्तन्मरो मन्ये मालवसिंहगूर्जर-पतिस्तीव्र तपस्तप्यते ॥ भग्नानि द्विपता कुलानि समरे त्वत्खड्गधाराकुले नाथास्मिन्निति वन्दिवाचि बहुशो देव श्रुताया पुरा ॥ मुग्धा गूर्जरभूमिपाल-महिषी प्रत्याशया पाथस कान्तारे चकिता विमुञ्चति मुहु पत्यु कृपाणे दृशो ॥

[१२] ऐपिग्राफिका इन्डिका १० भाग २० पृष्ट का नोट

भक्त्वा घाट घटाभि प्रकटमिव मद मेदपाटे भटाना जन्ये राजन्यजन्य जनयति जनताज रण मुञ्जराजे। [श्री]माणे [प्र]णष्ट हरिण इव भिया गुर्ज्जरेशो विनष्टे तत्सैन्याना स(र)ण्यो हरिरिव शरण य सुराणा ब(व)

"सोमेश्वर ने सुरथोत्सव मे पाटन के राजा को गुर्जर भूमि का आनन्द प्राप्त करने वाला लिखा है।"[१३]

"१२२८ ई० मे पूर्णभद्र ने 'मदर्षि चरित्र प्रशस्ति' में 'गुर्जर भूमि' का उल्लेख किया है।"[१४]

मुन्शी महोदय ने गुर्जर शब्द को देश वाचक शब्द सिद्ध करने वाले जो कुछ भी महत्वपूर्ण प्रमाण उपस्थित किये हैं वह सब हमने ऊपर अंकित कर दिये हैं। इन सबको देखने के बाद भी उनका पक्ष कुछ महत्व नहीं रखता, जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं कि देशों का महत्वपूर्ण नाम जातियों के कारण होता है और प्रमाणपूर्वक गुर्जर जाति द्वारा देशों की नामों की प्रसिद्धि का क्रम वर्णन कर चुके हैं। इतिहास द्वारा प्रभाकरवर्धन के समय गुर्जरों का अस्तित्व है। इसलिये बाण महाकवि ने जो प्रभाकरवर्धन की दिग्विजय का अलंकारिक प्रशस्ति में वर्णन किया है, वह गुर्जर जाति के राजाओं के लिये ही है, उसे कवि ने 'गुर्जरों की निद्रा'

भूय ॥ ××× य मूलादुदमूलयद्गुरुबल श्रीमूलराजो नृपो दर्प्पा घो धरणीवराह-नृपति यद्वद्वि(द्वि)प पादप। आयान्त भुवि कादिशीकमभिको यस्त शरण्यो दधौ दंष्ट्रायामिव रूढमूढमहिमा कोलो महीमण्डल ॥

[११] इलियट १ पृष्ठ २६

[१२] सरस्वती कण्ठाभरण (२) १३ निर्णयसागर प्रेस १९३४ पृष्ठ १४२

शृण्वति लटभ लाटा प्राकृत संस्कृतद्विष। अपभ्रंशेन तुष्यन्ति स्वेन नान्येन गूर्जरा ॥

[१३] विक्रमांकदेव कातिक १८ पृष्ठ ९७

षसानय विदधति न ये सर्वदैवाविशुद्धास्तद् भाषन्ते किमपि भजते यज्जुगुप्सास्पदत्वम्। येषा मार्गे परिचयवशादर्जित गूर्जराणा य संताप शिथिल मकरोत्सोमनाथ गूर्जराणां य सताप शिथिलमकरोत्सोमनाथ विलोक्य ॥

[१४] श्रीजैन यशोविजय ग्रन्थमाला ८

जर्जरीकृत गुर्जरजनगर्जितवस, तानिव चक्रभ्रमे—

[१५] पिटरसन रिपोर्ट ५ पृष्ठ ८० गुर्जर देशम्मि.—

भग करने वाला लिखा है। इसके लिये ऐतिहासिक दृष्टि से हमें कुछ आगे बढ़ने की आवश्यकता है।

हर्षकालीन भारत (ई० सन् ६०६–६४७ ई०) में गुर्जरों का अथवा गुर्जर जाति का राज्य भड़ौंच और भीनमाल में था, जिसके सम्बन्ध में हमें निम्न ऐतिहासिक प्रमाण मिलते हैं। प्रसिद्ध इतिहासकार ई० बी० हैवेल लिखते हैं कि "हर्ष का साम्राज्य अन्तिम विजयराज में, आर्यवर्त में, एक समुद्र से दूसरे समुद्र तक और दक्षिण में नर्मदा तक था। केवल गुर्जर राजाओं का राज्य ही उसके साम्राज्य से बाहर था, जो उस समय राजपूताना, गुजरात और पंजाब के कुछ हिस्सों में था।"[१]

"हर्ष के समय में आने वाला चीनी यात्री ह्वेनत्सांग भीनमाल और भृगुकच्छ में दो अलग अलग गुर्जरों के राज्यों का वर्णन करता

---

[१८] इण्डियन ऐन्टीक्वरी १० १४६ श्लोक ६७

श्रीजयसिंहदेवोऽस्ति भूपो गुर्जरमंडले। येन कारागृहे क्षिप्ती सुराष्ट्रमाल वेश्वरी॥ अन्येप्युत्सादिता यन सिन्धुराजादयो नृपा। आज्ञा विश्ति रोषेव साहिता उत्तरे नृपा॥

[१९] गान्धार श्रद्धानानक प्रकरण ६८ (बम्बई १९१६)

परिहरिय गुरुकमागय वरवत्ताएवि गुज्जरत्ताए। वसहिनिवासो जेहि कुडीकओ गुज्जरत्ताए॥

[१०] देवेश्वर्य हेमचन्द्र सूरि भाग ६ पृष्ठ ७

गुर्जर हेतुरनेकमारद्वाज वरो गीतगुणस्त्रिगङ्गम्। स्थितोऽधिसद्धक्तगुप-गुर्जरेन्द्रे स्वरौनिनु पुत्र इवंप रेजे॥

[११] ग्वालियर ओरियन्टल सीरीज ६वी जिल्द पृष्ठ १६

एको य: सकल कुतूहलिनया बभ्राम भूमण्डलम्, श्रीत्या यत्र पतिंवरा समभवत् साम्राज्यलक्ष्मी स्वयम्। श्रीसिद्धाधिपविप्रयोगविधुरामप्रीणयच्च प्रजाम्, कस्यासौ विदितो न गूर्जरनरेन्द्रचौलुक्यवंशध्वज:॥

[१२] वही (१४) पृष्ठ ३

गरुओ गुज्जरदेसो नगरागरगामगोउलाइन्नो। सुर–लोय–रिद्धिमय–विजय–पडिओ मडिओ जेए॥

है।[१२] भीनमाल वर्तमान राजपूताने के अन्तर्गत जोधपुर से १२० मील दूर नेऋत्य कोण में २४ अंश ३७ कला उत्तर अक्षांस व ७२ अंश ९ कला पूर्व देशान्तर में आबू पहाड़ व लूनी नदी के बीच में स्थित, हर्षवर्धन के पिता प्रभाकरवर्धन के थानेसर राज्य की दक्षिणी सीमा पर था। ओझा महोदय का निश्चित विचार है कि विक्रमी सम्वत् ४०० में (भीनमाल में) या उससे भी पूर्व गुर्जरों का शासन सम्भव है। भड़ौंच राजा के दद्दा का ५७० ई० का जो शिलालेख मिला है उससे पता चलता है कि उसने नाग शत्रुओं को उखाड़ फेंका था।[१३] भड़ौंच के इसी वंश के दद्दा चतुर्थ ने सम्राट हर्ष के समय में हर्षदेव से पराजित ध्रुवसेन अथवा द्वितीय ध्रुवभट्ट को अपने यहां शरण दी।[१४] यह ध्रुवसेन द्वितीय वल्लभी का राजा है, जो दद्दा चतुर्थ गुर्जर के कारण फिर अपना पैतृक राज्य प्राप्त करके हर्ष की कन्या से अपना विवाह सम्बन्ध स्थापित करने का गौरव प्राप्त कर सका। ऐहोड़े के लेख से यह पता चलता है कि चालुक्य सम्राट पुलकेशी दक्षिण भारत का शक्तिशाली सम्राट था और भड़ौंच के गुर्जर दद्दा चतुर्थ से हमें उसकी मित्रता के सम्बन्धों का पता चलता है।[१५] यह, हर्ष और पुलकेशिन ह्यूनत्सांग का समकालीन दद्दा चतुर्थ गुर्जर, शिलालेखों में अपने को विपुल 'गुर्जर नृपान्वय प्रदीपतो' लिखकर गुर्जर जाति का प्रकट करता है।[१६]

[१२] काव्य माला न० ७३ बम्बई १९०२, १०३, १५, = मोल सलीतमवनीमवतामसौ व. सीवास्तिकोऽस्तिरवति वर स्मरता स्मरारे । श्रीगूर्जरक्षितिभुजा किल मूलराजदेवेन दूरमुपरुध्य पुरो दधे यः ॥

[१३] केटलाग आफ़ पामलीफ MSS. इन दी भण्डारस ऐट जैसलमेर, End. I ग्वालियर ओरियन्टल सीरीज.

श्रीमद्गुर्जरभूमिभूपतिमणौ श्रीपत्तने पत्तन, श्रीमद्दुर्लभराजदेवपुरतो यत्नेस्यवासिद्धिपान् । निर्लोठ्यागमहेतुयुक्तिनगरैर्वाम गृहस्थालये साधूना समनि-श्रन्मुनिमृगाधीशोऽप्रघृष्य परैः ॥

[१४] दी ग्लोरी देट वाज गुर्जर देश भाग ३ पृष्ठ ८ से १३ तक।

[१५] आर्यन रूल इन इण्डिया (ई० वी० हैवेल) पृष्ठ १९१

इन सब वृतान्तों से पता चलता है कि दद्दा चतुर्थ, हर्षवर्धन, पुलेकेशिन, ध्रुवभट्ट समकालीन थे और उस काल में भीनमाल का राजा व्याघ्रमुख का लडका था, जिसका वर्णन ६२८ ई० में ज्योतिषी, ब्रह्मगुप्त ने अपनी पुस्तक 'ब्रह्मसिद्धान्त' में किया है।[०६]

भीनमाल और भड़ौच के गुर्जर जाति के राजा चाप वंश के थे। नवसारी के पुलकेशिन के दानपत्र में जो गुर्जरों का वर्णन है, वह इन्हीं भीनमाल और भड़ौच के गुर्जर राजाओं का है और प्रभाकरवर्धन के साथ जो गुर्जरों का वर्णन आया है वह भी भीनमाल भड़ौच के राजाओं का है। प्रभाकरवर्धन का समकालीन दद्दा तृतीय था और सीमावर्ती राज्य होने के कारण गुर्जरों की—प्रभाकरवर्धन द्वारा निद्रा भङ्ग करने वाला जो लिखा है वह गुर्जरों के सावधान रहने का सूचक है।

मुन्शी महोदय ने अपने सिद्धान्त में भड़ौच के और भीनमाल के गुर्जरों की जो वंशावली का मिलान जोधपुर के 'प्रतिहार' के शिलालेख द्वारा की है और उसे हरिश्चन्द्र का लडका लिखा है वह यथार्थ नहीं है। वास्तव में यह दोनों राज गुर्जर जाति की चार शाखा के थे। जहां भड़ौच के गुर्जर राजाओं ने अपने को गुर्जर वंश का माना है, वहां उन्होंने अपनी वंशावली महाराजा कर्ण से मिलाई है, किसी हरिश्चन्द्र से नहीं, जैसा कि मुन्शी महोदय लिखते हैं।

---

[०१] हर्षवर्धन पृष्ठ २२५-२२६ हिस्ट्री आफ मेडिवल हिन्दू इन्डिया, हर्ष के समय के राज्य (हुएनत्सांग के लेखानुसार) सी०वी० वैद्य पृष्ठ २१-२२

[०२] इन्डियन ऐन्टीक्वेरी भाग १३ पृष्ठ ८२

[०३] वही पृष्ठ ७६, जर्नल रायल ऐशियाटिक सोसायटी बम्बई जि० ६ पृष्ठ।

[०४] ऐपिग्राफिका इन्डिका जि० ६ पृष्ठ १०

[०५] इन्डियन एन्टीक्वेरी भाग ७ न० ६३

[०६] स्फुट ब्रह्म सिद्धान्त श्लोक ७–८

"श्रीचापवंशतिलके श्रीव्याघ्रमुखे नृपे शकनृपाणाम्। पञ्चाशत्संयुक्तैर्वर्षशतैः पञ्चभिरतीतैः ॥७॥ ब्राह्म स्फुटसिद्धान्त सज्जनगणितगोलवित्प्रीत्यै। त्रिंशद्वर्षेण कृतो जिष्णुसुतब्रह्मगुप्तेन ॥८॥ (ब्राह्मस्फुट सिद्धान्त)

दो शिलालेख बाऊक और कक्कुक भाईयों के मिले जो क्रमश: विक्रमी सम्वत् ८९४ (ई० सन् ८३७) व विक्रमी सम्वत् ९१८ (ई० सन् ८६१) के मिले हैं, जिसमें मन्डौर पर प्रतिहार वंश का शासन पाया जाता है। हरिश्चन्द्र ब्राह्मण के क्षत्रिय वंश की भद्रा रानी से भोगभट्ट, कक्क, रज्जिल और दद्द चार पुत्र हुए। शिलालेख से यह भी पता चलता है कि हरिश्चन्द्र का नाम रोहिल्लद्धि भी था। हरिश्चन्द्र के चारों पुत्रों ने मांडव्यपुर मन्डौर का किला लेकर वहां ऊंचा प्राकार कोट बनाया। हरिश्चन्द्र का विक्रमी सम्वत् ६४४ (ई० सन् ५८७) के आसपास होना सम्भव है।

इस मन्डौर के प्रतिहार वंश की वंशावली निम्न प्रकार है, जिसका वर्णन इस वंश के १३वें राजा बाऊक और १४वें उसके भाई कक्कुक के शिलालेखों में है।

"(१) हरिश्चन्द्र (रोहिल्लद्धि) प्रारम्भ में किसी राजा का प्रतिहार था, उसकी रानी भद्रा से जो क्षत्रिय वंश की थी, चार पुत्र—भोगभट्ट, कक्क, रज्जिल और दद्द हुए। उन्होंने अपने बाहुबल से मांडव्यपुर (मन्डौर) का दुर्ग (किला) लेकर वहां ऊंचा प्राकार बनाया।

(२) रज्जिल (संख्या १) का ज्येष्ठ पुत्र था।

(३) नरभट्ट (संख्या २ का पुत्र) उसकी वीरता के कारण उसको पेलापेलिन्न कहते थे।

(४) नागभट्ट (संख्या ३ का पुत्र) उसको नाहड भी कहते थे। उसने मेडंतकपुर (मेड़ता जोधपुर) में अपनी राजधानी स्थिर की। उसकी रानी जज्जिका देवी से तात और भोज दो पुत्र उत्पन्न हुए।

(५) तात (संख्या ४ का पुत्र) उसने बिजली के समान जीवन चञ्चल जानकर अपने छोटे भाई को राज्य दे दिया और आप मांडव्य के पवित्र आश्रम में जाकर धर्माचरण में प्रवृत्त हुआ।

(६) भोज संख्या ५ का छोटा भाई।

(७) यशोवर्धन संख्या ६ का पुत्र।

(८) चन्दुक संख्या ७ का पुत्र।

(६) शीलक (संख्या ८ का पुत्र) उसने त्रवणी और वल्ल देश म (जोधपुर के दक्षिणी पश्चिमी विभाग का नाम वल्ल था और माल्याणी (मारवाड) त्रवणी कहलाता था। अपनी सीमा स्थिर को अर्थात् उनको अपने राज्य मे मिलाया और वल्ल देश क स्वामी भट्टिक (भाटी) देवराज को पृथ्वी पर पछाड कर उसका छत्र छीन लिया।

(जर्नल रायल एशियाटिक सोसायटी इटर्न मन्दिर १८६४ पृष्ठ ६)

(१०) झोट (संख्या ६ का पुत्र) राज्य सुख भोगने क पीछे गङ्गा म मुक्ति पाई।

(११) भिलादित्य (संख्या १० का पुत्र) उसने युवावस्था म राज्य किया, फिर पुत्र को राज्यभार सौंप कर गङ्गा द्वार हरिद्वार को चला गया। १८ वर्ष जीवित रहकर अनशन व्रत मे शरीर छोडा।

(१२) कक्क (संख्या ११ का पुत्र) उसने मुद्गगिरि (मुगर बिहार) मे गौडो के साथ लडने में यश प्राप्त किया। यह व्याकरण, ज्योतिष तर्क (न्याय) और सर्व भाषाओं क कवित्व में निपुण था। उसकी भाटी वश की महारानी पद्मनी से बाऊक और कक्कुक का जन्म हुआ। कक्क प्रतिहार रघुवंशी महाराजा वत्सराज का सामन्त होना चाहिये क्योंकि गौडों के साथ लडने मे उसका यश पाने के उल्लेख स यही मालूम होता है कि जब वत्सराज ने गौड देश के राजा को पराजय कर उसकी राज्य लक्ष्मी और दो श्वेत छत्र छीने उस समय कक्क उसका सामन्त होने स उसके साथ लडने को गया होगा।

(१३) बाऊक (संख्या १२ का पुत्र) जब शत्रुओं का अतुल सैन्य नदावल्ल को मारकर भूअकूप मे आगया और अपने पक्ष वाले द्विज नृपकुल क प्रतिहार भाग निकले तथा अपना मन्त्री एव छोटा भाई भी छोड भागा, तो उस समय राणा बाऊक ने घोडे स उतर कर अपनी तलवार उठाई। फिर जब नन्दावल्लो के सभी समुदाय भाग निकले और अपने शत्रु राजा मयूर को एव उसके मनुष्य (सैनिक) रूप मृगों को मार गिराया तब उसने अपनी तलवार म्यान में की। विक्रमी सम्वत् ८६४ (ई० सन् ८३७) की ऊपर लिखी प्रशस्ति (जोधपुर) उसी ने खुदवाई।

(१४) कक्कुक (सख्या १३ का भाई) घटियाले से मिले हुए विक्रमी सम्वत् ६१८ के दोनों शिलालेख उसी के हैं, जिसके अनुसार उसने अपने सच्चरित्र से मरु, माड, वल्ल, तमणी (त्रवणी), अज्ज (आर्य) एव गुर्जरत्रा के लोगों का अनुराग प्राप्त किया। वडणाणय मण्डल में पहाड़ पर की पल्लियों (पालों भीलों के गांवों) को जलाया, रोहिन्स कूप (घटियाले) के निकट गांव में हट्ट (हाट बाजार) बनवाकर महाजनों को बसाया। मड्डोअर (मन्दौर) तथा रोहिन्स कूप के गांवों मे जय स्तम्भ स्थापित किये।

कक्कुक न्यायी प्रजापालक एव विद्वान था और सस्कृत में काव्य रचना भी करता था। इसके बाद का कोई शिलालेख नहीं मिलता। विक्रमी सम्वत् १२०० के आसपास नाडौल के चौहान रायपाल ने मन्दौर पडिहारों से छीन लिया।"[१८]

अब इसके मुकाबले भड़ौंच के गुर्जर राज्य वश की तालिका देखिये।

"भड़ौंच का गुर्जर वश वृक्ष निम्न प्रकार है—प्रथम भड़ौंच में दद्दा (प्रथम) ने विक्रमाब्द ४८७ में राज्य स्थापन किया। गुजरात के दक्षिण पश्चिमी भाग में गूजरों ने अपना राज्य स्थापित किया। पहले इनकी राजधानी (४०० वीं विक्रमी या इससे भी पूर्व) भीनमाल में थी। पीछे इनके एक सरदार ने जिसका नाम दद्दा था, विक्रमाब्द ४८७ में भड़ौंच को राजधानी बनाकर वहां गूजरों का राज्य स्थापित किया। ६टी शताब्दि में चालुक्यों ने इस राज्य के कुछ दक्षिणी भाग पर अधिकार कर लिया था। जबकि अरब के तीसरे खलीफा उसमान ने कुछ समुद्री सेना थाना और भड़ौंच पर चढ़ाई करने के लिये विक्रमाब्द ६६३ में भेजी थी तब वहाँ इन गूजरों का राज्य था। उस लड़ाई (चढ़ाई) में

[१८] राजपूताने का इतिहास १ भाग म०म०रा० गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा पृ० १६८ से पृ० १७० तक

(९) शीलक (संख्या ८ का पुत्र) उसने त्रवणी और वल्ल देशों में (जोधपुर के दक्षिणी पश्चिमी विभाग का नाम वल्ल था और मालाणी (मारवाड़) त्रवणी कहलाता था) अपनी सीमा स्थिर का अर्थात उनको अपने राज्य में मिलाया और वल्ल देश के स्वामी भट्टिक (भाटी) देवराज को पृथ्वी पर पछाड़ कर उसका छत्र छीन लिया।

(जर्नल रायल एशियाटिक सोसायटी इस्टर्न सर्किल १८६४ पृष्ठ ६)

(१०) भोट (संख्या ९ का पुत्र) राज्य सुख भोगने के पीछे गङ्गा में मुक्ति पाई।

(११) भिलादित्य (संख्या १० का पुत्र) उसने युवावस्था में राज्य किया, फिर पुत्र को राज्यभार सौंप कर गङ्गा द्वार हरिद्वार को चला गया। १८ वर्ष जीवित रहकर अनशन व्रत में शरीर छोड़ा।

(१२) कक्क (संख्या ११ का पुत्र) उसने मुद्गगिरि (मुंगेर बिहार) में गौड़ों के साथ लड़ने में यश प्राप्त किया। यह व्याकरण, ज्योतिष, तर्क (न्याय) और सर्व भाषाओं के कवित्व में निपुण था। उसकी भाटी वंश की महारानी पद्मनी से बाऊक और कक्कुक का जन्म हुआ। कक्क प्रतिहार रघुवंशी महाराजा वत्सराज का सामन्त होना चाहिये, क्योंकि गौड़ों के साथ लड़ने में उसका यश पाने के उल्लेख से यही मालूम होता है कि जब वत्सराज ने गौड़ देश के राजा को परास्त कर, उसकी राज्य-लक्ष्मी और दो श्वेत छत्र छीने, उस समय कक्क उसका सामन्त होने से उसके साथ लड़ने को गया होगा।

(१३) बाऊक (संख्या १२ का पुत्र) जब शत्रुओं का अतुल सैन्य नन्दावल्ल को मारकर भूअकूप में आगया और अपने पक्ष वाले द्विज नृपकुल के प्रतिहार भाग निकले तथा अपना मन्त्री एवं छोटा भाई भी छोड़ भागा, तो उस समय राणा बाऊक ने घोड़े से उतर कर अपनी तलवार उठाई। फिर जब नरमंडलों के सभी समुदाय भाग निकले और अपने शत्रु राजा मयूर को एवं उसके मनुष्य (सैनिक) रूप मृगों को मार गिराया तब उसने अपनी तलवार म्यान में की। विक्रमी सम्वत् ८९४ (ई० सन् ८३७) की ऊपर लिखी प्रशस्ति (जोधपुर) उसी ने खुदवाई।

(१४) कक्कुक (संख्या १३ का भाई) घटियाले से मिले हुए विक्रमी सम्वत् ६१८ के दोनों शिलालेख इसी के हैं, जिसके अनुसार उसने अपने सच्चरित्र से मरु, माड़, वल्ल, तमणी (त्रवणी), अज्ज (आर्य) एवं गुर्जरत्रा के लोगों का अनुराग प्राप्त किया। वड़णाणय मण्डल में पहाड़ पर की पल्लियों (पालो भीलों के गांवों) को जलाया, रोहिन्स कूप (घटियाले) के निकट गांव में हट्ट (हाट बाजार) बनवाकर महाजनों को बसाया। मड्डोअर (मन्डौर) तथा रोहिन्स कूप के गांवों में जय स्तम्भ स्थापित किये।

कक्कुक न्यायी, प्रजापालक एवं विद्वान था और संस्कृत में काव्य रचना भी करता था। इसके बाद का कोई शिलालेख नहीं मिलता। विक्रमी सम्वत् १२०० के आसपास नाड़ौल के चौहान रायपाल ने मन्डौर पड़िहारों से छीन लिया।"[१८]

अब इसके मुकाबले भड़ौंच के गुर्जर राज्य वंश की तालिका देखिये।

"भड़ौंच का गुर्जर वंश वृक्ष निम्न प्रकार है—प्रथम भड़ौंच में दद्दा (प्रथम) ने विक्रमाब्द ५८७ में राज्य स्थापन किया। गुजरात के दक्षिण पश्चिमी भाग में गूजरों ने अपना राज्य स्थापित किया। पहले इनकी राजधानी (४०० वीं विक्रमी या इससे भी पूर्व) भीनमाल में थी। पीछे इनके एक सरदार ने जिसका नाम दद्दा था, विक्रमाब्द ५८७ में भड़ौंच को राजधानी बनाकर वहां गूजरों का राज्य स्थापित किया। छटी शताब्दि में चालुक्यों ने इस राज्य के कुछ दक्षिणी भाग पर अधिकार कर लिया था। जबकि अरब के तीसरे खलीफा उसमान ने कुछ समुद्री सेना थाना और भड़ौंच पर चढ़ाई करने के लिये विक्रमाब्द ६६३ में भेजी थी, तब वहां इन गूजरों का राज्य था। उस लड़ाई (चढ़ाई) में

[१८] राजपूताने का इतिहास १ भाग म०म०रा० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा पृष्ठ १६८ से पृष्ठ १७० तक

मुसलमानों मे कुछ भी न करते बन पडा। गूजरों ने भड़ौंच मे विक्रमाब्द ७६१ तक अपना राज्य सम्हाले रक्खा पर पीछे राष्ट्रकूटों ने दक्षिण की ओर से गूजरों के राज्य पर चढ़ाई की और राष्ट्रकूट सरदार इन्द्रराज ने भड़ौंच विजय कर गूजरों को नष्ट किया। इन्द्रराज और उसकी सन्तानों ने लगभग विक्रमाब्द ८४७ तक भड़ौंच मे राज्य किया। इन गुर्जर राजाओं की वशावली निम्नप्रकार है।

भड़ौंच के गूजर

दद्दा	(१)	
जयभट	(१)	वीतराग १
दद्दा	(२)	प्रशान्तराग
दद्दा	(३)	
जयभट	(२)	वीतराग (२)
दद्दा	(४)	प्रशान्तराग (२)
जयभट	(३)	
दद्दा	(५)	बाहुसहाय
जयभट	(४)[१९]	

भड़ौंच के गुर्जरों की वंशावली तथा ओझा महोदय के द्वारा दीगई मन्डौर के प्रतिहारों की वशावली से दो बातें खास प्रकट होती हैं। एक तो यह कि भड़ौंच के गुर्जरों मे मन्डौर के राजवंश का कोई सम्बन्ध नहीं है। हम पहले ही लिख चुके हैं कि मुन्शी महोदय ने जो गुर्जर नृपति वंशाम् का सम्बन्ध हरिश्चन्द्र के वंश मे किया है, वह यथार्थ नहीं है। भड़ौंच के गुर्जर राजा दद्दा ने ५८० ई० मे इतनी शक्ति प्राप्त करली थी कि उसने नाग शत्रुओं को उखाड फैंका था और हरिश्चन्द्र का समय इतिहास मे ५६७ ई० के आसपास ठहरता है, जो कालक्रम मे भी कुछ सगति नहीं रखता। भड़ौंच के गुर्जर राजा दद्दा चतुर्थ इतिहास मे अपनी प्रसिद्धि हर्ष काल मे प्राप्त कर चुके थे (सन् ६०६–६४५) और

---

१९ (१) बम्बई गजेटियर जि० १ भाग २ पृष्ठ ३१२ (डा० बुल्हर तथा हफ)
(२) प्राचीन भारत हरिमङ्गल मिश्र एम०ए० पृष्ठ ३६२ व पृष्ठ २१०

इन्होंने हर्षदेव द्वारा हराये गये वल्लभी के राजा (ध्रुव भट्ट द्वितीय) को अपने यहां शरण दी और अपनी शक्ति से उसका राज्य फिर वापस दिलाया।

दूसरे इनके एक और शिलालेख में भड़ौंच के गुर्जरों की वंशावली राजा कर्ण से बताई है। अगर मन्डौर के प्रतिहार वंश का भड़ौंच से सम्बन्ध होता तो जिस शिलालेख विक्रमी सम्वत् ८९४ व ९१८ से मन्डौर के प्रतिहारो की वंशावली तैयार होती है, तो वे उस काल से पूर्व उत्कर्ष प्राप्त भड़ौंच के अपने पूर्वजों का महत्वपूर्ण वर्णन जरूर देते। लेकिन यह गुर्जर राज्यवंश (भड़ौंच) गूजर जाति का मन्डौर से अलग था। वे लोग अपने को गुर्जर वंश का इसलिये कहते थे कि वे गूजर थे। उनका मन्डौर के हरिश्चन्द्र ब्राह्मण से अनुवांशिक सम्बन्ध जोड़ना सर्वथा अनुचित एवं प्रमाण रहित है। हम पहले भी लिख चुके हैं कि दद्दा चतुर्थ हुएनत्सांग, ध्रुवभट्ट द्वितीय और हर्ष एवं पुलकेशिन द्वितीय यह समकालीन थे। हर्ष ने उनकी सत्ता और शक्ति-सन्तुलन से पराभव मानकर वल्लभी ध्रुवभट्ट को अपनी कन्या प्रदान की।

इतिहास से पता चलता है कि पुलकेशिन द्वितीय (महाराष्ट्र) के विरुद्ध भी हर्ष ने सैन्य सचालन किया था, किन्तु इस युद्ध में उसे बुरी तरह परास्त होकर गहरी क्षति उठानी पड़ी। ऐहोड़े के लेख से यह पता चलता है कि चालुक्य सम्राट पुलकेशी और भड़ौंच के गुर्जरों के मित्रतापूर्ण तथा खास सम्बन्ध थे और वे युद्धों में एक दूसरे के मुख्य सहायक रहते थे। हर्ष का समकालीन एवं हुएनत्सांग के भड़ौंच आने पर भड़ौंच (भृगुकच्छ) का राजा दद्दा चतुर्थ अवश्य ही गुर्जर (जाति वंश) का था, उसने अपनी वंशावली के शिलालेख में अपने को 'विपुल गुर्जर नृपान्वय प्रदीपको ...' लिखकर स्वयं गुर्जर सिद्ध कर दिया और हरिश्चन्द्र से उसका किसी भी प्रकार का वंश परम्परा का सम्बन्ध नहीं था। इसलिये मुन्शी महोदय का दद्दा प्रथम (ई० सन् ५६०—६०६ ई० तक) को हरिश्चन्द्र का चौथा पुत्र मानना सर्वथा प्रमाण रहित है और इस काल में हरिश्चन्द्र का अस्तित्व किसी भी प्रकार सम्भव नहीं है।

नवसारी के जिस शिलालेख का वर्णन मुन्शी महोदय ने गुर्जर जाति के सम्बन्ध में गुर्जर शब्द देशवाचक सिद्ध किया है वह स्वयं शिलालेख की भाषा से ही अशुद्ध ठहरता है। यह शिलालेख सिन्ध और नवसारी के बीच में गुर्जर राजा की स्थिति मानता है। लेख में स्पष्ट रूप से पहले सैन्धव, कच्छ और सौराष्ट्र तीन प्रदेशों के नाम आये हैं, उसके बाद चावोटक, मौर्य और गुर्जर यह तीन नाम क्रमशः क्षत्रिय राजवंशों के हैं। शिलालेख निम्न प्रकार है :—

"स्फुरस्फसीरमुद्गरोद्धरिणी तरलतारतरवारिदारितोदितसैन्धव कच्छेल्लसौराष्ट्रचावोटकमौर्य गुर्जरादिरा [ज्ये] निःशेपदाक्षिणात्यक्षितिपतिजिगतिषया दक्षिणपथप्रवेशः..... प्रथमेवनवसारी का विषय प्रसाधनायगतेसमरशिरसि विजितेताजिकानीके । मुन्शी महोदय चावोटक मौर्य को शासक परिवार कुलों के नाम बताते हैं किन्तु उसके बाद उन्हीं पारिवारिक राजवंशों के साथ आने वाले गुर्जर को देश मानते हैं। लेख, लिखने वाला, अगर उसे देशवाचक संज्ञा में लिखता तो सैंधव, कच्छ, सौराष्ट्र के साथ ही लिखता; चावोटक मौर्य गुर्जरादि राज्य न लिखता। स्पष्टतया तीनों ही राजवंश कुलों के नाम हैं। उसमें खींचतान की कतई आवश्यकता नहीं। गुर्जरों के भड़ौंच के अभिलेखों से यह भी पता चलता है कि गुर्जर जाति उत्तरीय भारत की रहने वाली थी। उसने दक्षिण भड़ौंच के लेखों में हस्ताक्षर सौरसेनी में किये हैं। बुल्हर इन्हें गुजरात के चाप श्रेणी का गुर्जर राजवंश मानते हैं, जो आज भी गुर्जरों की बड़ी सांप है।[८४]

हूणों के साथ गुर्जरों का वर्णन भी यही सिद्ध करता है कि हूण और गुर्जर भी इसी प्रकार प्रभाकरवर्धन के समय राजवंश थे, जिनकी सीमा प्रभाकरवर्धन के राज्य की सीमा से मिली हुई थी और यह वर्णन भीनमाल के गुर्जर राजवंश का है। भीनमाल के गुर्जर निश्चय ही बहुत उपद्रव मचाते रहे होंगे, क्योंकि उनके विरुद्ध हर्षवर्धन के पिता प्रभाकरवर्धन को अनेक बार आक्रमण करना पड़ा था। बाण ने उसको

८४ इण्डियन ऐन्टीक्वेरी भाग १३ पृष्ठ १६२

विजयों का अलङ्कारिक वर्णन किया है, जो अति रञ्जनापूर्ण होते हुए भी उसकी युद्धकौशल का परिचायक है। इस सम्बन्ध में इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान गौरीशङ्कर चटर्जी अपनी प्रमाणिक पुस्तक 'हर्षवर्धन' में लिखते हैं कि "प्रभाकरवर्धन ने उत्तरी पश्चिमी पञ्जाब के हूणों राजपूताना के गुर्जरों, गुजरात प्रदेश के लाटों तथा सिन्धु, गान्धार एवं मालवा राजाओं के साथ जो युद्ध किये वे अनुमानतः छोटे मोटे आक्रमणों के अतिरिक्त कुछ नहीं थे। ज्ञात होता है कि इन युद्धों के फलस्वरूप उसने किसी राज्य को जीत कर अपने राज्य में नहीं मिलाया। शिलालेख का आशय निम्न प्रकार है —

अर्थात वह (प्रभाकरवर्धन जो अपने दूसरे प्रतापशील नाम से दूर दूर तक विख्यात था) हूण रूपी मृग के लिये सिंह था, सिन्धु देश के राजा के लिये ज्वर था। गुर्जरों की निद्रा भङ्ग करता था। गान्धार राजा रूपी सुगन्धिराज के लिये कूटहस्ति ज्वर के समान था। लाटों की पटुता का अपहारक और मालवा देश की लता रूपी लक्ष्मी के लिये कुठार था।"[१]

हिरण्यगर्भ महादान प्रकरण में स्पष्ट रूप से यह आया है कि गुर्जर और उनके दूसरे राजाओं ने उस यज्ञ में यज्ञ रक्षक का कार्य किया अर्थात् वे उस यज्ञ में द्वारपाल (प्रतिहार) थे। इसमें गुर्जर वंश का मानने में राष्ट्रकूटों का अभिलेख होने से कोई आपत्ति नहीं हो सकती, क्योंकि गुर्जरों के अरब और राष्ट्रकूट शत्रु थे और वे अपने लेखों में गुर्जरों को गूजर जाति से सम्बन्धित ही मानते थे।[२] वैद्य महोदय ने स्पष्ट रूप में मध्ययुगीन भारत की राजनैतिक परिस्थिति का जो चित्र खींचा है उसमें यह बताया है कि "नये राजवंश पूर्ण एक सत्तात्मक थे उन्होंने अपनी सत्ता लोगों (देशवासियों) की सम्मति से नहीं बल्कि तलवार पुरुषार्थ और भाई बन्दों की सहायता से ही स्थापित की थी। कुल के जो लोग इस प्रकार की राजसत्ता के आधार स्तम्भ होते थे, उन्हें भाई बन्द कहते हैं। अङ्ग्रेजी में उन्हें क्लाइन्समैन कह सकते हैं। इसलिये

---

८१ हर्षवर्धन (गौरीशङ्कर चटर्जी) पृष्ठ ६६–६७

८२ प्राचीन भारत का इतिहास (डा० त्रिपाठी) पृष्ठ २२९

इस मध्ययुगीन काल में चाहे जो राजकुल स्थापित हो सकता था। इस काल में जनता किसी नवीन क्षत्रिय राजवंश के संस्थापक को राजा स्वीकार कर लेती थी। प्रारम्भिक राजाओं के पास कुछ लड़ाके सैनिक, सेनानी और राजा के कुलपुत्र भाई बन्द रहते थे, जो काम पड़ने पर दलबल सहित इकट्ठे हो जाते थे।"[८१]

हम प्रतिहारों के सम्बन्ध में पहले ही लिख चुके हैं कि वे गुर्जर थे और इसलिये उनकी सेना में गुर्जर जाति के क्षत्रिय विशेष रूप में होने के कारण 'गुर्जर सेना' कहा गया है।

ये गुर्जर राज्य, जिनकी स्थापना भीनमाल, भड़ौंच, उज्जैन, कन्नौज, पाटन या दूसरे स्थानों पर हुई, उनकी समृद्धि और उन्नति तथा उनके नाम से देशों की प्रसिद्धि का खास कारण यह था कि राजवंश प्रजा और सेना एक ही जाति की थीं, और उन्नतिशील राज्य स्थापना के लिये इस काल में इस एकत्व का होना बड़ा आवश्यक था। राजनीति का भी यह एक सबसे अच्छा सिद्धान्त है कि "अच्छी दृढ़ और उन्नतिशील स्थायी सरकार के लिये यह आवश्यक है कि प्रजा और राजा एक ही वंश से सम्बन्धित हों।" जिन जिन स्थानों पर गुर्जर राज्य की स्थापना हुई, वहां पर प्रजा में से राजा पैदा हुए। भीनमाल के आस पास की गुर्जर जाति की स्थिति, वर्तमान गुजरात काठियावाड़ की स्थिति, पश्चिमी उत्तर प्रदेश की स्थिति इस बात को प्रकट करती है।

मिहिरभोज के शासन काल (ईसवी सन् ८३४-८८८) में राज तरंगणी में हमें जिस गुर्जर राजा अलखान का पता लगता है, वह गुर्जरों का ही राजा था और यरकरिया वंश का था जो किसी समय भोज के साम्राज्य में था। यह तुरुष्क और दरद देशों के मध्य में था। जिस राजतरंगणी ने 'लघु गुज्जराट देश' या गुर्जर देश लिखा है और टक्क देश जिसे देकर अलखान ने अपने राज्य की रक्षा की 'अटकनदीतटेशक्करदेशनाम' राजतरंगणी ने लिखा है। अलखान एक दृढ़ स्थित का गुर्जर जाति और गुर्जर देश

[८१] हिन्दू भारत का उत्कर्ष पृष्ठ ३३७-३३८

(गुज्यराट) गुजरात का राजा था। उसका वर्णन राजतरंगणी में गुर्जर जाति के नाम से प्रसिद्ध है; देश के नाम से नहीं। शंकर वर्मन की इस दृढ़ राज्य पर चढ़ाई त्रिगर्त के राजा पृथ्वीचन्द्र पर विजय के बाद हुई। जिसका उत्तराधिकारी भुवनचन्द्र उस के आधीन हो गया। ६ लाख पैदल सेना, ३०० हाथी लेकर वह शंकर वर्मन की दिग्विजय में गूजरों के साथ लड़ने को तैयार हुआ। अपने विस्तृत राज्य में से उसने टक्क देश (अटकीनदीतटेशकरदोनाम राजतरंगणी) देकर शेष-गुर्जरों का राज्य इस तरह बचा लिया—जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपनी उंगली कटवा कर सारे शरीर की रक्षा कर ले। "तस्मैदत्त्वाटक्कदेशं छिनयावङ्गुलीमिवस्वशरीरमिवापासीन्मण्डलं गुर्जराधिपः" का आशय यही है। शाही राजा काबुल के ललिया ने गूजर राजा को शरण देकर उसके राज्य की रक्षा की और वह काश्मीर के राज्य के आधीन होकर प्रतिहार गुर्जर साम्राज्य से अलग होगया।[८६]

वैद्य महोदय के वर्णन, राजतरंगणी से और इस गूजर राजा के देश की सीमा से वर्तमान समय में गूजरों की लाखों की आबादी से यही पता चलता है कि अलखान

[८६] History of Mediaeval Hindu India Part I.

"Alakhana King of Gurjaras—Alakhana appears to be the name of a king not of a place. Page 222.

"The Shahi King Lalliya seems to have taken refuge with the Gujar King and his country remained under Kashmir not being returned as usual to the subjugated monarch". Page 223.

"The surrounding Independent state were Gurjara in the South, Shahi or Kabul in the west. Turushakain the North and Darda in the East. Page 236.

राजा गूजर जाति में धकहतिया वंश का था और उसकी प्रजा गूजर थी। प्रतिहारों के प्राचीन होने के खास कारण उनका गूजर जाति से सम्बन्ध हो था। शंकरवर्मन ने उसे काबुल के शाही राजा ललिय के राज्य में मिलाने के सम्बन्ध को ग्राह्य कर दिया, जिसमें मु० ५ ८० में उसकी सुरक्षा का सम्बन्ध था।

भीनमाल से जो सामुहिक — निष्क्रमण दसवीं शताब्दि में १८०० नहीं १८००० गुर्जरों का लिखा है वह सही है। वे ही गुर्जर मालवा, निमाड खानदेश तक जाकर बसे। उनके यहां इस सम्बन्ध में अब भी जनश्रुति है और उनके कुल और गोत्रों का आधार इधर के ही प्रदेश हैं। उनके इतिहास में यह भी पाया जाता है कि वे ८०० बैलगाडियों में सवार होकर खानदेश में आये और अमालगढ तथा थलनेर के इलाकों में बस गये, वहां इनके बसने का समय ११वीं शताब्दि का है।[५४] गुजरात के कुडुम्बी या कुनबी ऐसे ही गुर्जर हैं, जो सामुहिक रूप में आये। इसलिये मुन्शी महोदय का यह लिखना कि—'जिन १८००० गुर्जरों ने भीनमाल छोड़ा उनमें भी सभी जातियों का (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य, शूद्र) समावेश था और गुर्जर देश के व्यक्तियों के लिये यहां गुर्जर शब्द आया है ठीक नहीं है। भारतवर्ष की आज भी और पहले ही से इस प्रकार की गांवों की बसावट की प्रणाली है जिसमें एक ही कुल या जाति के व्यक्तियों का महत्व रहता है। जाटों गूजरों—राजपूतों या कुनबी अहीरों आदि के गांवों में जाकर देखने से एक बात साफ तौर से प्रकट होती है कि देहातों में जातियां अपने अपने जत्थों में बसी हुई हैं। यहां तक कि एक ही जाति के एक ही वंश के सैकड़ों गांव एक जगह हैं, लेकिन उस गांव में सभी जातियां ब्राह्मण वैश्य शूद्र या अन्य शिल्पी जातियां रहती हैं किन्तु गांव की सत्ता भूमि जिन जातियों के हाथ में रहती है वे गांव उन्हीं के कहलाते हैं, और 'गुर्जरों का धाराव जा रही है' 'गुजरों का गांव राज्य द्वारा छाया गया,' 'जम्मू काश्मीर का राजमहल गूजरों ने घेर लिया या गूजरवाड़'

५४ बम्बई गजेटियर १२वां भाग खानदेश पृष्ठ ६३-६४

(गूजर भोज) हो रहा है', इसमे यह आशय नहीं कि उस समूह मे और कोई शामिल नहीं था, अवश्य थे, पर गूजर मुख्य हैं या नेतृत्व उनका है और अन्य गौण हैं। इसलिए मुख्य का ही बोध होता है। भीनमाल से पुरोहित, सेवा कार्य करने वाले निम्न एवं उच्च कर्मचारी, गुर्जरों की मुख्य जीविका पर आश्रित सभी लोग चले थे, किन्तु गुर्जर जाति के व्यक्तियों के साथ उनके आश्रय पर ही उन्होंने भीनमाल छोड़ा और वहा से मालवा, निमाड, खानदेश तक पहुचे, जहाँ अब भी ये आबाद हैं, अतः उन्हें गूजर ही लिखा गया। आज भी काश्मीर के गूजर पाकिस्तान, स्वतन्त्र कबायली इलाके को पार करके उधर—मंगोलिया तक और इधर शिवालिक की घाटियों में आते जाते रहते हैं। जातियों की सामूहिक बसावट इस बात को प्रकट करती है कि वे भिन्न भिन्न जत्थों की शकल में अपने नायकों के साथ परिस्थितिवश आबादी बदलते रहते थे और जहाँ बसने लायक सुविधा प्राप्त होती थी वहीं अपनी बसावट कर लेते थे। इससे मुन्शी महोदय को इसमें कोई शंका नहीं करनी चाहिए। वास्तव में भीनमाल से १८०० निष्क्रमण करने वाले लोग मुख्य रूप से गूजर जाति के थे। राजतन्त्र समाप्त होने और सत्ता हस्तान्तरित हो जाने से उन्होंने निष्क्रमण में ही कल्याण समझा।

उत्तर प्रदेश—देहली के चारों ओर—के गूजर, जो आज बहुत बड़ी संख्या में आबाद हैं और अपनी महत्वपूर्ण स्थिति रखते हैं, ये सब के सब मालवा और राजपूताने से आये हुए हैं। यह उनकी जाति का एक आकर्षक रूप है जो उन्हें विशेष परिस्थितियों में एक स्थान से दूसरे स्थान पर आना-जाना जारी रखते हुए क्रियाशील बनाये हुए है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि आश्रित जातियाँ सदैव अपने मालिकों के साथ रहती हैं और उनके नाम आश्रय सम्बन्ध से अपने साथ लगाने में गर्व अनुभव करती हैं। इसलिए अगर कुछ जीविका-वृत्ति वाली सेवक तथा अन्य जातियों ने अथवा कर्मकाण्ड कराने वाली पुरोहित वर्ग की जातियों ने अपने नाम के साथ 'गुर्जर' लगा रखा था तो

इसका कोई दूसरा अर्थ लगाने की कोई आवश्यकता नहीं है। प्रजातन्त्र में भी उच्च राज्यशक्ति हथियाने वाली संस्था के नाम की आड़ में जो लोग अपना सुरक्षा रखते हैं वे सब उस संस्था से सम्बन्धित व्यक्ति नहीं होते, इसी प्रकार राजतन्त्र में भी व्यक्ति, राजाओं का एवं मुखियाओं का अपने साथ सम्बन्ध जोड़े रखते थे। राजभक्ति की आड़ निर्बल की सबसे बड़ी सुरक्षा की गारन्टी है।

(११)

गुर्जर शब्द को जातिवाचक से देशवाचक के सन्देह में डालने का उत्तरदायित्व उस समय की इसकी प्रसिद्धि है। ९वीं शती से १०वीं, ११वीं शताब्दि तक यह शब्द इतना प्रसिद्ध हो गया था कि यह निर्णय करना कठिन हो गया कि किस स्थान पर यह देशवाचक है और किस स्थान पर जातिवाचक। गुर्जरों के कारण गुजरात संज्ञा पड़ी या गुजरात में बसने से ये लोग गुर्जर कहलाये। पांचवीं शताब्दि से पहले तमाम उत्तरी भारत में किसी भी स्थान का नाम गुजरात नहीं था। यह सर्वथा निर्विवाद है कि जिस भूमि को पहले शिलालेखों में लाट, आनर्त, कैवर्त, मरुभूमि आदि नामों से सम्बोधित किया गया है, वहां इसी भूमि को गुर्जरत्रा (गुर्जरों से रक्षित भूमि) कहा गया है, जैसा कि वर्तमान मारवाड़ और उदयपुर राज्यान्तर्गत भागों को गुर्जरत्रा सम्बोधित किया है। तत्कालीन इतिहास में विशेष रूप से राज्यों की सीमा उसके शासकों की क्षमता के ऊपर ही निर्भर थी। वर्तमान राजपूताना नाम कन्नौज के गुर्जर प्रतिहार-साम्राज्य के पतन के पश्चात् दशवीं शताब्दि के बाद राठोड़ों के अभ्युदय-काल में हुआ। इससे पूर्व गुर्जरों के राज्याधीन होने के कारण यह प्रदेश इतिहास प्रसिद्ध गुर्जर, गुजरात (गुर्जरत्रा) था। भड़ौंच, भीनमाल, सोमनाथ, चद्रावत अणिहिलवाड़ा आदि राजधानियों और इनसे सम्बन्धित प्रदेश गुर्जर-सम्राटों की शासन-क्षमता के कारण ही गुर्जरत्रा कहलाये, जिसका तद्भव रूप गुजरात है। कन्नौज के गुर्जर-सम्राट मिहिरभोज का शासन विस्तार जितना बढ़ा उतना ही प्रदेश गुर्जरत्रा होता गया और गुर्जर-सम्राटों के पतन के समय घटता गया। बुन्देलखण्ड के शिलालेख में गुर्जर शब्द जातिवाचक अर्थ में

स्पष्ट रूप से आया है। कन्नौज की गुर्जर सेना के वर्णन में भी गुर्जर शब्द जातिवाचक है। प्रतिहार राजवंश स्थान स्थान पर उत्तरी भारत में कन्नौज पर शासन करते हुए भी अपने को गुर्जर शब्द से विभूषित करता है। यहाँ तक कि सामन्त मथनदेव जो राजौर (अलवर) का था, अपने को गुर्जर प्रतिहार मानता है।

गुर्जर राजाओं के नामों की प्रसिद्धि यहीं तक सीमित नहीं थी, पंजाब प्रदेश का गुजरात, गुजरावाला, गूजरखा आदि गुर्जर-जाति के गौरव के कारण ही आज तक प्रसिद्ध हैं। सन् ८६० ई० में काश्मीर के राजा शंकरवर्मन द्वारा पराजित गुर्जर राजा अलाखान को, जो काबुल के ब्राह्मणशाही का सामन्त था, टक्कदेश काश्मीर-राज को देना पड़ा था।

आश्चर्य तो यह है कि अनेकों ऐतिहासिक गुर्जर राजाओं तथा उनकी शासन विधि की अनुपम क्षमता होते हुए भी गुर्जर शब्द को देशवाचक मानकर विद्वान भ्रम में पड़ जाते हैं। भारतवर्ष में प्रारम्भ से भाटियों का भटनेर भूटानियों का भूटान, काठियों का काठियावाड़ राजपूतों का राजपूताना आदि उनके शासकवर्गों के नामों से ही प्रसिद्ध थे। इसी प्रकार बम्बई, मालवा, मारवाड़, कन्नौज जहाँ भी गुर्जरों का शासन रहा, गुर्जरत्रा कहलाए। कुछ प्रदेशों का नाम पहले राजवंश के नाम पर ही चलता रहा। इसका कारण यह था कि वहाँ के बाद शासक इतने प्रभावशाली नहीं हुए कि जनता पर अपना प्रभाव डालकर पहले राजवंश के प्रभाव को मिटा देते, इसलिए पहले ही राजवंश का प्रभाव बना रहा।

गुर्जरों का इतिहास में प्रसिद्ध होने के कारण तत्कालीन डगमगाती हुई राजनीतिक परिस्थितियाँ थीं। अरबों की हार ने गुर्जरों को देश के बाहर भी प्रसिद्ध कर दिया था। गुर्जर जाति का संगठन व्यवस्थित था। सन् ६५० ई० में १८००० गुर्जरों ने भीनमाल छोड़कर सभ्यता के उत्कृष्ट केन्द्र खानदेश में वसवास कर ली थी। वे गुर्जर आज भी वहाँ विद्यमान हैं। अपने राज्य के गौरव के साथ गुर्जर राजाओं ने मनोरंजन का विशेष ध्यान रक्खा। यही कारण था कि प्रजा उन्हें चिरकाल तक न भुला सकी और उन्होंने नाम से प्रान्तों को प्रसिद्धि

दी। हम देख चुके हैं कि जिस काल में १८००० गुर्जर भीनमाल से जाते हैं और गुर्जरों का राज्य प्रभाव उस प्रदेश से हट जाता है तो उस काल के पश्चात शीघ्र ही वह प्रदेश 'गुर्जर' नाम से सम्बन्धित नहीं रहता। अगर गुर्जर जाति के कारण इस प्रदेश को यह प्रसिद्धि प्राप्त न होती तो इसका नाम गुर्जरों की सत्ता वहां से हट जाने के बाद भी यही नाम रहता। पहले के समान आज भी भारत के अनेक प्रदेश, शहर, नगर, ग्राम गुर्जरों के जातीय प्रभाव के कारण उनके नाम से प्रसिद्ध हैं। अनेक शिलालेखों द्वारा यह प्रकट हो चुका है कि गुर्जर राजाओं के सुशासन, उनकी सुसंगठित आबादियों के और महत्वपूर्ण गौरव के कारण देशों की प्रसिद्धि उनके नाम पर हुई है।

गुर्जरत्रा गुजरात नाम का महत्व गुर्जर जाति के नाम पर है। पांचवी, छटी शताब्दि मे यह जाति राजस्थान की मरुभूमि में बहुत शक्ति सम्पन्न हो गई थी और भीनमाल में राज्य स्थापन करके इन्होंने इस प्रदेश को 'गुर्जर' नाम से प्रसिद्ध किया। इसके बाद भरोंच में राज्य स्थापित करके अपने नाम से प्रसिद्ध किया। यह निश्चित है कि इस जाति का अलग अस्तित्व देशों की प्रसिद्धि के क्रम से बहुत पहले हो ही चुका था। प्रसिद्ध चीनी यात्री हुएन त्सांग गुर्जर क्षत्रिय जाति एवं उनकी प्रसिद्ध राजधानियों तथा गुर्जर देश से पूरे तौर पर परिचित था, जिसको उसने क्यू-चि-लो और इसकी राजधानी को पि-लो-मो-लो कहा है, जो निस्सन्देह जोधपुर रियासत की भीनमाल था। अपने प्रारम्भिक रूप में गुजरात (गुर्जरत्रा) नाम नहीं शताब्दि में अजमेर और साभर भोल के उत्तर में प्राप्त शिलालेखों में मिलता है। १०वीं शताब्दि मे १२वीं शताब्दि तक अणहिलवाड़ा का सोलंकी राज्य गुजरात कहलाने लगा। मुसलमान काल में पहले अणहिलवाड़ा और फिर अहमदाबाद गुर्जर जाति के राजाओं द्वारा शासित प्रदेश गुर्जरत्रा (गुजरात) कहलाया।[१९]

[१९] The name Gujrat is derived from the widespread Gujar tribe, which is not, however, at the present day of much account in the province,

वास्तव में परमार, चालुक्य अथवा सोलंकी, चावड़े तथा प्रतिहार वंश के क्षत्रिय गुर्जर राजाओं को जो गुर्जरेश्वर, गुर्जर राज अथवा गुर्जर आदि की उपाधि प्राप्त थी तो उसका कारण यही था कि वे निश्चय ही गुर्जर जाति एवं वंश के थे और उस समय, यह जाति इतिहास में अपनी अलग सत्ता स्थापित कर चुकी थी। तत्कालीन शिलालेख, ताम्रपत्र एवं काव्यों में जिन वंशों के राजाओं के लिये 'गुर्जर' शब्द से सम्बन्धित अलंकारयुक्त विशेषण या उपाधि प्राप्त है—वे वंश आधुनिक गुर्जरों (गूजरों) में अपनी प्राचीन परम्परा के साथ पूर्ण रूप से विद्यमान है। भीनमाल

According to some writers, the Gurjaras were some immigrants from central Asia. There is no certain trace in India before the 6th century, by the end of which they were powerful in Rajputana and had set up a Kingdom at Broach, so they most likely entered India with the white Huns in the latter half of the fifth century. The Chinese traveller Hiuen-Tsang (A.D. 640) was acquainted with the Kingdom of Broach and also with Gurjar Kingdom farther north which he called kui-chi-lo, having its capital at Pilo-mo-lo, which is plausibly identified with Bhinmal in the Jodhpur State. In its earliest form (Gurjartra) the name Gujrat is applied in the inscriptions of the ninth century to the country north of Ajmer and the Sambhar Lake, while from the tenth to thirteenth century Gujrat means the Solanki Kingdom of Anahilvada. In the Musalman period the name was applied to the province that was governed first from Anahilvada and then from Ahmedabad.

से गये गूजरो के खानदेश में चावडा तथा पवार चालुक्य-सोलंकी आदि वंश के गूजर आज भी हैं।[८७] धारा नगरी से आये पवार वंश के गूजर, कोटपूतली के मुखल्न (रावत), लटोरा राज तथा सहारनपुर के बडानू—खूरड गुर्जर (पवार) तथा फिरोजपुर के एवं राजपूताने के, धारा के पंवार कहलाते हुए आज तक भी उसी स्थान को अपने साथ सम्बन्धित रखते हुए विद्यमान हैं।[८८] भण्डारकर महोदय ने भी इम्पीरियल गजेटियर की भांति यही आशय स्पष्ट किया कि "यह देखते हुए कि वर्तमान गुजरात का गुर्जर नाम तभी से हुआ जब से चालुक्यों ने उसे अपने आधीन कर लिया और वहां राज्य करना आरम्भ किया तब यह मानना पड़ता है कि चालुक्य अवश्य ही गुर्जर (गूजर) जाति के थे।"[८९]

पवार प्रारम्भ में मालवा तथा चालुक्य अर्थात सोलंकी कर्नाटक में शासक थे। लेकिन उन देशों की प्रसिद्धि उनके नाम पर नहीं हुई क्योंकि उन्हें उस काल में महत्वपूर्ण उत्कर्ष प्राप्त नहीं हुए। उत्तरी एवं दक्षिणी भारत में जो महत्वपूर्ण प्रतिद्वन्द्विता सौराष्ट्र एवं लाट में चल पड़ी थी, उसमें गुर्जर वंशों की स्थिति महत्वपूर्ण होगई थी। वल्लभी के मैत्रक, चालुक्यराज पुलकेशिन एवं भड़ौंच के गुर्जर राजा प्रारम्भ में प्रभावशाली रहे और बाद में उज्जैयनी (मालवा) में प्रतिहार गुर्जरों के उत्कर्ष प्राप्त कर लेने और पूरा-पूरा इन प्रदेशों पर अधिकार स्थापित हो जाने पर गुर्जर नाम को विशेष महत्व जातीय अभ्युत्थान

Imperial Gazetteers of India (Bombay Presidency) Volume I, Page 201

इम्पीरियल गजटियर आफ इंडिया (बम्बई प्रान्त) प्रथम भाग पृष्ठ २०१, "गुजरात देश के नाम की प्रसिद्धि विस्तृत भूभाग में फैली हुई गूजर जाति के नाम से ही हुई है।

८७ बम्बई गजेटियर भाग १२ खानदेश पृष्ठ ६३-६८

८८ पंजाब कास्टस एण्ड ट्राईब्स (सर डी जे इबटसन) पृष्ठ ४८० गूजरों का प्रारम्भिक इतिहास द्वितीय संस्करण पृष्ठ १६२-१६३

८९ बम्बई रायल एशियाटिक सोसायटी जनरल १९०४ एक्स्ट्रा नम्बर (गूजर) भण्डारकर पृष्ठ ४१३-२३

के कारण प्राप्त हुआ। गुर्जरों का उदार दृष्टिकोण इसमें विशेष सहायक रहा और प्रजारंजन ने उनके महत्व को बढ़ाने में सहायता दी, जो सुसगठित क्षत्रियवंश के द्वारा ही सम्भव हो सकती थी, किसी साधारण या विदेशी जाति द्वारा नहीं।

इतिहास से यह भी पता चलता है कि मालवा, राष्ट्रकूटों और गुर्जरों की युद्ध-क्रीड़ा भूमि एक समय तक बनी रही और कर्नाटक के शक्तिशाली राष्ट्रकूटों के सम्राट ध्रुव, गोविन्द तृतीय, इन्द्र तृतीय तथा कृष्ण तृतीय ने बार-बार गुर्जरों पर भी विजय प्राप्त की किन्तु अपनी विजयों के कारण इन प्रदेशों की राज सत्ता हथियाने के बाद भी उन्हें कभी गुर्जर 'राज या गुर्जरेश्वर की उपाधि प्राप्त नहीं हुई और न उन्होंने गुर्जर विरुद धारण किया, जो अगर देशों के कारण प्रसिद्धि में आने वाली देशवाचक उपाधि होती तो अवश्य ही राष्ट्रकूटों को प्राप्त होती। इसके विपरीत स्वय राष्ट्रकूटों एव उनके अनन्यतम सहायक मित्र अरबों ने गुर्जर जाति के राजाओं को—जो इनके शक्तिशाली शत्रु और प्रतिद्वन्द्वी थे, गुर्जर और जुर्ज और इनके साथ लगाये गये अनेक विशेषणों से प्रसिद्ध किया। राठौरों के कारण गुर्जर देश'(मारवाड़) का नाम राजपूताना, गुर्जरों के यहां से हट जाने और पराभव के बाद प्रसिद्ध होना भी हमारे इस गुर्जर जाति विषयक सिद्धान्त को पुष्ट करता है।

उज्जैयनी—मालवा पर नागभट द्वितीय, मिहिरभोज महेन्द्रपाल प्रथम, महीपाल तथा महेन्द्रपाल द्वितीय ने अपना अधिकार बराबर बनाये रक्खा और उत्तरोत्तर यह अधिकार बढ़ता चला गया। तत्कालीन अभिलेखों से भी यही प्रकट होता है कि कई शताब्दियों तक मालवे के इस भूभाग पर तथा दक्षिण के अन्य आस पास के प्रदेशों पर, गुर्जरों का पूरा-पूरा हाथ शासन व्यवस्था में होने से यहीं के विभिन्न वंशों ने गुर्जर नाम की प्रसिद्धि देशों के साथ उत्तरोत्तर बढ़ती गई और गुर्जर कुल जाति अथवा वंश के राजाओं ने ही 'गुर्जर', 'गुर्जरेश्वर', 'गुर्जर राज' आदि विरुद धारण किये। प्रतापगढ़ के अभिलेख से पता चलता है कि महेन्द्रपाल द्वितीय के समय (६४०-६४८) में भी

उज्जैयनी में माधव माण्डलिक नृपति और मण्डपिका (माण्डू) में श्री शर्मन नाम के व्यक्ति, गुर्जरों के आधीन—इनके द्वारा नियुक्त किये गये थे। प्रारम्भ के परमार वंश के राज सस्थापक उपेन्द्र या कृष्ण राज गुर्जरों के सामन्त थे। उनके सीयक हर्ष ने एक समय राष्ट्रकूटों की राजधानी मनियाखेटा (मान्यखेट) पर आक्रमण करके विपुल सम्पति लूट कर हस्तगत की। इसी कारण इस राजा ने गुर्जर जाति का विशिष्ट गौरव पद प्राप्त—विरद धारण किया।

इसी प्रकार कन्नौज के प्रतिहारों को गुर्जर के कारण प्रतिहारों, धरवों राठौडों के युद्ध वृत्तान्त में गुर्जर नाम जातीय राज सस्थान के कारण प्राप्त हुआ। चावडा या चाप निश्चय ही गुर्जर थे। यह भी गुर्जर (गूजर) जाति के इन वशों में से एक प्रसिद्ध वश है, जिस के कारण गुजरात (गुर्जरत्रा), गुर्जर आदि नाम प्रसिद्धि में आये। यह चाप वश या चावडा निश्चय ही पवार वश की शाखा थी। गुप्त साम्राज्य के लडखडाते अस्तित्व को जब हूणों ने छिन्न भिन्न कर दिया तो उसके खण्डहरों पर गुर्जरों ने अपनी शक्ति को विकसित करके अनेक राज्य स्थापित किये। चावड–चाड गुर्जरों के भीनमाल अनहिलवाडा–पाटन, वढवान, सोमनाथ आदि अनेक प्रमुख राज थे। वनराज चावडा, व्याघ्रमुख सम्राट, धरणीवराह, आदि इनके महत्वपूर्ण राजा हुए। डाक्टर भगवान लाल इन्द्र जी ने और सर जेम्स केम्पबेल एव मिश्रबन्धुओं, डा० भण्डारकर एव चिन्तामणि विनायक वैद्य ने इन चापों को गुर्जर माना है।[४४]

---

[४४] Special interest attatches to the Chapas or Chavadas, firstly, because of the undouted proof that they are Gurjjaras, and, secondly, from the fact that it was mainly through the Chapas that the Gurjjaras gave their name to Gurjarttra, and thirdly, the statement of the astronomer Brahmagupta who, writing at Bhinmal in 628 A D under the Gurjara king V, Vyaghramukha,

रासमाला के एक अवतरण में भी यही पता चलता है कि ऊझा के राड़धा गूजर, जयसिंह सिद्धराज के वंश के थे। भीम सोलंकी को भी इसीलिये रासमाला में गुर्जर कहा है, कि उसके श्रेष्ठ गुणों के कारण गुर्जर राष्ट्र की श्री—गुर्जर राजा की स्वेच्छा से उसकी अर्धांगनी बन गई थी। घघेला लोग सोलंकी वंश के अभ्युदय काल में गुर्जरों के भाग्य पर आश्रित थे। कटारिये, सोनते, बोकन, अगनियां, पुनरवा, मैदान, डेढ़े, धागरी आदि अनेक सोलंकी गुर्जर वंश आज भी हैं और जिस प्रकार पवार मुण्डन लूवड़ अपने को भोज तथा जगदेव पवार का वंशज स्वीकार करते हैं, इसी प्रकार यह भी अपने को अनहिलवाडा पाटन से सम्बन्धित वर्णन करते हैं। वैस्टर्न इन्डिया ने भी यही लिखा है कि सोलंकी निश्चय ही गुर्जर हैं और चालुक्यों से निकटतम सम्बन्धित हैं, जिनके ११वीं शताब्दि तक चालुक्यों के गूजरों से खास सम्बन्ध थे।[९१] इसके अतिरिक्त इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान अनन्तसदाशिवराव अलेतकर ने सोलंकी चालुक्य वंश पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हुए इन्हें निश्चित रूप में गूजर जाति का माना है।[९२]

आर्यों के प्रारम्भिक काल में इन्द्र ने रोहित को जो उपदेश दिया था, उस पर आर्य जाति के सही वंशधर गुर्जर आज भी उसी प्रकार

---

states that the king belonged to the Shri Chap dynasty (History of Bhinmal Bombay Gazetteer, Volume I, Page 138, and Volume IX, Part I, Page 488.)

[९१] बम्बई गजेटियर जिल्द १ भाग ६ पृष्ठ ४८५ के नोटस के आधार—कीर्ति कौमुदी, एपिग्राफिका इन्डिका रासमाला, रायल ऐशियाटिक सोसायटी जरनल ३-३४३, टाड राजस्थान, वैस्टर्न इन्डिया २०६

[९२] A history of important ancient towns and cities in Gujarat and Kathiawar (from earliest times to about 1300 A D reprinted from the Indian Antiquary Volume L III, L IV, 1924-25) "The Solanki's who rise to prove at this time are admitted on all hands to be of Gurjara origin"

आचरण करते हैं। कर्मण्यता, पौरुष, शौर्य, पराक्रम, ओजस्विता एवं आशावाद के भावों से ओतप्रोत इस उपदेश पर जिसमें आर्यों के जीवन का मूल मन्त्र 'बढ़े चलो, बढ़े चलो' (चरैवेति, चरैवेति) था।[६१] उसमें यह भी बताया है कि जो "चलता रहता है, उसका भाग्य भी चलता है, जो सोता रहता है, उसका भाग्य भी सोता रहता है, जो खड़ा रहता है उसका भाग्य भी खड़ा रहता है"। इसलिये आज की गुर्जरों (गूजरों) की बस्तियां तमाम उत्तरीय भारत में चारों ओर फैली हुई हैं, जिनकी एक निश्चित परम्परा, भाषा, भेष एवं नस्ल है। वे प्राचीन आर्यों के ऐतरेय ब्राह्मण के उपदेश पर अमल करते हुये आगे बढ़ने की परम्परा रखते हैं और उन्हीं देशों को जहां वे बस जाते हैं, अपने नाम से प्रसिद्ध करने की अहमान्यता रखने में गर्व अनुभव करते हैं।

जनरल कनिंघम ने पंजाब में उनकी २० लाख संख्या बताई है, जो भारत और पाकिस्तान की विभाजन रेखा से दोनों देशों में बट गये हैं। अकेले काश्मीर में उनकी संख्या १० लाख है। यद्यपि पाकिस्तान व भारतीय काश्मीर में ये मुसलमान हैं, किन्तु उनके विवाह आदि सम्बन्ध विधि निषेध हु-ब-हू वही हैं जो हिन्दू गूजरों में हैं। यहां तक कि पहनावा आदि तथा भाषा में भी कोई फर्क नहीं आया। आर्य भाषा गूजरी बोलते हैं। गूजरी पगड़ी पहनते हैं और उनकी औरतें लहंगा पहनती हैं। नीले रंग को पसंद नहीं करतीं।[६२]

सिन्ध से गंगा तक और काश्मीर के ऊपर स्वात, चित्राल, गिलगिट तथा हजारा पहाड़ तक और नीचे दक्षिण में हैदराबाद, बम्बई तथा बरार प्रान्त तक वे पाये जाते हैं। भारतीय इतिहास में मध्य ऐशिया तक के जिन देशों—कम्बोज, ऋषिक, किरात, लोहित, उलूक, बाल्हिक, फारकर आदि का वर्णन है, उन सब में गूजर अपने भारतीय प्राचीन तथा अर्वाचीन कुलगोत्र एवं कबीलों के रूप में पाये जाते हैं। आर्य जाति की नस्ल, सुन्दर रूप, सुगठित शरीर, लम्बा कद, मुख की पैनी बनावट, गेहुंआ गौर वर्ण, सुन्दर दीर्घ कपाल, पतली

---

[६१] ऐतरेय ब्राह्मण ३३।३।

[६२] पंजाब कास्टस (इवटसन) पृष्ठ ४८०

उभरी नासिका और इसके अतिरिक्त गूजरी बोली गूजरी वेष भूषा से वे अलग ही पहचाने जाते हैं। चित्राल में वे लाल काफिर प्रसिद्ध हैं। युसुफजई, आर्य पठान सबके सब अपने को गूजर जाति का मानते हैं। पेशावर के पास से स्वतन्त्र कबायली इलाकों में-अफगानिस्तान तक उनकी बस्तियां हैं, जहा से वे मगोलिया-रूस तक पहुँच जाते हैं। हसनअबदाल, सैह्याद्री, हजारा की पहाडियाँ, रावलपिंडी और दरदू प्रान्तों मे गूजर बड़ी भारी सख्या में हैं। हिन्दूकुश के ढलाव पर खोजक के पास गुन्जल तथा मुख्य गुन्जल उनके नाम के मढ़रु के कारण प्रसिद्ध हैं।

मध्य एशिया में हुलमन्द पर गुर्जिस्तान, गूजर रासी की प्रसिद्धि उन्हीं के नाम पर है और वहा वे पाये जाते हैं। गजनी के पास भी गरजानी, गुरजानी और गुर्जिस्तान उनके नाम की प्रसिद्धि देने वाली आबादी है। तुर्किस्तान, काबुल, उत्तर पश्चिम सीमाप्रान्तों में गूजर खील उनका एक प्रसिद्ध कबीला है। शिमला-चकरौता के मध्य की ऊची पहाड़ियों पर तथा कागडा, चण्डीगढ़ के पास की पहाडियों पर बलिष्ठ, सुन्दर जाति के रूप में गूजर पाये जाते हैं। चीन, मिश्र, ईरान, तिब्बत तथा गिलगिट एव मध्य ऐशिया की केस्पियन समुद्र की जातियों में गूजर पाये जाते हैं, जो उस समय की आर्य जाति एव आर्य सस्कृति के प्रतीक हैं—जब मध्य ऐशिया में आर्यों ने अपनी सांस्कृतिक दिग्विजय की थी और वहां पर आर्य जाति—आर्य धर्म को मानते हुए बस रही थी।

पजाब मे गूजर को कोशा कहते हैं और चीन में कोशा गूजर अपनी गूजरी नस्ल में मिलते हैं। कुशानवंशी कशाने कनिष्क को अपना पूर्वज एव अपने को कुशान भी कहते हैं। कुशवंशी सूर्य वश के क्षत्रियों की सतान किसी समय मध्य ऐशिया और चीन तक पहुँच गई थी। पजाब, गुजरात आदि जिलोंमे एव काश्मीर में उनकी दृढ़ राजनैतिक स्थिति है। पजाब, हिमाचल प्रदेश, जालन्धर, अम्बाला कमिश्नरी, पेप्सू प्रान्त में उनकी अच्छी आबादी है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश-देहली के चारों ओर, राजपूताना, ग्वालियर, मध्यभारत, भोपाल, मध्यप्रदेश, बरार, हैदराबाद, बम्बई प्रान्त के अनेक जिलो में गूजर बड़ी भारी सख्या में पाये जाते हैं। पवित्रतम नदियों के किनारे—गगा,

यमुना, नर्मदा, ताप्ती, सतलज, चम्बल, सिन्ध नदियों की तराई में, पहाड़ी प्रदेशों में उनकी आकर्षक आबादी है। भारत की प्राचीन प्रसिद्ध ऐतिहासिक केन्द्रीय राजधानी तथा प्रान्तीय राजधानियों एवं सभी उत्तर भारत के तीर्थ स्थानों के निकट महत्वपूर्ण स्थिति में पाया जाना और उनके नामों से स्थानों की प्रसिद्धि उनकी एक खास ऐतिहासिक परम्परा को प्रकट करती है।

हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, जैन आर्य, बौद्ध, राधा स्वामी, नाथ सम्प्रदाय, वैष्णव सभी धर्मों में गूजर पाये जाते हैं। परन्तु अपने नाम का आकर्षण उन्होंने सब जगह एक रूप में बनाये रक्खा है। जैनियों के बानी गूजर, मराठों का गूजर राज वंश—जिसमें शिवाजी का प्रसिद्ध अश्व सेना का सेनापति प्रताप राव गूजर प्रसिद्ध हो चुका है—सिक्ख गूजर मुसलमान गूजर, हिन्दू गूजरों के अलावा—अपनी दृढ़ स्थिति रखते हैं। अगर कन्नौज सम्राट एक समय गुर्जर कहलाने में गर्व अनुभव करता है, तो उसी काल में उनका सामन्त मथनदेव तथा वहां के किसान भी गुर्जर कहलाने का अभिमान रखते हैं। अगर पाचवीं, छटी शताब्दि में और इसके बाद १२वीं शताब्दि तक देशों की प्रसिद्धि का क्रम उनके नाम पर चलता है, तो इसके बाद भी १६वीं शताब्दि में गुर्जर रागनी, गूजरमहल उनके नाम पर बनते हैं। बाबर के जमाने में य उनका पूरी शक्ति के साथ बार-बार मुकाबिला करते हैं और उनका अपना बसाया गुजरात शहर मेवाड़ की तरह हम बर्बाद पाते हैं और अकबर के समय में आकर चेची-गूजर उसे फिर बसाते हैं।

शेरशाह उनकी शक्ति से—जो देहली के चारों ओर दोआबे में बढ़ी हुई थी—भयभीत हो उठता है और १५४० ई० में उन्हें दबाने का प्रयत्न करता है और इसके कुछ समय बाद उनके नाम पर प्रान्तों की प्रसिद्धि का सिलसिला बढ़ता चला आता है। गुजरान, गुजरांवाला, गूजरखान (पंजाब), चेची गूजरों के कारण सहारनपुर जिले का गुजरात (लंढौरा राज्य के कारण), बुलन्दशहर का भटनेर व गुजराट (दादरी के भाटी गूजरों के कारण), ग्वालियर का गूजरघार (घुरय्या धमई के राना रामपालसिंह व राजा सोंपति सिंह व समथर राज्य के कारण),

प्रसिद्धि में आते हैं,[६१] जिससे यह बात पूर्णतया सिद्ध होती है कि गूजरों के व्यापक प्रभाव के कारण ही देशों की प्रसिद्धि का क्रम पहले समय से ही इतिहास में चला आ रहा है। उनके राजवंशों और उनकी महत्वपूर्ण आबादी एवं दृढ़ सैनिक स्थिति विशेष सहायक रही है। इसलिये उनके द्वारा देशों की प्रसिद्धि के क्रम को न मानना और गुर्जरों के अभ्युत्थान के समय इस जाति का अस्तित्व न समझना सर्वथा कल्पना पर आश्रित सिद्धान्त है, जिसका ऐतिहासिक दृष्टिकोण से कुछ भी मूल्य नहीं है।

क्षत्रिय राजवंशों द्वारा अलग अलग वंशों की प्रसिद्धि और अपने अपने वंशों के नाम पर प्रान्तों की प्रसिद्धि का क्रम नया नहीं है। मानव स्वभाव में यह एक खास मनोवैज्ञानिक भावना-आकांक्षा पाई जाती है कि वह सदा ही यह चाहता है कि औरों की अपेक्षा मेरा मान व गौरव अधिक समझा जाय और अधिक से अधिक समय तक इतिहास के पृष्ठों—देश के ऊपर मेरा महत्वपूर्ण व्यापक प्रभाव बना रहे। सामुहिक प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप जो ख्याति व्यक्ति विशेष को प्राप्त होती है, उसे वह अपनी जाति अथवा वंश एवं कुल के नाम से स्थायी रूप देने के लिये नगरी, प्रान्तों, देश के भूभागों को जाति का नाम देकर ख्याति के प्रधान साधन का उपयोग करते हुए—प्रसिद्ध करता है। इतिहास में भारत ही नहीं सभी देशों—सभी उन्नतिशील जातियों में यह प्रसिद्धि का क्रम—उच्च राजनैतिक सत्ता विकसित होने पर पाया जाता है।

उत्तरीय भारत पर होने वाले बाहरी आक्रमणों से ब्राह्मण-क्षत्रिय

---

[६१] कनिंघम आर्कियालोजिकल सर्वे आफ इन्डिया की रिपोर्ट भाग २ पृष्ठ ६१

—इलियट ग्लॉसरी ९९

—पंजाब कास्ट्स (इबटसन) ४८०

कास्ट्स एन्ड ट्राईब्स (आतिया तथा कवोले) क्रूक ४४०-५२

—शाहाना गूजर (खान बहादुर अब्दुल मलिक खोढी, गुजरात)

—गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास (वीर गुर्जर कार्यालय —लेखक यतीन्द्र कुमार वर्मा)

संघर्ष से राजस्थान बचा हुआ था और नाना कारणों से वीर क्षत्रिय जातियों की यहां पर बसावट होने से यह प्रदेश ऐश्वर्यशाली एवं समृद्ध था। ऐश्वर्यशाली गुर्जरों ने भी आबू के चारों ओर अपनी स्थायी बसावट करके अपने राजवंश को—क्षत्रिय वर्ण के अनेक प्राचीन वंशों की भांति—यहीं पर विकसित किया और राज्य स्थापना द्वारा इस प्रदेश को 'गुर्जर', गुर्जरत्रा (गूजरों से रक्षित) आदि की प्रसिद्धि का क्रम दिया, जिस पर कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिये। यह 'वीर भोग्या वसुन्धरा' सदा ही अपने को वीर जातियों के नाम से प्रसिद्धि देती रही है और गुर्जरों से रक्षित प्रदेश गुर्जरत्रा या गुर्जर स्वयं यह सिद्ध करते हैं कि गुर्जर (गूजर) जाति का अस्तित्व उस काल में इस देश में महत्वपूर्ण रूप से था। वर्तमान गुर्जर जाति की ऐतिहासिक परम्परा, वंश, कुल एवं गोत्र, इस बात को सिद्ध करने के लिये पर्याप्त हैं कि इसी वर्तमान ऐतिहासिक गुर्जर अथवा गूजर जाति के उत्कर्ष काल में, पांचवी छटी शताब्दि से, इस नाम की प्रसिद्धि का क्रम चला, जो ऐतिहासिक काल से, आज तक उत्तरोत्तर अपने प्रारम्भिक रूप का परिचय दे रहा है।

इस लिये इतिहास के जो विद्वान—चाहे वे ओझा हों या चिन्तामणि अथवा मुन्शी महोदय हों—गुर्जरों के अनेक वंशों को गुर्जर न मान कर उनका सम्बन्ध अन्य वंशों से करते हैं, वे भारी भ्रम में हैं। जैसा कि हम पीछे लिख चुके हैं कि वर्तमान गूजरों के गोत्र, प्रवर, रीति, परम्परा न समझने से ही यह स्थिति पैदा हुई है। अनेक स्थानों पर राजनैतिक परिस्थिति वश वर्तमान गुर्जर जाति की स्थिति से भी वे प्राचीन गुर्जरों के राजवंशों के उत्कर्ष काल से तुलना करते हुये भारी भ्रम में पड़ गये, लेकिन वे प्रकृति के इस सिद्धान्त को भूल गये कि जितना भारी पत्थर ऊँचे से गिरता है, उतने ही अधिक उसके छोटे २ टुकड़े हो जाते हैं। आन्धी व बाढ़ में, बड़े बड़े वृक्ष ही उखड़ते हैं। बड़ों का पतन भी बड़ा ही होता है।

यही हाल गुर्जर जाति का हुआ। वैभवशाली गुर्जरों के प्राचीन गौरव के अनुरूप ही वर्तमान गुर्जर हैं। यह एक वास्तविक ऐतिहासिक तथ्य है और गुर्जर जाति के महत्व के कारण उस काल में गुर्जर देश की प्रसिद्धि

अनिवार्य थी और देशों के कारण किसी भी राजा या व्यक्ति ने अपनी पदवी 'गुर्जर' ग्रहण नहीं की है, बल्कि जाति के कारण की है क्योंकि वे राजवंश गूजर जाति के थे और आज भी गुर्जरों में ठोस जत्थे वन्दी के रूप में वे वंश परम्परागत रूप से पाए जाते हैं।

मध्यकालीन भारत में राज करने वाले ३६ राजवंशों में गूजर, आभीर (अहीर), नाग आदि स्पष्टतया इसी लिये राजवंशों में प्रसिद्ध हुये कि उनके जातियों के वंशों के हाथ में राजसत्ता थी, जो लोग सभी ३६ राजवंशों को आर्यजाति के राजन्य (क्षत्रियों) के ही वंश मानते हैं, वे भारी भ्रम में हैं, इस बात का निर्णय तो उनका प्राचीन इतिहास एवं आधुनिकतम नवीन शास्त्र नृ-वंश विज्ञान कर रहा है कि उनमें से अनेक वंश आर्येतर जातियों के थे। ओझा, चिन्तामणि या अनेक विद्वानों ने प्राचीन ख्याति इतिहास एवं नृ-वंश विज्ञान की उपेक्षा करके जो इन्हें तोड़ मरोड़ कर प्राचीन क्षत्रिय अथवा राजपूत वंश माना है, वह भी यथार्थ नहीं है और न ३६ राजवन्शों में राजपूतों का बड़गूजर वन्श कहीं आया है, बल्कि वीर गूजर या गूजर आया है। एक महान् ऐतिहासिक जाति का स्थान एक छोटे से वन्श को देना कोई महत्व नहीं रखता और न इतिहास इस कल्पना को स्वीकार कर सकता है। भारतवर्ष की महत्ता, जहां क्षत्रिय (आर्य राजन्य) जाति, आर्य संस्कृति, उनकी जगद्विख्यात साधना, ऐश्वर्य, त्याग और राजसत्ता के कारण हैं, वहां क्षत्रिय एवं आर्य जाति के अतिरिक्त अन्य विश्व की एवं आर्यों से पूर्व की आर्येतर अन्य जातियों के मिश्रण के कारण भी हैं।

प्राकृतिक रूप से संस्कृतियों के आदान प्रदान के कारण ही जातियां एवं देश परिपुष्ट एवं उन्नत होते हैं। महासागर की अपूर्व गम्भीरता में उसकी महत्ता नीहित अवश्य है, किन्तु साथ ही साथ उसमे गिरने वाली हजारों नदियों के कारण ही एक हद तक उसका महत्व है।

विशाल अन्धड़ तथा भूचाल एवं प्रकृति प्रकोप में जिस प्रकार धरातल से मिली हुई घास-फूस ही बची रहती है, उसी प्रकार विशाल राजक्रान्तियों के उलट फेर में महत्वपूर्ण साम्राज्य एवं राजवशों का

ही पतन होता है। छोटे-छोटे आधीन राज्य तो इस अवसर से फायदा उठाकर और आधीनता में महत्व बढ़ाकर जीवित रहते हैं। मौर्य, शूद्र, गुप्त, गुर्जर, वर्धन साम्राज्य काल की दशा इस स्थिति को पूरी तरह प्रकट करती है। अरबों तथा उसके पूर्व के बाहरी आक्रमणों से, एवं मुगलों तक के तथा अंग्रेजों के समय के इतिहास से भी इसी बात की पुष्टि होती है। मुगल और ब्रिटिश साम्राज्य काल के लड़खड़ाते हुए लता रूपी राज्यों से अपनी दृष्टि चकाचौंध करने वाले विद्वानों ने भाटों की ख्याति एवं निर्मूल कल्पनाओं पर आश्रित रह कर गुर्जर (गूजर) या इसी प्रकार की अन्य जातियों के इतिहास पर पानी फेरने का जो प्रयत्न किया है, उससे वे वैज्ञानिक दृष्टिकोण एवं जाति की ऐतिहासिक परम्परा को नहीं मिटा सकते, यह एक ऐतिहासिक सचाई है, जिसे अगले अध्यायों में प्रकट करेंगे।

दूसरा अध्याय

जन-विज्ञान तथा नृ-वंश विज्ञान

(Anthropology & Ethnology)

गुर्जर (गूजर) वैदिक कालीन आर्य जाति

(१)

भारत ही क्या ? संसार की सभी जातियों के इतिहास पर जन-विज्ञान (Anthropology) एवं नृ-वंश विज्ञान (Ethnology) ने महत्वपूर्ण प्रकाश डाला है। विभिन्न स्थानों से पाये गये अति प्राचीन काल के कंकालों एवं अस्थियों की सहायता से इस बात का पता चलता है कि आज की पृथ्वी का निरसित पूर्ण मानव अपने शैशवकाल में आदि मानव पशु था। जिसे शिपाजी या गुरिल्ला न समझते हुए भी इन्हीं की तरह इनसे मिलता जुलता समझा जा सकता है। सदियों बाद विकास की अनेक सीढ़ियों को पार करके मानव समाज विकसित हुआ। पूर्व इतिहास कालीन खोजों का वैज्ञानिक अध्ययन इस बात को प्रकट करता है कि जिस आर्य भारत की प्रारम्भिक काल की कल्पना लोगों ने कर रक्खी है, उन आर्यों का अस्तित्व अत्यन्त प्राचीन काल में इस देश में नहीं था और वैदिक सभ्यता में जिस आर्यावर्त का वर्णन है और उत्तरी भारत की सम्पन्न भूमि, जिसे सिन्धु और गङ्गा यमुना का पानी सींचता है, बहुत बाद में अस्तित्व में आई। हिमालय की विस्तृत पर्वत मालाओं का अस्तित्व भी इसी प्रकार बहुत बाद का है। भारत का प्राचीनतम अंश दक्षिणी प्रदेश (प्रायद्वीपीय अंश) भारत ही नहीं अपितु विश्व के प्राचीनतम अंश का अवशेष है।

आर्यों से पहले भारतीय इतिहास में अनेक जातियों का अस्तित्व पाया जाता है जिनमें प्रारम्भ की जाति हब्शी और उनकी स्थानापन्न निषाद, कोल, भील सन्थाल, मुण्डा आदि जंगली जातियाँ मुख्य हैं। पंजाब में हड़प्पा और सिन्ध में मोहनजोदड़ो की खुदाई

में जो अवशेष मिले हैं, उनके द्वारा आर्यों से बहुत पहले द्रविड़ लोगों की उन्नत सभ्यता का पता चलता है, जिनके आर्यों के साथ निरन्तर युद्ध होते रहे और जो पराजित होकर दास बना लिये गये और पूर्व दक्षिण की ओर भगा दिये गये या नष्ट कर दिये गये, जिनका अस्तित्व आज भी विद्यमान है। द्रविड़ युग में उत्तर भारत में अनेक जातियां रहती थीं, जिनमें—यक्ष, वानर, असुर, दैत्य, दानव, यक्ष, राक्षस, गन्धर्व, किन्नर, किरात आदि मुख्य थे। यह सब मानव जातियां थीं, जो अनेक कबीलों में बंटी हुई थीं और एक अलग ही सभ्यता तथा भाषा थी। आर्यों की पूर्वकालीन देव जाति और इसके साथ अन्य बहुत सी जातियों का वर्णन मिलता है। इसी देव जाति के भयङ्कर जलप्लावन से बचे हुए मनु कबीलों की सन्तान आर्य जाति है, जिन्होंने अपनी संस्कृति, ज्ञान एवं सभ्यता इतिहास को, वेदों, ब्राह्मणों, उपनिषदों, स्मृतियों, सूत्रों, महाकाव्यों तथा पुराणों के रूप में उपस्थित किया है और आज तक उनके पास सुरक्षित है।

वास्तव में भारत का ऐतिहासिक काल आर्य सभ्यता के साथ प्रारम्भ होता है। यहां की संस्कृति पर उनका अमिट प्रभाव है। आर्यों की पितृभूमि, धर्मभूमि उनके स्थायी प्रसार, प्रभाव व बसावट के कारण भारत ही है। भारत ही क्या सारे संसार की सभ्यता पर आर्यों का व्यापक प्रभाव है, जो आज भी अनेक कबीलों में बटी हुई—अपना महत्व पूर्ण स्थान रखती है। नृ-वंश विज्ञान ने इन आर्यों की जातियों की पहिचान अलग करदी है, जिनका आकार लम्बा, रङ्ग गोरा, नाक लम्बी (तोते की तरह), सिर लम्बा, एवं ललाट चौड़ा और काठी मजबूत होती है। आर्यों की भाषा संस्कृत और इससे—मिलती जुलती—निकली हुई है। भारत में इनका प्रमुख निवास हिमालय और विन्ध्याचल के बीच में है। इसी देश का नाम प्राचीन काल में आर्यावर्त कहा जाता था। आर्यों के अलावा भारत में अन्य बहुत सी जातियां अलग अलग आकार, रंग, रूप, बनावट व सामाजिक स्तर पर रहती हैं। कुछ ऐसी भी जातियां हैं जो कालान्तर में अन्य जातियों से घुलमिलकर रहने लगी और अपना अलग अस्तित्व नहीं रख सकीं। आर्य जातियों में भी आर्येतर

अनार्य जातियों का मिश्रण हुआ, जो नृ-वंश विज्ञान द्वारा स्पष्ट प्रकट है। कुछ जातियां आज दिन भी ऐसी हैं, जिन्हें नृ-वंश विज्ञान (Ethnology) ने और साथ ही साथ रक्त-विज्ञान तथा भाषा-विज्ञान ने पूर्णतया आर्य सिद्ध कर दिया है। उन्हीं में से एक मुख्य जाति गूजर है। जिसको नृवंश विज्ञान के विद्वानों ने पूर्ण रूप से आर्य माना है और स्पष्टतया उनका आर्येतर जातियों से किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं है, क्योंकि उन जातियों की कुछ अलग प्रकार की सभ्यता, भाषा और शारीरिक बनावट है।

द्रविड़ जाति का आकार नाटा, रंग श्याम, नाक चिपटी, सिर लम्बे, मुख पर बाल अधिक होते हैं। संस्कृत भाषा से भिन्न इनकी भाषा तामिल, तेलगू, कन्नड़ और मलायालम है। काली, कुरूप, भद्दी हब्शी जाति का अस्तित्व भारत में अन्दमान, नीकोबार के सिवाय कहीं नहीं है, दक्षिण अफरीका, अमरीका आदि में यह पाये जाते हैं। इनका रिक्त स्थान छोटे आकार, काले रंग, चिपटी नाक वाली कोल, भील, सन्थाल, मुन्डा आदि जातियों ने ले रक्खा है, जिनकी प्रारम्भिक भाषा संस्कृत और द्रविड़ भाषा से भिन्न है। मंगोल या किरात जाति का रंग पीला आकार ठिगना, नाक बिलकुल चिपटी, आंखें पतली और तिर्यक तथा गालों की हड्डियाँ उभरी हुई होती हैं। दाढ़ी, मूंछ नहीं के बराबर होती हैं। यह जाति गोरखे, भोटिया, खसिया जातियों के रूप में, हिमालय की तराइयों, आसाम आदि की पहाड़ियों में रहती हैं। कालक्रम से भारत में आर्य, अनार्य, अनेक मिश्रित जातियाँ जन समुद्र में विलीन हो गई और ४२ मुख्य जातियां, १४७ भाषाएं आज भी इस देश में उनके अस्तित्व को प्रकट करती हैं।[१]

कुछ समय तक इतिहास के बड़े-बड़े विद्वानों के सामने यह प्रश्न विशद रूप से उपस्थित रहा कि भारतीय आर्यों के प्रतिनिधित्व

१ प्राचीन भारतीय परम्परा और इतिहास (रागय राघव एम० ए० पी० एच० डी०) भूमिका। प्राचीन भारत हिन्दू काल (सी० एस० श्री निवासाचारी एम० ए०, एम० एस० रामास्वामी आयगर एम० ए० दूसरा परिच्छेद। आदि भारत (प्रो० अर्जुन चौबे काश्यप) चौथा अध्याय।

का दावा करने वाली, राजपूत, जाट और गूजर आदि क्षत्रिय जातियाँ, जिनका प्रारम्भ से आज तक भारतीय इतिहास पर महत्वपूर्ण प्रभाव है, किसी जंगली (Savage) बर्बर, (Barbarian) अनार्य कबीलों की देन है अथवा आर्य। गुर्जरों को वर्तमान क्षत्रियों की जातियों में सबसे पहले मध्यकालीन भारतीय इतिहास में समाज सभ्यता—उन्नत राज व्यवस्था स्थापित करने का श्रेय प्राप्त है और इसी जाति के सम्बन्ध में विशेष रूप से बहुत समय से इतिहास में यह प्रश्न विवादास्पद बना हुआ था कि गुर्जर अथवा गूजर जाति किसी बर्बर अनार्य कबीले की देन है या इनका सम्बन्ध आर्य जाति से है। इतिहास की यह एक नई उलझी हुई गुत्थी थी, जिसे सुलझाने की आवश्यकता बहुत समय से ऐतिहासिक विद्वानों के मस्तिष्क में घर कर रही थी। नृ-वंश विज्ञान ने इस सम्बन्ध में जो निर्णय किया है वह बहुत ही महत्वपूर्ण है और उसी के अनुसार गूजर, चेहरा और सिर नापने पर पूर्णतया आर्य सिद्ध हुये हैं। यद्यपि जाति विशेष के सम्बन्ध में निर्णय करने वाले ऐतिहासिक विद्वानों ने यह सिद्ध कर दिया था कि वर्तमान गूजरों में आर्यों के पूर्ण लक्षण विद्यमान हैं और यह जाति सुन्दर सुगठित आर्य जाति की देन है और इनमें किसी भी प्रकार की मिलावट नहीं है।* किन्तु फिर भी नृ-वंश विज्ञान शास्त्र के सम्बन्ध में, जो आधुनिकतम अन्वेषण हुए हैं, उन पर पूरा प्रकाश डालना आवश्यक

* On the whole it seems probable that in the Punjab and in the western Districts of these Provinces, at least, the Tribe is fairly from intermixture with the lower Races (The Tribes and Castes of the north western provinces of Oudh by W Crooke B A. Volume II Page 442 Para 5

The Gujar is a fine stalwart fellow of precisely the same physical type as the Jat and the theory of aboriginal descent which has sometimes propounded, is to my mind conclusively negatived by his of countenance Punjab castes 1883 Sir Denzil Ibbetson K. C S I Page 481

है जिससे कि गूजरों और उनकी सहयोगी क्षत्रिय जातियाँ (राजपूत, जाट) के सम्बन्ध में अनार्य-रक्त का मिश्रण वैज्ञानिक खोजपूर्ण सिद्धान्त के आधार पर अप्रमाणिक सिद्ध होकर, इस विवाद का सदा सर्वदा के लिये अन्त हो जाय।

(२)

जीव विज्ञान के अनुसार इस संसार में मनुष्य भी एक प्रकार का पशु माना जाता है। इतना आवश्यक है कि पशुओं की अपेक्षा मनुष्य में बुद्धि बहुत अधिक है। इसी जीव विज्ञान के सिद्धान्त के अनुसार हम मनुष्य को सामाजिक-पशु कह सकते हैं, क्योंकि समाज में मिल-जुल कर व्यवस्था के साथ रहना इसका प्राकृतिक स्वभाव है। अगर हम संसार के सभी मनुष्यों की विवेचना करें तो इस निर्णय पर पहुँचे बिना नहीं रह सकते कि ये एक ही प्रकार के नहीं हैं। ये एक दूसरे से नस्ल,

---

"I do not accord much credit to this derivation, but it is remarkable that the province of Gujarat, which seems to have been their first abode, lies between the Rajput province of Malwa, etc. and Sindh, where the Abhiri, who are supposed to the Ahirs, formerly lived That they are aborigines is clearly disproved by their fine manly Aryan Type, in which they closely resemble, who are constantly found as their neighbour (Memoirs on the History, Folk Lore and distribution of the Races of North western provinces of India, Sir Henry M Elliot K. C. B Page No 101)

"We may conclude, therefore, that the ethic characteristics of the Jats, the *Gujars* and the Rajputs viz their long heads, their fine noses, and their tall statures are undeniably Aryan and that there is nothing in History which suggests or

शारीरिक बनावट, ऊंचाई, अवयव-गठन, मोटा... लम्बाई चौड़ाई और ऊंचाई, सिर एवं माथे की लम्बाई चौड़ाई, सुडौलपन, आंखों के रंग इत्यादि बातों में विभिन्न पाये जाते हैं। प्राय: एक ही भौगोलिक क्षेत्र में रहने वाले मनुष्यों में लगभग एक ही से शारीरिक चिन्ह पाये जाते हैं और ऐसे मनुष्यों को एक ही वंश का निर्णय करते हैं।

(२)

संसार के इतिहास से पता चलता है कि मनुष्य प्रारम्भ से ही एक स्थान पर रहने का आदि नहीं है, वह एक घुमक्कड़ जीव है। आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक स्थिति भी इसे अपने भौगोलिक स्थान को छोड़ने पर विवश कर देती है। दूसरे स्थानों पर जाकर उनसे लड़कर अथवा मेल करके उसे वहां बसना पड़ता है और वहां के रहने वालों को हटाकर या उनमें मिलकर वहां बसते हुए दोनों वंशों के मनुष्य

proves that they came from out-side India in Historic Times. Page 356 ....It seems that this is merely suggestion made by bias and in defiance of the ethnological argument which clearly proves that the Gujars belong to the Aryan race Page 83 . their anthropometrical characteristics are purely Aryan and History does not at all contradict this ference. Page 87.

It is, therefore, strange that in spite of the fact that every person who has had intimate acquitance with the *peoples* of the Punjab has marked the ethic identities of the Jats, Gujars and Rajputs plainly Aryans and not Scythian, theories have usually be *propounded* by scholars about them being Scythian, *Getoe*, Yue-chi, Khizar and what not and about their having come into India within historical times, nay, on this

मिलने लगते हैं। शादी-विवाह करते हैं। उनकी मिश्रित सन्तानें होती हैं, जिनमें दोनों ही नर-वंशों के चिन्ह का समावेश होता है। नृ-वंश विज्ञान द्वारा यह ज्ञात होता है कि किस जाति अथवा देश के मनुष्य किस नर-वंश के हैं, उनमें किन नर-वंशों के चिन्ह मिलते हैं। नृ-वंश विज्ञान के विद्वानों ने वर्तमान मानव समाज को कई विभागों में बांटा है। कुछ विद्वानों ने संसार की सभी जातियों को तीन भागों में बांटा है—यूरोपियन, नीग्रो और मंगोलियन। कुछ ने मुख्य रूप से निम्न वंशों में बांटा है—आस्ट्रेलियन, नीग्रो, मङ्गोल, नोर्डिक, अल्पाइन और मेडीटेरेनियन। अन्तिम विभाजन को ही सर्वश्रेष्ठ माना गया है। नृ-वंश विज्ञान शास्त्र में गणित के द्वारा भिन्न-भिन्न नर-वंश की जातियों को विशेष चिन्हों द्वारा नापा जाता है और गुणों द्वारा उनकी परीक्षा की जाती है। यह चिन्ह अथवा गुण दो प्रकार के होते हैं, एक निश्चित दूसरा अनिश्चित। निश्चित चिन्ह वे हैं, जिनकी नाप तोल हो सकती है और जिन्हें आँकड़ों में लिखा जा सकता है। जैसे सिर की लम्बाई, चौड़ाई और ऊंचाई या नाक (नासिका) की लम्बाई, चौड़ाई और ऊंचाई या कुल चेहरे का कोण। अनिश्चित वे गुण हैं जिनकी नाप तौल करना

---

side even of the Christian era. There is not a scrap of historical evidence even to suggest much less to prove such immigration (There is neither foreign mention of their coming into India nor have they any tradition of their own of sometime coming into India nor is their any historical Indian-Record, stone-inscription or other, of their so coming) and we can only ascribe such theories to that unaccountable bias of the minds of many European and *native-scholar's to assign a foreign* and Scythic origin to every fine and energetic caste in India (Page 88, History of Mediaeval Hindu India by C. V. Vaidya)

कठिन है और जो आकड़ों में नहीं लिये जा सकते, जैसे त्वचा का वर्ण नेत्रों का रग, बालों का घनत्व तथा रग, यद्यपि अब इन्हें मापने के पैमाने बन गये हैं।

भारत में इतिहास के अध्ययन से यह पता चलता है कि सहस्त्रों वर्षों से अब तक यहाँ नई-नई जातियों ने आक्रमणकारी रूप में विभिन्न समय में अपनी बसावट की। कहा जाता है कि आदि काल में यहाँ निग्रोटी वश (हब्शी) के लोग रहते थे,, जिनका रग काला, बाल काले घुंघरदार, मोटे होठ, शरीर नाटा एव भद्दा था। वे लोग अब भारत में नहीं पाये जाते हैं, केवल अन्डमान टापू में इनका अवशेष है। इसके बाद आस्ट्रालायड वश के मनुष्य आये और इस वश के आदि निवासी छोटे नागपुर में पाये जाते हैं। ये द्राविड वश के कहलाते हैं। फिर आर्य लोग आये, यह गौर वर्ण के थे। इनका शरीर लम्बा और पतला, लम्बी नाक तथा कम चौडा लम्बा सिर था। इन्होंने पजाब, सिन्ध, गङ्गा का इलाका विजय कर लिया और पूर्व निवासियों को छोटा नागपुर की ओर भगा दिया। फिर भारत पर यूनानी और सीथियन, हूण, तातार, मङ्गोल आदि आर्य-अनार्य जातियों ने आक्रमण किये और यहा आकर बस गये तथा पहिले निवासियों में आकर मिल गये। गुर्जरों (गूजरों) का भी इसी ऐतिहासिक दौर में बाहर से आना कुछ ऐतिहासिक विद्वान मानते हैं। शक, सिथियन, हूण आदि जातिया, जो बाद में आकर यहा की जातियों में घुलमिल गई। यह सब आक्रमण उत्तर पश्चिम की ओर से हुए थे, किन्तु उत्तर पूर्व की ओर से भी मगोलवश के लोग —जिनका रग पीला, नाक छोटी और चपटी, सिर कम लम्बा, माथा चौडा तथा शरीर कम लम्बा था—आये और बस गये। इस प्रकार भारत में द्राविड, आर्य और मङ्गोल तीन नर वश या उनके मिश्रण के वश हैं। पजाब राजपूताना, काश्मीर पश्चिमी उत्तर प्रदेश में आर्य जाति का प्रभुत्व है। उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्यभारत, बम्बई के कुछ भागों में आर्य एव द्राविड तथा दोनों नर वशों का मिश्रण है। बगाल, आसाम, नैपाल, भूटान और उडीसा में मगोल और द्राविड वश का मिश्रण है। दक्षिण में द्राविड वश के लोग रहते हैं या द्राविड और

निग्रोटो का मिश्रण है।

नृ-वंश विज्ञान में गणित द्वारा सिरचिन्ह और नासिका चिन्ह सरलता से नापे जा सकते हैं। सिर-चिन्ह, सिर की लम्बाई और माथे की चौड़ाई के अनुपात को कहते हैं। जैसे यदि किसी व्यक्ति के सिर की लम्बाई और माथे की चौड़ाई में १०० व ८० का अनुपात है, उसका सिर चिन्ह ८० कहलायेगा। इसी प्रकार नासिका चिन्ह नाक की लम्बाई और चौड़ाई में सौ और अस्सी का अनुपात हो तो नासिका चिन्ह अस्सी कहलायेगा। सबसे पहिले सर हरबर्ट रिजले (जो वाइसराय की कौन्सिल के सदस्य थे और एक समय में भारत सरकार के नृ-वंश विज्ञान विभाग के अध्यक्ष थे) ने भारतवर्ष की बहुत सी जातियों के सिर-चिन्ह और नासिका चिन्ह लिये थे। लगभग ४२ वर्ष हुए, १६०१ की जनसंख्या की रिपोर्ट में उनके द्वारा नृ-वंश विज्ञान से जातियों का वंश निर्णय करने का निष्कर्ष निकला है। सर हरबर्ट रिजले का नासिका-चिन्ह सम्बन्धी एक निष्कर्ष बहुत मनोरञ्जक है। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया है कि यदि बंगाल, बिहार, उत्तर प्रदेश और पंजाब की जातियों की एक सूचि नासिका-चिन्ह के अनुसार बनाई जावे, अर्थात जिस जाति की नासिका का चिन्ह सब से कम हो उसका नाम सब से बाद को लिखने पर ऐसी सूचि तैयार होजावेगी, जिसमें जातियों की सूचि का समाज में सम्मानित पद निर्णय होगा और नासिका के चिन्ह के अनुसार जो सूचि बनेगी, वह उसी तथ्य को प्रकट करेगी। सर हरबर्ट रिजले के लेखानुसार किसी भी व्यक्ति की, जो उत्तर पश्चिमी प्रान्त में रहता है, जाति या उसकी जाति सम्मानित पद उसकी नासिका चिन्ह की कमी अथवा अधिकता से नापी जा सकती है। वे लिखते हैं कि हब्शी और द्राविड़ लोगों की चौड़ी नाक खास खटकने वाली बात है और समस्त मद्रास, मध्य प्रदेश और छोटा नागपुर में यह आम बात है। सुन्दर नाक का होना राजपूताना और पंजाब में पाया जाता है। शेष भारत की आबादी मध्य श्रेणी की है। पंजाब के गूजर का नासिका नाप ६६.६, सिक्ख (जाट) ६८.८, बङ्गाल के ब्राह्मण और कायस्थों का ७० प्रतिशत औसत है। दूसरे शब्दों में माल पहाडिया नापमान ६४.४ है, जोकि द्राविड लोगों का

औसत प्रस्तुत करती है, इनकी नाक हब्शी लोगों की तरह औसत रखती है, जबकि आर्यों के रूप रङ्ग के साथ नासिका माप का औसत ६८.० पारसियों के साथ है और शेष ६६.४ है और पंजाब की आबादी के गूजरों की नाक का औसत पारसियों से भी विशेष तेजस्विता सूचक (६६.९) है।[1]

इससे स्पष्ट है कि गूजरों की नाक का औसत ६६.९ है जबकि अन्य जातियों का इससे ऊपर ही है। निम्न नासिका माप की तालिका

---

[1] "The broad nose of the Negro or Dravidian is his most striking feature. This broad type of the nose is most common in Madras, the Central Provinces and Chota Nagpur. Fine noses are confined to the Punjab and Rajputana, while the population of the rest of India tends to fall in medium classes. The pastoral Gujars of the Punjab have an index of 66.9, the Sikh of 68.9 and the Bengal Brahmins and Kayasthas 70, while the average nosal proportion of Mal Paharia Type are expressed by the figure 94.5. *In other words* the typical Dravidian are represented by the Mal Paharia has a nose as broad in proportion to its length as the Negro, while this feature in the Indo Aryan group can fairly bear comparison with the noses of 68 Parsians measured by to paired which gave an average of 68.4.... and the Gujars of the Punjab stand first with regard to the fineness of the nose their index (66.9) being lower than that of even the Parsians." (Census report of India for 1901 Page 498.)

से यह और भी स्पष्ट होजायगा कि गूजर नृ-तत्व शास्त्र के अनुसार पूर्ण आर्य हैं। भूमिहार ७३·०, ब्राह्मण ७४·६, कायस्थ ७४·८, क्षत्रिय ७७·७, कंजर ७८·०, गडी ७८·१, कुर्मी ७६·२, थारु ७६·४, वैश्य ७६·६, बढ़ई ७७·३, ग्वाला ८०·६, केवट ८१·४, भाट ८१·६, कोल ८२·२, लोहार ८२·४, गुड़िया ८२·६, काछी ८२·६, डोम ८३·०, कोइरी ८३·६, पासी ८४·४, चमार ८६·८, मुसहर ८६·० । इस विषय को और अधिक स्पष्ट करने की आवश्यकता है ताकि इसे वैज्ञानिक दृष्टिकोण से पूरी तरह समझा जा सके।

भारतीय नस्लों में अत्याधिक भेद होने पर भी प्रत्येक व्यक्ति बिलकुल आरम्भ में एक निश्चित समानता से प्रभावित होता है। यह समानता जिसके अर्थ का पता अभी लगाता है, कुछ अंश तक वैज्ञानिक समानताओं से पुष्ट होजाती है। विशेषतया इसी बात को रिजले भारतीय जातियों के विभाजन में स्पष्ट रूप से लाना चाहते हैं। मुख्य सात प्रकार की जातियों में अन्तर प्रकट करते हुए, सबको एक मूल जाति पर केन्द्रीभूत करते हुए उन्हे वे द्राविड़ कहते हैं।

(१) द्राविड़ जाति जो रिजले के विभाजन अनुसार भारतीय जनसख्या का पहिला अंश है। इनका कद छोटा, त्वचा का रङ्ग पक्का काला, काले बाल—कभी-कभी घुंघराले, काली आंखें, दीर्घ कपाल वाला सिर, नाक चौड़ी अथवा अधिक चौड़ी होती है, किन्तु चपटी कभी नहीं होती है। यह जाति दक्षिणी पठार को घेरे है, इसके महत्वपूर्ण प्रतिनिधि मालाबार के पनियार तथा छोटा नागपुर के सन्थाल हैं, किन्तु यह जाति उत्तर में भी पाई जाती है और पश्चिम में अरावली और पूर्व में राज-महल की पहाड़ियों तक विस्तृत है। यह जाति स्वयं एक अपूर्व एकता का समूह बनाती है। मिश्रित होने के कारण इसने कुछ अन्य प्रकार की जातियों को जन्म दिया है, जिसका क्षेत्र दक्षिणी पठार के उत्तर से लेकर शेष भारत के सम्पूर्ण भाग को घेरे हुए है।

(२) शको-द्राविड़ी जाति, जिसमें विशेषतः मराठा जाति के लोग

सम्मिलित हैं। यह वनकपाल वाली जाति द्राविड, तुर्की-ईरानी जातियों के मध्य की है।

(३) गङ्गा के मैदान की आर्य-द्राविड अथवा हिन्दुस्तानी नस्ल जिसमें दीर्घ कपालिक विशेषता अधिक स्पष्ट नहीं है। यह व्यक्ति भूरी त्वचा तथा मध्य नासल वाले होते हैं। समस्त जातियाँ परस्पर मिश्रित होकर आर्यावर्त की वास्तविक जनसंख्या का निर्माण करती हैं, जो नीचे वर्णन किये गये भारतीय आर्यों से पूर्णतया भिन्न हैं।

(४) मङ्गोली-द्राविडीनस्ल—इस जाति के व्यक्ति वनकपाल तथा मध्य नासिका, श्याम त्वचा वाले होते हैं और अधिकांश बङ्गाल में पाये जाते हैं।

(५) भारत के उत्तरी भाग में पूर्व की ओर तथा मध्य में वृत्तकपाल नस्ल की जाति है, जिसके व्यक्ति छोटे केश, तथा उभड़े हुए अपांगों वाले होते हैं। इन मङ्गाली जातियों की समानता मैदान (संयुक्त प्रान्त) की ब्राह्मण जातियों से मिलती है।

(६) भारतीय आर्य जो काश्मीर तथा पंजाब के सामान्य लोग हैं और पूर्ण रूप में अत्यन्त न्यून संख्या में हैं। ये पूर्व की ओर केवल ७७वें अक्षांश तक मिलते हैं। यह विशालकाय व्यक्ति, सुन्दर त्वचा वाले तथा दीर्घ कपाल, पतली और उभरी नासिका वाले होते हैं। इनमें केवल निम्न जातियाँ हैं— माछी, राजपूत, गूजर, अरौड़ा, सिख (जाट), मेव, मीणा जमींदार, मीणा चौकीदार, चूहड़ा खत्री, अराना। आप ने संक्षिप्त विवरण के लिये आगे का चार्ट देखिये।

(७) तुर्की-ईरानी जो भारत के उत्तर पश्चिमी सीमान्त तथा सिन्धु नदी के दक्षिण तट पर पाये जाते हैं यह छोटे वृत्तकपाल तथा सुन्दर त्वचा वाले होते हैं। इनकी नासिका साधारणतया लम्बी होती है।*

---

* पीपुल आफ इण्डिया सर हर्बर्ट रिज़ल के० सी० आई० ई० सी० एस० आई० डायरेक्टर आफ एथ्नोग्राफी आफ इण्डिया, एन्टीक्यूरीज आफ इण्डिया, जारलट (लन्दन पृष्ठ ३० अध्याय २, इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया न्यू एडीशन पृष्ठ २९३-२९७)—भारतीय संस्कृति में आर्येतरांश (शिव शङ्कर मिश्र) पृष्ठ ४-५-६

भारतीय जातियों के सम्बन्ध में नृ-वंश विज्ञान सम्बन्धी अन्वेषण द्वारा जो प्रकाश सर हरबर्ट रिजले द्वारा डाला गया है उससे गूजर ही क्या भारत की सभी वीरकर्मा जातियों की उच्च स्थित का पता मिलता है। राजपूत, गूजर तथा जाटों के सम्बन्ध में जो धारणा ऐतिहासिक दृष्टि-कोण से टाड़ तथा दूसरे विद्वानों ने प्रस्तुत की थी, वह भारतीय प्राचीन आर्यों के गौरव को और उनके ऐतिहासिक महत्व को कम करने वाली थी और उनका, वैदिक कालीन आर्यों का तथा राजन्य (क्षत्रिय) वर्ण का अस्तित्व लुप्त प्रायः मान लेना एक निरर्थक कल्पना को आश्रय दे देना था, जिसका समाधान निश्चित रूप से आंकड़ों द्वारा स्वयं विदेशी विद्वानों के नवीनतम सिद्धान्त द्वारा ही हो जाता है।

(४)

सर हरबर्ट रिजले के प्रयोगों के पश्चात १९११-१९२१ में जन-गणना के अवसर पर नृ-वंश विज्ञान सम्बन्धी कोई गणना नहीं हुई, किन्तु अन्य विशेषज्ञों ने भी इस विषय में कुछ गणना की है। सन् १९९१ में ब्राह्मणों की तीन शाखाओं की गणना नर-विज्ञान से हुई थी (सरयरिया, सरजूपारी, कान्यकुब्ज ब्राह्मण), लेकिन इससे पूरे प्रान्त के लिये कोई सिद्धान्त प्रतिपादन नहीं किया जा सकता। इस जांच से केवल यही परिणाम निकला कि इन ब्राह्मणों से सिक्स और पंजाब के मुसलमान और गूजर, राजपूत, खत्री अधिक लम्बे सिर वाले, अधिक चौड़े माथे वाले और अधिक लम्बी नाक वाले हैं। १९४१ की जन-गणना के अवसर पर डा० डी० एन० मजुमदार ने प्रान्तीय जनगणना कमिश्नर के सहयोग से कुछ जातियों के सिर, नाक तथा रक्त की परीक्षा की थी, उसकी विस्तृत रिपोर्ट युद्ध छिड़ जाने के कारण नहीं छप सकी। परन्तु उससे भी यही स्पष्ट होता है कि गूजर लोग अन्य उच्च हिन्दू जातियों के समान आर्य हैं और उनमें किसी दूसरे रक्त का मिश्रण नहीं है। नृन्तत्व शास्त्र की विभिन्न खोजों द्वारा जो परिणाम प्रकाशित हुए, वह निम्न बातों पर प्रकाश डालते हैं।

पाषाण काल के प्रागैतिहासिक युग की जातियों के विभिन्न चिन्ह मुख्यतया भारत के दक्षिण पठार में पाये जाते हैं। हिमालय की तराई

में एश्यूलियन (Acheulean) नस्ल के व्यक्तियों की पहुंच है। इसके अतिरिक्त तथा कथित सोहन सभ्यता (डीटेरा) मोस्टीरियन (mousteroan) नस्ल का स्मरण दिलाती है। सम्भवतया नव पाषाणकाल का मोहनजोदड़ो की सभ्यता से सम्बन्ध है, क्योंकि डीटेरा नामक विद्वान ने काश्मीर के बर्जहोम स्थान पर नवपाषाण युग की एक तह से कृष्ण वर्ण के मृत्त कला के चिन्ह प्राप्त किये हैं, जो मोहनजोदड़ो से समानता रखते हैं। अब तक हमें जो मनुष्य जाति के जो पुरातन चिन्ह उपलब्ध हुए हैं, उनके तीन महत्त्वपूर्ण खुदाइयों द्वारा प्रमाण मिलते हैं।

१—सिन्धुनदी के कङ्काल (मोहनजोदड़ो, हड़प्पा नल मकरान), जिनका सम्बन्ध ताम्रयुग ईसा से पूर्व ४००० — ५००० वष का है। यह पतली नाक वाले तीन प्रकार के हैं —दो दीर्घ कपाल वाले (अ और ब) जिनमें से विशेषतया एक [सिन्धु अ], जो महानली हैं बहुत दृढ़ कापालिक परिमाण वाले हैं। कर्णिक क्षेत्र के पीछे अपवादात्मक विकास के साथ एक वृत्तकपाल नस्ल [सिन्धु स] मिलती है, जिसकी कपालिक भित्ति उठी तथा सिर पीछे की ओर चपटा हुआ होता है। इन तीनों नस्लों का सम्बन्ध मेसोपोटेमिया के टेल अल आर्बेड तथा किश' के मेदों से कर सकते हैं। मोहनजोदड़ो तथा प्राचीन मेसोपोटेमिया के मध्य एक खास समानता है। वृत्तकपाल नस्ल को आर्मीनायड कहा जा सकता है।

२—सुदूर दक्षिण में तिनेवेली के समीप आदित्त नैलूर स्थान में प्राप्त कङ्कालों का सम्बन्ध लोहयुग से है। ये साधारणतया दीर्घ कपाल तथा मध्य नासिका वाले हैं और हमें उन रूपों की याद दिलाते हैं, जो वस्तुतः सम्पूर्ण भारत में व्याप्त हैं। इनमें से कुछ मिश्र देश के राजवंश युग के पहिले के कपालों से समानता रखते हैं।

३—ऐतिहासिक युग में पांचवीं शताब्दि के अन्त में नष्ट हुए धर्मराजिक मठ की अस्थियों के कपालों से बहुत लम्बे चेहरे और पतली नाक का अनुमान किया जाता है, किन्तु इनमें दीर्घ कपालिक विशेषता प्रकट तथा कपाल भित्तिपूर्ण की दशाओं से कम उभरी है। यह नस्ल सिन्धु की नस्लों तथा भारत के आधुनिक वासियों के रूपों से बहुत

भिन्न है। दक्षिणी भारत के जेउरगी (jewurgi) के नीग्रोइड वर्गवालों तथा उत्तर भारत के बयाना अस्थियों मे हमें भारत की प्राचीन जनता की शारीरिक विशेषताओं का ज्ञान होता है। नृतत्व शास्त्र द्वारा यह भी निश्चित है, नीग्रोटी जाति का भारत में कोई प्रतिनिधि नहीं है। यद्यपि यह सन्देह किया जाता है कि ताम्रवर्ण और कृष्णवर्ण के मनुष्य इन्हीं नस्ल के हों, लेकिन नृतत्व शास्त्र ने यह निर्णय कर दिया है कि अंदमन द्वीपसमूह की नियोटी जाति का भारत में कोई प्रतिनिधि नहीं है। प्रान्तों के अनुसार भारत में, द्राविड़, शकी-द्राविड़, गंगा के मैदान की आर्य-द्राविड़ तथा भारतीय नस्ल (जिसमें दीर्घ कापालिक विशेषता अधिक स्पष्ट नहीं है, भूरी त्वचा और मध्य नासिका वाले) मंगोली, द्राविड़ नस्ल (बंगाल) और भारत के उत्तरी भाग में पूर्व की ओर तथा मध्य में पृथुकपाल नस्ल की जाति, जिसके व्यक्ति छोटे तथा उभरे अंगांगों वाले उत्तर-प्रदेश के ब्राह्मणों की जातियों के लोग तथा भारतीय आर्य जो काश्मीर, पंजाब एवं राजपूताना के सामान्य लोग हैं, जिनमें गूजर पूर्णतया शामिल हैं, ये पूर्व की ओर केवल ७७वीं अक्षांस तक विस्तृत हैं। यह लोग विशालकाय, सुन्दर त्वचा दीर्घ कपाल, पतली और उभरी नासिका वाले होते हैं। इसके अतिरिक्त तुर्की-ईरानी जो भारत के उत्तरी पश्चिमी सीमान्त तथा सिन्धु नदी के दक्षिणी तट पर पाये जाते हैं, ये छोटे पृथुकपाल तथा सुन्दर त्वचा वाले होते हैं। इनकी नासिका साधारणतया लम्बी होती है।

(५)

बी० एस० गुहा का जो विभाजन है वह नृ-तत्व शास्त्र के आधुनिकतम गणित सम्बन्धित तथ्यों द्वारा पूर्ण प्रमाणिक है। उसमें मूल आस्ट्रोलाइड नस्ल है। इसके अन्तर्गत पहले तो आदित्त नैलूर के कुछ कपाल सम्मिलित हैं जिनके सामने का निचला भाग बढ़ा हुआ तथा नासिका का सिरा चिपका हुआ है। इस नस्ल के मध्यभारत में भील कोल, बड़गा, कोरवा खारवार, मुंडा, भूमिज, तथा माल पहाड़िया, दक्षिण भारत में चिन्चू, कुरुम्बा, मलया तथा युरुवा हैं।

गुहा के अनुसार शारीरिक विशेषताओं के उदाहरण

१	२	३	४
	औसत मान मिलीमीटर में	औसत मान मिलीमीटर में	औसत मान मिलीमीटर में
	दीर्घ कापालिक-आकार (तेलगु ब्राह्मण)	अल्पोहिनेरिक अथवा सिन्धु म (औसत) (गुजरात, कनाडा, बंगाल)	मूल-नाडिक गङ्गा नदी की समीप-वर्ती ब्राह्मण सिक्ख, जाट, राजपूत, गूजर आदि
कद् कपाल	१·६३२४०२	१·६४८०८	१·६८६२६
१ दीर्घव्यास	१८६,६८	१८३ ७५	१६३,८०
२ हृस्व व्यास	१४०,६२	१४६,३०	१४३,७३
३ मान '१' अ	७४,५४	८१,७६	७३,११
कपोल अस्थियों के मध्य की चौड़ाई	१३१,१८	१३४,५६	१३४,५८
मुख की चौड़ाई	११५,७०	११६,३४	१२०,६१
मुख मान	८८,०५	८६,५८	८६,८८
बहुत ऊंचा नासिका मान	७३.०५	६६,८५ सुनास	६७,१३ सुनास
त्वचा का रङ्ग	स्वच्छ गेहुआं	पीतुनी से गेहुआं	दूध मिश्रित मद्ये के समान स्वच्छ

विशेष—दूसरे कोष्ठ का कपाल-मान पृथक्कपाल की अपेक्षा उत्तृत कपाल है—(गुहा के अनुसार जनगणना १९३१ I, ३, पृ० ६० तथा आगे)

मूल दीर्घ कपाल नस्ल को रिजले ने द्राविड़ नस्ल के अन्तर्गत किया है, जिसका स्पष्ट रूप निम्न प्रकार है—औसत ऊंचाई, दीर्घ कपाल, कपाल भित्ति उभरी हुई, ऊंचा मस्तिष्क जिसमे प्रायः गांठें पड़ी हुई होती हैं, जिससे नेत्रकोश कठिनता से दीखते हैं। छोटा चेहरा, कपोलों पर कुछ चिन्ह, छोटी नुकीली ठोढ़ी, नाक कुछ लम्बी और चौड़ी, मध्यनास के आधार पर होठ मोटे तथा लम्बी आकृति का मुंह, त्वचा वर्ण गेहुवां से लेकर गहरे भूरे तक, आंखें गहरी, केश काले, सीधे लहरिया रूप तथा संस्थिति घनी सी। दक्षिण भारत उत्तर की नीची जातियों मे तथा गङ्गा के मैदान मे कुछ ऐसे व्यक्ति पाये जाते हैं, यद्यपि ये अन्त में मिश्रित रूप में मूल आस्ट्रोलायड़ नस्लों मे नजदीकी हैं, किन्तु पूर्व में उससे भिन्न हैं और वास्तविक समानता वाली नस्ल उत्तरी मिश्र के राजवंशों के काल के पूर्व की समाधियों मे पाई जाती है, जो इलियट एवं स्मिथ के अध्ययन किये कंकालों मे पता चलता है। सिन्धु की नस्लों मे से दो दीर्घ कापालिक नस्लों को बाद की नस्ल से नहीं मिलाना चाहिये। इन दो मैं मे अधिक हृष्ट-पुष्ट तथा बलवती (सिन्धु अ) नस्ल आजकल ऊंची गुदी वाले, शक्ति शाली पंजाब, राजपूताने तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अवशिष्ट हैं। गुहा इसे पैल कोलिथिक युग की ह्रस्व कपाल नस्ल कहते हैं, जिससे इसका वास्तविक (सिन्धु ब) नस्ल से भेद प्रकट हो सके। इस नस्ल की समानता अधिक कृष्ण-काय, अच्छे लक्षणों से युक्त, सीधी नासिका वाले व्यक्तियों से है। इसकी तुलना भूमध्यसागर वाली नस्ल से की जा सकती है। यह सिन्धु नस्ल उत्तरी भारत की जनसंख्या में उच्च स्थान रखती है, इसका मोहनजोदड़ो की उच्चकोटि की सभ्यता व आजकल की उच्च जातियों में विशेष स्थान है। मध्य श्रेणी की जातियों मे उत्तर के भारतीयों का दक्षिण के भारतीयों से भी इसी आधार पर अन्तर प्रकट होता है। थोड़ा सा विचार करने पर यह अनुमान किया जा सकता है कि ये दो सिन्धु नस्लें भारत के लिए अपरिचित सी हैं, किन्तु व्यवहारिक रूप से यह निश्चित है कि वे सभी नस्लें जिनका वर्णन अब कर रहे हैं, विदेशी हैं। ये अनिश्चित तत्व जो संख्या मे थोड़े हैं

निम्न प्रकार हैं —

१—अल्पो-डिनेरिक (Alpo-Dinaric) जो वृतकपाल वाली तथा मगोल जातियों से भिन्न है। इस जाति के व्यक्ति, चपटी गुद्दी वाले होते हैं। इनके पूर्वज हड़प्पा में (सिन्धु स) तथा आधुनिक प्रतिनिधि गुजरात, कन्नड़, देश बङ्गाल मराठा तथा तामिल जातियों में पाये जाते हैं—[चेटर्जी]। कपाल मान कुछ वन शालिक हैं, इनका का वर्ण कुछ साफ है। कुर्ग के लोगों मे तथा गुजरात के ब्राह्मणों में यह नैतूनी वर्ण है। स्वभाव से वे सुन्दर नेत्रों वाले होते हैं। गुहा इन वृतकपाल के लोगों की तुलना दक्षिणी अरब के ओमानी लोगों से करते हैं। दूसरी ओर रामप्रसाद चन्दा मे सक्न मे वे बगाल के दीर्घ कापालिक पुरुषों को इन्हीं के पडौस के अथवा के निवासियों स प्रथक करते हैं। इस प्रकार गुजरात तथा बगाल की जनसख्याओं की समान उत्पत्ति होगी, जिसे पश्चिमी प्रदेशों में देखना चाहिए। गुहा इस जातीय समुदाय के लिए अल्पो, डिनेरिक नाम प्रस्तावित करते हैं।

२—मूल नार्डिक—जो सर्वसाधारण व्यक्ति द्वारा आर्य कहे जाते हैं, जिनके चिन्ह कदाचित धर्मतनिक मठ मे प्राप्त होते हैं। इनके कपालों तथा भारतीय कपालों में अन्तर यह है कि य अधिक चौडे तथा कपाल भित्ति कम ऊंची है। कापालिक परिणाम बहुत ऊंचा अर्थात् १ ५५२ सेन्टीमीटर ३ है। इनकी मुखाकृति लम्बी, नाक पतली और लम्बी और नीचे का जबड़ा मजबूत होता है। सम्पूर्ण शारीरिक अगों से य पूर्णतया शक्तिशाली होते हैं। उत्तर पश्चिम की जातियों में यह नस्ल पूर्णतया पाई जाती है। इसकी शुद्ध नस्ल काफिरिस्तान तथा दरदी भाषा क्षेत्र में पाई जाती है, जिसमे काश्मीर भी शामिल है। पंजाब, राजपूताना, पश्चिमी उत्तर प्रदेश में भी दृष्टिगत होती है और सौभाग्यवश गूजर जाति की बहुसख्य आबादी इन प्रदेशों के बेहतर स्थानों में है। गगा नदी की घाटी म इसने अपना स्पष्ट प्रभाव डाला है। आर्यवर्त क ब्राह्मणों और मलाबार नम्बूदिरि जाति में भी इनके लक्षणों के कुछ अश पाये जाते हैं। सिन्धु प मैदान में इनका वर्ण दुग्ध मिश्रित कहवा सदृश साफ तथा पर्वतीय प्रदेशों मे गुलाबी है।

इनकी आंखें नीली एवं भूरी हैं। कुछ दशाओं में लाल-बालों के भी उदाहरण मिलते हैं, किन्तु गौर वर्ण भूरे बाल तथा कंजी आंखों वाला नहीं मिल सकता। गुहा इस बात का अनुमोदन करते हैं कि यहां हमें वैदिक आर्य तथा साधारणतया आर्य जाति की नस्ल मिलती है, किन्तु यह अनुमान किया जा सकता है कि गौर वर्ण भूरे केश तथा कंजी आंखों वाले व्यक्ति का विकास केवल बाद को इस जाति की योरोपियन शाखा से हुआ होगा। अतः भारतीय शाखा के लिये मूल नार्डिक शब्द प्रयुक्त हुआ है।

६—पूर्वी नस्ल—गौरवर्ण की त्वचा, काली आंखें लम्बी, तथा मुड़ी हुई नाक वाली एक अन्य नस्ल भी फिशर नामक विद्वान ने मानी है, जिसे पूर्व वर्ग की नस्ल कहते हैं।

अन्य नस्लें केवल भारत के सीमान्तों पर पाई जाती हैं। ये भारत के लिये विदेशी हैं। उनमें तिब्बती, मंगोली, समुद्री तथा सागरद्वीपी नस्लें हैं। गुहा भारत के मैदानों की जनसंख्या पर मंगोली प्रभाव को नहीं मानते हैं। व्यापक दृष्टि से जातियों, नस्लों के इतिहास का निर्णय इस विशिष्ट विवेचना से जाना जा सकता है। यद्यपि व्यवहारिक रूप में समस्त क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के व्यक्ति पाये जाते हैं, फिर भी श्री जातियां अपने यहां परम्परागत संस्कारों, गोत्रों के आधार पर विवाह सम्बन्धों में ठीक प्रकार से बंधी हुई हैं, वे इनके द्वारा अपनी विशुद्ध नस्ल का निर्णय कर देती हैं।

१—उत्तर पश्चिमी प्रदेशों में मूल नार्डिक (आर्य) नस्ल जो भूमध्यसागर तथा पूर्वी नस्ल के साथ पाई जाती है।

२—प्रायद्वीप की एक मुख्य दीर्घ-कापालिक नस्ल।

३—इसके बाद वाली नस्ल के आसपास पश्चिम तथा पूर्व की वृत्त-कापालिक नस्ल।

४—कुछ विभिन्न तत्व जो अंशतः, आदिम तथा अंशतः मंगोल नस्ल के हैं।

५—मिश्रित तत्वों का एक समुदाय।[५]

---

५ भारतीय संस्कृति में आर्यतत्त्व (शिव शेखर मिश्र) पृष्ठ ३-१०

तीसरा अध्याय

रक्त-विज्ञान

आर्य जाति—गूजर

(१)

नृ-तत्त्व शास्त्र के बाद रक्त विज्ञान के द्वारा भी जन समुदाय—जातियों को भिन्न भिन्न भागों में विभाजित करने का प्रयत्न किया गया। १८९९ ई० में मिस्टर ए० सी० जी० शटक ने घोड़े के खून में एक बूंद मनुष्य के रक्त रस सेरम को मिलादी, उसका परिणाम यह हुआ कि घोड़े का खून गोन्द की शक्ल का होगया। उन्हीं दिनों कुछ मनुष्यों के शरीर में बीमारी की हालत में भेड़, बकरी का खून चढ़ाया गया, जिसका परिणाम बड़ा खेदजनक हुआ। मनुष्यों का रक्त जमने लगा और रक्त सचालन क्रिया बन्द होने से उन सबकी मृत्यु होगई। १९०० में लैण्ड स्टीनर के अन्वेषण से सिद्ध हुआ कि कुछ मनुष्यों का रक्त (सिरम) यदि दूसरे मनुष्यों के रक्त में मिलाया जाय तो कुछ देर में गोन्द की तरह जम जाता है। लेकिन कुछ मनुष्यों के रक्त में मिलाने से बिल्कुल ठीक अवस्था रहती है। इस खोज के परिणामस्वरूप एक मनुष्य का रक्त दूसरे मनुष्य के शरीर में चढ़ाने जाने की प्रथा सुविधाजनक हो गई। लैण्ड स्टीनर ने १९०१ में मनुष्य के रक्त को तीन प्रकार से विभाजित किया। १९०७ में जेंकी ने चौथे प्रकार के रक्त को ढूंढ निकाला। यह रक्त की किस्म क्रमश: ओ, ए, बी और ए बी, कहलाती है। रक्त विज्ञान से बहुत बड़ा लाभ है। द्वितीय महायुद्ध से रक्त बैंक स्थापित होगये, जहां कोई भी स्वस्थ व्यक्ति अपना रक्त दान कर सकता है। यह रक्त उनकी किस्म के अनुसार छांट लिया जाता है और फिर समर क्षेत्र के अस्पतालों तथा अन्य अस्पतालों में भेज दिया जाता है और आवश्यकतानुसार चढ़ा दिया जाता है। रक्त विज्ञान से इसके द्वारा बीमारियों का इलाज, पितृत्व की पहिचान तथा अपराधियों के अपराध सिद्ध करने में प्रयोग किया जाता है। इससे यह भी पता लगाया जाता है कि किस नर-पशु का किसी

जाति मे किस प्रकार प्रवेश हुआ। रक्त विज्ञान से जो भी सिद्धान्त निकाले जाते हैं, वे नृ तत्त्व विज्ञान द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों से अधिक प्रभावित हुए हैं। इसका कारण यह है कि मनुष्यों के शरीर के रक्त मे जो भेद है, उनका कारण जन-परम्परा है। वातावरण का प्रभाव उस पर बिल्कुल नहीं है। मनुष्य-समुदाय मे चारों प्रकार के रक्त का किस प्रकार किस अनुपात से वितरण हुआ है, यह आसान सूत्रों द्वारा निकाल लिया जाता है। इसके सही आकड़े उसी अवस्था मे उपलब्ध किये जा सकते है, जब एक ही स्थान के रहने वालों मे से कई व्यक्तियों की रक्त परीक्षा की जाय।

(२)

डाक्टर मजुमदार ने अपनी पुस्तक "रेसेज एण्ड कलचर इन इन्डिया" में रक्त-विज्ञान के सम्बन्ध में कई प्रयोगो का वर्णन किया है। १९१९ ई० मे डाक्टर हर्जफेल्ड ने कई देशों और जातियों के रक्त की परीक्षा की और उसे सब मे 'ओ' रक्त का बाहुल्य मिला। अमेरिकन इन्डियन १०० (शत प्रतिशत) ओ रक्त के थे। इनमे ए और बी रक्त बिल्कुल नहीं था। आईसिस जाति के लोगों मे ए, ओ रक्त का बाहुल्य था और ओ रक्त उनमें नहीं था। इसी प्रकार गेट्स ने इस्कीमो जाति के रक्त की जाँच की, उनमे भी ओ रक्त अधिक मिला। लेकिन जिन जातियों मे गौर वर्ण वाली जातियो का मिश्रण था, उनका रक्त ओ और ए प्रकार का था। आस्ट्रेलिया निवासियों का रक्त ओ तथा ए प्रकार का है। इससे यह सिद्ध होता है कि अमेरिका, आस्ट्रेलिया के आदि निवासियों में अन्य जातियों के सम्मिश्रण से ए और ओ रक्त का बाहुल्य है और आदिम जातियो मे बी रक्त नहीं है। अन्य जातियों में भी जो आदिम जातियों तथा अन्य जाति के मिश्रण से पैदा हुई है, बी रक्त बहुत कम पाया जाता है, जो मिश्रण के कारण ही है।

भारतवर्ष की जातियों मे अधिकतर 'बी' रक्त मिलता है। उत्तरी भारत की हिन्दू जाति की हर्जफेल्ड ने रक्त परीक्षा की और उसे ४१ फीसदी बी रक्त मिला। दक्षिण भारत की हिन्दू जातियों की रक्त परीक्षा

थेस और थेरहोफ ने की और उन्ह ३१ ६ और मलाने और तहरी को ३७ २ फीसदी बी रक्त मिला। इस बी रक्त की दन सब भारतवर्ष की जातियों की है और उसकी उत्पत्ति भारतवर्ष की है।

बाहुल्य है और गौर वर्ण की जातियां एक ही शाखा की हैं। आसाम, बर्मा, तिब्बत इन तीनों प्रान्तों में बी रक्त की कमी है, क्योंकि वहां आर्य जाति नहीं है।

(४)

मैक्फरलेन साहिब ने भारत के मनुष्यों में भी रक्त के वितरण की खोज की है। उनका कहना है कि सहस्त्रों वर्षों से बी रक्त भारत में है। सम्भवतः यहां के आदिम निवासियों के रक्त में यह सबसे पहिले पाया गया है। उत्तर पूर्वीय भारत में जो आदि निवासी भारत में रहते हैं, उनमें अब तक बी रक्त का बाहुल्य है, जो कबीले जातियों में परिवर्तित हो रहे हैं, उनमें भी बी रक्त अधिक है। मिश्रित जातियों में भी इस रक्त का बाहुल्य है। लेकिन पनियम, थल्लामी और कोल्यक, नागा और भोलो में बी रक्त का अनुपात कम है। डाक्टर मजुमदार ने अपनी पुस्तक 'फोरच्यून आफ प्रीमिटिव ट्राइब्स" में पृष्ठ १८७ पर लिखा है कि भिन्न भिन्न छोटी जातियों में बी और ए रक्त का बाहुल्य है। भातृ, करवाल, डोम जातियों में इसकी प्रधानता है, किन्तु बी रक्त भारत की समस्त जातियों में है। नीची जाति डोम आदि में ओ रक्त है। ए रक्त बहुत कम है। उत्तरी भारत की सैनिक जातियां राजपूत, जाट, गूजर जातियों में रक्त की इतनी साम्यता है कि इनमें अन्तर नहीं किया जा सकता। अभी रक्त विज्ञान के सम्बन्ध में खोज जारी है, किन्तु इतना बिना सन्देह के स्वीकार है कि उत्तरी भारत के आर्यों के रक्त में इतनी अधिक साम्यता है कि जिससे उनका एक वंशोत्पन्न होना निश्चित है।[1]

आजकल के महत्वपूर्ण नृ-तत्त्व शास्त्र एवं रक्त विज्ञान द्वारा हम इस परिणाम पर पहुँचे हैं कि भारत में आर्य जातियों का प्रतिनिधित्व बहुत ही थोड़ी सी जातियां करती हैं और नृ तत्व शास्त्र के अनुसार रूप, रंग, चेहरा, आकृति, नासिका तथा सिर आदि के माप्क आंकड़ों एवं रक्त-विज्ञान के अनुसार गुर्जर सही आर्य हैं तथा विदेशी और अनार्य जाति होने की जो धारणा इनके सम्बन्ध में की जाती है वह सब प्रमाण रहित एवं निराधार हैं।

१—संयुक्त प्रान्त की अपराधी जातियां (प्रकाश नरायण सक्सेना)

चौथा अध्याय

भाषा-विज्ञान

आर्य भाषाओं के साथ गुर्जरों की भाषा एवं गूजरी बोली का सम्बन्ध

नृ-वंश विज्ञान एवं रक्त विज्ञान के बाद भाषा भी एक ऐसा कसौटी है, जो आर्य और आर्येतर जातियों का अलग-अलग जाति पर निर्णय करती है। प्रारम्भिक काल से वर्तमान समय तक गुर्जर अथवा गूजर जाति की—चाहे वे देश के किसी भी भाग में बसे हुए हों और चाहे किसी धर्म और विभिन्न किसी भी भाषा भाषी प्रान्त से सम्बन्धित हों—एक निश्चित आर्य भाषा से विकसित बोली है, जिसे ये गूजरी कहते हैं। इस गूजरी भाषा का प्रारम्भिक विकास गुर्जरों के प्रारम्भिक आबू पर्वत के आसपास के वर्तमान राजस्थान प्रान्त तथा उससे मिले हुए गुजरात एवं मालवा से हुआ और गूजरों की प्राचीन आबादी, उनके राज्य भी प्रारम्भ में इन्हीं स्थानों पर थे। गुर्जरों की आबादी के साथ उनकी बस्तियों में यह भाषा समान रूप से फैलती गई। राज्यों के उत्कर्ष काल में जिस भाषा को उन्होंने अपने नाम के साथ गहरा दिया और आज तक जो उनकी खास बोली है, उसका उद्गम संस्कृत भाषा की शाखाओं में है, जो आर्यों की मुख्य भाषा है। नृ-वंश विज्ञान की भांति भाषा विज्ञान जातियों की आधारशिला के निर्णय में एक सीमा तक बहुत अधिक सहायक सिद्ध हो चुका है। भाषा की उत्पत्ति और उसका विकास प्रारम्भ में संघ के साथ ही हुआ है, एक साथ रहने वाले जातियों ने जोकि अपने मूलस्थान पर जिस प्रमुख बोली को व्यवहार में लाते थे वही बोली कालान्तर में उनके जातीय विकास के साथ भाषा के रूप में विकसित हो गई। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि संसार भर की आर्य जाति की विभिन्न शाखाओं की उनके मूल स्थान पर एक बोली रही होगी जिसने कालान्तर में आर्य भाषा का रूप ग्रहण किया। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है एवं समाज में रहते हुए उसके लिए विचार-विनिमय का माध्यम बोली के रूप में ही सबसे

पहले व्यवहार में लाया गया था और भाषा की व्याख्या भी उसी के अनुसार कर सकते हैं। "भाषा निश्चित प्रयत्न के फलस्वरूप वह सार्थक ध्वनि-समष्टि है, जिसका विश्लेषण और अध्ययन हो सके।"[1] इस भाषा के साथ जाति का घनिष्ठ सम्बन्ध होना स्वाभाविक है। आर्य भाषा—आर्यों की मूल स्थली—मध्य एशिया की देन है और वहीं से पूर्व पश्चिम सब तरफ जिधर को आर्य लोग बढ़ते चले गये—इस आर्य भाषा का भी विस्तार होता चला गया।

भारत में आने वाले आर्यदल की भाषा संस्कृत एवं प्राकृत थी। संसार की सभी सभ्य आर्य जातियों की भाषा के प्रारम्भिक शब्दों में एक साम्य इसको स्पष्ट करता है। संस्कृत, फारसी, जर्मन, यूनानी, फ्रेंच, रूसी, लेटिन और अंग्रेजी के अनेक शब्दों में आश्चर्यजनक साम्यता है। इन शब्दों की मूल धातु, उनके अर्थ, उनके उच्चारण में इतना साम्य है कि भारतीय और योरपियन भाषाएं एक ही परम्परा को प्रगट करती हैं। वैदिक संस्कृत और पारसी लोगों के पवित्र ग्रन्थ अवस्था से यह समानता स्पष्ट होजाती है। निम्न तालिका हमारे इस विषय को और भी अधिक स्पष्ट करती है।[2]

संस्कृत	अंग्रेजी	लेटिन	अवस्ता	यूनानी
पितृ	फादर	पेटर	पिदर	पेटर
मातृ	मदर	मेटर	मादर	मेटर
भ्रातृ	ब्रादर	फ्रेटर	भ्रातर	फ्रेटर
द्वार	डोर	फोरेस	द्वार	थुरा
गौ	काऊ	वास	गौस	वौस

इसी भाषा-विज्ञान के आधार पर विद्वानों ने यह निर्णय किया कि आर्यों ने मध्य एशिया से ईसा के लगभग ३५०० वर्ष पूर्व यहां आना प्रारम्भ किया और लगातार आते रहे।[3] ऐतिहासिक स्रोतों से यह भी पता चलता है कि आवागमन का यह सिलसिला मध्य एशिया से ईसा

[1] भाषा विज्ञान (डा० धीरेन्द्र नाथ वर्मा एम०ए०, डी० लिट०) पृष्ठ २

[2] भारतवर्ष का इतिहास (महावीर अधिकारी) पृष्ठ ४०

[3] प्राचीन भारतीय परम्परा और इतिहास (रांगेय राघव) पृष्ठ १२४

की पांचवीं छटी शताब्दि तक भी श्वेतहूणों के आगमन काल तक विशेष रूप से बना रहा और यही मान्यता—जो नृतत्व शास्त्र और भाषा-विज्ञान से पूरी होती है, यहां की आर्यजाति में आने वालों को आत्मसात करती गई। इतिहास द्वारा यह भी प्रमाणित है कि मध्य एशिया में तीयाचर्चेन के काठों तक तुखारी आदि आर्य भाषायें तुर्कों के आने तक बनी हुई थी और इससे स्पष्ट है कि आर्यों का आदिम घर मध्य एशिया ही था और भारत के उस युग में आर्य पश्चिमी निचले से ही होकर यहां आये, जो कि घुमक्कड़ चरवाहों का जीवन व्यतीत करते थे और उनका घाड़-घड़ की विस्तृत चरागाहों की तरफ भटक आना स्वाभाविक था।[१] भाषा-विज्ञान से यह सिद्ध है कि आर्य भाषाओं का मूल स्थान एक ही है और इन भाषाओं के बोलने वाले एक ही स्थान पर रहते थे। चरागाहों की कमी, जंगलों का घट जाना, आबादी का बढ़ना, परस्पर के संघर्ष से वे एक दूसरे से अलग हो गए। लेकिन प्रारम्भिक एकता की प्रतीक मूल भाषा को साथ लेते चले गये। जाति और भाषा का सम्मिश्रण साथ-साथ होता है[२] और यही सिद्धान्त इन आर्य जातियों पर भी लागू होता चला गया। भारतवर्ष में अन्य धन-धान्य सम्बन्धी ऐश्वर्यों के साथ ही साथ विभिन्न-श्रेणियों की भाषाओं तथा बोलियों का भी बाहुल्य है। जिन्हें पवित्र इस भूमि—इसके विस्तृत भूभाग पर भिन्न भिन्न जातियाँ विभिन्न स्थानों पर नित्यप्रति व्यवहार में ला रही हैं। सरजार्ज ग्रियर्सन ने हाल ही में एक प्रकाशन में १९०१ की ब्रिटिश भारतीय जनगणना के आधार पर, जिसमें उनका एक अध्याय भारतीय भाषाओं पर है, पूर्ण संख्या की गणना १४७ की है, जिसमें दो अरब की भाषा सामी और हामी भी सम्मिलित हैं। उस विद्वान ने सीलोन की भाषाओं (सिंघली तथा आदिम द्वीप निवासी वेड्डो की भाषा) को तथा देश के अस्थायी यात्रियों की भाषाओं का बहिष्कार कर दिया है। मलय भाषा-परिवार की उन्होंने केवल दो (सेलग तथा निकोबारी) को शामिल किया है तथा कोंकणी को मराठी भाषा की एक

[१] भारत भूमि और उसके निवासी (जयचन्द्र विद्यालंकार) पृष्ठ १६६

[२] भाषा विज्ञान (श्याम सुन्दर लाल बी० ए०) पृष्ठ ३०६

बोली बनाया है।[१] लेकिन इनमें भारतीय-आर्य भाषाओं का परिवार सबमें उच्च और बड़ा है।

इससे पूर्व भारत और योरोपियन (भारोपीय भाषा) भाषा परिवार के सम्बन्ध में थोड़ा सा दिग्दर्शन कर देना आवश्यक है, जिससे विभिन्न भाषा सम्बन्धी जातीय श्रंखला का मूलस्रोत स्पष्टतया प्रकट हो जाय। यह भारोपीय भाषा परिवार हमारे देश के अधिकांश स्थलों में ही नहीं, अपितु ईरान, आर्मिनिया, योरुप, अमेरिका, अफ्रिका के दक्षिणी पश्चिमी प्रदेशों तथा आस्ट्रेलिया महाद्वीप में बोली जाती है। इनमें दस शाखा हैं।

१ हिन्द ईरानी अथवा आर्य जिसके तीन समुदाय हैं।

(अ) इंडिक भारतीय अथवा भारतीय आर्य समुदाय—जिसमें वैदिक और लौकिक संस्कृत, प्रारम्भिक शिलालेखों की प्राचीन प्राकृत भाषाएं पाली, प्राचीन अवशिष्ट लेखों तथा वर्तमान साहित्य की अन्य प्राकृतिक भाषाएं तथा अपभ्रंश, भारत की आधुनिक देशी आर्य भाषायें, एकु अथवा प्राचीन सिंघली तथा आधुनिक सिंघली और आर्मिनिया, सीरिया, टर्की तथा योरुप की हबूड़ी भाषायें।

(ब) दरदी अथवा पिशाच भाषाएं इनका क्षेत्र भारत की पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश है। इसकी तीन उपशाखायें हैं।

(क) काफिर बर्गा-बस गली, वई-अला, पसी-वेरी अथवा मेसुन, कलसँ, गवर-वती और पसँट।

(ख) खोवार अथवा चित्राली और

(ग) सीणा-सीणा विशिष्ठ (७ बोलियां) को हिन्दुस्तानी (३ बोलियां) तथा काश्मीरी

(स) ईरानी शाखा, जिसमें अवेस्ता तथा प्राचीन फारसी से आरम्भ करके और काले सागर से मध्य एशिया तक विस्तृत बहुत सी प्राचीन तथा आधुनिक प्रतिनिधि भाषायें हैं। विभिन्न ईरानी भाषाओं का सम्बन्ध निम्नलिखित विभाजन में प्रतीत होता है।

---

[१] दी लैंग्वेज आफ इन्डिया एन्ड दी लैंग्वेज आफ १९०१, एशियाटिक सोसायटी क्वार्टर्ली रिव्यू प्रेस १९०४, लैंगवेस्टिक सर्वे आफ इन्डिया, सामान्य भाषा विज्ञान पृष्ठ २२५
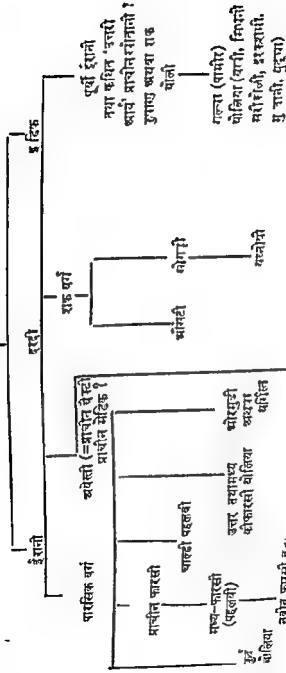
(डा० सुनीति कुमार चटर्जी—की ओरिजिन एण्ड डेवेलप-
मेंट आफ दी बंगाली लैंगुवेज-भाग प्रथम-भूमिका)

नोट —पारसिक की अपेक्षा अन्य उप समुदाय प्रायः 'अपारसीक' के अर्थ में 'मेडिक' के अन्तर्गत विभक्त किये जाते हैं ।

२ आर्मीनी शाखा
३ बाल्टी-स्लावी शाखा
४ अल्बानी शाखा
५ यूनानी शाखा
६ इटाली शाखा
७ केल्टी शाखा
८ जर्मनी अथवा टयूटानी शाखा
९ तोखारी १० हित्ती

इन दस भाषाओं के अतिरिक्त योरोप तथा एशिया में और भी भाषायें थीं, जिनका अब लोप हो गया है। चीनी तुर्किस्तान में अनुसन्धान द्वारा भारतीय ब्राह्मी लिपी में कुची, तोखारी भाषा मिली हैं, जो तारिम घाटी में प्रचलित थी। इसी प्रकार से एशिया-माइनर की फ्रिजी भाषा, इटली की लिंगुरी, ए० पी० जी०, मसैंपी तथा वेनेटी भाषायें, ड्रैमी और ग्रेशी भाषायें हैं।*

भारतीय आर्य शाखा की विभिन्न भाषाओं और बोलियों का पारस्परिक सम्बन्ध आगे के पृष्ठ 'भारतवर्ष की आर्य भाषाओं के विकास की सूचि' से प्रकट होजायेगा, जो आर्य भाषाओं के विकास की साधारण धाराओं की ओर संकेत करती हैं। इसका आधार भी सर जान ग्रियर्सन की 'लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इन्डिया है'।

भारतीय आर्य शाखाओं में हम सबसे प्रथम दरदी भाषा पाते हैं। दरद का अर्थ पर्वत और पहाड़ है। काश्मीर के पास के स्थान का नाम भी दरद् प्रान्त है। दरदी भाषा का क्षेत्र पामीर और पश्चिमोत्तर पंजाब के बीच का है, यह पैशाची का रूप है और पैशाची प्राकृतिक का रूप है। पूर्वी पंजाबी पर भी इसका प्रभाव है। आधुनिक आर्य भाषा में उत्तर भारत की सभी भाषाऐं आजाती हैं। गुजराती और राजस्थानी का मूल भाषा विज्ञान के अनुसार नागरी में है। राजस्थान की बोली मारवाड़ी, जयपुरी, मेवाती, गूजरी हैं। खानदेशी भी राजस्थानी की

* भारतीय संस्कृति में आर्यतत्व (शिव शेखर मिश्र एम० ए०, भारतीय संस्कृति तथा संस्कृत प्राच्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय) पृष्ठ १५

देन है। प्राय सभी पहाड़ी बोलियों पर राजस्थानी का ऐतिहासिक यथेष्ठ प्रभाव है।[८] राजस्थानी समुदाय की बोलियां लगभग १।। करोड जन मख्या द्वारा बोली जाती हैं और ऐसा प्रतीत होता है कि गुजराती के साथ मिश्रित होकर य भारतीय आर्य परिवार की एक पृथक शाखा बनाती हैं, जिनका आधार प्राचीन युग की भारतीय आर्यों की बोली अथवा बोलियां हैं, जो मालवा तथा गुजरात में प्रचलित हैं तथा मध्यदेश की शौरसेनी नामक समीपवर्ती बोली के सम्पर्क में आकर परिष्कृत होगई हैं। ये बोलियां ४०० ई० में कुछ सीमा तक गुर्जर (गूजर) जाति की भाषा (सम्भवत दरदी की उत्पत्ति) द्वारा प्रभावित हुई थी यह (गुर्जर) जाति उत्तरी पश्चिमी प्रदेशों से आकर राजपूताना तथा गुजरात में निवास करके यहा शासन करने लगी।[९]

हम पहले ही लिख चुके हैं कि भाषा का जाति के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है और इसका विनिमय स्वाभाविक है, किन्तु यह सम्पत्ति विशेष किसी की नहीं मानी जानी चाहिये, परन्तु बोलने वालों का महत्वपूर्ण होना बोली को महत्वपूर्ण बना देता है। शासक जातियों की बोली राजनैतिक परिस्थिति से भाषा के क्षेत्र को बहुत आगे बढा ले जाती हैं। इतिहास में गुर्जरों के अभ्युदय का पता भाषा के विकास से चलता है। दरदी का प्रभाव पूर्वी पजाबी पर है। राजस्थानी भाषा का महत्वपूर्ण अंश गूजरी भाषा है और खानदेश, गुजरात, मालवा, मारवाड के परस्पर सम्बन्ध से इनकी खास साम्यता है और गूजरों की खास बोली गूजरी के सम्बन्ध में श्री जयचन्द्र विद्यालंकार लिखते हैं कि "राजस्थानी का एक रूप गूजरी जो राजस्थान से बाहर भी दूर दूर तक जहां कहीं गूजरों की बस्ती हैं, बोली जाती है। इन बस्तियों का सिलसिला मेवात (अलवर) से उत्तर की तरफ जमुना के दोनों ओर हिमालय के चरणों तक चला गया है और वहा से हिमालय की अधित्यका से अन्दर ही अन्दर स्वात नदी तक जा पहुचा है। सभी जगह फिरन्दर गूजर अपनी गूजरी बोली, जो मेवाती और जमुना काठे की बोली का मिश्रण है, बोलते हैं।

[८] भाषा विज्ञान (डा० धीरेन्द्र नाथ वर्मा) पृष्ठ १२६

[९] भारतीय संस्कृति में आर्यतत्व (शिव शकर मिश्र) पृष्ठ २१-२२

स्वात व काश्मीर के पहाड़ो मे गाय भैंस चराने वाले जो लोग हैं, वे गूजर हैं और जो भेड़ बकरी चराते हैं, वे आजिड़-हिन्द मैं अजड़ी कहलाते हैं। मध्यकालीन भारतवर्ष के इतिहास में गूजर या गुर्जर एक प्रसिद्ध जाति रही है। वे कौन थे, कहां से आये, इस प्रश्न पर बड़ा विवाद है। भाषा विषयक स्थिति से इतना निश्चित है, वे पूर्वी राजस्थान से उत्तर पश्चिम की ओर जरूर फैले हैं।"[१०]

गूजरों की महत्वपूर्ण भाषा गूजरी के सम्बन्ध में सर डेन्जिल इबटसन के० सी० एस० आई० लिखते हैं कि "पंजाब मे गूजर पहाड़ों की घाटियों, ढलानों एवं नदियों के किनारे श्रेणीबद्ध मिलते हैं। उनकी बड़ी आबादी झेलम, हसन् अब्दाल के पास हजारा जिले में है। दरदू जिलों मे (चिलास, कोहली और पालास) जो कि सिन्ध के पूर्व में हैं, गूजरों की संख्या विशेष है और सिन्ध से लगे हुये पश्चिम इलाकों में वे बहुत हैं। गुजरात की आबादी में उनका महत्वपूर्ण राजनैतिक स्थान है। तमाम साल्ट रेंज पठार में और पूर्वी पहाड़ियों में गूजर सब से प्राचीन हैं। पेशावर जिले, तमाम पहाड़ी इलाके, जुम्बल, जम्मू और हजारा में, दूर दूर तक फैले हुये कबायली स्वतन्त्र इलाके मे, जो स्वात-दरिया पेशावर तक चला गया है, असली गूजर हैं और बड़े २ पशु पालक हैं। उनकी बोलचाल की भाषा पंजाबी और पश्तो से बिल्कुल भिन्न 'हिन्दी' भाषा है, जो नरम जुबान है।[११]

यही भाषा पूंछ, ऐबटाबाद मे बोली जाती है। इसे यहां के गूजर हिन्दी की नरम भाषा गूजरी कहते हैं, जिसके नमूने कुछ निम्न प्रकार हैं, जो सरहद व काश्मीर व उपरी पंजाब, सीमाप्रान्त व स्वतन्त्र इलाकों मे, अफगानिस्तान तथा गूजरों की उत्तर पश्चिमी भारत के गूजरों में साम्यता प्रकट करती है। "थारा नाम क्या है ? तुम किन गया था,

[१०] भारत भूमि और उसके निवासी पृष्ट २४६

[११] कास्टस एन्ड ट्राइब्स आफ दी पिपुल (पंजाब कास्टस) १८८३ की पंजाब की मनुष्य गणना। देखो सर डेन्जिल इबटसन् के० सी० एस० आई० पृष्ट १९३ (गूजर)

म्हारो बार दादा दिल्ली से आयो थो, म्हारे गाव अन्दर पाँच सौ घर गूजरा क हैं, फिर गियों ने सिस्त मार दिया, हम राजपूत हैं' 'म्हारो वड़ा का वड़ा बड़ो बहादुर था, म्हारा बाप दादा गूजरी बोली बोलता आदि आदि।'[१०]

• काश्मीर के गूजरा के ग्राम्यगीतों और गुजरात के ग्राम्यगीतों क सम्बन्ध म गुजराती भाषा के महान पण्डित एव प्रसिद्ध इतिहासकार महामहिम राज्यपाल श्रीयुत् के० एम० मुन्शी का निम्न वक्तव्य महत्त्वपूर्ण है, जो उन्होंन अपन काश्मीर प्रवास में (१९४६) में प्रिंसपल आराम शर्मा एव श्रीयुत् प्रवासी क साथ वर्णन किया था। "काश्मीरी गूजरों क ग्राम्यगीत लोक गीत बिल्कुल हमारे गुजरात के ग्राम्यगीतों की तरह हैं। मैं गूजरों को प्राय मनोरंजन तथा जानकारी के लिए बुला लेता था और उनके सगीत का आनद लिया करता था।" माननीय मुन्शी की बात और खोज सुन कर श्री प्रवासी लिखते हैं कि 'म बड़ा आह्लादित हुआ। किस प्रकार गूजर सुदूर प्रान्तों में दूर दूर तक फैलते चले गय और अपन नाम स न केवल गुजरात और गुजरा वाला—पजाब में बसाये बल्कि दक्षिण के सुदूर गुजरात को अपने नाम स प्रसिद्धि दी, जिससे मुझे देश में होन वाले जातीय एकीकरण की सुन्दर भावना और दक्षता का आभास मिलता है। परन्तु मुझे इस बात की कल्पना भी नहीं थी और न कभी इस बात का खयाल ही पैदा हुआ कि सुदूर जम्मू व काश्मीर के गूर्जर (गूजर) जो सब के सब मुसलमान हो गये हैं, किस प्रकार गुजरात व इधर के गूजरों से समानता रखते हैं। यह एकता मेरी समझ में ज्ञान सम्बन्धी सास्कृतिक एकता है। काश्मीर क गूजरों ने लोकगीत और गुजरात के गीत तथा गूजरों के लोक गीतों की समानता इस विशाल मातृभूमि पर फैले हुए सुदूर विभिन्न भागों क व्यक्तियों म धारण की हुई सास्कृतिक एकता को प्रकट करती है।"[११]

[१०] शाहाना गूजर (खान बहादुर मोहम्मद अब्दुल मलिक) पृष्ठ २४९

[११] २१ अप्रल १९५१ के आरगनाइजर में प्रकाशित श्रीयुत प्रवासी का काश्मीर समस्या पर अग्रजी लख जिसमें काश्मीर के गूजर नता की सरदार पटल से भेंट का वर्णन है। यह लख और गूजर म अग्रजी हिन्दी दोनो भाषाओं म मई १९५१ ई० म प्रकाशित हो चुका है।

हमारी समझ में गूजर जाति में नितान्त साम्यता है और उनमें एक निश्चित प्रदेश में रहते समय जो संस्कृति एवं भाषा की एकता समान रूप से प्रचलित थी, उसी परम्परा को वे जहां कहीं भी हैं एक रूप में बनाये हुए हैं और यह एकता उनकी जातीय एकता के सिवाय कुछ नहीं है। हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, जैन मतावलम्बी सभी गूजरों में गोत्र सम्बन्धी, भाषा सम्बन्धी, लोकगीत सम्बन्धी एवं आचार विचार तथा सबसे अधिक नस्ल सम्बन्धी एकता जातीय एकीकरण के सिवाय क्या हो सकती है? भाषा सम्बन्धी अनेक उदाहरण देने के बाद भी गुजरात का गरबा-रास[१९] तथा ब्रज का विवाह नृत्य एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश के लोकगीतों के साथ होने वाले ग्राम नृत्यों जो—अनेक सामाजिक समारोहों में गुर्जर परिवारों में प्रदर्शित होते हैं—एक संस्कृति से परिपूर्ण जातीय महत्व को प्रदर्शित करती है। 'बापू' शब्द पिता के लिये और 'दादा' अपने बुजुर्ग के लिये उत्तर से दक्षिण तक के गूजरों की समान रूप से पाई जाने वाली बोली है। यह एक गूजर जाति के ठोस एवं संगठित आर्य जाति के प्राचीन एकीकरण का खास प्रमाण है कि जिससे उन्होंने न तो देश परिवर्तन से, न धर्म परिवर्तन से, न राज परिवर्तन से अपनी एकीकरण की भावना को नष्ट होने दिया है।

---

[१९] "गुजरात का गरबा नृत्य पश्चिमी भारत का प्रतिनिधि-नृत्य है। इसके लिये विशेष अवसर की आवश्यकता नहीं। कुमारी, विवाहिता सभी इसको नाच सकती हैं। इसके भी अनेक रूप हैं। सिर पर कलस रख कर, हाथ में डन्डे लेकर या केवल तालियों की ध्वनि पर यह नाच नाचा जाता है। इसमें एक मण्डल में खड़ी स्त्रियां गीतों के सहारे नृत्य प्रारम्भ करती हैं और दो-दो की कड़ी में छोटे-छोटे डन्डों या हाथ से एक-दूसरे की ताल देती हुई चमत्कार घूमती रहती हैं। गुजरात के गरबा, ब्रज और राजस्थान के रास से मिलता जुलता तालियों का नृत्य के कोटी कली है। इसमें मण्डलाकार रीति से-पहले एक लड़की गीत उठाती है, बाद में सारा मण्डल तालियों की ताल पर गीत गाकर नृत्य करता जाता है। देखिये "हिन्दुस्तान साप्ताहिक लोक साहित्य विशेषांक का भारत में लोक नृत्यों की राष्ट्रव्यापी परम्परा जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी पृष्ठ १६

२० लाख से ऊपर मुसलिम संस्कृति में पले हुये गुर्जरों (गूजरों) में न भाषा सम्बन्धी परिवर्तन हुआ, न भेष सम्बन्धी और न अपने—अपने रक्त वंश की पवित्रता की निशानी—गोत्रों की भूल हुई है। यही नहीं वे आज दूसरी परिस्थिति में रहते हुए भी भारत देश को अपनी मातृभूमि मानते हैं और उस पर गर्व करते हैं और यहां के हिन्दू गूजरों को अपना भाई मानते हैं। इस भाषा और रक्त वंश की पवित्रता के कारण और भारतीय आर्य संस्कृति के व्यापक प्रभाव के कारण काश्मीर के १० लाख गूजर बिना किसी शर्त के, बिना किसी सौदे के, बिना किसी लोभ लालच के निःस्वार्थ भाव से भारत के साथ अपनी सत्ता विलीन किये हुए हैं।

विचार विनिमय का माध्यम बोली है और सांस्कृतिक आर्य जाति के चरित्र ने भाषा क्षेत्र में गूजरों को एक करके उनके राजनैतिक दृष्टिकोण को भी बहुत ऊंचा उठा दिया है, उन पर आज तक कोई स्थायी प्रभाव आर्य चरित्र में अलग नहीं पड़ा। सुदूर प्रान्तों की बोली परखो, पंजाबी दक्षिण की महाराष्ट्री इन्होंने उन प्रान्तों में बसते हुए भी नहीं अपनाई। शोलापुर, खानदेश, साबन्तवाड़ी, थाना और रत्नागिरी एवं मैसूर तथा हैदराबाद दक्षिण के गूजर इसके खास उदाहरण हैं। बानी गूजरों में—जो अत्यन्त सभ्य एवं सुसस्कृत बम्बई प्रान्त की जाति है—प्रचलित गूजरी भाषा इसका उदाहरण है। १२०० वर्ष में जो आर्य भाषा का विकास हुआ है उसमें गूजरी का विशेष महत्व है। भड़ौंच, भीनमाल के प्रारम्भिक गुर्जर राजाओं ने सौरसैनी के आधार पर जिस भाषा का निर्माण किया था, गुजराती भाषा वही है, जिसका वहां-की गुर्जरी से पूर्वी की मराठी भाषा से कोई सम्बन्ध नहीं है। भड़ौंच के गुर्जरों का हाल लिखते हुए इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान चिन्तामणि विनायक वैद्य लिखते हैं कि 'गुजरात में यह निश्चित है कि गुर्जर (गूजर) लोग अपनी प्रभावशाली भाषा अपने नाम के साथ इस देश में छोड़ गये। इनकी भाषा उत्तरी गुजरानी भाषा थी, जिसका सम्बन्ध मराठी की अपेक्षा सौरसैनी से अधिक था और सौरसैनी भाषा उत्तर भारत की भाषा थी, जिसे उत्तर भारत के गुर्जर (गूजर) अपने साथ लाये। प्रारम्भ से ही दक्षिण भारत में मराठी भाषा का प्राधान्य था, क्योंकि त्रिकूटों के शासन काल में

मराठी भाषा ही गुजरात में प्रसिद्ध थी और जिस प्रकार बौद्धगण अपने धार्मिक ग्रन्थों में पाली भाषा का प्रयोग करते हैं, जैन लोग महाराष्ट्रीय भाषा (मराठी) का अपने प्रवचन एवं धार्मिक ग्रन्थों में प्रयोग करते हैं, जो कि इस देश की प्रजा की आम भाषा थी। वर्तमान गुजराती भाषा गुर्जर राजाओं के साथ यहाँ पनपी और उनके साथ आई और राज कार्यों में निरन्तर प्रयोग में आते रहने से गुजरात की राज भाषा कहलाई। भड़ौंच के गूजर राजाओं के प्रारम्भिक दानपत्रों से पता चलता है कि मुख्य लेखनशैली दक्षिण की प्रचलित भाषा की थी और राजाओं तथा राज्य अधिकारियों के हस्ताक्षर उत्तरीय सौरसेनी भाषा में हैं। यह गूजर राजवंश का उत्तर भारत से सम्बन्ध प्रकट करती है और गूजरों की आर्यावर्त की वैदिक कालीन आर्य जाति प्रकट करती है जिसको ब्राह्मणवाद का पूरा सहारा था। इस गुर्जर राजाओं की देन गुजराती भाषा का पूर्ण निर्माणकाल ८०० ई० तक का है।[11]

अभी हाल में काश्मीर के ८ १० लाख गूजरों की प्रतिनिधि सभा में जम्मू कान्फ्रेन्स में भी यही निर्णय करके सरकार के पास आवेदन पत्र दिया है और सरकार से अनुरोध तथा निवेदन किया है कि हम सब गूजरों की मातृभाषा गूजरी है और हमारी शिक्षा का माध्यम यही गूजरी भाषा रक्खी जाय।[12]

भाषा विज्ञान सम्बन्धी सम्पूर्ण अध्ययन और विवेचना से पूर्ण रूप से यह स्पष्ट होजाता है कि 'गूजरी' गूजरों की खास बोली है और

---

[11] मेडिवल हिन्दू इन्डिया (सी० वी० वैद्य) गुर्जर आफ भड़ौंच प्रथम भाग ६ पृष्ठ ३५५

[12] देखो नवभारत टाईम्स देहली २७ मार्च १९५४ टाईम्स आफ इन्डिया न्यूज सर्विस का समाचार शीर्षक 'गूजरी' शिक्षा का माध्यम बनाया जाय। काश्मीर के गुजरों की माग। जम्मू २६ मार्च काश्मीर के आठ लाख गुजरों के ५०० प्रतिनिधियों के सम्मेलन में प्रस्ताव पास करके सरकार से अनुरोध किया गया कि गूजरों को उनकी मातृभाषा गूजरी के माध्यम से शिक्षा दी जाय।

यह बोली आर्य भाषा की देन है। गुजराती भाषा गुर्जरों का खास प्रचलित की हुई भाषा है, जिसे उन्होंने अपने उत्कर्षकाल में सौरसैनी के माध्यम से बनाया। भाषा सम्बन्धी गूजरों का इतिहास यह प्रकट करता है कि यह भाषा जिसका प्रारम्भ आबू पर्वत के आसपास से लेकर—मालवा, गुजरात तक प्रारम्भ हुआ धीरे धीरे विकसित होती चली गई और जहां जहां तक गुर्जर जाति फैलती चली गई, वहां २ तक इनकी भाषा भी गूजरी बोली के रूप में पहुच गई। एक ओर जहां यह स्वतन्त्र कबायली प्रान्तों में गूजरों की भाषा है। दूसरी ओर वर्तमान पंजाब, (पाकिस्तान) सिन्ध तथा दरद् प्रान्तों स्वात, चित्राल, हजारा की पहाडियों में भी यह गूजरों की बोली है और सम्पूर्ण भारत के गूजरों की पूरब से पश्चिम, उत्तर से दक्षिण जहां भी गूजरों की आबादी है, उनकी बस्तियों में यही बोली, बोली जाती है, जो इस जाति के एकीकरण और पवित्र आर्यवंश को प्रकट करती है।

माननीय के० एम० मुन्शी महोदय ने जो अपने इतिहास में यह संकेत किया है कि आबू पर्वत के आसपास, जिसका केन्द्र भीनमाल था, एक ऐसा जाति समूह बसता था, जिसकी भाषा, लिखने का ढङ्ग, वेषभूषा सामाजिक व्यवस्था एक थी। यह वास्तव में यहां तक ठीक है कि वह जाति गूजरों के सिवाय कोई नहीं थी क्योंकि जातियों के इतिहास में इतनी अधिक भाषा, वेष सभ्यता और सामाजिक रीति रिवाजों में समानता कहीं भी नहीं पाई जाती, जितनी गूजरों में पाई जाती है और सिर्फ यही एक ऐसी जाति है जो कि मुन्शी महोदय की इस कसौटी पर खरी उतरती है कि यह जाति जहां कहीं भी जाकर बसी अपनी भाषा, वेश और चरित्र को उसी रूप में बनाये रही और गुर्जर नाम से प्रदेशों गावों, शहरों एवं स्थानों, अपनों गोत्रों तक का निर्माण किया है जो उनके मध्यकालीन भारतीय इतिहास के गौरव के अनुरूप ही है। भाषा विज्ञान भी इसी महत्व को प्रकट करता है।

प्राजुन्य, सनकादिक, काक, खरपारिक ६ जातियों के गणराज्यों का उल्लेख मिलता है, जो बहुत प्रसिद्ध थीं और पूर्वी पंजाब, राजपूताना तथा मालवा के प्रदेशों में आबाद थीं। ये करद—गणराज्य होगये थे। उनके राज्य की सीमा बहुत बड़ी हुई थी और विदेशों से भी उसके सम्बन्ध थे।

गुप्त साम्राज्य के अन्तिम काल में (४७५–४३७) हूणों के भारत पर सफल आक्रमण हुए। हूणों ने सारे मध्य एशिया और डैन्यूब से इटली तक के योरोपियन प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था। मध्य एशिया से एकायक इन्होंने गुप्त साम्राज्य पर आक्रमण किया। गर्मियों में ये मध्य एशिया के ठंडे प्रान्तों में लौट जाते और जाड़ों में दल बल सहित उत्तरीय भारत के हरे भरे मैदानों पर टूट पड़ते थे। इनकी बाढ़ निरन्तर आती रहती थी और उन्होंने बार-बार आक्रमण करके गुप्त साम्राज्य की रीढ़ तोड़ दी। इनके भारी आक्रमणों के फल स्वरूप गुप्त साम्राज्य चकनाचूर हो गया और उत्तरीय भारत तथा मालवा तक के प्रान्तों में हूणों का शासन प्रारम्भ हो गया।[१]

ईसा के २०० वर्ष पूर्व से लेकर ई० सन की पांचवी छठी शताब्दि तक भारतवर्ष में तीन बाह्य जातियों के आने का पता चलता है, जिसमें ईसा से २०० वर्ष पूर्व भारत में बाहर से आने वाली जाति—जिसका इतिहास साक्षी है—शक थे। इसके पश्चात ईसवी सन की पूर्व की पहली शताब्दि में यूची अथवा कुशान जाति भारत में आई थी। तीसरी जाति ईसवी सन् के बाद की पांचवी छठी शताब्दि के प्रारम्भ में हूणरूप भारतवर्ष में आई।[२] ईसा के १०० वर्ष पूर्व से लेकर ईसवी सन् के बाद की पांचवी शताब्दि के भारतीय इतिहास से हमारे इतिहास से सम्बन्धित गुर्जर अथवा गूजर जाति बड़े उत्कर्ष के साथ एकायक प्रकट होती है। उनके अनेक समृद्ध-शाली राज्यों का वर्णन इस काल के इतिहास में पंजाब उत्तर-पूर्वी राजपूताना एवं गुजरात, काठियावाड़ में पाया जाता है।[३] उनका राजनैतिक शक्ति का उत्कर्ष काल यह प्रकट करता है कि गुर्जर राजवंश का प्रादुर्भाव इससे भी पूर्व भारतीय इतिहास में हो चुका था, जिसका

[१] साम्राज्यों का उत्थान और पतन (डा० भगवत शरण उपाध्याय) पृष्ठ ६१

वृत्तान्त अभी तक उपलब्ध करने में इतिहास के अन्वेषक असमर्थ रहे हैं, लेकिन बाहरी आक्रमणों के कारण इतिहास के संघर्ष काल में ये लोग विशेष प्रसिद्धि प्राप्त कर गये और युद्धों द्वारा विजय प्राप्ति उनके उत्कर्ष में विशेष सहायक सिद्ध हुई।

तत्कालीन इतिहास के अध्ययन से यह प्रतीत होता है कि राजनैतिक क्रान्तियों के उलट फेर में प्राचीन क्षत्रियों ने इस नवीन परिवर्तित युग में चेतनता के प्रतीक बनकर प्राचीन वंशों के स्थान पर अपने को नये नये नामों में प्रसिद्धि देना प्रारम्भ कर दिया था और दूसरे अनेक क्षत्रिय राजवंशों के समान क्षत्रियों का नवीन गुर्जर अथवा गूजर राजवंश भी इस काल में अपनी महत्वपूर्ण स्थिति में लाभ उठाकर विकसित हो उठा था। गुर्जर राज्यवंशों का उत्कर्षमय इतिहास इस बात को प्रकट करता है कि यह वंश वीरोचित भावना से ओत प्रोत, इतिहास के नवीन युग की चेतनता का प्रतीक है। जिस काल में भारत में निरन्तर विदेशियों के हमले हो रहे थे, तो भारतीय संस्कृति के संरक्षक-क्षत्रियों (वैदिक कालीन राजन्य) को ऐसे नवीन संगठन की आवश्यकता अनुभव हुई जो वीरता एवं ओज से परिपूर्ण होते हुए भारतीय संस्कृति के उत्थान में सहायक हो और विदेशी आक्रमणकारियों से देश की रक्षा करके भारतीय संस्कृति एवं स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण बनाये रक्खे। मध्यकालीन भारत का इतिहास इस बात का प्रत्यक्ष साक्षी है।

मौर्य, गुप्त, वर्धन, गुर्जर, कर्कोटक, केशरी, वर्मा, मैत्रक, चौल, राष्ट्रकूट, चन्देल, गुहिल और पाल आदि राज्यवंश वास्तव में क्षत्रियों के वंश विशेष ही हैं, जो अलग महत्व को प्रदर्शित करने वाले राज्यशक्ति के तत्कालीन मुख्यस्रोत हैं, यह राजवंश जैसा कि इनके इतिहास से पाया जाता है, प्राचीन राजन्य (क्षत्रिय) लोगों के सिवाय कुछ नहीं है। स्थान स्थान पर नवीन धर्म, नवीन राजवंश नवीन जातियों के नाम देखकर हमारी दृष्टि चकाचौंध हो जाती है और मनु कालीन चार वर्णों की आधारशिला वाली आर्य जाति के नेताओं के—उस रहस्य को हम भूल जाते हैं, जिसके कारण अनार्यों की सत्ता नष्ट कर हमारे पूर्वजों ने विश्व भर में आर्य संस्कृति, आर्य साम्राज्य का विस्तार किया था।

पांचवा अध्याय

गुर्जर जाति सम्बन्धी एक ऐतिहासिक अध्ययन
प्राचीन एवं वर्तमान

(१)

भारत में मौर्य वंश की राज्य सत्ता के पतन के उपरान्त देश की राजनैतिक एकता छिन्न भिन्न होगई और विदेशी आक्रमण प्रारम्भ हो गये। गान्धार और उसके आसपास के प्रान्तों ने जो विद्रोह का झंडा खड़ा किया, उसका फायदा बैक्ट्रिया निवासी यूनानी जातियों ने उठाया और भारत के उत्तर पश्चिम के कई प्रदेशों पर अधिकार जमा लिया। सीरिया के बादशाह ऐन्टीओकस महान ने जो रास्ता दिखाया उसका *अनुगमन उसके दामाद डेमीट्रियस ने करते हुए पंजाब, सिन्ध पर अधिकार* कर लिया. बाहरी आक्रमणों का यह सिलसिला ईसा की पांचवीं तथा छठी शताब्दि तक चलता रहा, यूनानियों के पैर उखाड़ कर शकों ने अपनी जड़ जमाई और उनके वंशज क्षत्रपों ने विभिन्न प्रान्तों—जैसे तक्षशिला, मथुरा, मालवा एवं सौराष्ट्र—पर शासन किया। शकों को उखाड़कर यूची अथवा कुशान वंशी सम्राटों ने पहली शताब्दि के लगभग उत्तरीय भारत में अपना साम्राज्य स्थापित किया। तीसरी शताब्दि में वाकाटक और नागों ने भारत में अपने साम्राज्य स्थापित किये। भारशिव नागों ने भारत में अश्वमेधों की एक नई परम्परा कायम की और उत्तर प्रदेशों पर अपनी राजनीति और संस्कृति का प्रभाव डाला। चौथी शताब्दि के प्रारम्भ में एक व्यक्ति पुनः प्रकाश में आया, जिसने उत्तर भारत में राजनैतिक एकता स्थापित की। यह महान राजनीतिज्ञ चन्द्रगुप्त प्रथम था, जिसने गुप्त साम्राज्य की स्थापना की। उसका पुत्र समुद्रगुप्त और समुद्रगुप्त का पुत्र चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य इस वंश के महत्वपूर्ण सम्राट हुए जिन्होंने देश में महत्वपूर्ण साम्राज्य स्थापित करके सुख, समृद्धि एवं शान्ति का समय उपस्थित करते हुए साहित्य संगीत कला को विशेष संरक्षण दिया। इनके राज्यकाल में मालव, आर्जुनायन यौधेय, मद्रक आभीर,

प्राजुन्य, सनकानिक, काक, खरपारिक ६ जातियों के गणराज्यों का उल्लेख मिलता है, जो बहुत प्रसिद्ध थीं और पूर्वी पंजाब राजपूताना तथा मालवा के प्रदेशों में आबाद थीं। ये करद—गणराज्य होगये थे। उनके राज्य की सीमा बहुत बढ़ी हुई थी और विदेशों से भी उसके सम्बन्ध थे।

गुप्त साम्राज्य के अन्तिम काल में (४५५-४६७) हूणों के भारत पर सफल आक्रमण हुए। हूणों ने सारे मध्य-एशिया और डेन्यूब से इटली तक के योरोपियन प्रदेशों पर अधिकार कर लिया था। मध्य एशिया से एकायक इन्होंने गुप्त साम्राज्य पर आक्रमण किया। गर्मियों में वे मध्य एशिया के ठंडे प्रान्तों में लौट जाते और जाड़ों में दल बल सहित उत्तरीय भारत के हरे भरे मैदानों पर टूट पड़ते थे। इनकी बाढ़ निरन्तर आती रहती थी और उन्होंने बार-बार आक्रमण करके गुप्त साम्राज्य की रीढ़ तोड़ दी। उनके भारी आक्रमणों के फल स्वरूप गुप्त साम्राज्य चकनाचूर हो गया और उत्तरीय भारत तथा मालवा तक के प्रान्तों में हूणों का शासन प्रारम्भ हो गया।[१]

ईसा के २०० वर्ष पूर्व से लेकर ई० सन की पांचवी छटी शताब्दि तक भारतवर्ष में तीन बाह्य जातियों के आने का पता चलता है। जिसमें ईसा से २०० वर्ष पूर्व भारत में बाहर से आने वाली जाति—जिसका इतिहास साक्षी है—शक थे। इसके पश्चात ईसवी सन की पूर्व की पहली शताब्दि में यूची अथवा कुशान जाति भारत में आई थी। तीसरी जाति ईसवी सन् के बाद की पांचवी छटी शताब्दि के प्रारम्भ में श्वेतहूण भारतवर्ष में आई।[१] ईसा के १०० वर्ष पूर्व से लेकर ईसवी सन् के बाद की पांचवी शताब्दि के भारतीय इतिहास में हमारे इतिहास से सम्बन्धित गुर्जर अथवा गूजर जाति बड़े उत्कर्ष के साथ एकायक प्रकट होती है। उनके अनेक समृद्ध-शाली राज्यों का वर्णन इस काल के इतिहास में पंजाब उत्तर-पूर्वी राजपूताना एवं गुजरात काठियावाड़ में पाया जाता है।[१] उनका राजनैतिक शक्ति का उत्कर्ष काल यह प्रकट करता है कि गुर्जर राजवंश का प्रादुर्भाव इससे भी पूर्व भारतीय इतिहास में हो चुका था जिसका

[१] साम्राज्यों का उत्थान और पतन (डा० भगवत शरण उपाध्याय) पृष्ठ ६१

वृतान्त अभी तक उपलब्ध करने में इतिहास के अन्वेषक असमर्थ रहे हैं, लेकिन बाहरी आक्रमणों के कारण इतिहास के संघर्ष काल में ये लोग विशेष प्रसिद्धि प्राप्त कर गये और युद्धों द्वारा विजय प्राप्ति उनके उत्कर्ष में विशेष सहायक सिद्ध हुई।

तत्कालीन इतिहास के अध्ययन से यह प्रतीत होता है कि राजनैतिक क्रान्तियों के उलट फेर में प्राचीन क्षत्रियों ने इस नवीन परिवर्तित युग में चेतनता के प्रतीक बनकर प्राचीन वंशों के स्थान पर अपने को नये नये नामों से प्रसिद्धि देना प्रारम्भ कर दिया था और इसमें अनेक क्षत्रिय राजवंशों के समान क्षत्रियों का नवीन गुर्जर अथवा गूजर राजवंश भी इस काल में अपनी महत्वपूर्ण स्थिति से लाभ उठाकर विकसित हो उठा था। गुर्जर राज्यवंशों का उत्कर्षमय इतिहास इस बात को प्रकट करता है कि यह वंश वीरोचित भावना से ओत प्रोत, इतिहास के नवीन युग की चेतनता का प्रतीक है। जिस काल में भारत में निरन्तर विदेशियों के हमले हो रहे थे, तो भारतीय संस्कृति के संरक्षक-क्षत्रियों (वैदिक कालीन राजन्य) को ऐसे नवीन संगठन की आवश्यकता अनुभव हुई जो वीरता एवं ओज से परिपूर्ण होते हुए भारतीय संस्कृति के उत्थान में सहायक हो और विदेशी आक्रमणकारियों से देश की रक्षा करके भारतीय संस्कृति एवं स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण बनाये रक्खे। मध्यकालीन भारत का इतिहास इस बात का प्रत्यक्ष साक्षी है।

मौर्य, गुप्त, वर्धन, गुर्जर, कर्कोटक, केशरी, वर्मा, मैत्रक, चौल, राष्ट्रकूट, चन्देल, गुहिल और पाल आदि राज्यवंश वास्तव में क्षत्रियों के वंश विशेष ही हैं, जो अलग महत्व को प्रदर्शित करने वाले राज्यशक्ति के तत्कालीन मुख्यस्रोत हैं, यह राजवंश जैसा कि इनके इतिहास से पाया जाता है, प्राचीन राजन्य (क्षत्रिय) लोगों के सिवाय कुछ नहीं हैं। स्थान स्थान पर नवीन धर्म, नवीन राजवंश नवीन जातियों के नाम देखकर हमारी दृष्टि चकाचौंध हो जाती है और मनु कालीन चार वर्णों की आधारशिला वाली आर्य जाति के नेताओं के—क्षत्रियों को हम भूल जाते हैं, जिनके कारण अनार्यों की सत्ता नष्ट कर हमारे पूर्वजों ने विश्व भर में आर्य संस्कृति, आर्य साम्राज्य का विस्तार किया था।

इतिहास ने (वैदिक संस्कृति और वैदिक राज्य सत्ता और भारतीय आर्यो की राजनीति के रहस्य को न समझने वाले) विदेशी विद्वानों ने इस सम्बन्ध मे आर्यों के इतिहास की परम्परा को समझने मे बडी भारी भूल की है। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि उनके द्वारा भारतीय इतिहास पर छाये हुए अन्धकार को दूर करने मे बहुत बड़ी सहायता प्राप्त हुई है और इसके लिये नि सन्देह यह पुरातत्त्व वेत्ता और इतिहास के खोज करने वाले विद्वान महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा एव सम्मान के पात्र हैं, किन्तु उनका एक पृथक दृष्टिकोण तथा आर्यों की एक रहस्यमयी राजनीति और वेदों द्वारा आधारभूत वैदिक संस्कृति का उन पर कोई प्रभाव नहीं था, इसलिये ईसवी सन् ६०० वर्ष पूर्व से लेकर पाचवी छटी शताब्दि तक भारत में आने वाली बाहरी शक, यूची अथवा कुशान एव श्वेतहूणों के या मध्य एशिया से आने वाली अन्य जातियों के भारत मे आने और यहाँ उनके क्षत्रिय समाज मे समा जाने से वे एक दम यह समझ बैठे कि इस काल के इतिहास मे उत्कर्ष प्राप्त करने वाले राजवश विदेशी अनार्य-कबीले की देन हैं और उन्होंने भारतीय पुरातन शासन तन्त्र को हिलाकर भारतीय जातियों मे विदेशी तत्त्वों का मिश्रण कर दिया और यहा के प्राचीन क्षत्रिय वश सर्वथा लोप हो गये अथवा उनका इन्हीं में मिश्रण हो गया।[४] इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान जनरल कनिघम गुर्जरों को यूची और कुशान-कबीला स्वीकार करते हैं।[५] राजपूतो के इतिहास के सबसे बडे विद्वान कर्नल जेम्स टाड राजपूतों को शक मानते हैं।[६] माननीय विंसेन्ट स्मिथ महोदय गुर्जरों को श्वेतहूण जाति का समूह मानते है।[७] सर जेम्स केम्पबेल हूणों के साथ ऐतिहासिक दौर मे मध्य एशिया की खजर-जाति (हूणों की एक शाखा) गूजरों को मानते हैं,[८] लेकिन वास्तव में भारतीय इतिहास में क्षत्रिय वर्ग इस देश पर वैदिक काल से ही शासन

२—३—४ स्मिथ अर्ली हिस्ट्री आफ इन्डिया पेज ४११—३२१—७८

५ आर्चियालोजिकल सर्वे आफ इन्डिया रिपोट भाग २ पृष्ठ ६१

६ टाड राजस्थान जि० १ प्रकरण ६

७ स्मिथ अर्ली हिस्ट्री आफ इन्डिया पृष्ठ ४११

८ बम्बई गजटियर जिल्द ६ भाग एक पृष्ठ ४७५

करता रहा है। आर्यों की वर्ण व्यवस्थानुसार प्रजा का रक्षण करना, दान देना, यज्ञ का कार्य करना, शास्त्रों का अध्ययन करना, विषयाशक्ति में न पड़ना आदि आदि क्षत्रियों के धर्म या कर्म माने जाते थे।[१] इस काल के इतिहास से सम्बन्धित गुर्जर अथवा गूजर उसी क्षत्रिय जाति के हैं।

आज से हजारों वर्ष पूर्व जो आर्य विभिन्न वंशों के रूप में भारतवर्ष में प्रतिष्ठित थे और जिन्होंने सूर्य, चन्द्र तथा यदु वंश के रूप में क्षत्रिय वर्ण के अन्तर्गत इस देश की वैदिक कालीन आर्य संस्कृति के निर्माण तथा रक्षा में महत्वपूर्ण भाग लिया था—गुर्जर उन्हीं क्षत्रिय वंशों के वंशज हैं। रामायण तथा महाभारत काल में जिन क्षत्रियों ने अपनी दिग्विजयों के साथ राजसूय यज्ञ करके मध्य एशिया में दक्षिणी समुद्र तक और सिंध से कलिंग, ताम्रलिप्ति तक समस्त भूभागों में अपना महान साम्राज्य स्थापित किया था और महाराज युधिष्ठिर ने अपने राजसूय यज्ञ द्वारा जो क्षत्रियों की प्रतिष्ठा स्थापित की थी, उन्हीं सूर्य तथा चन्द्र एवं यदुवंशी (जिनमें मर्यादा पुरुषोत्तम राम, सत्यवादी राजा युधिष्ठिर, भगवान् श्री कृष्ण पैदा हुए) क्षत्रियों के ही उत्तराधिकारी गुर्जर अथवा गूजर हैं, जिन्होंने अपने नाम व महत्वपूर्ण राजनैतिक स्थितियों से लाभ उठाकर भारत के मध्यकालीन इतिहास में ईसा से २०० वर्ष पूर्व से लेकर ई० सन् की बाद की पांचवीं छटी शताब्दि तक अनेक विस्तृत राज्य, साम्राज्य तथा छटी शताब्दि से ११वीं शताब्दि तक विशाल गुर्जर साम्राज्य स्थापित किया और अनेक क्रान्तियों के उलट फेर में महत्वपूर्ण योग देकर अपनी जातीय वीर भावना को प्रसिद्ध करते हुए १८वीं शताब्दि तक अनेक राज्यवंशों को प्रसिद्धि देकर उत्तरीय भारत में अपनी जाति का महत्वपूर्ण स्थान प्रतिष्ठित बनाये रक्खा।

गुर्जर अथवा गूजर शब्द क्षत्रियों के वर्ग अथवा जाति विशेष के लिए विदेशी जातियों के आक्रमणकाल में, देश की संकटपूर्ण स्थिति में उनके द्वारा रक्षा करने के कारण विशेष रूप से प्रसिद्ध हुआ और ईसा के १०० वर्ष पूर्व

[१] प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च ।
विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासत ॥ मनुस्मृति १।८९।

से लेकर ईसा की पांचवीं, छटी शताब्दि तक की शक, सिथियन, कुशान, यूची एवं श्वेतहूण जातियां भी इनका महत्व स्वीकार करके (अन्य क्षत्रिय वंशों की भांति) इनमें आत्मसात होगई। इतिहास से पता चलता है कि हूण आदि जातियां शीघ्र ही भारतीय समाज में अनन्त संख्या में घुल मिल गये, जो आज भी जहां तक अपनी स्पष्ट आकृतियों (वंशों) के रूप में पहचाने जा सकते हैं।[१०]

गूजर जाति का मूल संस्कृत के गुर्जर शब्द से है, जो स्वयं उनका आर्य एवं क्षत्रिय वंश होना प्रकट करता है। गुर्जर देश के सम्बन्ध में ऐतिहासिक विवरणों से एवं संस्कृत भाषा के प्रसिद्ध कोष 'शब्द कल्पद्रुम' से इस आशयका पता चलता है कि जिस समय गुर्जर देश प्रसिद्धि में आया उस समय वहां पर गुर्जर (गुर्ज्जर) नाम की एक ऐसी क्षत्रिय जाति बसती थी, जो लगातार शत्रु के किये गये, ताडन, मारण और उच्चाटन, वाणिज्य, व्यापार आदि नष्ट करने वालों को साहस बलपूर्वक रोक कर देश की रक्षा करने में समर्थ थे[११] और उन्होंने लगातार होने वाले शक, सिथियन, कुशान-यूची एवं हूण आदि के आक्रमणों से इस देश को—जिसकी विस्तृत परिधि हुएन त्सांग के समय ८३३ मील थी—सुरक्षित रक्खा। बाहरी जातियों के आक्रमणों व अत्याचारों की कहानियों से एक समय सारा उत्तरीय भारत सन्तप्त हो उठा था और क्षत्रिय परम्परा के अनुसार गुर्जरों ने शक्तिपूर्वक उनका प्रतिरोध ही नहीं किया, बल्कि उनसे देश को सदा के लिये सुरक्षित कर, आत्मसात कर लिया।

(२)

मध्यकालीन भारत के इतिहास काल में उत्तरी और पश्चिमी भारत के राजनीतिक और सामाजिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। विदेशी जातियों के सबसे पिछले हूण आक्रमण से गुप्त साम्राज्य का नाश होगया और इस देश के इतिहास में नवीन जातियों के साथ

---

१० साम्राज्यों का उत्थान पतन (डा० भगवत शरण उपाध्याय) पृष्ठ ६१

११ शब्द कल्पद्रुम स्यार राजा राधा कान्तदेव बहादुरेव विरचित, शकाब्दा ११८१ खण्ड २ पृष्ठ ३४१

एक नये अध्याय का सूत्रपात होगया। सौराष्ट्र के वल्लभी प्रान्त में मैत्रक (गुर्जर) और भीनमाल तथा भड़ौंच के गुर्जर (सम्भवत: वे गुप्त-काल में असाधारण शक्ति सम्पन्न राज्य न हों) इस काल में प्रबल हो उठे। उनका विदेश से भारत में इस काल में आना ऐतिहासिक स्रोत से मान्य नहीं ठहरता।[१२] ऐसा मालूम होता है कि पंजाब, दक्षिणी राजपूताना, आबू पर्वत के आसपास गुर्जर लोगों की बस्तियां थीं और यह-बस्तियां भृगु, कच्छ तथा काठियावाड़ तक घर कर चुकी थीं और यह जाति क्षत्रिय परम्परा का पालन करती हुई, समय की स्थिति को देखते हुए समान सामाजिक खान पान, विवाह सम्बन्धी नियमों में बन्धी हुई थी। जाति को परिवारों का समूह कहा जा सकता है। क्षत्रिय कुलों के कुछ विशिष्ट परिवारों ने अपने को गुर्जर जाति के रूप में बांधा और जब देश के विभिन्न भाग खासकर उत्तर के हिमालय के नीचे के पंजाब आदि प्रदेश हत्या, लूट तथा अत्याचारों से पीड़ित हो रहे थे, यह लोग देश की रक्षा के लिये आर्य संस्कृति को बाहरी व्याधियों से मुक्त करने के लिये गुर्जर नाम से प्रसिद्ध हुए और अपनी बस्तियों के जनपद राज्यों को इन्होंने गुर्जर और गुर्जरत्रा गुजरात का रूप दिया। जहां उन्होंने कृषि, उद्यम और व्यवसाय में उन्नति की, अपनी नवीन नाम सम्बन्धी क्षत्रिय परम्परा को उसी प्रकार बनाये रखते हुए राष्ट्र निर्माण के लिये राज्य स्थापना करके फलते फूलते रहे।

क्षत्रियों का प्रारम्भिक जीवन राष्ट्रीय जीवन रहा और गुर्जर राष्ट्र का रूप यह प्रकट करता है कि क्षत्रिय परिवारों के समूह गुर्जरों ने जहां अपने को खानपान, विवाह समारोह की विशुद्धता के विशेष नियमों में अपने को बांधा, वहां प्रचलित नियम तथा रीति रिवाजों में प्राचीन परम्परा को महत्वपूर्ण स्थान दिया। उन्होंने गाय, बैल, ब्राह्मणों की पवित्रता के

---

१२ हिस्ट्री आफ राजपूताना बाई ओझा पृष्ठ १४१—हिस्ट्री आफ मेडिवल हिन्दू इन्डिया बाई वैद्य प्रथम भाग पृष्ठ ८३

दी गुर्जर प्रतिहाराज आर० सी० मजुमदार जनरल आफ दी डिपार्टमेंट आफ लैटर्स यूनिवर्सिटी आफ कलकत्ता भाग १० पृष्ठ ३ (कृष्णा स्वामी आयगर के नोट के साथ)

सम्बन्ध में तीव्र भावना प्रचलित थी जो आज तक असाधारण रूप में उनमें विद्यमान है। भारतीय इतिहास में उनका महत्वपूर्ण वर्णन, उच्च राजनैतिक शक्ति के रूप में उनका एकायक उद्गम शान्तिपूर्ण वैधानिक उपायों द्वारा राज्यों की स्थापना तथा विस्तार का क्रम, आत्मीय जनों की सुसगठित सैनिक स्थिति और निरन्तर होने वाले युद्धों में उनकी शक्ति का उत्तरोत्तर विकास, प्राचीन क्षत्रियों के अनुवांशिक सम्बन्ध धारण किये हुए वर्तमान गुर्जरों (गूजरों) के १५१८ विभिन्न कुल एव गोत्रों के रूप में उनकी ठोस जत्थे बन्दी की स्थिति में पाये जाना [११]—यह प्रकट करता है कि गुर्जर अथवा गूजर जाति विशेष, भारतीय आर्यों के राजन्य (क्षत्रिय) वर्ण का एक खास विभाग है, जिससे अपनी महत्वपूर्ण बसावट, कुल तथा राज्यवशों की स्थिति एव वीरता तथा शौर्य के शानदार कारनामों से अपने को अलग नाम से प्रसिद्ध करने का अवसर प्राप्त हुआ। जहां उनके आर्य और क्षत्रिय होने के अनुवाशिक सम्बन्ध, *गुर्जर राजवशों का तथा जाति की वर्तमान तथा पूर्व की स्थिति प्रकट* कर रही है, वहां ठोस वैज्ञानिक आधुनिकतम् महत्वपूर्ण सिद्धान्त— जिनका वर्णन पिछले अध्यायों में हो चुका है—नृ-तत्व शास्त्र रक्त विज्ञान एव भाषा-विज्ञान है।

कुछ कथानक किंवदन्ति एव महत्वपूर्ण ऐतिहासिक स्रोतों से ऐसा मालूम होता है कि इस काल में हजारों वर्षों का प्रचलित ब्राह्मण क्षत्रिय सघर्ष समाप्त हो जाने से क्षत्रियों में नवीन नामों की नई परम्परा का जन्म हुआ। इससे पहले तक प्राचीन ब्राह्मणवाद अपने प्रतिद्वन्द्वी क्षत्रियों को नष्ट करने के लिये अपने सब हथियार राजनीतिक दाव पेंच इस्तेमाल कर चुका था और इसमें जहा उसकी अपनी बनाई हुई प्राचीन वैदिक परम्परा स्वय उसी के हाथों समाप्त हो गई, वहा वह अपनी सत्ता तक को खो बैठा। परशुराम और सहस्रार्जुन का युद्ध, वसिष्ठ और विश्वामित्र के अनेक परस्पर की प्रतिद्विन्द्विता, नक और चिड़िया बनकर लड़ने तक की कहानी, राजा अम्बरीष सुदास, पुरुरवा नहुष आदि

[११] ट्राइब्स एन्ड कास्ट्स (डब्लू० सी० क्रुक) पृष्ठ ४४३

की कथायें इसके महत्वपूर्ण उदाहरण हैं। क्षत्रियों द्वारा बौद्ध तथा जैन धर्म का उदय और उसके कारण ब्राह्मणवाद को भयंकर क्षति, मामूली ऐतिहासिक घटनाएं नहीं हैं। जब शूद्र राजा नन्द को क्षत्रियों के विरुद्ध खड़ा करके कात्यायन और राक्षस जैसे चतुर राजनीतिज्ञ ब्राह्मणों ने क्षत्रिय समाज को अपमानित, शक्तिहीन एवं तितर बितर करा दिया और शूद्र राजा पद्मानन्द के कन्धों पर खड़े होकर उसे सम्राट एवं 'सर्वक्षत्रांतक' का पद देकर क्षत्रियों को नष्ट करने वाला प्रसिद्ध कर दिया, तो उन्हें अनुभव हुआ कि सत्ता के मद में नन्द सम्राट ने उनकी व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक ब्राह्मणशक्ति को भी नष्ट करने का निर्णय कर लिया है और यज्ञ के अवसर पर नालन्दा के विद्वान स्नातक कौटिल्य राज चाणक्य का अपमान (चोटी पकड़ कर यज्ञ से उठा देना) समस्त ब्राह्मण-जाति का अपमान था। शूद्र राजा का अन्त करने के लिये जहां चाणक्य की प्रतिहिंसा चेतन होती है—वहां मौर्य सम्राट चन्द्र गुप्त की सर्वोच्च सत्ता स्थिर करने के साथ-साथ कौटिल्य की पैनी दृष्टि ब्राह्मणवाद की क्षत्रिय विद्वेष की अग्नि भी शान्त नहीं होती और सिकन्दर की टक्कर लेने वाले पंजाब के क्षत्रिय गणराज्यों को एवं हिमालय के शक्ति सम्पन्न क्षत्रियों को नष्ट करा कर ही वह दम लेता है। इसी के अवशेष पर महाभाष्यकार पातञ्जलि जैसा ब्राह्मण ऋषि, मौर्य का पुरोहित और सेनापति पुष्यमित्र क्षत्रिय ब्राह्मण विद्वेष के षड्यन्त्र में सम्मिलित होते हैं। यज्ञों की पशुहिंसा ने ब्राह्मण को क्रूरकर्मा पहले ही बना दिया था। ब्राह्मण राज की स्थापना के लिये पुष्यमित्र—स्वामीभक्ति, राजभक्ति, रक्तपात का भय या संकोच तथा ब्राह्मणशील सब समाप्त करके—अपने स्वामी बृहद्रथ को खुले मैदान में बाण से मार डालता है। स्वामी के साथ साजिशों के जरिये विद्रोह का झण्डा खड़ा करना और ब्राह्मण हित साधना के साथ-साथ ब्राह्मण राज की स्थापना में ब्राह्मण इतना खो देता है कि उसके पास खोने को कुछ शेष नहीं रहता।'* ब्राह्मण राज्य स्थापित होने के बाद भी उसकी मनोकामना पूरी न हो सकी और भारतीय शौर्य के पतन के साथ ही साथ ब्राह्मण का आदर्श

१* साम्राज्यों का उत्थान पतन (मौर्य साम्राज्य) पृ॰ ६२-७४

तथा देश की सुरक्षा खतरे में पड़ गई। बौद्ध एवं जैनधर्म तथा लगातार होने वाले विदेशियों के आक्रमणों ने ब्राह्मणवाद को और भी खतरे में डाल दिया। इसके साथ ही साथ निरन्तर आक्रमणों की बाढ़ मे देश, धर्म तथा आर्य संस्कृति भी सुरक्षित न रह सकी।

मनु कालीन राजनीति में जो क्षत्रिय वर्ण आर्यों की राजनीति एवं देश का मूलाधार था, देश धर्म तथा जनता के सभी वर्णों का रक्षक था; उसे ब्राह्मणवाद ने जर्जर कर दिया। देश पर क्षत्रियों की सार्वभौमिक सत्ता के न रहने से अराजकता और अव्यवस्था फैल गई। साधारण जनता नैतिक आदर्शों से गिर गई। ब्राह्मण की प्रतिहिंसा की भावना को क्षत्रियों ने भुला दिया, राष्ट्रीय अधोगति से उसकी मूर्च्छना जाग उठी। ब्राह्मण दूरदर्शी था, उसे गिर कर उठना आता था। ज्ञान व त्याग प्रधान वह प्रारम्भ से था उसने भी इस काल में अपना कर्त्तव्य अनुभव किया और कम से कम इस काल के ब्राह्मण क्षत्रिय संघर्ष का अन्त करने की ठान ली और इस काल में फिर से ब्राह्मण क्षत्रिय एकता को स्थापित किया गया। प्राचीन वैदिक वर्ण व्यवस्था तथा आर्य राजनीति में आदि वैदिक व्यवस्थाकारों ने वेद साहित्य तथा इतिहास में जिस क्षत्रिय को आधार बनाया था, जिसके बाहुबल शौर्य, पराक्रम और अपूर्व बलिदान के कारण यहां की अनार्य जातियों से एक-एक इंच भूमि के लिये युद्ध हुआ और इस देश का नाम आर्यावर्त एवं भारतवर्ष के नाम से प्रसिद्ध हुआ तथा जिनके द्वारा आर्य सभ्यता, संस्कृति एवं दिग्विजयों के कारण आर्य सभ्यता का विस्तार विदेशों में हुआ, उसी मूर्छित क्षत्रिय को ब्राह्मणवाद ने फिर नवचेतन का केन्द्र प्रतिष्ठित किया। अपने स्वाभाविक गुणों के कारण फिर देश की मर्यादा सत्ता राष्ट्रीय अधोगति के समय निःसंकोच उसके हाथ में दे दी गई। देश तथा वर्णों का रक्षक प्रारम्भ से क्षत्रिय था, इस काल में भी क्षत्रिय फिर उसी पद पर प्रतिष्ठित हो गया। इस काल में हम देखते हैं कि वशिष्ठ ऋषि ने यह सब आयोजन—आर्य संस्कृति की रक्षा करने के लिये यज्ञ, पवित्र अग्निकुण्ड तथा सम्मेलन द्वारा ऐतिहासिक क्षत्रिय की पुनः प्रतिष्ठा स्थापित करते हुए—आबू पर्वत पर किया।

यौद्ध धर्म काल में कनिष्क और अशोक द्वारा भी ऐसे ही महा-सम्मेलन बौद्ध धर्म में फैले हुए मतभेद और सैद्धान्तिक वादविवाद को दूर करने के लिये नई परम्परा (इस काल की) स्थापित कर चुके थे। यह यज्ञ और सम्मेलन भी इसी प्रकार का आर्य धर्म सम्मेलन था, जिसमें ऋषियों ने ब्राह्मणों क्षत्रियों को सम्मिलित रूप से देश धर्म की रक्षा केलिये एक महानतम सगठनकारी भावना—जो धर्म की प्रेरणा से प्राप्त हुई—प्रस्फुरित की गई। ब्राह्मणों ने—जिन्हें वेद ने ब्रह्मा का मुख कहा है—क्षत्रिय शक्ति को—जिसे मानव आर्य धर्म तथा देश की रक्षा के लिये भुजा का रूप दिया था—राष्ट्र की सुरक्षा के शुद्ध वर्ण के रूप में आह्वान किया। अग्निकुण्ड से क्षत्रियों की उत्पत्ति का यही रहस्य है, क्योंकि आर्यों के जीवन का प्रत्येक कर्म चाहे व्यक्तिगत, जातीय अथवा राजनैतिक कुछ भी हो, एक धार्मिक आदेश से सम्बन्धित होता रहा है। विदेशी कुलों के समागम, बौद्ध, जैन धर्म से पैदा हुई नई धार्मिक प्रवृत्तियां और सामाजिक नियमों की शिथिलता को दूर करने केलिये नवीन विधि से दीक्षित क्षत्रियों को अग्निकुल का प्रसिद्ध किया गया। सूर्य उपासना का महत्व इसी के साथ पूर्ण रूप से आबू पर्वत के चारों ओर विशेष रूप से प्रचलित किया गया। पवित्र अग्नि के सामने जो क्षत्रिय सबसे पहले देश धर्म रक्षा के लिये प्रतिज्ञाबद्ध हुए, वे प्राचीन क्षत्रियों के समूह ही थे और उन्हें अग्निकुल के क्षत्रिय प्रसिद्धि देने में नवीन धार्मिक तथा क्षत्रियोचित जागरण काल उपस्थित करना एवं उनकी वंश विशुद्धता का प्रतिष्ठापन करना आवश्यक था. क्योंकि आर्यों की राजनीति में वंश विशुद्ध राजवंशों का होना आवश्यक है और अग्नि—यज्ञ की अग्नि—सबसे अधिक पवित्रता का महत्व रखती है। सूर्य पूजा उनके प्राचीन सूर्य वंश के महत्व को प्रतिष्ठित करती है। क्षत्रियों के पवार, प्रतिहार, चालुक्य एवं चौहान जिन्होंने निज देश, निज धर्म निज जाति हित सर्वस्व समर्पण की प्रतिज्ञा की थी। चाणक्य की कूट राजनीति को तिलाञ्जलि देकर वास्तविक क्षात्रधर्म अपनाया गया। बौद्ध धर्म तथा पशु यज्ञ दोनों की जड़ें हिला दी गईं। शिव की तान्त्रिक उपासना, घृणित आचार और हास्यास्पद विचार, धर्म से पृथक कर दिये गये।

गाय तथा ब्राह्मणों की पवित्रता और सम्मान के सम्बन्ध मे नीति भावना भरी गई। बाहर से आई शक, कुशान अथवा यूची एव श्वेत हूण भारतीय क्षत्रियों में नवीन रूप से अग्निकुण्ड मे पवित्र हो आत्मसात होगये। बौद्ध धर्म का पराभव करने वालों एव बाहरी जातियों (हूण, शक, सिथियन, कुशान) का पराभव करने वालो एव उन्हे आत्मसात करने वालो के लिये हिन्दू धर्म और जातीय व्यवस्था मे रद्दोबदल किये गये। धर्म और जाति का एक ऐसा नवीन आदर्श प्राचीन परम्परा के साथ उपस्थित किया गया, जिसका मानदण्ड बहुत ऊचा था। इस काल मे धर्म तथा नैतिक नियमों के आधार पर प्रजा के हृदय को जीतने वाले, तत्कालीन सकट के समय देश धर्म तथा जाति की रक्षा करने वाले प्रारम्भिक क्षत्रिय कुलों ने —जिनमे आबू पर्वत के चारों ओर बसने वाली जातीय भावना के रूप में—एक रूप क्षत्रिय—जिन्हे उनके गुण गौरव के कारण गुर्जर कहा गया—अपने को विशेष रूप मे प्रसिद्ध किया। अग्निकुल के पवार, प्रतिहार, सोलकी एव चौहान वश की पवित्र धारा इनमे वशों के रूप में पूरी तरह बह रही थी। ब्राह्मणों ने गुर्जरों (गूजरा) के भीतरी नियमों को चुप चाप स्वीकार कर लिया और ब्राह्मण ही इनका गुरु पुरोहित रहा।[११]

जनता मे प्रसिद्ध आख्यायिकाओं म रखी गई, नवीन वशावली मे जोडी हुई, काव्यो मे प्रचलित अग्निकुल की कथा की सर्वथा उपेक्षा नहीं की जासकती। अगर इसका अलकारिक वर्णन छोड दिया जाय तो यह अवश्य इस काल की एक खोई हुई कडी को जोडकर प्राचीन एव नवीन क्षत्रियों की वश परम्परा को जोडने वाली सिद्ध होती है। अग्निकुल की कथा मे दो बाते स्पष्ट होती हैं। (१) अग्निकुल के चारों वश एक दूसरे से सम्बन्धित एव एक परम्परा के थे और इस काल मे आबू के पास दक्षिणी राजपूताने मे विकसित हुए। (२) गुर्जरों के प्रारम्भिक कुलों का समागम अग्निकुल के क्षत्रिय ही थे, क्योंकि आबू के चारो ओर आसपास गुर्जरों की बस्तिया थी, जहाँ पर इन्होंने प्रारम्भ मे ८३२ मील की परिधि का गुर्जर राज्य कायम किया, कालक्रम मे जिनकी अनेक महत्वपूर्ण राजधानिया प्रसिद्ध हुई और समुद्र पर्यन्त काठियावाड तक फैल

[११] प्राचीन भारतीय परम्परा और इतिहास (रांगेय राघव) पृष्ठ ४०३

गई और जिन्होंने ८वीं ९वीं शताब्दि में उत्तरीय भारत में महत्वपूर्ण शक्ति के केन्द्र कन्नौज पर अधिकार करके गुर्जर साम्राज्य स्थापित किया[११] एवं पूर्ण वैष्णव हिन्दू धर्म का पालन करते हुए देश की शान्ति तथा व्यवस्था भङ्ग नहीं होने दी। सघर्ष काल में इनके अनेक कुलों द्वारा राजवंशों की प्रतिष्ठा हुई और भारत भर में गुर्जर शब्द अनेक रूपों में प्रसिद्ध होगया।

गुर्जर नवीन जाति क्यों बनी? जब क्षत्रिय परम्परा का इतिहास उनके साथ था, तो उन्होंने अपने को उन्हीं के वंशज होते हुए नवीन नामों से क्यों प्रसिद्ध किया? इसका उत्तर आर्यों का इतिहास-क्रम और जाति-प्रथा का प्रारम्भ देता है, जिसकी विशेष व्याख्या अन्यत्र है। यहां इतना ही लिखना पर्याप्त है कि जिन नियमों और परम्पराओं में बन्धने से कुलों के या परिवारों के एक समूह को जाति संज्ञा मिलती है, वे ही नियम जातियों को अन्य समूह से अलग भी कर देते हैं। जहां प्रचलित रीति रिवाजों की समानता से वे स्वयं एक बन्धन में बन्धती हैं वहां इसी कारण दूसरों से पृथक हो जाती हैं। देश काल की परिस्थिति-वश अपनी प्रसिद्धि की महत्वाकांक्षा में इसका मूल निहित है। अपने भीतर राष्ट्रीयता के प्रति उदासीनता न होने से उनका उत्तरोत्तर विकास होना स्वाभाविक है। सैनिक, शौर्य, मन्त्रणा बुद्धि में आदर्शता, शारीरिक उन्नति तथा धन सम्पत्ति (कृषि-पशु) में श्रेष्ठ एवं साहस से भरपूर कुल, जिनमें राष्ट्र तथा धर्म उन्नति की भावना प्रबल होती है, जाति को महत्वपूर्ण स्थिति में स्थायी रूप से खड़ा कर देते हैं और जातीय जीवन की जड़—जाति की सभ्यता उसे नष्ट होने से बचाती रहती है। इसी प्रकार जैसा कि इतिहास का क्रम बतायेगा, गुर्जर जाति उत्तरोत्तर विकसित होकर स्थायी रूप धारण कर गई। इसके अतिरिक्त इस काल की युद्धप्रिय जातियां हूण, शक, सिथियन, कुशान, पल्लव आदि सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिस्थितिवश अपनी अलग सत्ता न रखते हुए इनके

[११] प्राचीन भारत का इतिहास डा० भगवत शरण उपाध्याय पृष्ठ २११,-स्मिथ ३४७—४८ रायल एशियाटिक सोसायटी जर्नल १९०६ पृष्ठ ७९

पारिवारिक जीवन में घुल मिल गई और क्षत्रिय परम्परा को लिये हुए ब्राह्मणवाद के आधार पर युद्धप्रिय जाति गुर्जर (गूजर) का उदय हुआ। पुराने राजवंशों का अन्त एवं नवीन राजवंशों का उदय इस काल की महत्वपूर्ण घटना है। गुर्जरों ने अपने को समृद्ध रखते हुए गुर्जर राष्ट्र की स्थापना करने के लिए एक नए संघर्ष की तैयारी की और वे रणक्षेत्र में जूझ पड़े और उन्होंने भारतीय सभ्यता संस्कृति की रक्षा करने के लिये आगे कदम बढ़ाया।

धर्मान्ध अरब मुसलमानों ने जब उत्तर अफरीका को विजय कर जिब्राल्टर के मुहाने से होते हुए स्पेन और पैरेनीज को पार कर, फ्रांस तक में अपना राज्य स्थापित कर लिया और अपनी असाधारण शक्ति से पूर्व की ओर इराक और बलूचिस्तान में मुस्लिम राज्य स्थापित करते हुए सिन्धु नदी को पार कर आलौर के युद्ध में विजय प्राप्त कर सिन्ध में अपना अरब राज्य कायम कर लिया, तब प्रबल रूप से गुर्जरों (गूजरों) ने अरबों का आगे बढ़ने से रोका और आक्रमण प्रत्याक्रमणों से उनको अपनी अपूर्व वीरता से पराजित किया और संकट काल में विधर्मी लोगों से, जो महान शक्ति सम्पन्न थे, देश की रक्षा करने की योग्यता प्रदर्शित की। तब से यह लोग गुर्जर नाम से "अरब तथा भारत साहित्य" में प्रसिद्ध हो गये और अपने महत्वपूर्ण नाम से विरुद्ध गुर्जरत्रा (गूजरों से रक्षित प्रदेश) गुजरात देश को प्रसिद्ध किया। विद्वानों द्वारा प्रदर्शित 'गुर्जर' की व्याख्या स्पष्ट रूप से इसी आशय को प्रकट करती है कि "गुर, शत्रु के नाटन मारण उद्यम आदि को रोकने वाले जो लोग हैं उनका नाम गुर्जर है" और गुर्जरों के कारण ही इस देश का नाम गुर्जर देश गुर्जरत्रा (गुजरात) प्रसिद्ध हुआ है, इस प्रदेश ने गूजर जाति की वीरता एवं राजनीति से प्रभावित होकर इस प्रकार की प्रसिद्धि प्राप्त की है। मध्यकालीन भारतीय इतिहास के महत्वपूर्ण विद्वानों द्वारा लिखे गये निम्न उद्धरण हमारे इसी आशय को और भी अधिक स्पष्ट करते हैं।

"सिन्ध पर अरबों का अधिकार स्थापित हो गया, अरब लोग आगे भी आक्रमण करके भारत को जीतना चाहते थे। उनमें असाधारण शक्ति थी, जिन लोगों ने स्पेन से एशिया तक अपना महान

साम्राज्य स्थापित कर लिया था, वे सिन्ध तक कैसे सन्तुष्ट रह सकते थे, उन्होंने आक्रमण किये भी पर वे सफल नहीं हो सके। कारण यह है कि उनको बाढ़ रोकने के लिये गुर्जर लोगों की दीवार कायम थी। गुर्जर लोगों ने अभी कन्नौज को नहीं जीता था, पर राजपूताने में उनका राज्य भलीभांति स्थापित हो चुका था। सिन्ध को जीतकर जब अरबों ने आगे बढ़कर मालवा, गुजरात की तरफ कदम बढ़ाया तो गुर्जर राजा नागभट्ट ने उनका मुकाबिला किया। नागभट्ट के कारण अरब लोगों की आगे बढ़ती हुई गति रुक गई और उन्हें सिन्ध तक ही बढ़ कर सन्तुष्ट होना पड़ा, जो अरब लोग सारे पाश्चात्य संसार को जीत कर अपना अधिकार कर चुके थे वे भारत में आकर असफल हो गये।"[१७] "गूजर राजपूतों की एक जाति है, जो प्रथम आठवीं शताब्दि में पूर्वी राजपूताना, मालवा पर शासन करती थी और उनके एक सम्राट ने अरबों द्वारा सिन्ध को ईसवी सन ७१२–७२४ ई० में जीत लेने के बाद उनके काठियावाड़ उत्तरीय गुजरात तथा कच्छ में प्रवेश करने पर उन्हें भारी पराजय दी थी और उत्तरीय भारत को उस समय मुसलमान हमलावरों से बचा लिया था।"[१८] "भड़ौंच के गूजर घराने की सबसे महत्वपूर्ण एवं आकर्षक ऐतिहासिक घटना अरब के मुसलमान (ताजिक) लोगों के साथ वर्षों तक चलने वाला सामुद्रिक एवं स्थल युद्ध है जिसमें अरबों से इनकी बराबर मुठभेड़ हुई और अरबों को बराबर भारी मुँह की खानी पड़ी। ७१२ ई० में सिन्ध पर अरबों ने बड़े प्रयत्नों के बाद विजय प्राप्त की और ७३८ ई० में उन्होंने सिन्ध और नवसारी के सभी राज्यों पर विजय प्राप्त की, किन्तु उनका यह प्रयत्न सिन्ध से मिले हुये गुर्जर राज्य को विजय करने में असफल रहा, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि अरब के ताजिक लोग गूजर लोगों को नहीं मिटा सके।[१९]

---

[१७] भारत वर्ष का इतिहास डाक्टर सत्यकेतु विद्यालङ्कार Ph. D पृ० ६३–६४ (चौदहवां अध्याय)

[१८] मेडिवल हिन्दू इन्डिया पृ० ३२८ (श्री डा० नगेन्द्रनाथ घोस एम०ए० लेक्चरार इलाहाबाद विश्वविद्यालय)

[१९] मेडिवल हिन्दू इन्डिया (सी० वी० वैद्य) पृ० २५२ ५३

गुजरात के दक्षिण पश्चिमी भाग में गूजरों ने अपना राज्य स्थापित किया। पहले तो इनकी राजधानी भीनमाल थी, पर पीछे से इन गूजरों के एक सरदार ने जिसका नाम दद्दा था, विक्रमाब्द ४८७ (ई० सन् ४३०) में भड़ौंच को राजधानी बनाकर वहां गूजरों का राज्य स्थापित किया, जब कि अरब के तीसरे खलीफा उसमान ने कुछ समुद्री सेना थाना और भड़ोंच पर चढ़ाई करने के लिये विक्रमाब्द ६९२ (ई० सन् ६३६–३७) में भेजी तब वहां पर इन्हीं गूजरों का राज्य था। उस लड़ाई में मुसलमानों से कुछ भी न करते बन पड़ा। गूजरों ने भड़ोंच में विक्रमाब्द ७६१ (ई० सन् ७०४) तक अपना राज्य सम्भाले रक्खा।"[10]

उपरोक्त अवतरणों से यह स्पष्ट है कि गुर्जर अथवा गूजर भारत देश तथा भारतीय संस्कृति पर प्रहार करने वाले एवं आर्य सभ्यता को नष्ट करने वाले अरब शत्रुओं से सैकड़ों वर्ष तक देश, धर्म तथा संस्कृति की रक्षा के लिये टक्कर लेते रहे। यह उनकी क्षत्रिय होने की खास कसौटी है। भारत में सिन्ध की ओर से जब जब हमले हुये तब-तब सबसे आगे बढ़कर इनका गूजरों ने सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया और अरब इतिहासकारों ने इन्हें इस्लाम धर्म तथा इस्लाम राज्य का जबरदस्त शत्रु लिख कर प्रसिद्ध किया। आर्य सभ्यता से अनभिज्ञ व्यक्ति-समूह जिसे अपनी परम्परा का स्पष्ट ज्ञान न हो, किस प्रकार अपनी सम्पूर्ण राज्य व साम्राज्य की शक्ति विदेशी शक्ति को नष्ट करने के लिए लगा कर आर्य हिन्दू धर्म की पताका फहरा सकता है? इतिहासकार इस जाति और इस काल के बारे में निम्न आशय का वृतान्त देता है जिसका विस्तार उस समय दक्षिण गुजरात से लेकर पूर्व पश्चिम समुद्रों के छोरों से हिमालय पर्यन्त था और यह जाति उसमें भी पूर्व—भारत से लेकर मध्य एशिया तक—भारतीय आर्य सभ्यता से ओतप्रोत फैली हुई थी। हिन्दुओं की दृष्टि में इस जाति के महत्व का कारण इसलिये भी और अधिक रहा कि इनमें अनेक महत्वपूर्ण वंश मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी तथा भगवान श्री कृष्ण जी के वंशज हैं।[11] अपने पूर्वजों

[10] प्राचीन भारत (हरिमङ्गल मिश्र एम० ए०) पन्द्रहवां अध्याय पृष्ठ २६२

[11] इतिहास रश्मी पृष्ठ ९९–१००

के महान व्यक्तित्व के कारण ही उन्हें यह श्रेष्ठता प्राप्त हुई है। इसके अतिरिक्त गुर्जरों का प्रारम्भिक विकास कालसे लेकर आजतक का इतिहास आर्य सभ्यता की रक्षा करने के कारण उनकी महत्ता की पुष्टि करता है।

"यद्यपि विशाल भारत के एक किनारे पर सिन्ध में अरबों ने विजय प्राप्त की थी, किन्तु भारतीय इतिहास में उसका विशेष महत्व है." जिसका वर्णन करना आवश्यक है।[९९] सिन्ध के अरब गवर्नर ने ईसवी सन् ७७२ में 'वल्लभी' (राज्य) पर हमला किया और इसे पूरी तरह बरबाद कर दिया, यह अल-बरूनी और प्रबन्धों द्वारा विदित होता है।[१००] ईसवी सन् ८१३ और ८३३ के मध्य में उन्होंने कुछ समय के लिये कच्छ के सिन्दान पर भी अधिकार कर लिया,[१०१] लेकिन इतिहास के प्रसिद्ध बुद्धिमान गुर्जर राजा वत्सराज और नागभट्ट—जो इन अरबों के खास शत्रु थे—के कारण अरबों के आगे होने वाले आक्रमणों का अन्त हो गया। उनका धर्मोन्मत आगे बढ़ता हुआ जोश समाप्त हो गया। उन्होंने हिन्दू धर्म की प्रतिष्ठा तथा सम्मान करना आरम्भ कर दिया। शीघ्र ही हिन्दुओं की शक्ति प्रान्त में जोर पकड़ गई और अल-मनसुराह से आश्रित होने वाली विस्तृत अरब राज्यशक्ति वत्सराज गुर्जर राजा के द्वारा उत्तर सिन्ध में सीमित कर दी गई, जो आजकल हैदराबाद तथा सिन्ध के नाम से प्रसिद्ध है। पश्चात् मुसलमान बनाये गये हिन्दू फिर अपने पुराने हिन्दू धर्म में सम्मिलित हो गये। मुसलमानों के लिए अल-महफूज (रक्षक शिविर), नामक शहर विशेष रूप से बनाया गया, केवल वहीं पर उनको शरण मिलती थी। बालाधुरी लिखता है, "कि अलहाकिम इब्न-दुवाना के समय कुछ स्थानीय व्यक्तियों को छोड़ कर सबने धर्म परिवर्तन कर लिया था।" वह आगे लिखता है "कि कई भी स्थान ऐसा दृष्टिगोचर नहीं होता था, जहां मुसलमान सुरक्षित रह सके, तब उसने झील के दूसरी ओर अल-हिन्द

[९९] केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इन्डिया भाग ३ पृ० ९५
[१००] अल बरूनी का भारत जखाऊ १९२
[१०१] वही पृ० १९३

की सीमा पर एक शहर अलमहफूज बसाया, जो मुसलमानों की रक्षा के लिए शरणार्थी शिविर था और वही उसकी राजधानी थी।"[१०२]

"मिहिरभोज के राज्यकाल के प्रारम्भिक वर्ष में ही इमरान-इब्न-मूसा सिन्ध का गवर्नर बना और उसने अरबों की घटती हुई शक्ति को बढ़ाने का इरादा किया, लेकिन ८३३-८४२ ई० सन में अरब सिन्ध से बाहर कर दिये गये[१०३] और उसके कुछ समय बाद सिन्ध पर से खलीफाओं का प्रभुत्व समाप्त हो गया[१०४] और भारत में मुलतान व मनसुराह दो छोटे से राज्य रह गये[१०५] और मुस्लिम राज्यशक्ति का यह ह्रास मिहिरभोज के कारण ही हुआ, जिसे अरब यात्री मर्ज सम्मिति में लिखते हैं 'कि जुर्ज या गुर्जर राजा जिसका नाम बराह है, इस्लाम का सब से बड़ा शत्रु है। बराह प्रतिहार का नाम था पर अधिकतर बराह या वराह से भोज जाना जाता था। गुर्जरों का राजा बराह सिन्ध का भी राजा था, जिसके द्वारा पुनः आर्य धर्म का उद्धार हुआ। भोज के राज्य की सीमा सिन्ध में सिन्ध नदी के दूसरी ओर भी फैल गई थी, क्योंकि अल-मसुदी सिन्ध नदी के दूसरी ओर मिहिरभोज के राज्य की सीमा के एक शहर का वर्णन करता है।"[१०६] "भारतीय व्यवस्था—शासन पद्धति के अनुसार भोज केवल एक चक्रवर्ती राजा ही नहीं था बल्कि उसकी साम्राज्य शक्ति का स्तम्भ बहुत बड़ी उसकी फौजी शक्ति थी। उसने अपने साम्राज्य में कई आधीन राज्यों को सामन्तशाही के रूप में बांट रक्खा था और उन सब का सीधा सम्बन्ध कन्नौज से था। उसकी चार बड़ी सेनायें

---

[१०२] बालाधुरी किताब फ्तुह-अल-बुलदान भाग २ पृष्ठ २०८—२२९

[१०३] हिस्ट्री आफ इण्डिया एज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरियन इलियट—१२३

[१०४] विलियम म्योर लिखित खिलाफत इट्स राईज डिक्लाइन एण्ड फाल ५४३, ५४४

[१०५] इलियट हिस्ट्री आफ इण्डिया एज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरियन इलियट प्रथम भाग २३, ४५४

[१०६] वही पृष्ठ ६२

थीं, जो हर समय युद्ध के लिए तैयार रहती थीं और उन्हें नियत मासिक वेतन मिलता था, यह सब एक भारतीय विजयी सम्राट के लिए अत्यन्त आवश्यक है। उसकी विलक्षण राजनीति की सूक्ष्म और सेना चातुर्य प्रबन्ध का पता इस बात से प्रकट होता है कि अरब शक्ति को अरब खाड़ी में सीमित रखने के लिए सेना की एक टुकड़ी साम्राज्य की रक्षा के लिए मुलतान में भी रहती थी।"

"८५१ ई० सन् में सुलेमान नामक एक अरब यात्री, भारत यात्रा को आया और उसका वर्णन बताता है कि गुर्जर राजा हमेशा रुहमी के राजा के साथ युद्ध में लगा रहता था। वह लिखता है कि बलहारा के राज्य की सीमाओं की ओर के कुछ राजा थे, जिनके साथ हमेशा युद्ध होते रहते थे, जिनमें इसका महत्व था। इनमें से एक गुर्जर राजा था। यह गुर्जर राजा बहुत बड़ी सेना रखता था और किसी भी भारतीय राजा के पास इतनी घुड़सवार सेना नहीं थी। गुर्जर राजा अरबों का शत्रु था, यद्यपि वह यह जानता था कि अरब के राजा बहुत बड़े हैं। भारतीय राजाओं में अरबों और मुसलमानी सिद्धान्तों का कोई इतना बड़ा शत्रु नहीं था जितना कि यह गुर्जर था। राज्य की सीमा जीह्वाकार (तिकौनी) थी। गुर्जर बहुत समृद्धिशाली था। उसके पास ऊँट और घोड़े बहुत बड़ी संख्या में थे। उनके राज्य में सोने चांदी के सिक्कों द्वारा विनिमय (वस्तुओं का आदान-प्रदान) होता था और सोने चांदी की खान भी उनके राज्य में थी। भारत का कोई—इस गुर्जरों के राज्य के सिवाय—भी भाग चोर और डाकुओं के भय से सुरक्षित नहीं था।"

"इन तीनों तफक, बलहारा और जुर्ज (गुर्जर) राज्यों की सीमा पर रुहमी का राज्य है। रुहमी के साथ बलहारा जुर्ज (गुर्जर) राजाओं का युद्ध होता रहता था। उसकी सेना बलहार, जुर्ज और तफक से बहुत बड़ी थी।[११०] "९१६ ई० में अबुजैद ने सुलेमान की शुरू की गई 'सिलसिला-ए-उल तवारीख' पूर्ण की। भारत और चीन के सम्बन्ध में

---

[११०] इलियट हिस्ट्री आफ इन्डिया ऐज टोल्ड बाई इटस ओन हिस्टोरियन पृष्ठ १–४

जो यात्रा सम्बन्धी विवरण उसने दिया है, उसके द्वारा मालूम होता है कि उसमें जो देश की सामाजिक अवस्था का चित्रण है और वह स्वयं लिखता है "कि उसका यह निरूपण जुर्ज (गुर्जरों) के विस्तृत कन्नौज राज्य से सम्बन्धित है और कन्नौज के विस्तृत राज्य पर लागू है।"[१२१] बगदाद का यात्री अल मसूदी ई० सन् ९००-९४० के मध्य में कई बार भारत में आया और मिश्र में आकर ९५६ ई० में मर गया। वह लिखता है 'कि भारत का एक पड़ोसी राजा जो समुद्र से बहुत दूर है 'वराह' है, जो कि कन्नौज का स्वामी है। यह (वराह) गुर्जरों के राज्य के सम्राटों की पदवी थी। उसके पास बहुत बड़ी साम्राज्य की रक्षा के लिए सेना है, जो उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम में लगी हुई है, क्योंकि उसके राज्य की सब सीमाएँ युद्ध प्रिय राजाओं से घिरी हुई थीं।" आगे वह लिखता है "कि भारत का राजा बलहारा और एक कन्नौज का राजा है जो कि सिन्ध का भी राजा है और वराह कहलाता है, जो कि कन्नौज के गुर्जर राजाओं का सामान्य पद है। इसी राजा के नाम पर 'वराह' एक शहर भी बसा हुआ है, जो कि आजकल इस्लामी राज्य में है और मुलतान के राज्य के आधीन है" ... ..." "यह वराह जो कि कन्नौज का राजा है, भारतीय राजा बलहार का शत्रु है, वह लिखता है "कि वराह कन्नौज राजा के पास चार सेनाएँ हैं, जिनमें से प्रत्येक ७०-९० लाख के अन्दाज है। उत्तर में जो सेना है वह मुसलमानों के लड़ने के लिए और मुलतान राजा के लिए है और दक्षिण की सेना बलहारा मानिर राजा के लिए रक्खी हुई थी।"

"बलहारा के पास युद्ध के लिए हाथी बहुत हैं। यह देश कामकर भी कहलाता है। यह एक ओर से गुर्जरों के (जुर्ज) आक्रमण के लिए खुला हुआ था। जुर्ज (गुर्जर) राजा घोड़े और हाथियों का धनी है और उसकी बहुत बड़ी सेना है। तक्न के राजा के पास इन उपरक्त राजाओं से बहुत कम सेना थी और मुसलमानों के साथ—अन्यों की अपेक्षा—उसके मित्रता के सम्बन्ध थे। बलहारा और जुर्ज के राजा

[१२१] वही पृ० १३-१४

में रहमा के राजा की सीमा दूर थी । यह पदवी भी उस समय उनके नाम के साथ थी। उसके राज्य की सीमा जुर्ज (गूजर राज्य) से मिली हुई थी और दूसरी ओर यह राज्य वल्हारा से मिला हुआ था, जिसके साथ प्रत्यक्ष रूप से वह युद्ध में संलग्न रहता था । रहमा के राजा के पास वल्हारा, जुर्ज और तफक के राजाओं से अधिक सेना, हाथी-घोड़े थे।[१११] रहमा सम्भवतया बंगाल था, तफक का कुछ पता नहीं चलता, वल्हारा वल्लभ राजा था, जो 'मान्य खेट' के साम्राज्य में था।[११]

वास्तव में जुनैद खलीफा हिशाम के प्रतिनिधि अरबों ने जो भारत में इस्लाम धर्म और इस्लाम राज्य के प्रसार की नीति अपनाई, तो गुर्जरों ने ही उन्हें लगातार २५० वर्षों तक रोके रक्खा और न केवल सिन्ध से आगे बढ़ने दिया, बल्कि सिन्ध पर भी अधिकार कर लिया। भीनमाल के और उज्जैन तथा भड़ोंच एवं कन्नौज के इन गुर्जरों को एक खास प्रतिष्ठा इतिहास में तो प्राप्त हुई ही, किन्तु संस्कृत साहित्य और धार्मिक विद्वानों ने नवीन सम्मानित सार्थक पद भी प्रदान किया। अरब शत्रुओं के विरुद्ध शक्ति प्रदर्शन द्वारा भारत की सुरक्षा करने के कारण प्रतिहरणविधे' प्रतिहार- यह प्रतिहार नाम (जिसका प्राकृतिक रूप 'पड़िहार') प्रसिद्ध हुआ और गुर्जरों का यह महत्वपूर्ण राज-वंश गुर्जर प्रतिहार नाम से इतिहास में विशेष रूप से विख्यात हुआ। गुर्जरों के पूर्वज वैदिक कालीन सूर्यवंशी क्षत्रियों में इससे पहले यह पदवी लक्ष्मण जी को अपने शत्रु मेघनाद आदि के विरुद्ध शक्ति प्रदर्शित करने के कारण (प्रतिहरण विधे प्रतिहार:) प्राप्त थी।[१३] संकट के समय बनवास में जिस प्रकार लक्ष्मण जी रामचन्द्र सीता (तत्कालीन आर्य संस्कृति के प्रतीक) के प्रहरी थे,

---

[१११] वही पृष्ट २२, २३, २४

[११] दी ग्लोरी देट वाज़ गूर्जर देश के भाग ३ अध्याय ५ पृ० ८६ ८७ ८८-८९-९०-९१ (माननीय के० एम० मुन्शी)।

[१३] प्राचीन भारत का इतिहास डा० रमाशङ्कर त्रिपाठी एम० ए०, पी० एच० डी० (बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय) पृ० २३९-२५३

ठीक उसी प्रकार अरबों के भारत प्रवेश द्वार पर उस काल मे गुर्जर भारत के प्रहरी रहे और उन्होंने अपने समय में भारत की रक्षा करने का यश प्राप्त किया। इस काल से ही मुसलमान धर्म और अरब राज्य के शत्रु गुर्जर राजा समझे जाने लगे और अरबों ने निवश होकर वल्लभ राज (वलहारा) और मान्यखेट के राष्ट्रकूटों से मित्रता करली और भारत की तत्कालीन साम्राज्य शक्ति के केन्द्र कन्नौज की सत्ता प्राप्त करने के लिए जो सघर्ष पाल, राठौर और गुर्जरों में हुआ (जिनमें प्रत्येक राज्यवंश मे दुर्मद शासक उस काल मे थे) उसमे गुर्जर सफल हुए।[१४]

Extract taken from "THE GLORY THAT WAS GURJARADESA" Pt III, Ch V, Pages 86, 87, 89, 91 and 93

"The Arab conquest of Sind has been rightly described as a mere episode in the history of India which affected only a fringe of that vast country[99] *The Arab Governors of Sind* according to Al Biruni and the Prabandhas raided Valabhi in C 770 A C and destroyed it[100] Between 813 to 833 A C they temporarily occupied Sindan in Cutch[101] But the growing power of Vatsraj and Nagabhata I had made them wiser and recognising the kings of Gurjara as their enemy, they attempted no more raids Their fanatic zeal was at an end They began to respect even *Hindu temples Soon the Hindu powers regained control* of the province, and in the time of Vatsraj the Arab power was forced to rest content with a principality in lower Sind governed

[१४] प्राचीन भारत का इतिहास (डाक्टर भगवतशरण उपाध्याय) पृष्ठ ३१२

[99] CHI III, 10 [100] AI, I, 192–93 [101] Ibid 232

from al Mansurah, near modern Hyderabad The Hindus forcibly converted to Islam went back to their ancestral fold A city named al Mahfuzah (the guarded) had to be specially built as a place of refuge for Muslems Beladhuri says, in the time of al-Hakam ibn Awanah, the people of al Hind apostatized with the exception of the inhabitants " He further says "a place of refuge to which the Moslems might flee was not to be found, so he built on the further side of the lake, where it borders on al Hind, a city which he named al Mahfuzah (the guarded), establishing it as a place of refuge for them where they would be secure and making it a capital "[102]

Within a year of the accession of Mihira Bhoja, Imran Ibn Musa, became the governor of Sind and began a shortlived policy of spreading the Arab power But the Arabs were driven out of Cutch between 833 842 A C [103] The Caliphs lost the control of Sind a few years later [104] Multan and Mansurah only remained the capitals of two petty Islamic principalities [105] This was due to the power of Mihira Bhoja, for the Arab travellers unanimously record that the king of Jurz or Gurjara named Baurah was the greatest foe of Islam Baurah is identified with Pratihara, but, more likely was the corrupt form of Adi Varaha or Baraha by which Bhoja was known Baurah, the

---

[102] KFB II, 228–29 [103] Elliot I, 233 404

[104] WILLIAM MUIR The Caliphate its rise, decline and fall, 543–544 [105] Elliot I 23ff also 454

king of Jurz, was also the king of Sind, which was reconverted to Arya Dharma The empire of Mihira Bhoja extended beyond the Indus in Sind for Masudi testifies to the Indus running right through one of the cities which was within its boundaries " [105]

"Bhoja was not merely a Chakravartin in the Indian sense of the term His empire was built on great military power He reversed the policy of maintaining feudatories in all places, for, considerable parts of his empire were governed directly from Kanauj He had four standing armies, which were regularly paid, a rare thing for an Indian conqueror There is ample testimony to show that one of the garrisons of Bhoja was at Multan and kept the Arab power at bay

In 851 A C Sulaiman, an Arab traveller, visited India and in his work referred to the kingdom of Jurz which he found at war with a kingdom called Rhumi He states —' The Balhara has around him several kings with whom he is at war, but whom he excels Among them is the king of Jurz This king maintains numerous forces and no other Indian prince has so fine a cavalry He is unfriendly to the Arabs, still he acknowledges that the king *of Arab is the greatest of kings Among the princes of India there* is no great foe of the Mohmmadan faith than he His territories form a tongue of land (Saurastra ?) He has great riches and his camels and horses are numerous Exchanges are carried on in his state with silver and gold in dust, and there are said

---

[105] Ibid 22

to be mines (of these metals) in the country There is no country in India more safe from robbers " 'These three states (viz. Tafak, Balhara and Jurz) border on a kingdom called Rhumi, which is at war with that of Jurz The king of Rhumi is at war with Balhara as he is with the king of Jurz His troops are more numerous than those of Balhara the king of Jurz or the king of Tafak "[120]

In 916 A C Abu Zaid completed the Silsilat ul Tawarikh, which was begun by Sulaiman, by reading and questioning the travellers to India and China While giving a picture of the social conditions of India he remarks that 'these observations are specillay applicable to Kanauj a large country of the Jurz '[121]

Al Mas udi of Baghdad visited India more than once, possibly between 900 A C and 940 A C and died in Egypt in 956 A C He states 'one of the neighbouring kings of India, who is far from the sea is the Baurah who is lord of the city of Kanauj This is the title given to all the sovereigns of that kingdom He has large armies in garrisons on the north and on the south, on the east and on the west, for he is surrounded on all sides by warlike kings ' He, further, records that 'king of India is Balhara, the king of Kanauj who is one of the kings of Sind is Ba urah This is a title common to all kings of Kanauj There is also a city called Baurah after its princes which is now in the territories of Islam

[120] Elliot, I, 4
[121] Ibid 13, 14

and in one of the dependencies of Multan This Baurah who is the king of Kanauj, is an enemy of the Balhara the king of India " Next it is stated that "Baurah, the king of Kanauj, has four armies, each consisting of 70,00,000 or 90,00,000 The army of the north fights with the Musalmans and the prince of Multan, and the army of the south fights with Balhara, the king of Mankir " The Balhara possesses many war elephants This country is also called Kamkar On one side it is exposed to the attacks of the Jurz, a king who is rich in horses and camels and has a large army The military forces of the king of Tafan, who is on friendly terms with Moslems, are less than other mentioned above i e Balhara, and Baurah the king of Jurz. Beyond this kingdom is that of Rahma, which is the title of their kings and generally at the same time their name His dominions border on those of the king of Jurz, and on one side on those of the Balhara with whom he is frequently at war The Rahman has more troops elephants, horses than the Balhara the king of Jurz, and of Tafan "[122] Rahma or Ruhmi is perhaps Bengal Tafan is difficult to identify Jurz is Gurjara and Balhara is Vallabharaja, the emperor of Manvaikheta "

(३)

ऐतिहासिक अवतरणों से यह स्पष्ट है कि भारतीय इतिहास में विदेशी जातियों के भयकर आक्रमणों के समय से ही भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिये जो प्रयत्न गुर्जरों द्वारा हुए हैं, वे उनको पूर्ण रूपेण वैदिक कालीन क्षत्रिय राजवंशों का उत्तराधिकारी सिद्ध करते हैं।[२५] अरबों के साम्राज्य एवं मुसलिम धर्म के प्रसार को रोकने वाली उनकी

[122] Ibid 21, 22, 23, 25

[२५] मिडिवल हिन्दू इण्डिया वैद्य भाग १ अ० १७ पृष्ठ ३५८

प्रसिद्धि का आधार भाटों की अनर्गल खुशामद भरी आख्यायिका या स्वयं की आत्मश्लाघा अथवा आश्रित कवियों की स्वार्थपूर्ण प्रशंसा नहीं है। उसका आधार तो विश्व इतिहास के प्रसिद्ध तत्कालीन गुर्जरों के शत्रु अरब साम्राज्य के ही पर्यटकों के वृतान्त तथा अभिलेख हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि विश्व भर में इस प्रकार देश, धर्म, जाति को महत्व देकर किसी बाहर की जाति ने कभी भी किसी देश में आधीन देश की संस्कृति सभ्यता, धर्म एवं जनता की उदारतापूर्वक रक्षा नहीं की है। विदेशी जातियों द्वारा जो देश जीते जाते हैं, उनमें साम्राज्य लिप्सा की शोषण नीति अपनाई जाती है, पराजित जातियों की सभ्यता एवं संस्कृति को कुचला जाता है। इसके विपरीत गुर्जरों द्वारा मध्यकालीन भारत में और उसके बाद आज तक भारतीय संस्कृति, भारतीय भाषा, भारतीय वेश अपनाया गया। यहां तक कि सैंकड़ों वर्षों में मुसलिम संस्कृति में पले हुए मुसलमान गूजर जो उत्तर प्रदेश तथा पंजाब एवं सरहदी कबायली इलाकों में तथा उससे भी दूर-दूर तक हैं, अपनी भाषा, वेष भूषा तथा संस्कृति को नहीं भूले।[१९] ८०० वर्ष के विदेशी शासन ने भी उनपर अपना किसी भी प्रकार का आर्यंतर प्रभाव स्थापित नहीं किया।

गुर्जरों (गूजरों) के गण-गोत्र एवं कुल स्थिति, ऐतिहासिक श्रोत एवं परम्परा उनके द्वारा बाहरी एवं आन्तरिक राज्य एवं भारतीय साम्राज्यों की स्थापना, वैदिक संस्कृति एवं ब्राह्मण धर्म से अटूट सम्बन्ध, भारत तथा भारतीयता से प्रेम, प्राचीन आर्यों (क्षत्रिय) से उनके आनुवांशिक सम्बन्ध, विदेशियों से आर्य धर्म के प्रति रक्षात्मक नीति उन्हें ऐतिहासिक दौर में बाहर से आने वाली उस युग की बर्बर तथा घुमक्कड़ जाति किसी भी प्रकार सिद्ध नहीं कर सकती।[२०]

(i) [१९] पंजाब कास्टस (सर डेन्जिल इबटसन के० सी० एस० आई०) ४८० पृष्ठ १९२।

इतिहास साक्षी है कि सभ्य एवं असभ्य (बर्बर) कबीलों में एक मौलिक भेद है। विभिन्न सभ्य एवं असभ्य जातियों की संस्कृति का अन्तर मंगोलिया से पेकिंग पहुंच कर या किरघीज के स्टेपीज में इस्फन पहुँचने पर पता चलता है। हजारों–लाखों वर्षों तक भारत में रहने वाली

—"Throughout the full country of Jammu, Chibhal and Hazara and away in the independent territory laying to the north of Peshawar as far as the Swat river, true Gujar herds men are found in great numbers all possessing a common speech, which is a Hindi dialect quite distinct from the Punjabi or Pashto current in those parts."

—"The Musalman Gujars of all the eastern half of provinces still retain more of their Hindu customs than do the majority of their converted neighbours, their women, for instance wearing Petticoats (लहंगा) instead of drawers and red instance of Blue."

—दी ट्राइब्स एन्ड कास्टस आफ दी नार्थ वेस्टर्न प्रोविंसीज एन्ड अवध बाई डब्लू० क्रुक भाग २ पृष्ठ ४५०–४५७

—"Musalman Gujars—— all maintain their Hindu sections and regulate their marriages by them as their Hindu brothren do The elder brother can not marry the widow of his younger brother—betrothal is done on a lucky day fixed by the Pandit."

— They burry their dead when the burial is over they make a fire offering (agyari) by burning incense in the name of the dead and after waiting a short time they upset pitcher of water near the grave." "They employ Sarwariya and Sanadh Brahamans to give them omens and propitiate the family gods They so far observe the Holi and Nag Panchmi festivals that on those days they do not work On Friday they make offering of food to their deceased ancestors and when a death occurs in their family they

आर्य एवं अनार्य जातियों की आबादी तथा प्रत्यक्ष रूप से इनका रहन सहन, नागरिक जीवन इस का साक्षी है, वास्तव में गुर्जरों ने अपना उत्कर्ष भारतवर्ष में किसी विदेशी अनार्य जाति या बर्बर अनार्य कबीलों के रूप में नहीं किया किन्तु कुशल कूटनीति और राजनीतिज्ञ

feed beggars in the hope that the food will through them reach the dead man in the world of the dead.

The Tribes and Cas es by W. Crook B. A. Volume 2 Para 450—452

(iii) साप्ताहिक हिन्दू हरिद्वार वर्ष २० अङ्क १८ जून १९५४ पृष्ठ २ कालम २–३ (हरिश्चन्द्र सिंह भाटी सन)

"गाय के गोबर से जिस स्थान को लीपा जायगा वहां प्लेग के कीटाणु जीवित नहीं रहते इसका उदाहरण सरकारी रिकार्ड में मौजूद है। १८९७ ई० में प्लेग फैलने पर लाहौर में जब महामारी के मारे मौहल्ले के मौहल्ले खाली होगये, एक ओर प्लेग का इतना भयकर आक्रमण कि नगर ऊजड़ स्थन बन गया, मगर दूसरी ओर गुर्जरों की आबादी में पूरी शान्ति से सब काम काज हो रहा था और प्लेग का वहां एक भी केस नहीं हुआ। इस पर विशेषज्ञों ने जांच की तो विदित हुआ कि गूजर लोग (मुसलमान गूजर) अपने घरों में नित्य प्रति गाय के गोबर से लिपाई करते हैं। गाय के गोबर में प्लेग के कीटाणुओं को मारने की क्षमता रहने के कारण ही गुजरों के पूरे मौहल्ले में प्लेग ने पैर नहीं रक्खा। जब कि बाकी शहर की तिहाई आबादी समाप्त होगई। "पंजाब में गूजर प्रायः मुसलमान ही हैं। इस पर भी उनके द्वारा गायों की पर्याप्त सेवा की जाती थी और गाय के गोबर से चौका देने का उनके घरों में बहुत पहले से रिवाज चला आता था।

१३ गजेटियर आफ दी बम्बई प्रेसीडेन्सी भाग १२ खानदेश।

The most important of Khandesh Gujars cultivators are the Reves and Dores Reve Gujars are found in Dhulia,

Amalner, Savda, Raver and Shahada[2] and Dores, a far larger class, in Chopda, Erandol, Nasirabad, and throughout the west According to their hereditary chroniclers the Reve Gujars trace their origin from Jahu Raja and his four sons Anrigant, Jamadigant, Mehedigant and Suradigant and say that they came from Ranthambhor in Hindustan From this place they were driven to Junagad in Kathiwar, and from there to Ahmedabad where they settled for five generations From this stronghold they were dislodged by Chhapi Raja and spread up the Narbada valley into Nilgad where one Vibharsi Bhilaro or Vibharsi Tadvi ruled From Nilgad they spread east to Nimar and peopled thirty two territorial sub-divisions round Kargund From Kargund with a vanguard of 2000 carts they entered Khandesh Some of them across the hills by Thalner, and others down the Tapti valley by Asirgad This immigration is said to have happened in the eleventh century and that it was not much later than this is shown by the transfer in 1219 of the office of Jamner Deshmukh from a Gavli to a Reve Gujar[3] The Reve Gujars have eleven family stocks Gotras, and 360 families, kuls Of the families only thirty-six are represented in Khandesh[4] The gotras are Ambik, Atri, Bharadvaj, Gargya, Gautam, Jamdagnya, Kashyap, Kaushik, Kaushalya, prayag and Vashishtha The Reves consider themselves a very superior caste, abstaining from

---

2 They are said to be the same as the Reves or Levas of the Charotar between Ahmedabad and Baroda The following is a list of the Khandesh towns and villages where Reves are found Ampur, Changdev, Waghod, Tandalvadi Kerale, Loni, Dapor, Nochankheda, Shahpur, Patodi, Dasnur, Singur Nimbol Pimpri, Mangalvadi, Itner, Anturie, Khedi, Khilde Balvadi, Kumbharkheda, Jamner, Palaskheda, Pimpalgaon, Erandol, Utran, Parthadi, Dushkheda, Mansod, Akulheda, and Gorgavla Mr J Pollen, I C S

strong drink and flesh and eating only from the hands of a Brahman or one of their own caste They worship twenty three goddesses of whom the chief is the Jvalamukhi or fire-faced They observe three great religious ceremonies "

Dore Gujars who number forty-one families[1] are said originally to have been Dor Rajputs[2] The Deshmukhs of Chopda are one of the chief Dore Gujar families in Khandesh They claim to belong to the Pavar[3] family of the Kashyapraishi clan and worship goddess Dormata From Darbgad (?) they are said to have spread to Abu thence to Ujjain, thence to Ankleshvar in Broach, thence to Mandagad (?) and thence to Dabhoi fort in Baroda From Gujarat apparently about the close of the fifteenth century, soon after the Musalman capture of Pavagad (1484), they retired to Turannal hill in north-west Khandesh From Turanmal six brothers of the family separated and settled

---

3 Mr J Pollen I C S

4 These are Ambya Anjnya Bhardya Bhatanya Bobda Chichrya, Chaudhrya Chavrasha, Chhalotra Gahindar Kanhai, Kanhya Kaniya Kashyap Katarya, Loharya Maloya, Mokati, Muchhala Muchhaldei, Patlya Pipaldya Pipalnerya Punashva Ratdya Sarosrya Sarvaria Shaha, Shindghavnya, Sirsa, Suryavansha Unhalya Vaigandaa and Vishnu

1 The forty one families Kuls are Pavars of Dhargadh Chohans of Naglgadh Simal of Dodgadh Ghelot of Ahirgadh Kaba of Dhondgadh Khavi of Modgadh Solanki of Rohadgadh Chauhan of Kampegadh Mori of Chitodgadh Nikumbh of Modgadh Tonka of Asirgadh, Golel of Khedgadh Chavda of Latangadh Jhala of Patargadh, Dodive of Jaitpur Vaghela of Bundhelgadh Huna of Akhilgadh Survave of Bubbati Gujaric of Palegadh Padhikar of Sodhagadh Nimbol of Jhatangadh

one in Sultanpur another in Kothli, the third in Dhanpur, the fourth in Shirpur, the fifth in Shahada and the sixth Gomalsing in Mustaphabad commonly known as Chopda. The fifth in descent from Gomalsing Trimbakji son of Jevaji was, by Shah Jehan (1628-1658) appointed Deshmukh of Chopda. The present Deshmukh is fifth in descent from Trimbakji. They eat flesh, drink wine and take food from the hands of Reve Gujras. They worship a naked swordblade and a goddess Hemaj-mata, *represented sitting under a Sandal, Chandan tree*"

जाति के रूप में शक, कुशान, यूची (ऋषिक) एव श्वेतहूण आदि आर्य जातियों का आत्मसात करके किया। आर्य संस्कृति में वहा तक समय ब्राह्मणवाद ने अपनों का पराया बनाया और धर्मनिष्ठ ब्राह्मणों न आर्यों तक का परित्याग कर दिया।[१८] वहा इस मध्य

Devare of Jarugadh Bhagese of Rangadh Kagve of Kalpigadh— Wanhol of Dhauhaligadh, Dode of Krishnagadh Tovar of Delhi Khanre of Gajyangadh, Khichi of Analvadgadh, Jadav of Junagadh, Makvane of Makdaigadh, Barod of Bahmangadh Dabhi of *Kapadvagadh Harihar of Hornajgadh* Gaud of Ajmer Javkhedye of Shvetbandha, Sakhele of Ranjea, Bhatele of Jotpur *Suryavanshi of Sarsargadh Borse or Broad* of Borgadh and Kalumba of Rungadh

Mr J Pollen I C S

2 Dor Rajputs have disappeared from Rajputana where they were once famous and included in the thirty-six royal races (Tod's Rajasthan, I 105) They are still found in small numbers in the North West Province. *(Elliot's Races, I 87)*

3 The name Pavar is supposed to be the same as the better known Parmar Elliot's Races, I 20, note Trans Roy As Soc I 207

[१८] विष्णु पुराण ४-३-१८—१९-२०-२१

युगीन काल में एक और आर्य संस्कृति की धारा पनपी, जो परायों को अपना रही थी, ये थे भागवत लोग[१९] और गुर्जरों, जाटों, राजपूतों एवं यादवों ने इसी भागवत धारा में इन विदेशी कहलाने वाली—उस काल में ब्राह्मणों द्वारा बहिष्कृत—जातियों को आत्म-सात कर अपनी आर्य संस्कृति, वेश भूषा, भाषा में लीन कर लिया, इस बात का ऐतिहासिक मूल्य कितना अधिक है, इसको हम मुसलमानी राज्य तथा अंग्रेज राज्य के भारतीय इतिहास से भली प्रकार जान सकते हैं।

इतिहास द्वारा पता चलता है कि मध्य एशिया एवं तुर्किस्तान, चीन, भारत, बैक्ट्रिया, ईरान, आरमीनिया, शाम, मिश्र, यूनान, पश्चिमी रूस और पश्चिमी योरोप आर्य जाति द्वारा ही कृषि प्रधान, उद्योग प्रिय होकर सांस्कृतिक उन्नति शिखर पर पहुंच गये। संसार के इतिहास में ईसा के ७०० वर्ष तथा उससे भी पूर्व तक योरोप और एशिया तथा भारत के इतिहास में यही रहा कि मध्योत्तर के बर्बर लोग संस्कृत प्रदेशों को लूटते खसोटते तथा तहस नहस करते रहे। एशिया और योरोप के मध्य और उत्तर में मंचूरिया की सीमाओं से बूडापेस्ट तक स्टेपीज का प्रदेश फैला हुआ है, इनकी उत्तरी सीमा साईबेरिया के जङ्गलों की पट्टी से मिलती है। इन स्थानों की भौगोलिक अवस्था ऐसी रही कि यहां पर कृषि उद्योग धन्धे कभी नहीं पनप पाये वहाँ के निवासी बर्बर, खानाबदोश, घुमक्कड़ जातियों की शक्ल में असभ्य अवस्था में रहे। यह घुमक्कड़ कबीले कारवाँ की शक्ल में अपनी गाड़ी—पशुओं, रेवड़ों, परिवारों के साथ शस्य श्यामल प्रदेशों की तलाश में इधर उधर भटकते रहते थे और करीब ३॥ हजार वर्ष तक इन असभ्य जातियों ने विकसित प्रदेशों को रौंदना ही अपना मुख्य पेशा बनाये रक्खा। इन कबीलों में कभी भी किसी उच्च राजनैतिक, सांस्कृतिक सभ्यता का विकास नहीं हुआ। इसलिये इन बर्बर कबीलों से महान ऐतिहासिक गुर्जर जाति का या राजपूत अथवा जाटों का अस्तित्व मानना

---

[१९] भारतवर्ष में जाति भेद (आचार्य क्षिति मोहन सेन) पृष्ठ ३१

कल्पना पर आश्रित सिद्धान्त है।[10]

(४)

बाहरी जातियों में भारत में आने वाले शक, मालव गणराज्य के गर्दभिल्ल नामक उज्जैनी के राजा को ई० पूर्व ७१ वर्ष काल में निष्कासित एवं पराजित कर अवन्ति के स्वामी बन गये थे। ई० पूर्व ५७ वर्ष काल में गर्दभिल्ल के सुपुत्र विक्रमादित्य ने शकों को पराजित किया और अपने को शकारि नाम से प्रसिद्ध करके अपने नाम का विक्रम संवत् चलाया। इस विक्रमादित्य ने सार्वभौम राजा की तरह उज्जैन में राज्य किया।[11] सहारनपुर—१८वीं शताब्दि के अन्तिम काल तक गुजरात के नाम से प्रसिद्ध—जिले के खूबड़—गुर्जर तथा चोपड़ा और फिरोजपुर के पंवार गुर्जर आज भी स्वयं अपनी लोक कथाओं, भाटों की ख्यातियों एवं प्रचलित किंवदन्तियों एवं ऐतिहासिक परम्परा तथा लोकगीतों के आधार पर गर्दभिल्ल तथा

---

[10] मेडिवल हिन्दू इंडिया (वैद्य) प्रथम भाग पृष्ठ ८८

It is therefore strange that inspite of the fact that every person who has had intimate acqaintance with the peoples of the Panjab has marked the ethnic indentity of the Jats Gujars and Rajputs plainly aryan and not Scythian theories have usually been propounded by scholars about their being Scythian Getoe Yue-chi Khizar and what not and about their having come into India within historical times nay on this side even of the Christian era There is not a scrap of historical evidence even to suggest much less to prove such immigration (there is neither foreign mention of their coming into India nor have they any tradition of their own of some time coming into India nor is there any historical Indian record, stone inscription or other of their so coming) and we can only ascribe such theories to that unaccountable bias of the minds of many European and native scholars *to assign a foreign and Scythic origin to every fine* and energetic caste in India

[11] आदि भारत (प्रो० अर्जुन चौबे काश्यप) ३१७–३१८–३१९

विक्रमादित्य (उज्जैन) से अपना वंश सम्बन्ध मानते हैं और कालकाचार्य ने जो सौराष्ट्र तथा लाट में देशद्रोह के रूप में गर्दभिल्ल (गर्दभ राज) द्वारा अपनी बहिन (मोरठ) सरस्वती के अपहरण कर लेने के कारण शकों का साथ दिया था; इस कथा का वर्णन करते हैं। निःसन्देह विक्रमादित्य के शक विजयी गण में मालवा, मध्यभारत, राजस्थान तथा सौराष्ट्र के गण सम्मिलित थे। शक लोग भाग कर सिन्धु नदी से उत्तरापथ की ओर चल दिये और तक्षशिला में राज्य स्थापित किया। हम पहले ही लिख चुके हैं कि ब्राह्मणवाद के कारण मौर्य साम्राज्य के अधःपतन के पश्चात् देश में धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक क्रान्तियां जोर पकड़ गईं। विदेशी आक्रमणों एवं बौद्ध तथा जैनधर्म के जोर पकड़ने के बाद वैदिक धर्म की प्रतिक्रियाओं से देश की परिस्थिति में विचित्र परिवर्तन हो गये। ईसा के १०० वर्ष पूर्व से लेकर ईसा की पांचवी-छटी शताब्दि के प्रारम्भ काल तक के इतिहास में—गुर्जरों (गूजर) के प्रारम्भ काल के समय में—अनेक छोटे बड़े राज्यों का उदय हुआ। राज्यों की परस्पर की प्रतिस्पर्धा में गुर्जर राजवंशों का एवं उनके अनेक कुलों—वंशों का विकास उनके महत्व बढ़ाने में सहायक हुआ। निरन्तर के युद्धों में वे अपनी राजवंश की मर्यादा का विस्तार करते हुये समस्त उत्तरीय भारत पर छा गये।

मध्य एशिया की उथल-पुथल में शक अथवा सिथियन भारत में आचुके थे। यूची अथवा कुशान जाति के लोग हूणों से लड़ गये और पराजित होकर पश्चिम की ओर शकों (सेक) से उनकी मुठभेड़ हुई। यूची लोगों के भय से १२० ई० पूर्व शक लोग भागकर सिन्धुतट पर पहुँचे और बैक्ट्रिया को जीतकर भारत में राज्य स्थापित किया। यूची जाति की शाखा के कुशान वंश के सरदार कुजूल-कडफिसेज ने २५ ई० में अफ़ग़ानिस्तान और पंजाब को जीतकर अपना राज्य ईरान से लेकर पंजाब तक फैला दिया। कडफिसेज (२) ने पंजाब और गंगा यमुना के दोआबे को जीतकर अपनी राज्य की सीमा बनारस तक बढ़ा दी। इनके दूसरे और सम्राट कनिष्क ने ई० सन ७८ में गद्दी पर बैठकर काश्मीरसे विंध्याचलतक राज्य बढ़ा दिया। भारत से बाहर चीन

के काशगर, यारकन्द और खोतान तथा पार्थियन राज्य को भी अपने आधीन करके पेशावर नगर बसाया। बुद्ध की महानता से कनिष्क ने बौद्धमत ग्रहण कर लिया। संस्कृत का कवि अश्वघोष और आयुर्वेद का प्रसिद्ध विद्वान चरक इसके दरबार में रहते थे। व्यापार उन्नत अवस्था में था, गान्धार, अमरावती, मथुरा और सारनाथ तक्षणकला के लिये विख्यात थे। जावा, कम्बोडिया, बाली बोर्नियो और सुमात्रा द्वीपों में भी भारतीय उपनिवेश इस काल में बने। नवीन अनुसन्धान से यह भी पता चला है कि खोतान और तुर्किस्तान में भी भारतीय आकर इस काल में बसे थे। मिश्र और मेसोपोटामिया तक भारतीय व्यापारी धर्म प्रचार तथा व्यापार के लिये पहुच चुके थे। रोम की महिलाएं भारतीय मलमल को बडे चाव से पहनती थीं। रोम का इतिहास लेखक पिलनी भारत के माल के बदले अपने देश का अधिकांश धन भारत में चले जाने के लिये दुःख प्रकट करता है। कनिष्क के बाद वासिष्क, हुविष्क गद्दी पर बैठे। अन्तिम राजा वासुदेव पूर्ण शैव था।[१०]

इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान जिनमें जनरल कनिंघम मुख्य हैं, कुशान अथवा यूची कबीला गूजरों का मानते है।[११] बम्बई गजेटियर में सर जेम्स केम्पबेल कसाने-कुशान गुर्जरों के महत्त्वपूर्ण गोत्र के

[१०] भारत का चित्रमय इतिहास (महावीर अधिकारी) पृष्ठ १२३-१२४-१२५-१२६।

[११] कनिंघम आर्कियालोजिकल सर्वे की रिपोर्ट भाग २ पृष्ठ ६१

They are identified by General Cunningham[4] with the Kushan or Yuchi or Tochari, a tribe of Eastern Tartars "About a century before Christ their Chief conquered Kabul and the Peshawar country, while his son, Hima Kadphises, so well known to the numismatologist, extended his sway over the whole of the Upper Panjab and the banks of the Jumna as far down as Mathura and the Vindhyas, and his successor, the no less familiar King Kanishka, the first *Indo Scythian Buddhist prince, annexed*

[4] Archeological Reports, II, 61

सम्बन्ध में निर्णय करते हैं कि निश्चय ही कुशान वंश पूर्णतया इनका प्रतिनिधि है और गुर्जरों में कसाने—कुशान गूजर महत्त्वपूर्ण संख्या और स्थिति में हैं।[१४] सबसे आश्चर्यजनक वर्णन यह है कि यह कसाने

Kashmir to the Kingdom of the Tochari These Tochri or Kushan are the Kaspeiraei of Ptolemy, and in the middle of the second century of our era, Kaspeira, Kasyapura or Multan was one of their chief cities Probably about the beginning of the third century after Christ, the attack of the White Huns recalled the last king of the united Yuchi to the West, and he left his son in charge of an independent Province, whose capital was fixed at Peshawar, and from that time the Yuchi of Kabul are known as the Great Yuchi, and those of Punjab as the Kator or Little Yuchi Before the end of the third century a portion of the Gujars had begun to move southward down the Indus, and were shortly afterwards separated from their northern by another Indo Scythian wave from the North In the middle of the fifth century there was a Gujar Kingdom in South Western Rajputana, whence they were driven by the Balas into Gujarat of the Bombay Presidency, and about the end of the ninth century, Ala Khan, the Gujar King of Jammu, ceded the present Gujardesa corresponding very nearly with the Gujarat District, to the King of Kashmir The town of Gujarat is said to have been built or restored by Ala Khan Gujar in the time of Akbar"

[१४] बम्बई गजेटियर भाग ६ जि० १ पृष्ठ ४९१ "The Gujar Subdivision of (कसाने) Kusane on the Indus and Jamana suggests a recruitment from the great Saka Tribe of Kushan Before the arrival of the White Huna horde the power of the Kushanas had been broken by Samudra Gupta (A D 396-415) the existence of a Kushan Sub division of Gujars (so far as it goes) seems to favour the view that the Kushan and Gurjar are distinct not the view that they are the same" Bombay Gazetteer Vol IX, Part I, Page 491

अपन कुशान साम्राज्य काल में भारत और भारत के बाहर सुदूर मध्य एशिया के उपनिवेशों तक मे पाये जाते हैं। पेशावर के आसपास काश्मीर, पजाब, देहली के पास राजपूताना, मालवा, मध्य भारत तथा मध्यप्रदेश-बरार तक बसे हुये हैं। इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान महा महोपाध्याय राय बहादुर गौरीशकर हीराचन्द ओझा एव अन्तर्राष्ट्रीय विद्वानों द्वारा तथा एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका द्वारा यह पता चलता है कि यूची अथवा कुशान पूर्णतया आर्य एव आर्य सभ्यता से ओतप्रोत थे।[११] उनकी राजनैतिक परिस्थिति और सामाजिक दृष्टिकोण मे भारतीय आर्य जाति के राजन्य (क्षत्रिय) गुर्जर समूह में मिल जाना स्वाभाविक था। जिनका ओत यूची-कुशान, पवित्र चेची गोत्र तथा वश के रूप में गुर्जरों मे विद्यमान है। इन आर्य कुशान-यूची लोगों ने ऋषिक-तुषार नाम से भी इतिहास में प्रसिद्धि पाई है। गुर्जरों के वर्तमान कुशान-कसाने वश से भी यही स्पष्ट होता है।

कुशान (कसाना) के साम्राज्य के पतन के पश्चात भारतीय इतिहास में काबुल के निकटवर्ती प्रदेशों पर कुशानों के राज्यों का पता चलता है। क्षत्रप लोगों के, जो शक लोगों से सम्बन्धित थे, तक्षशिला, मथुरा, उज्जैन (मालवा), मारवाड (राजस्थान) मे राज्यों का पता चलता है। नाग साम्राज्यकाल में आभीर (अहीर) आदि जातियों के गण राज्यो का पुराणों में वर्णन है। भारतीय लडाकू सैनिक जातियों (जिन्हे भारतीय वर्ण व्यवस्था ने क्षत्रिय सज्ञा दी है) की सगठन शैली का सूत्र पात—मौर्य साम्राज्य काल के प्रारम्भ में शूद्र राज्य तथा विदेशी राज्यों की शक्ति को आर्य चाणक्य की सहमति से समाप्त करने के लिये चन्द्रगुप्त मौर्य द्वारा—आरम्भ हो चुका था। इसके बाद विदेशी जातियां के भारतीय धर्म और जातीयता में आत्मसात होने के साथ साथ गुप्त साम्राज्य काल में छोट-छोटे राज्यों की युद्धप्रिय क्षत्रिय जातियों के सगठन द्वारा गुर्जर जाति के रूप मे अनेक क्षत्रिय एव आर्य कुलों के समागम से प्रसिद्ध हुआ।

[११] राजपूताने का इतिहास प्रथम भाग (ओझा) पृष्ठ ५६
एन साइक्लोपीडिया बिटनिका जि० २३ पृष्ठ ६३६

गुप्त साम्राज्य काल में पूर्वी राजपूताना, मालवा, पंजाब तथा वर्तमान दक्षिण काठियावाड़ के समीप प्रदेश में गुर्जरों के छोटे-छोटे शक्ति सम्पन्न राज्यों की सम्भावना इतिहास के विद्वानों द्वारा पाई जाती है।[16] चत्रपों के ई० सन् १५० के बाद के रूद्रदामन के राज्य के बाद ही उसके आधीन देशों पर गुर्जरों के राज्याधिकार तथा उनके आधीन देशों का गुजरात (गुर्जरत्रा) गुर्जरों से रक्षित प्रदेशों का पता चलता है।[17] इतिहास सम्बन्धी अनुसन्धान से यह ज्ञात होता है कि कुशान साम्राज्य के अधःपतन में मूल रूप, पहले गणतन्त्रों में वीर यौधेय सबसे प्रबल थे; जो युद्धप्रिय जाति थी। बृहत्संहिता के अनुसार यह युद्ध सम्बन्धी जीविका वाली जाति उत्तराखण्ड की थी और अपने को युधिष्ठिर की सन्तान समझती थी। इनके सिक्के सतलज, यमुना काँठे में वर्तमान कांगड़ा, देहरादून, देहली, सहारनपुर तक पाये जाते हैं।[18] उनके नाम पर सतलज की घाटी से बहावलपुर तक का प्रदेश जोहिया-वाड़ कहलाता था। इन वीर-यौधेयों का 'वीर गुर्जर' जाति में समावेश उनका प्रारम्भ का क्षत्रिय-संगठन है। उनके नाम के साथ वीर-प्रसिद्धि-वाचक विशेषण इसका खास प्रमाण है। गिरिनार पर्वत पर जूनागढ़ में जो गुर्जरों के पूर्व के रूद्रदामन का संस्कृत भाषा का सबसे उत्कृष्ट शिलालेख पाया जाता है, उससे पता चलता है कि उसने परम पराक्रमी यौधेयों को, जो सब क्षत्रियों में प्रकट वीर उपाधि धारण करने के कारण अभिमानी थे, हराया। उसके समय में उसके बाद के 'गुर्जर प्रदेश' का नाम स्वभ्र और मरू है[19] और ऐसा प्रतीत होता है कि वीरकर्मा इन गुर्जर क्षत्रियों (यौधेयआदि) ने क्षत्रपों के राज्य की समाप्त कर गुर्जर

---

[16] बम्बई गजेटियर जि० १ भाग १ पृष्ठ, २-५ (डाक्टर भगवान लाल इन्द्र जी)

[17] राजपूताने का इतिहास प्रथम भाग (ओझा) पृष्ट १८७

[18] आदि भारत पृष्ट २४४

[19] एपिग्राफिका इन्डिका जि० ८ पृष्ट ४८
— ना० प्र० पत्रिका भाग २ पृष्ट ३८२

नाम की प्रसिद्धि उनकी राजधानी भीनमाल वाले आबू पर्वत के आस पास के प्रदेशों को दी, जिसकी विस्तृत परिधि ह्वेनत्सांग के समय ८३३ मील थी और बाद को उत्तरीय भारत का अधिकांश भाग कुछ निश्चित समय में उनके राज्य में गुर्जरत्रा (गुजरात) नाम से प्रसिद्ध था। वर्तमान गूजर व टाड के वीर गूजर तथा रासो के गूजर एवं कुमारपाल प्रबन्ध में वीर गूजरों के नाम से इन्हीं को प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद उत्तर भारत का इतिहास गुर्जर (गूजर) क्षत्रिय-प्राचीन राजन्य-लोगों का संघर्षमय इतिहास है। गुप्त साम्राज्य की केन्द्रीय शक्ति के निर्बल पड़ जाने पर सबसे पहले प्रान्तीय शासकों को स्वतन्त्रता प्राप्त होने पर सौराष्ट्र में सेनापति भट्टारक ने 'वल्लभी' को राजधानी बनाकर मैत्रक (गुर्जर) राजकुल स्थापित किया।[१०] इतिहास के विद्वानों का विश्वास है कि यह वंश मैत्रक मेहर या मेर (सूर्य)—जो आज भी राजपूताना और पंजाब में गूजरों का प्रतिष्ठा सूचक नाम है—से सम्बन्धित है।[११] डाक्टर भगवानलाल इन्द्र जी तथा भण्डारकर आदि विद्वान भी यही मानते हैं कि वल्लभी (भावनगर के समीप वाला) से २५० वर्ष तक शक्ति सम्पन्न राज-शक्ति वाले

---

[१०] देखिए रे। दी मैत्रकाज आफ वल्लभी, इण्डियन क्वार्टरली हिस्ट्री ४ (१९२८) पृष्ठ ४५३ ७४, प्राचीन भारत का इतिहास (डा० त्रिपाठी) पृष्ठ २१४, प्राचीन भारत का इतिहास (डा० भगवत शरण उपाध्याय) २८७, प्राचीन भारत (श्री सी० एस० श्रीनिवासाचारी एम० ए०, एम० एस० रामास्वामी आयगर एम० ए० पृ० २१८

नोट— सम्भवतया यही भट्टारक, बटारे के रूप में पंजाब, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पेप्सू, हिमाचल प्रदेश में पाये जाते हैं। गंगोह तथा लखनौती (सहारनपुर) में बटारों की बावनी इनकी प्रसिद्ध है।

[११] 'In the Punjab, Gujrat the Gujar Title of Honour is Mihir or Mahar" Gujrat Gazetteer Page 50-51
" Also the Chief man among Rajputana Gujar are called Mihar Rajputana Gazetteer Vol I, Page 80

भट्टारक के शासक कुल गुर्जर जाति के थे [३३] जिन्हें ४९० ई० या ५२५ ई० के लगभग सत्ता प्राप्त थी। भड़ोच के गुर्जर राजा दद्दा ने हर्ष के हराये जाने पर वल्लभी के राजा ध्रुवभट्ट को जो सहायता दी थी और उसे शरण देकर अपनी शक्ति से उसका राज्य फिर उसे दिला दिया था,[३४] इससे स्पष्ट है कि इस घनिष्टता का खास कारण एक जाति (गुर्जर) का होना ही था।[३५] भड़ौच के गुर्जर राजाओं (महासामन्त) की भाति यह लोग भी सेनापति के पद के महत्व से प्रतिष्ठित थे।

---

[३३] "The view adopted by Dr Bhagwan Lal Inderjee in his Gujrat History is that the Valablus who came into power either about A D 490 or 525 were Gurjaras This view he supported by the absence of any reference to the family or stock of Bhattaraka, the founder of the dynasty by the friendly relations subsisting between the rulers of Valablu and the Gurjaras of Broach and by the fact that other Chiefs of Kathiawara during the seventh and eighth century were Gurjaras of the Chapa family " (Bombay Gazetteer Vol IX, Part II, Page 479)

[३४] गुजर नरेश दद्दा के नवसारी के दानपत्र म निम्न उल्लेख मिलता है "श्री हर्ष देवाभिभूतो श्री वल्लभी पति परित्राणोपजात भमद दत्रा विभ्रम यशोविनाा श्री दद्द प्रर्थात 'श्री हर्ष देव से पराजित वल्लभी नरेश का परित्राण करन के कारण प्राप्त यश का वितान श्री दद्द के ऊपर निरन्तर झूलता रहता था। जर्नल श्राफ दी बम्बई ब्रान्च आफ दी रायल एशियाटिक सोसाइटी जि० ६ पृष्ट १ इन्डियन एन्टीक्वेरी जि० १३, १८८४ ई०, पृष्ठ ७०-८१

[३५] "गुजर (गुजर) जाति के बसने और राज करने के कारण गुजरात नाम प्रसिद्ध हुआ। ई० सन् ७८-१०६ म कनिष्क सम्राट के राज्यकाल म गुर्जर इधर आये। गुप्त साम्राज्य काल म उनका उत्कर्ष प्रारम्भ होगया। चौथी शताब्दि के अन्त से आठवी शताब्दि तक मध्य गुजरात के

राना हर्षवर्धन से हराये जाने के बाद गुर्जरों की शक्ति में फिर राज्य वापस पा जाने पर हर्ष ने स्वयं अपनी लड़की का विवाह धरसेन के साथ कर दिया। धरसेन चतुर्थ को चक्रवर्ती का पद प्राप्त था, जो बड़ा शक्तिशाली और विजेता था। इसके बाद भी एक शताब्दि तक यह कुल राज्य करता रहा। नालन्दा की तरह वल्लभी भी शिक्षा का केन्द्र इसके राज्य काल में रहा। महाकवि भट्टि ने 'भट्टिकाव्य' यहीं लिखा। तीन शताब्दि तक मालवा, गुजरात, सौराष्ट्र पर भट्टारक वंश ने राज्य किया और अन्त में अरबों ने भेद पाकर रात को सोते हुए इनके राजा और सैनिकों को मार कर छल कपट और विश्वासघात से इस महत्वपूर्ण राज्य का अन्त कर दिया। इस वंश में धरसेन, ध्रुवसेन, द्रोणसेन, शिलादित्य आदि बड़े प्रसिद्ध प्रजापालक एवं वीर शासक हुए।[११]

(४)

गुप्त कालीन भारतीय इतिहास की परिवर्तनकारी मुख्य घटना श्वेतहूणों का आक्रमण है। यशोधर्मन तथा स्कन्दगुप्त ने यद्यपि इनको पराजित और दांत खट्टे करने का श्रेय प्राप्त किया था, किन्तु इन्होंने भारतीय इतिहास में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया।

शक्तिशाली वल्लभी जिनका सम्बन्ध मालवे और कन्नौज के राजाओं के साथ था गुर्जर वंश के थे" । बम्बई गजटियर जि० १, भाग १, पृष्ठ २-५ (डा० भगवान लाल इन्द्र जी) इंडियन एण्टीक्वेरी जि० ४०, पृष्ठ ३०

नोट—वल्लभी राजवंश के साथ जुड़े हुए मैत्रक शब्द से भी इसी मत की पुष्टि होती है जिसका अर्थ सूर्य है। प्राचीन समय से अब तक सूर्य के गुजर (गूजर) महान पुजारी हैं। वैद्य महोदय ने भी सूर्य मंदिर गूजरों द्वारा भीनमाल में स्वीकार किया है। सूर्य की आस्था से ही सम्भवतया यह लोग मैत्रक नाम से अधिक प्रसिद्ध होगये। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग भड़ौंच—भीनमाल के गूजरों की भांति वल्लभी के इन मैत्रकों को भी क्षत्रिय मानता है। इन सब बातों से पता चलता है कि यह राज वंश निस्संदेह गूजर लोगों का था।

[११] आदि भारत (काश्यप) ४२०-२१-२२

विश्व के इतिहास में हूण प्रबल, वीरकर्मा, दुर्द्धर्ष आर्य जाति थी,[१६] जो पामीर के पठारों से आकर टिड्डी दल की भांति चारों ओर सर्वनाश का दृश्य उपस्थित करती हुई, मध्य एशिया की जातियों को जड़मूल से उखाड़ कर उनके लिये सर्वनाश का पुन्ज खड़ा करती हुई आगे बढ़ती चली गई। उसकी एक शाखा ने एटिल्ला (अत्तिल) हूण सरदार के नेतृत्व में दक्षिणी तथा पूर्वी योरोप में विनाश का ताण्डव नृत्य उपस्थित कर दिया, विध्वंस की अग्नि जलाती हुई रोम शक्ति को भस्म कर गई।[१७]

सन् ४८४ ई० के लगभग, हूणों ने फारस पर आक्रमण किया, ईरानी सम्राट फिरोज को मार डाला और पूर्ण शक्ति के साथ भारत की ओर अग्रसर हुए। तोरमाण के सेना नायकत्व में हूण भारत के उत्तर पश्चिमी भाग में छा गये। ५०० ई० के लगभग तोरमाण ने गुप्त साम्राज्य की पश्चिमी सीमा पर अधिकार कर लिया और क्रमशः मध्य भारत तक अपना दबदबा स्थापित किया। तोरमाण के पुत्र मिहिरकुल की राजधानी स्यालकोट (शाकल) थी। प्रभाकर वर्धन के समय में हूणों, गुर्जरों के साथ उसके अनेक संघर्ष हुए।[१८] ५४२ ई० में मिहिरकुल मर गया। कालान्तर में यह हूण भारतीय जनता में घुल मिल गये। टाड के मतानुसार राजपूत सीथियन जाति के हैं,[१९] जो स्पष्टतः हूण और उनसे सम्बन्धित कबीलों के थे। इतिहास के विद्वानों ने जो सिद्धान्त प्रतिपादन किया है और स्मिथ तथा उसी के आधार पर दूसरे प्रसिद्ध

---

[१६] राजपूताने का इतिहास पृष्ठ ६१ (ओझा)

[१७] आदि भारत (काश्यप) पृ० ४२५

[१८] हूर्ण चरित निर्णय सागर १९३७ पृ० १२०

[१९] अब यह सप्रमाण सिद्ध होगया कि बहुत से राजपूत वंशों की उत्पत्ति शक, कुशान लोगों से, अथवा ई० सन् ४८० के आसपास गुप्त साम्राज्य का नाश करने वाले श्वेत हूणों से हुई है। हूणों से सम्बन्ध रखने वाले गुर्जरों ने हिन्दू धर्म स्वीकार किया और इन्हीं के मुख्य सरदारों से उक्त राजपूत वंशों की उत्पत्ति हुई है। टाड राजस्थान की भूमिका सर विलियम क्रूक तथा टाड राजस्थान जि० १ प्रकरण ६

विद्वानों ने यह सिद्धान्त निश्चित किया है कि "जिन हूणों ने भारत पर आक्रमण किया वे गौर वर्ण के थे, उनको अन्य आक्रमणकारी दलों से जो मंगोल नस्ल के लगते थे, सहज ही अलग किया जा सकता था। ये हूण गौरवर्ण के लम्बे और सुन्दर लोग थे। इन्होंने भारतीय आर्यों में मिलकर यहां की जनसंख्या बहुत बढ़ा दी। राजपूतों के कई कुल गूजर और जाट तथा कुछ अन्य वर्तमान जातियां इन्हीं गौरवर्ण वाले हूणों की सन्तान हैं।"[10] स्मिथ ने भी यही लिखा है, "गुर्जर हूणों का एक शक्तिशाली दल था, जिसने कन्नौज में अपना साम्राज्य स्थापित किया। राजपूतों के अनेक वंश गुर्जरों की सन्तान हैं। यह हूण जाति ही विशेष कर राजपूताने और पंजाब में स्थायी रूप से आबाद हुई, जिसमें अधिकांश गुर्जर थे, जो अब गूजर कहलाते हैं।"[11] "विदेशी कुल भी जब हिन्दू धर्म स्वीकार कर लेते थे और शासन उनके हाथ में होता था, उनको क्षत्रिय मान लिया जाता था। ऐसी ही हूणों से सम्बन्धित गुर्जर एक विदेशी जाति है, जिन्होंने दक्षिणी राजपूताने में भीनमाल की राजधानी का राज्य स्थापित किया और कन्नौज में शक्तिशाली राजवंश तथा साम्राज्य की स्थापना की।"[12]

वास्तव में कुशान वंश की शाखा यह श्वेतहूण एक आर्य जाति थी,[13] जिसने शक्ति द्वारा योरोप एशिया पर प्रभुत्व स्थापित किया। चीनी ग्रन्थों में, यूनानी पुस्तकों, महाभारत में भी इनका वर्णन है। बौद्ध मतानुयायी होने से ब्राह्मण इन्हें धर्म द्वेष से म्लेच्छ मानने लगे। चीनी यात्री सु गयुन ५२०ई० में गांधार में हूण राजा का वर्णन करता है, जिनका लेलिह राजा था। हूणों के सिक्कों में शिव के नन्दी और जयतु वृषध्वज या जयतु वृष (नन्दी) और शिव के त्रिशूल के चिन्ह हैं, जो उनका आर्य

---

[10] भारत वर्ष का इतिहास (एल० मुकर्जी एम०ए०) पृष्ठ-१५

[11] अर्ली हिस्ट्री आफ इंडिया (स्मिथ) पृ० ४११

[12] भारतवर्ष का इतिहास (एल० मुकर्जी) पृष्ठ १८८-१५२

[13] नद्दकोके हिन्द मन बकनी के आधार पर, राजपूताने का इतिहास पृष्ठ १४२-४३-४४-४८

होना सिद्ध करते हैं।[१०] मेवाड़ के क्षत्रियों में सबसे प्रसिद्ध राजवश गुहिल राजाओं में राजा अल्लट (ई० सन ६७३) की राणी हरियदेवी हूण वश की थी।[११] हैहय क्षत्रियों के राजा कर्ण का विवाह हूण कुमारी आवल्लदेवी के साथ हुआ था।[१६] क्षत्रियों के ३६ राजवशों में हूण प्रमुख रहे है। यहां के क्षत्रियों के साथ उनके सम्बन्ध प्रकट करते हैं कि वे आर्य क्षत्रिय थे। भारत में यह ईरान का राजाना लूटकर लाये और यशोवर्मन से हार खाने पर भी हूणों की राजसत्ता भारत में पाई जाती थी। जिसका वर्णन उन युद्धों में मिलता है, जो प्रभाकर वर्धन,[१७] राज्यवर्धन,[१८] मालवे के पवार राजा हर्षदेव सीयक,[१९] कलचुरी राजा कर्ण,[१०] परमार राजा सिन्धुराज,[११] राष्ट्रकूट राजा कक्कल[१२] आदि से हुए। जिनका वर्णन उनके शिलालेखों में है। कुशान या श्वेतहूण आर्य थे और भारतीय आर्य क्षत्रियों की वीरकर्मा गुर्जर जाति में उनका मिश्रण स्वाभाविक था। इससे न गुर्जरों के गौरव तथा आर्य क्षत्रिय होने में कोई कमी आती और न उनका विदेशी अनार्य श्रोतों से आना सिद्ध होता। आर्यों की यह एक ऐतिहासिक परम्परा है जिससे भारतीय आर्यों ने आर्येतर जातियों के सम्मिश्रण द्वारा अपनी जाति सभ्यता एव संस्कृति को पुष्ट किया था, इसी परम्परा को गुर्जरों तथा अन्य क्षत्रियों ने इस काल में पूर्ण किया। विदेशी जातियों के मिश्रण के सिद्धान्त में एक वास्तविकता है जिसे ओझल नहीं किया जा सकता किन्तु उसका आशय कदापि यह नहीं है कि "हूणों के साथ या पीछे से गुर्जर आदि विदेशी अन्य जातियां भारत

[१४] राजपूताने का इतिहास १ पृष्ठ ६२

[१५] इन्डियन एन्टीक्वेरी जि० ३६ पृष्ठ १९१

[१६] ऐपिग्राफिका इन्डिका जि० २ पृष्ठ ४

[१७] ऐपिग्राफिका इन्डिका जि० १ पृष्ठ ६६

[१८] वही जि० १ पृष्ठ ६६

[१९] वही जि० १ पृष्ठ २२५

[१०] वही जि० २ पृष्ठ ६

[११] वही जि० १ पृष्ठ २६८

[१२] इन्डियन एन्टीक्वेरी जि० १२ पृष्ठ २६८

में भारतीय जन समुदाय में बिल्कुल घुल मिल गई।[६२] वास्तव में गुर्जरों की ऐतिहासिक परम्परा कुल गोत्र वंशावली एवं प्रवर यह सिद्ध करते हैं कि ये भारतीय आर्य संस्कृति की उज्ज्वल परम्परा वाले क्षत्रिय हैं और भारत को ही अपना विदेश मानते हैं।

ईसवी सन् की पांचवी छठी शताब्दि तक का उत्तरीय भारत तथा दक्षिण काठियावाड़ एवं गुजरात देश का इतिहास गुर्जरों (गूजरों) के वैभव काल का वर्णन भारतीय उच्च क्षत्रियों की परम्परा का द्योतक है[६३] जो जाति के महत्त्वाकांक्षी, असाधारण रूप से वीर, धर्माचरण में संलग्न संगठन कला एवं प्रजारंजन में निपुण, महान-क्षत्रियों द्वारा इस काल में गुर्जर जातीय उत्कर्ष उत्तरोत्तर राज्य साम्राज्य के रूप में उनके उच्च आर्य चरित्र और शक्ति से बढ़ता चला गया। उनके द्वारा आबू पर्वत पर पवित्र यज्ञ विधि से दीक्षित वसिष्ठ एवं अन्य ब्राह्मण विद्वानों, ऋषि मुनियों के पूर्ण सहयोग एवं प्रेरणा से क्षत्रियों में, स्वस्थ स्रोतात्मा संस्कृति का प्राचीन आर्य सभ्यता के तत्व आर्य जाति तथा भारत के अभ्युत्थान के लिये, सफल प्रयत्न किया गया। गुर्जरों के मुख्य अग्निकुल के चार वीर नायकों के उत्तराधिकारी पवार प्रतिहार, चौहान एवं सोलंकी वंश[६५]—जिनके अस्तित्व का प्राचीन सूर्यवंश तथा चन्द्रवंश के रूप में इतिहास में पहले भी पाया जाता है[६६]—इस काल में विशेष रूप से प्रसिद्धि प्राप्त कर गये तत्कालीन हिन्दू समाज की क्षत्रिय जाति में गुर्जरों के उत्कर्ष के कारण शक यूची एवं श्वेतहूणों के आर्य

---

६३ भारत का इतिहास पृष्ठ १२६ (श्री अनिलचन्द्र बनर्जी)

६४ बम्बई गजटियर (सर जेम्स केम्पबल) पृष्ठ ४८०

६५ इंडियन एन्टीक्वेरी (भण्डारकर) भाग १३ पृष्ठ ४१६
बम्बई गजटियर भाग १२ (खानदेश) पृष्ठ ६२

६६ पृथ्वीराज विजय महाकाव्य श्लोक ७१ ५० ५४ तथा हम्मीर महाकाव्य सर्ग १ श्लोक ३४ ३५, ३ के आधार पर राजपूताने का इतिहास पृष्ठ ७३, ७६ सोलंकियों का प्राचीन इतिहास (ओझा) पृष्ठ ३–१३, प्राक्सिया लोजिकल सर्वे आफ इण्डिया एनुअल रिपोर्ट ईस्टर्न सर्किल १९०३–४ पृष्ठ २८०

दलों के इनमें सम्मिश्रण होने से इस जाति का महत्व और भी बढ़ गया और इन्होंने समान रक्तवंश पर आधारित आर्य जाति के विभिन्न विदेशी कहलाने वाले कुलों को आत्म सात करके आर्य जाति तथा भारत देश पर होने वाले मरूटों से देश, धर्म एवं जातीयता की रक्षा करने का यश प्राप्त किया। महत्वाकांक्षी मध्ययुगीन क्षत्रियों के जागृत संघ ने ऐतिहासिक काल में अपने को गुर्जर नाम से प्रसिद्धि देकर अपने प्राचीन क्षत्रिय कुलों का समागम किया। वास्तव में भारतीय इतिहास के रंगमंच पर से क्षत्रिय घराने कभी अस्त नहीं हुए। जातियों को जीवित रखने वाली धारा और नवीन मिश्रण से उन्हें समय समय पर नवीन शक्ति प्राप्त हुई। पहले भी इतिहास से पता चलता है कि जातियां मिश्रण से सभ्यता एवं नवचेतनता ग्रहण करके पुष्ट एवं परिवर्धित होती हैं। विभिन्न जातियों का आपस में मिश्रण सभ्यता का आवश्यक अंग है।[१] इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि इस मिश्रण से जो स्वाभाविक एवं अनिवार्य था और सभ्यता का आवश्यक अंग था, क्षत्रियों के उत्तराधिकारी गुर्जर एवं राजपूतों को बड़ा बल मिला। उनके आचार विचार, धार्मिक, सामाजिक नियमों, गोत्र एवं प्रवरों द्वारा शिलालेखों द्वारा एवं इतिहास से इन सब बातों की पुष्टि होती है। गुर्जर (गूजर) क्षत्रियों के उन कुल गण गोत्रों का संगठन है, जो भारतीय राजनैतिक क्षितिज में—उस काल में—विशिष्ट शौर्य भावना रखता था। उनकी संगठन शैली से यह पता चलता है कि उन्होंने तत्कालीन भारत में प्रसुप्त क्षात्र भावना को जन्म दिया और बाहरी आक्रमणकारियों को उखाड़ करते हुए, जैसा कि हम पूर्व भी वर्णन कर चुके हैं, क्षात्र धर्म की रक्षा एवं भारतीय सभ्यता की रक्षा के लिये न केवल शक्तिशाली अरब शत्रुओं में चलिक उनके बाद अन्य बड़े-बड़े आक्रमणों का सामना सफलतापूर्वक किया। इसीलिये अरब यात्रियों ने उन्हें क्षत्रिय, मुसलिम धर्म तथा उनकी सभ्यता का शत्रु प्रसिद्ध किया। भारतीय इतिहास इस प्रकार के उदाहरणों से भरा पड़ा है। उनके

[१] मध्यकालीन भारत (प्रो० शंकरदयाल अग्रवाल एम० ए०) पृष्ठ १६

नाम पर प्रसिद्धि का क्रम इस प्रकार चला कि इस देश के अनेक भू-भाग उनके नाम पर प्रसिद्ध होते चले गये। देश की तत्कालीन परिस्थिति में जो राजवंश स्थापित हुये थे वे समान रक्तवंश, सभ्यता, सामाजिक नियमों पर आधारित वंशों के आधार पर जातियों द्वारा आश्रित भाई बन्धुओं के सैनिक बल पर स्थापित हुवे।[१८] उनका सम्बन्ध देश—प्रान्तों की धनिष्ठ जातियों से अधिक था। अपने यशस्वी वंशों की सामुहिक स्मृति रूप यादगार प्रान्तों को प्रसिद्धि देकर क्षत्रिय जाति की प्रसिद्धि का कारण बनी। वास्तव में क्षत्रिय शब्द सदा से ही सत्ता स्थापित करने वाला, सैनिक शक्ति वाला, प्रजा को अत्याचारों से मुक्त करके देश की रक्षा करने वाले के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है और उसके नाम से देशों की प्रसिद्धि का क्रम इसी कारण चला आ रहा है। कालीदास के एक श्लोक से भी यही प्रकट होता है कि दुःखों से छुड़ाने वाला क्षत्रिय शब्द संसार में रूढि बन गया है। मुसलमानी राज्य के प्रारम्भ काल में क्षत्रियों की विशेष शाखा का उद्भव "राजपूत" जाति के नाम से इसी प्रकार होना है, जिनकी प्रसिद्धि का समय ११-१२ शताब्दि के बाद का है। इसमें पूर्व तक के अनेक राजवंश गुर्जर आदि को क्षत्रिय नाम से ही प्रसिद्धि प्राप्त हुई है। इतिहास के विद्वानों ने जो गुर्जर (गूजर) एवं राजपूतों को विदेशी जातियों से सम्बन्धित माना है, वह वास्तव में ऐतिहासिक परम्परा एवं जातियों की सामाजिक संगठन शैली का सही अध्ययन न होना है, जिसकी ओर इन जाति के विद्वानों ने कभी ध्यान नहीं दिया और दूसरे विद्वान उनकी आन्तरिक व्यवस्था तक पहुचने में समर्थ नहीं हो पाये। आर्य जाति की आदिम भूमि मध्य एशिया से आने वाली आर्य जातिया जब इस देश में आई और बृहत्तर भारत में जब आर्यों ने मध्य एशिया तक साम्राज्य स्थापित किये तो आर्य जाति के राजन्य क्षत्रिय समूह का—आर्य सभ्यता से ओतप्रोत—वहा प्रतिष्ठित होना स्वाभाविक था और भारत में आने पर उनका यहा की वीरकर्मा

---

१८ हिन्दू भारत का उत्कर्ष (चिंतामणी विनायक वैद्य) पृष्ठ ३३७

जातियों में मिश्रित होना अनिवार्य था।[६४] इसलिये गुर्जर एवं राजपूतों में शक, यूची अथवा कुशन एवं श्वेतहूणों का मिश्रण उन्हें किसी विदेशी जात या अनार्य कबीलों का नहीं मानता। इतिहास के विद्वानों ने, जो अपनी महत्वपूर्ण खोज द्वारा इस बात पर विशेष बल दिया है, उसका समाधान और-पुष्टि स्वयं ही उनके द्वारा हो जाती है। गुप्त कालीन भारत में पाटलीपुत्र (मगध) यद्यपि केन्द्र की राजधानी थी किन्तु समुद्रगुप्त के विजय चक्र से उत्तरीय भारत के नौराज्य उसके आधीन होगये और इस प्रकार समस्त उत्तर भारत आर्यावर्त कहलाने वाला प्रदेश उसके आधीन होगया, जिसमें सम्भवतया गुर्जर लोगों को गुप्त-साम्राज्य की सत्ता काल में स्वतन्त्र विकास का अवसर प्राप्त न हो पाया और उसके पश्चात वे उत्तरोत्तर विकासोन्मुख होते चले गये।

डा० भण्डारकर महोदय ने जो ऐतिहासिक काल के अनेक प्रमाणों द्वारा अग्निकुल के प्रसिद्ध क्षत्रिय वंशों को गुर्जर जाति का मानते हुए प्रमाण प्रस्तुत किये, वे आज के गूजरों के विभिन्न कुलों में उसी प्रकार मान्यता लिये हुए हैं।[६५] गुप्त साम्राज्य के लड़खड़ाते अस्तित्व को जब हूणों ने छिन्न भिन्न कर दिया तो हूणों और उनके पूर्व के कुशन साम्राज्य के संस्थापक यूची अथवा कुषानों (कसानों) को आत्मसात करके, उसके खण्डहर पर गुर्जरों ने अपनी शक्ति को विकसित

---

[६४] "सर ओरेल स्टीन को मुल्तान की खुदाई में जिन नगरों के ध्वंसावशेष मिले हैं वे निश्चित रूप से भारतीयों की बस्ती के रहे होंगे। यूनान तथा मध्य एशिया के अन्य भागों में प्राप्त सामग्री से पता चलता है कि, उन भागों में लगभग दो हजार वर्ष पहले से भारतीय लिपि, भारतीय भाषा और भारतीय कथाओं के प्रतीकों से चिन्हित मुद्रायें प्रचलित थीं। मूर्तिकला और वास्तुकला के जो जो नमूने वहां पाये जाते हैं, वे भी भारतीय परम्परा से सम्बन्धित हैं। भारतवर्ष का इतिहास (प्राचीनकाल) एस० मुकर्जी पृष्ठ १२०,

[६५] बम्बई एशियाटिक सोसायटी जर्नल इस्टर्न सर्किल १६०५ (एकादश नम्बर) पृष्ठ ४१३—४३३

करके अनेक राज्य स्थापित किये। वल्लभी के अतिरिक्त उनकी एक शाखा चाप, चावड़ा अथवा चापोत्कट का महत्व इस काल के इतिहास में विशेष है, जो निश्चय ही गुर्जर थे और अपने वर्णन में भी उन्होंने अपने को गुर्जर ही स्वीकार किया है। भड़ौंच, भीनमाल, अनहिलवाडा, पाटन, सोमनाथ, वढ़वान आदि में प्रारम्भिक गुर्जरों ने अनेक राज्य साम्राज्य स्थापित किये। विदेशी जातियों का मिश्रण का सिद्धान्त गुर्जरों को विदेशी सिद्ध नहीं करता है। कोई भी विदेशी जाति इतने अल्प समय में भारतीय आर्य क्षत्रियों के धर्म, रीति रिवाज, कुलगोत्र, प्रवरों में इस प्रकार आरूढ़ नहीं हो सकती, जिस प्रकार गुर्जर (गूजर) अथवा राजपूत।[१] विद्वानों की विदेशी जाति मानने वाली इस बात का समीकरण इसी से होजाता है कि गुर्जरों का प्रारम्भिक सगठन भारतीय वैदिक कालीन क्षत्रियों के विभिन्न कुलों के सगठन के रूप में हुआ। विदेशी आर्य जातियों के मिश्रण से—जिन्हें भारतीय ब्राह्मण बौद्धधर्म अथवा मध्य एशिया में रहने वाले (आर्यावर्त से बाहर) होने से विधर्मी और विजातीय मलेच्छ समझने लगे थे,[२] लेकिन वास्तव में वे क्षत्रिय ही थे और क्रिया लोप होने से धर्म भ्रष्ट हो गये थे—और बौद्धधर्म से वैदिक धर्म अपनाने पर अग्निकुण्ड—वैदिक कर्मकाण्ड—द्वारा पुन पुरोहितों ऋषियों द्वारा क्षत्रिय वश प्रसिद्ध होगये और इसीसे उस समय के प्रसिद्धि प्राप्त क्षत्रियों के मुख्य समूह-गुर्जरों को विदेशी माना जाने लगा। वास्तव में यह सर्वथा निर्मूल कल्पना है क्योंकि स्मिथ महोदय यह भी स्वीकार करते हैं कि इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि एशिया के किस भाग से और कौनसी जाति से यह लोग आये।[३] इसलिये सभी बातों को

---

[१] इलियट ग्लॉसरी पृष्ठ ९९ पजाब कास्ट्स (सर डेन्जिल इबट्सन) ४८०, सहारनपुर गजेटियर (नविल) पृष्ठ १०१–१०२ ट्राइब्स एण्ड कास्टस (विलियम क्रूक) पृष्ठ ४४०-४४२, हिन्दू ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स (शरिंग) २३५-३६ ३७, राजपूताना गजटियर १ भाग पृष्ठ १६२, खानदेश गजेटियर भाग १२–पृष्ठ ६३ ६६

[२] मनुस्मृति १० । ४३–४४।

देखते हुए उनका विदेशों से आना किसी भी प्रकार स्वीकरणीय नहीं है।

गुर्जरों के इतिहास से यह प्रकट है कि उनके सभी राजवंश पूर्णतया वैदिक वर्ण-व्यवस्था के अनुसार ब्राह्मण धर्म के अनुयायी थे। उन्होंने यहां के धर्म का पालन करते हुये ब्राह्मणों को संरक्षण दिया। वल्लभी, भड़ौंच, भीनमाल, उज्जैन के गुर्जरों द्वारा दिये गये दानपत्रों में, जो प्रारम्भ के गुर्जरों के राजवंश थे, ब्राह्मणों एवं मन्दिरों को दिये गये अनेक ग्रामों के दान का उल्लेख है।[३४] काठियावाड़ में अपने अभ्युदय काल में इन्हीं गुर्जरों ने अनहिलवाड़ा और प्रभास पत्तन की स्थापना की और इतिहास प्रसिद्ध सोमनाथ का मन्दिर गुर्जरों द्वारा बनाया गया।[३५] पश्चिम एवं दक्षिण भारत में गुर्जरों के राज्य-काल में यह प्रदेश भारत का सर्वोत्कृष्ट स्थान था। १० हजार गांव की आय सोमनाथ के मन्दिर के नाम थी। ग्रहण के अवसर पर १ लाख व्यक्ति यहां एकत्रित होते थे। एक हजार पुजारी, ३५० गायक प्रतिदिन मन्दिर में रहते थे, जो इसके बनाने वालों (गुर्जरों) की महत्ता प्रकट करती है।

(५)

भारतीय इतिहास में गुर्जरों का सबसे प्रथम वर्णन बाण महाकवि के हर्षचरित में आता है, जिसमें उनके साथ प्रभाकरवर्धन के साथ हुये युद्धों का आभास मिलता है और लेखक ने अपने आश्रयदाता

[३३] The Gurjaras are believed to have entered India either along with or soon after the white Huns and to have settled in large numbers in Rajputana. But that there is nothing to show what part of Asia they came from or to what race they—belonged

Early History of India 3rd Edition Page 413.

[३४] इन्डियन एन्टीकुवेरी भाग १८ पृष्ट १७६, वही भाग ५ पृष्ट १०६, वही भाग १७ पृष्ट २२०, ऐपिग्राफिका इन्डिका भाग २ पृष्ठ १६, २०, मेडियल हिन्दू इन्डिया अध्याय १३ पृष्ठ २५३, बम्बई गजेटियर जि० १ भाग १ (भीनमाल) पृष्ट १२८

[३५] भारतवर्ष का इतिहास, द्वितीय खण्ड अ० २३ पृष्ठ ३३६ आनरेबिल पंडित श्यामबिहारी मिश्र एम०ए०।

प्रभाकरवर्धन को गुर्जरों की निद्रा भंग करने वाला लिखा है।[१६] इसके पश्चात भड़ौंच के गुर्जर जाति के राजा दद्दा का एक शिलालेख है, जिसमें उन्होंने ५७० ई० में भारत में उस काल और इससे भी पूर्व सौराष्ट्र के आसराम नाग शत्रुओं को और उनके महत्वपूर्ण साम्राज्य को उखाड़ कर गुर्जर राज्य की नींव डाली।[१७] यशस्वी सम्राट हर्षदेव द्वारा पराजित हुये वल्लभी के सम्राट को इसी गुर्जर राजा ने अपने यहां शरण आने पर उसकी रक्षा की और उसका राज्य 'वल्लभी' अपनी सैनिक शक्ति से सम्राट हर्षदेव को चैलेन्ज करते हुये दिला दिया।[१८] इसी ध्रुवभट्ट को हम हर्ष के सम्बन्धी के रूप में पाते हैं।

---

१६ "भीनमाल के गुर्जर निश्चय ही बहुत उपद्रव मचाते रहे होंगे क्योंकि उनके विरुद्ध प्रभाकरवर्धन को अनेक बार आक्रमण करना पड़ा था (हर्षवर्धन गौरी शङ्कर चटर्जी एम ए०) पृष्ठ ३८। "प्रभाकरवर्धन उत्तरी भारत के सुविस्तृत भूभाग के सर्वमान्य अधिश्वर नहीं, अपितु एक स्थानीय शासक थे, उनके पास सैनिक राजनैतिक शक्ति थी, बूलर के मतानुसार उनका राज्य थानेश्वर की सीमाओं के बाहर नहीं फैला था (बुलर ऐपिग्राफिका इन्डिका जिल्द १) पृष्ठ ६६। "प्रभाकरवर्धन ने सिन्धु, गुर्जर, मालव के राजाओं के साथ जो युद्ध किए वे केवल हमले थे। यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि उन आक्रमणों में कोई स्थायी विजय प्राप्त नहीं हुई थी। (हर्षवर्धन गौरीशङ्कर चटर्जी एम० ए०) पृष्ठ १३८। 'हूणहरिणकेसरी सिन्धुराजज्वरो 'गुर्जरप्रजागरो' गान्धाराधिपगन्धद्विपकूटपाकलो लाटपाटवपाटच्चरो मालवलक्ष्मीलता परशु प्रतापशील इति प्रथितापरनामा प्रभाकरवर्धनो नाम राजाधिराज।" हर्षचरित बाणभट्ट महाकवि रचित १२० पृष्ठ

१७ "सतत मविच्छिन्ना वधो स्थैर्यगा [—] भि (मो)घ्यंलावण्य वनि महाम्बरयात् (ि) दुरवगाह गुर्ज्जरनृपतिवंशमह (ो) दधा (धौ) श्री सहजन्म कृष्ण हृदयाहितास्पद कौस्तुभमणिरिव विमलयशोदीधितिनिकरविनिहतकलितमिरनिचय सम्यक्सोर्वैनतय इवाकृष्टमनुनागकुलसन्ततिरून्नतिन इव दिनकरचरणकमलप्रणामापजीकानेष दुर्गतिनिवह सामन्तदद (इण्डियन एन्टीक्वेरी भाग १३) पृष्ठ ८२

क्षत्रिय राजवंशों के अभ्युदय काल में गुर्जर (गूजर) जाति के विभिन्न वंश समस्त भारत में सबसे बड़े सम्राट समझे जाने लगे। उनका संगठन, सैनिक शक्ति अपूर्व थी। अवन्ति (उज्जैन) से समृद्ध होने के पश्चात उनकी शक्ति कन्नौज में जम गई। कन्नौज की त्रिकोणात्मक प्रतियोगिता में राष्ट्रकूटों, पालों एवं गुर्जरों के संघर्ष में गुर्जर (गूजर) प्रथम श्रेणी की राजशक्ति बन गये। नागभट ने मुंगेर में धर्मपाल को युद्ध द्वारा परास्त करके गुर्जर साम्राज्य बंगाल तक बढ़ाया। गुर्जरों की शक्ति इतनी प्रबल हुई कि तत्कालीन आन्ध्र, विदर्भ, कलिंग तथा सिन्धु के राजाओं ने उनसे राजनैतिक सन्धियां कीं। उन्होंने अपनी महत्वपूर्ण विजयों द्वारा आनर्तों (उत्तरी काठियावाड), मालवों

१८ "वल्लभी पर आक्रमण करने के पूर्व हर्ष ने मालवा के शासक को अपनी प्रभुता स्वीकार करने के लिये अवश्य ही विवश किया था ज्ञात होता है कि इससे पुलकेशी क्रुद्ध होगया और हर्ष के विरुद्ध वल्लभी नरेश को शरण देने में गुर्जर राजा दद्द की सहायता करके हर्ष से बदला भी लिया" 'आलेतकर ऐनल्स आफ दि भण्डारकर रिसर्च इन्सीट्यूट'। महाराजा हर्षवर्धन को रेवा तट पर गहरी पराजय खानी पड़ी, वह विन्ध्य रेखा पार करने में कभी सफल नहीं हुए"। हर्षवर्धन पृष्ठ १२४ (गौरीशङ्कर चटर्जी) 'श्रीहर्षदेवाभिभूतो श्रीवल्लभीपति परित्राणोपजात भ्रमदभ्रविभ्रमयशो वितान श्रीदद्द' अर्थात् श्री हर्षदेव द्वारा पराजित वल्लभी नरेश का परित्राण करने के कारण प्राप्त यश का वितान श्री दद्द के ऊपर निरन्तर झूलता रहता था। दद्द द्वितीय नवसारी का दानपत्र, जर्नल आफ दी बम्बई ब्रांच आफ दि रायल ऐशियाटिक सोसायटी जि० ६ पृष्ठ २ इन्डियन ऐन्टीक्वेरी जि० १३ १८८४ ई० पृष्ठ ७०-८१

बौद्धिस्ट रिकार्ड भाग २ पृष्ठ ७३०

end of his reign Harsha s rule was supreme in Aryavarta from sea to sea, as far south as the Narmada River except over the Kingdom of Gurjara, which included Rajputana Northern Gujrat and part of the Punjab

प्राचीन रूल इन इन्डिया ई० बी० ऑवन्स (लन्दन) पृष्ठ १६१

(मध्य भारत), मत्स्यों (पूर्वीय राजपूताना में), किरातों (हिमालय पर्वताश्चित), तुरुस्कों (पश्चिमी भारत) के अरब निवासीगण तथा वत्सों (कौशाम्बी) को एक-एक करके पराजित किया। चक्रायुध को (जिसका दबदबा ६ राजाओं पर था और अपने समय का सबसे शक्ति शाली राजा था) परास्त करके गद्दी से उतार कर तथा इन्द्रायुध को विजय करने वाले पालवंश के सम्राट धर्मपाल (जिसने कन्नौज को विजय किया था और अपने भाई चक्रायुध को कन्नौज का राजा बना दिया था) को उसके साम्राज्य में-मुंगेर जाकर गुर्जर सम्राट नागभट द्वितीय ने विजयकर गुर्जरों का दबदबा समस्त भारत में बैठा दिया।[१६] गुर्जर राजाओं ने अरब समुद्र की सीमा की ओर से अरबों से देश की रक्षा करते हुए सदियों तक उत्तरीय भारत को बाहरी आक्रमणों से बचाये रक्खा। युद्ध में लगे रहने वाले राजाओं के राज्य में शान्ति का रहना बड़ा कठिन काम है। लेकिन प्रारम्भ से उनके अन्त तक का इतिहास यह प्रकट करता है कि गुर्जर राज्य धनधान्यपूर्ण एवं विशेष समृद्धशाली थे। चोर डाकुओं के उपद्रवों एवं आन्तरिक उपद्रवों से सर्वथा सुरक्षित थे। व्यापारिक, ऐतिहासिक, समृद्ध शाली भू भागों पर अधिकार होने से वे सदा कला, साहित्य, संगीत की उन्नति में लगे रहे। नागभट द्वारा पुष्कर घाट बनाने की ख्याति एवं पुष्कर पर गुर्जरों का अधिकार (११ वीं शताब्दि तक) उनके महत्व को प्रकट करता है। कन्नौज के गुर्जर सम्राट मिहिरभोज को विष्णु का अवतार माना जाता था। महेन्द्र पाल एवं महीपाल के समय तक गुर्जर भारत के सबसे प्रसिद्ध शक्तिशाली सम्राट रहे। संस्कृत का प्रसिद्ध कवि राजशेखर उनका राजगुरू था, जिसने काव्य मीमांसा, कर्पूर मंजरी, विद्धशालभंजिका, बाल रामायण

---

[१६] अर्ली हिस्ट्री आव इंडिया (स्मिथ) पृष्ट ४११-१२
रायल एशियाटिक सोसायटी जनल १६०६/६
कन्नोज के प्रतिहार गुजर सम्राट (स्मिथ) पृष्ट ७६-६२,
आदि भारत (कश्यप) ४७२-४८२
प्राचीन भारत का इतिहास (त्रिपाठी) २३९-२४४
प्राचीन भारत का इतिहास (उपाध्याय) ३११-३१५

बाल भारत आदि मुख्य ग्रन्थ बनाये। महीपाल गुर्जर राजा को इसने आर्यावर्त का महाराजाधिराज तथा मुरल, मेकल, कलिंग, केरल, कुलूत और रमठ देशों को पराजित करने वाला लिखा है। हिमालय से मध्य प्रदेश तक गुर्जरों का साम्राज्य था। अरब यात्री सुलेमान ने इन गुर्जरों की सैनिक शक्ति, निरापद राज्य तथा धार्मिक कट्टरता का वर्णन करते हुए मुसलमानों का परम शत्रु माना है। अल मसूदी ने भी इनके राज्य की प्रशंसा की है, जिनका वर्णन ऊपर हो चुका है। चालुक्य चन्देल कछवाहे, चेदि (डाहल), परमार, गुहिल एवं चौहान इनके आधीन थे, जो विजयपाल के उपरान्त राज्यपाल के राज्य (६८६-१०१८) में स्वतन्त्र हो गये। १०१८ ई० में महमूद गजनी ने आक्रमण किया और गुर्जरों ने बारी में राजधानी स्थापित की। १०१६ में त्रिलोचनपाल को महमूद ने जीत कर कन्नौज को नष्ट भ्रष्ट कर दिया। इन गुर्जरों के १०३६ में यशपाल राजा का एक शिलालेख मिला है और इनके विभिन्न अन्य छोटे छोटे राजाओं के—ग्वालियर के मलयवर्मन, नृवर्मन, कटा के मलवर्मन के भी—अभिलेख विक्रमी सवत् ११०७, १३०४ के मिले हैं।[८०]

(६)

इतिहास में पाचवी छटी शताब्दि से ११वीं शताब्दि तक का समय गुर्जर साम्राज्य एवं राज्यों का स्वर्ण युग है, जिसका प्रारम्भ ईसवी सन् के प्रारम्भ से एक सदी पूर्व से पाचवी शताब्दि तक पंजाब और

[८०] एपिग्राफिका इण्डिका १२ पृष्ठ २०३ २०४,— ६ भाग पृष्ठ २४३-२४८, श्लोक ८, १२ पृष्ठ १०८-११२, श्लोक ११, १८ पृष्ठ १५-१६ (वराह ताम्रपत्र) ५ पृष्ठ २०८ १३ (दौलतपुर, मध्यप्रदेश) ७ पृष्ठ ८५-६३ (कहला पत्र), पृष्ठ १६३, १६५ श्लोक १३, खर्वीकृतविड्गुजरनाथन्पम, १ पृष्ठ १८४-१६० (पेहोआ अभिलेख) इण्डियन एंटीक्वेरी ११ पृष्ठ १५७, १६१, १२ पृष्ठ १८४, १८६ श्लोक ३८। इण्डियन हिस्ट्री क्वाटरली ५, (१६२६) पृष्ठ १२६-३३। इलियट हिस्ट्री आफ इण्डिया खण्ड १ पृष्ठ ४, अर्ली हिस्ट्री आफ इण्डिया (एन० एन० घोष) पृष्ठ ३२८ ३२६ ३३०

ऊपर के हिस्सों पर था। बाद को बाहरी हमलों से उनका फैलाव नीचे की ओर हुआ। प्रभाकरवर्धन से पूर्व पांचवी शताब्दि में ही वे संगठित व्यापक शक्ति स्थापित कर चुके थे। साम्राज्यों की शक्ति का कोई नियन्त्रण उन पर नहीं था। हर्ष के समय वो ये पंजाब, राजपूताना, मालवा, गुजरात के शासक थे और हर्ष के छीने हुये वल्लभी राज्य को इन्होंने अपनी सब शक्ति द्वारा उसकी साम्राज्य शक्ति से लोहा लेते हुए वापिस करा लिया था। कन्नौज के गुर्जर साम्राज्य का शक्तिशाली होना उनके अनेक छोटे बड़े राज्यों के कारण था, जो बहुत शक्ति सम्पन्न थे। ११वीं शताब्दि के अन्तिम समय तक अलबरूनी की प्रत्यक्ष

' One of these Rajput races was the Gurjaras who in the first half of the eighth century ruled Eastern Rajputana and Malwa The ruling family belonged to the Pratihara clan and hence the dynasty of king is known in history as the Gurjara Pratihara The Arabs who had conquered Sind in 712 A D despatched about 725 A D a formidable force which having overran Cutch Kathiawar, Northern Gujarat and Southern Rajputana knocked at the gates of Aestern Malwa The Pratihara chief, Nagabhata gave them a crushing defeat and thus saved Northern India from the earliest Muhammadan invaders This explains more than anything else why the earliest Muhammadan invaders of India the Arabs remained confined to that desert without penetrating *into the heart of India Nearly a century later his descendant* Nagabhata invaded the Gangetic region and conquered Kanauj The capital of this enlarged kingdom was then transferred from Ujjain to Kanauj They remained in possession of Kanauj for two centuries until 1018–19 when Sultan Mahmud of Ghazni occupied the city Nagabhata's grandson, Mihira Bhoja was a powerful king of this dynasty He enjoyed a long period of reign (c 840–90 A D) over an extensive dominion almost an empire, which included the cis Sutlaj districts of the *Punjab* most of Rajputana the greater part of the present United Provinces of Agra and Oudh and the Gwalior territory Being

a worshipper of Vishnu, Mihira Bhoja assumed the title of Adivaraha, one of the incarnations of Vishnu. Base silver coins inscribed with that title have been found abundantly in different parts of Northern India. Their abundance and provenance prove the long duration and wide extent of Bhoja rule. After Mihira Bhoja's death, his son Mahendrapala reigned for about two decades with undiminished prestige. During his reign, the great Prakrit poet, Rajsekhara, the author of Karpuramanjari lived in his court. He was succeeded first by his eldest son Bhoja II who died early and then by his younger son Mahipala. The greatness of the Pratihara empire of Kanauj began to wave from his reign. In 916 A. D. the Rashtrakuta king Indra III, invaded Kanauj and captured it. Mahipala, in his distress, sought and obtained the help of the Chandella king of Jejakabhukti and recovered Kanauj. The next noteworthy king Devapala (c. 940 55 A. D.) lost the fort of Kalanjar to the Chandella king Yasovarman and also had to surrender to him the muchprized image of Vishnu which was the deity of his house. During the reign of his successor, Vijayapala (c. A. D. 955-60), Gwalior became independent. His son and successor, Rajyapala joined the confederacy of Hindu princes to oppose Sabuktigin and shared their defeat in 991 and finally in 1008 A. D. near the Kurram Valley. Early in 1019 Sabuktigin's son and successor the famous Mahmud Ghazni invaded Kanauj which fell into his hand rather easily. Rajyapala who played the part of a coward retired to the other side of the Ganges leaving Kanauj in the hands of the victor. The names of the only two of his successors are known to history—Trilochanapala and Yasopala, who ruled over a much truncated kingdom of Kanauj. The former figures as the author of the Jhunsi Plate Inscription granting this village to a Brahman and the latter in the Kara Inscription granting the village of Pabhosa near Kausambi to a resident of that place.

साक्षी के आधार पर व्यापार का मुख्य स्थान नारायण अथवा वरन (जयपुर) गुर्जरों की राजधानी रहा। उसके पतन के बाद जावरा (मालवा) जड़वाह को गुर्जरों ने अपनी राजधानी बनाया।[८१] इन दोनों प्रदेशों की—जो राजपूताना तथा मालवा में है—बहुसख्यक आबादी आज भी गूजर जाति की है। अरबों ने जब भीनमाल को नहस नहस कर दिया तो गुर्जर वहां से सामूहिक निष्क्रमण कर गये और मालवा, मध्यप्रदेश तथा पूर्वीय खानदेश तक बस गये।[८२] अल बरूनी के वृतान्त से यह भी पाया जाता है कि ९४१ ई० में अनहिलवाडे को सोलंकी अथवा चालुक्य वंश के गुर्जरों ने अपनी राजधानी बनाया। अनहिलवाडे में चावडे गुर्जरों का राज्य था। मूलराज की मा इसी चावड घराने की थी। सर्व प्रथम इसने सारस्वत मण्डल को आधीन किया, फिर कच्छ के राजा लखराज को मार कर उसका राज्य हस्तगत किया, उसके बाद सौराष्ट्र के वामनस्थली (वन्थली) के राजा को कैद में डाल दिया। क्रमश दक्षिणी गुजरात, लाट के राजा बारप, शाकम्भरी के विग्रहराज चौहान से युद्ध किये और पार्श्ववर्ती अनेक दुर्बल राजाओं को अधिकार में कर लिया।

अनेक शैव मन्दिर बनवाने, ब्राह्मणों को दान वृत्तियां देने तथा भयङ्कर लड़ाका होने के कारण यह प्रसिद्ध था। भीनमाल पर भी इसका अधिकार होगया। *इस वंश में गुर्जर राजा भीम प्रथम के समय* १०२४ ई० में सोमनाथ पर महमूद ने आक्रमण किया और भयङ्कर मारकाट के पश्चात् मन्दिर को तोड कर अपार रत्न राशि तथा मूर्ति लेकर वह लौट गया। अल-बरूनी लिखता है कि महमूद का यह आक्रमण, मास्को पर नैपोलियन के आक्रमण के समान था, जिसने गुर्जर राज्य पर कोई स्थायी प्रभाव नहीं डाला और भीम गुर्जर ने शीघ्र ही अपने राज्य का पुनरुद्धार कर आबू व परमार राज को पददलित किया।[८३] भोज के सेनापति कुलचन्द्र ने अनहिलवाडा लूट लिया और भीम ने मालवा

[८१] बम्बई गजेटियर जि० १ भाग ९ पृष्ट ४८१

[८२] *खानदेश गजटियर (मि० जे पोलन एल एल० डी० आई० सी० एस०)* पृष्ट ६२

को—कलचूरि राजलक्ष्मी कर्ण की सहायता से—नष्ट भ्रष्ट कर दिया। इस वंश के राजा कर्ण ने अहमदाबाद नगर बसाकर तथा अनेक मन्दिर एवं सरोवर बनाकर प्रसिद्धि प्राप्त की। कर्ण का पुत्र जयसिंह सिद्धराज (सन ११४३ ई० तक) बड़ा महत्वाकांक्षी वीर गुर्जरेश्वर हुआ। उसने नादोल (जोधपुर) के चौहान, सौराष्ट्र के चूडासम को परास्त किया। परमार राजा नरवर्मन तथा यशोवर्मन को जीतकर मालवा पर भी अधिकार कर लिया।

प्रसिद्ध पंवार गुर्जरों का पूर्वज त्रिविध वीर क्षत्रिय जगदेव पंवार इसका दरबारी था। प्रबन्ध चिन्तामणि से उसकी वीरता शौर्य का पता चलता है। जगदेव पंवार कुन्तल देश के राजा परमर्दि के पास भी रहा, जहां इसकी वीरता तथा दानशीलता की अनेक कथायें प्रसिद्ध हैं, जिससे उसका असाधारण व्यक्तित्व प्रकट होता है।*

---

[१] रैनाल्डस मैमोर के द्वारा अल-बरुनी का वृतान्त २५८ अलबरुनी का भारत (सन्तराम बी ए.) पृष्ट २१

*संयुक्तप्रान्त के पंवार खुबड गुर्जरों में आज तक भी जगदेव पंवार का नाम विशेष प्रसिद्ध है. और इस वंश के तमाम लोग अपना पूर्वज इन्हें मानते हैं। सम्भवतया यही 'जगदेव' पंवार गुर्जर रत्न प्रसिद्ध हुये, और इन्हीं से पंवार-गुर्जरों का वंश विशेष प्रसिद्ध हुआ। यहाँ जगदेव का वृतान्त देना मनोरञ्जनपूर्ण तथा उपयोगी सिद्ध होगा।

जगदेव का नाम, राजपूताना, गुजरात, मालवा आदि देशों में वीरता तथा उदारता के लिये प्रसिद्ध है और जनश्रुति कहती है कि यह परमार वंशीय तथा सिद्धराज जयसिंह का दरबारी था। इस प्रसिद्धि में सत्यता का कुछ अंश अवश्य है, क्योंकि प्रबन्ध चिन्तामणि में लिखा मिलता है कि 'जगदेव नामक त्रिविध वीर क्षत्रिय को जयसिंह ने सम्मान के साथ अपने पास रक्खा। फिर कुन्तल देश के राजा परमर्दि ने उसके गुणों से रंजित होकर उसको अपने यहां बुला लिया, और उसके आने पर उस (राजा) ने एक लाख की कीमत के दो वस्त्र उसे प्रदान किये। उसने वे दोनों वस्त्र उसी समय अपनी वीरता की प्रशंसा करने वाली, एक वेश्या को, जो वहां पर दरबार में नाच रही थी, दे दिये। इसके बाद परमर्दि ने

उसे किसी देश का स्वामी (सामन्त) बना दिया। वहां पर उसके उपाध्याय (गुरु) ने आकर उसकी प्रशंसा में एक पद्य बनाकर उसे सुनाया। इस पर उसने उसे ५०००० मुद्रायें दीं। फिर एक बार परमर्दि ने उसको एक पड़ौसी राजा को परास्त करने के लिये सैन्य सहित भेजा।

जिस समय वह देव पूजन कर रहा था, उस समय शत्रु ने उस पर ससैन्य हमला कर दिया। वह पूजा पूरी हो जाने से पहले पूजा स्थान से न हटा, पर ज्योंही वह पूरी हुई उसने ५०७ योद्धाओं सहित शत्रु पर आक्रमण कर उसे नष्ट कर दिया।"[1]

जगदेव के विषय में भाटों की कथाओं में यह लिखा मिलता है—"धारा नगरी के परमार राजा उदयादित्य के बघेली और सोलङ्किनी दो रानियां थीं। बघेली से रणधवल और सोलङ्किनी से जगदेव का जन्म हुआ, जिनमें रणधवल बड़ा था। आपस के द्वेष के कारण जगदेव अपनी स्त्री को साथ लेकर अनहिलवाडे के राजा सिद्धराज के पास चला गया, जिसने उसकी वीरता आदि गुणों पर रीझ कर सम्मान के साथ उसको अपने दरबार में रखा, और ६०००० मुद्रा उसका मासिक वेतन नियत किया। उसकी स्वामिभक्ति तथा दृढ़ता से प्रसन्न होकर जयसिंह ने अपनी पुत्री का उसके साथ विवाह कर दिया और उसे एक बहुत बड़ी जागीर भी दी। १८ वर्ष तक जयसिंह की सेवा करने के बाद वह अपने पिता के पास लौट आया, जिसने उसे उसकी वीरता से प्रसन्न होकर अपना उत्तराधिकारी नियत किया और अपने बड़े पुत्र रणधवल को १०० गावों की जागीर दी। जगदेव ने मालवा की गद्दी पर बैठ कर ५२ वर्ष राज किया और ८५ वर्ष की अवस्था में शरीर छोड़ा। उसके पीछे उसका पुत्र जगधवल मालवा का राजा हुआ।[2]

[1]—देखो सोलंकियों का इतिहास, भाग १ पृष्ठ १०२।

[2]—म० म० रायबहादुर पण्डित गौरीशंकर हीराचन्द ओझा (सोलंकी राजा जयसिंह सिद्धराज) ना० प्र० पत्रिका भाग १० पृष्ठ ३००–३०१।

जयसिंह सिद्धराज शिव मन्दिरों का निर्माता, विद्वान वीरों का आश्रयदाता, धार्मिक उदार राजा था. उसने जैन आचार्य प्रसिद्ध हेमचन्द्र सूरि को मर्यादा का स्थान दे रक्खा था। इसके उत्तराधिकारी कुमारपाल ने, जो निकट सम्बन्धी था. साहसपूर्वक अनहिलवाड़े का सिंहासन प्राप्त कर लिया। शाकम्भरी के चौहान, आबू के परमारों, कोंकण राज मल्लिकार्जुन को उसने पराजित कर दिया। इसी ने सोमनाथ के मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया। पशुवध बन्द कर दिया, जैनमत को विशेष आश्रय देने के कारण यह विशेष प्रसिद्ध हुआ और ११७१ ई० में मर गया। इसके बाद इस वंश में भीम द्वितीय, जिसे भोला भीम गूजर भी कहते हैं, राजा हुआ, जिसने शाहबुद्दीन गौरी को पराजित करके खदेड़ दिया। ११९७ ई० मे कुतुबुद्दीन ऐबक ने उस पर आक्रमण करके कुछ समय के लिये अधिकार कर लिया, किन्तु फिर यह स्वतन्त्र होगया। मालवा, देवगिरी के यादवों ने भी गुजरात पर आक्रमण किये। १२४० ई० तक गुर्जरों के सोलंकी वंश का अधिकार अनहिलवाड़ा पर रहा। इसके बाद यहां बघेलों का अधिकार होगया। करणदेव बघेल के समय १२९७ ई० में–अल्लाउद्दीन के समय में–मुसलमानो द्वारा गुजरात पर अधिकार कर लिया गया। ऐतिहासिक वृतान्तो, विद्वानों के लेखों तथा स्वयं सोलंकी राजाओं के अभिलेखों से जाना जाता है कि निश्चय ही सोलंकी गुर्जरों की श्रेणी है, जिन्हें गुर्जरेश्वर, गुर्जर पति, गुर्जर एव गुर्जरेन्द्र की उपाधि थी। कन्नौज के गुर्जरों चापवंश (काठियावाड़) के गुर्जरों से इनकी रिश्तेदारियां थीं जैसा कि हम पहले भी लिख चुके हैं कि भण्डारकर आलेतकर, केम्पबेल आदि विद्वान पूर्ण रीति से इन्हें गुर्जर जाति का मानते हैं।[८४]

---

८४ बम्बई गजेटियर भाग ९ जि० १ पृष्ठ ४८५। आलेतकर भण्डारकर आदि के हवाले के लिये इसी पुस्तक का पहले अध्याय का पृष्ठ ८५ —ऐपिग्राफिका इण्डिका ६ पृष्ठ १–२०, इण्डियन ऐन्टीक्वेरी १९२९ पृष्ठ २३५, २३६ श्लोक ८, बम्बई गजेटियर खण्ड १ भाग १ पृष्ठ १७६, इण्डियन एन्टीक्वेरी ६ पृष्ठ १९१

—कुमारपाल चरित (बम्बई १९२६)

—भारत का प्राचीन इतिहास (त्रिपाठी) पृष्ठ २८७–२९१.

अनहिलवाड़ा के सोलंकी राजाओं के अतिरिक्त सोलंकी या चालुक्य वंश में बड़े-बड़े प्रतापी गुर्जर जाति के राजा—महाराजा हुये हैं, जहां हैदराबाद स्थित वातापी में इनकी राजधानी थी, जिनमें पुल केशिन (२) प्रसिद्ध राजा हुआ। इसका भड़ोंच के गुर्जर राजा दद्दा (४) से मेल था। थानेश्वर के राजा हर्षवर्धन को इसने बड़ी करारी हार दी थी। अरबों से भी लड़ा था और पल्लव राजा नरसिंह को भी हराया था। विक्रमादित्य प्रथम, द्वितीय ने इस वंश की अच्छी धाक जैठाई। राष्ट्रकूट वंश की सत्ता समाप्त कर इनका राज्य स्थापित हुआ था।[९१]

कल्याणी के चालुक्य बड़े प्रसिद्ध राजा हुए जिन्होंने राष्ट्रकूटों को उखाड़ फेंका। तैल (२) ने ९७३ ई० में यह राज्य स्थापित किया। यह राजा सदैव लड़ते रहते थे। इन्होंने मालवा चेदि को भी परास्त किया। राजा सोमेश्वर ने चोल राजा को भी हराया। इस वंश का सबसे प्रमुख राजा विक्रमादित्य १०७६—११२६ ई० में हुआ, जिसने मालवा, कलिङ्ग बङ्ग गुर्जर और चेर राजाओं को जीता। वह राज-कवि विल्हण का आश्रयदाता था और मिताक्षरा का लेखक प्रसिद्ध हिन्दू न्याय का व्याख्याता विज्ञानेश्वर इनका समकालीन था। डा० वी० ए० स्मिथ ने प्रमाणों के आधार पर यह माना है कि चालुक्य अथवा सोलंकी का सम्बन्ध चापों से था, जो गूजर थे पहले ये राजस्थान में अवस्थित थे और वहां से दक्षिण में आये। चालुक्य उत्तर भारत के क्षत्रिय (गुर्जर) वंश में उत्पन्न हुए थे। ये कालान्तर में राजस्थान से चले आये। गुप्त साम्राज्य के पतन के पश्चात इन्होंने अपना संगठन किया। राजस्थान से पुन दक्षिण कर्नाटक आये और पांचवी शताब्दि के अन्त में इन्होंने अपने राजकुल की स्थापना की। यही समय इतिहास में गुर्जर जाति के विकास और उसके विभिन्न क्षत्रिय कुलों के राज स्थापन का है।

इसी प्रकार पवार भी गुर्जरों (गूजरों) की एक खास श्रेणी है। पवार वंश के राजा स्वयं अपने को गुर्जर कहते थे। जिले फिरोज़पुर तथा सहारनपुर एवं राजस्थान तथा खानदेश के चोपड़ा के देशमुख

[९१] आदि भारत पृष्ठ ४४६

पवार वंश के सैंकड़ों ग्रामों के लाखों की संख्या के गूजर अपना निकास आबू तथा उज्जैन एवं धारा से मानते हैं।[८९] यही आबू, धारा और उज्जैन पवारों-परमारों की प्रारम्भिक राजधानियां थीं। इतिहास में परमार (पवार) राजा शियाक कृष्ण को गुर्जर एवं गुर्जरों का राजा माना है।[९०] प्राचीन लेखों में पाया जाता है कि विश्वामित्र से नन्दनी की रक्षा के लिये वसिष्ठ ने आबू पर्वत की अग्निवेदि पर यज्ञ करके पवारों (परमारों) के आदि पुरुष परमार को उत्पन्न किया। कुछ विद्वान उन्हें अहमदाबाद जिले के हरसोला के अभिलेख से राष्ट्रकूटों की एक शाखा में बताते हैं। मुंज के समय के हलायुध ने इन्हें ब्रह्म-क्षत्र कुल कहा है। मुंज के पीछे के शिलालेखों—ऐतिहासिक पुस्तकों में परमारों के मूल पुरुष का आबू पर वसिष्ठ के अग्नि कुंड से उत्पन्न होना पाया जाता है। उनके मूल पुरुष धूमराज को धूम अर्थात् अग्नि से उत्पन्न लिखा है। निश्चित प्रमाणों वाला विद्वानों का एक मत यह है कि जब बाहरी आक्रमणकारियों एवं अरबों के आक्रमण से देश विकल हो उठा, वर्तमान राजस्थान तथा उसके पार्श्ववर्ती प्रदेशों के चार क्षत्रिय राजवंशों (प्रतिहार, चहमान, परमार तथा सौलंकी) ने देश

---

[८९] जर्नल आफ दी बम्बई ब्रांच रायल एशियाटिक सोसायटी (डा० भण्डारकर) २१, पृष्ठ ४२८
—गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास परिशिष्ट १९३
—बम्बई गजटियर १२ खानदेश पृष्ठ ६३

The Deshmukhas of Chonada are one of the chief Dore Gujars families in Khandesh They claim to belong to Pavar (Parmar) family of Kashyaprishi clan and worship the Goddess Dormata From Darabgad (?) They are said to have spread to Abu, thence to Ujjain thence to Ankleshwar in Broach, thence to Mandagad (1) and thence to Dabhoi Fort in Baroda

[९०] इपीग्राफिका इंडिका २१ पृष्ठ २१६
बम्बई गजटियर भाग ९ जिल्द १ पृष्ठ ४८५

की रक्षा के लिये अग्नि के सन्मुख शपथ खाई।[८८] उसी समय से यही प्रदेश इतिहास में गुर्जरों से रक्षित प्रदेश होने के कारण गुर्जरत्रा (गुजरात) गुर्जर कहलाया। मूल रूप से प्रारम्भ में यही क्षत्रिय वंश गुर्जर जाति के निर्माण में सहायक हुये और बाद में उनके उत्कर्ष के साथ और भी अनेक कुलों का समाहार इनमें होता चला गया। इन्हीं गुर्जरों ने इतिहास में अरबों-तुर्कों का सबसे प्रथम प्रतिरोध किया।

इतिहास से पता चलता है कि कन्नौज के गुर्जर साम्राज्य की स्थापना से पूर्व प्रतिहारों का निवास उज्जैन में था। यही उज्जयनी (मालवा) गुर्जरों और राष्ट्रकूटों की युद्धक्रीड़ा भूमि बनी रही है। राष्ट्रकूट इस पर स्थिर नहीं रहे और गुर्जर राजाओं में नागभट द्वितीय, मिहिरभोज, महेन्द्रपाल प्रथम, महीपाल तथा महेन्द्रपाल द्वितीय ने उज्जयनी पर अधिकार स्थापित कर लिया था। प्रतापगढ़ के अभिलेख से यह ज्ञात होता है कि महेन्द्रपाल द्वितीय ने उज्जैन में माधव नामक अपने माण्डलिक नृपति को नियुक्त किया और मान्डू (माण्डपिका) में शर्मन को गवर्नर नियुक्त किया। इससे यह स्पष्ट है कि कन्नौज के प्रतिहार गुर्जरों के आधीन सामन्त रूप से प्रारम्भिक परमार (पवार) गुर्जरों ने अपनी राज्यवंश की प्रतिष्ठा की। पंवार राजवंश के संस्थापक उपेन्द्र या कृष्णराज प्रतिहार गुर्जरों के आधीन सामन्त थे।

ईसवी सन् ६४६—६७२ मे सीयकहर्ष परमारों का राजा था, उसे गुर्जर प्रतिहार वंश के अवसान काल में अपने पंवार गुर्जर कुल के राज्य विस्तार का अच्छा अवसर मिला किन्तु राष्ट्रकूटों से निरन्तर टक्कर लेने की परम्परा भी उन्हें राज्यके साथ विरासत मे मिली। डा० बुल्हर ने यह मत प्रकाशित किया है कि इन पंवारों मे प्रसिद्ध गुर्जर राजा सीयकहर्ष ने राष्ट्रकूटों की राजधानी मान्यखेट (मनियाखेटा) पर आक्रमण करके विपुल सम्पत्ति लूटी थी। हूणों को पराजित एवं गुर्जरों मे सम्बन्धित करने का यश प्राप्त किया। वाकपति मुंज के शासन

८८ आदि भारत पृष्ट २३२.

काल में परमारों का विशेष उत्कर्ष हुआ, उसके विरोधी उत्पल राज, अमोघवर्ष, श्रीवल्लभ, पृथ्वीवल्लभ उसकी महान उत्कर्ष शक्ति को प्रकट करते हैं। कलचूरि, लाट, कर्नाटक, चोल और केरल के राजाओं को भी इसने हराया। चालुक्य राज तैलप को लगातार ६ बार हराया। सातवीं बार ६६५ ई० में वही मारा गया। युद्ध के अलावा अपने पूर्ववर्ती राजाओं की तरह वह विद्वान, कवियों का आश्रयदाता था। पद्मगुप्त, धनञ्जय, धनिक तथा भट्ट, हलायुद्ध जैसे विद्वान उसकी राज सभा में थे, जिन्होंने 'नव सहसांक-चरित' 'दश रूप' 'दश रूपावलोक, अभिदान—'रत्न माला' एवं 'मृत संजीवनी' ग्रन्थों का प्रणयन किया। उसने अनेक मन्दिर बनवाये, धार में मुंज सरोवर खुदवाया। इसके भाई सिन्धुल सिन्धुराज ने हूणों, हृदिराजों, कलचुरियों, चालुक्यों को पराजित किया।

१०१८ ई० में भोज पंवारों के सिंहासन पर बैठा, जिसने ५५ वर्ष ७ महीने राज्य किया। विद्वान होने के अतिरिक्त वह अद्भुत बुद्धि कौशल वाला, युद्धप्रिय, वीरता से ओतप्रोत था। उदयपुर के अभिलेख में उसे कैलाश से मलयपर्वत तक का अधिपति कहा है। इसने कल्याणी के चालुक्यराज विक्रमादित्य पंचम को पराजित करके अपने पिता का बदला लेते हुये उसे मार डाला। कलचूरि राज गांगदेव, इन्द्र रथ, तोग्गल को हराया। विहार के आरा जिले को भोजपुर नाम से प्रसिद्ध किया। तुर्कों को हरा कर सौराष्ट्र एवं गुजरात से खदेड़ दिया। एक समय गुर्जर सोमेश्वर ने धारा को लूट लिया (१०४२-६८ ई०), किन्तु शीघ्र ही भोज ने फिर अपनी शक्ति बढ़ा ली। भारतीय साहित्य में वह अमर है। सरस्वती कण्ठाभरण उसका विद्यालय था, जो आज भोजशाला के स्थान पर मसजिद है। अनेक ताल, मन्दिर इसने बनवाये। १३०५ ई० तक परमारों का माण्डू, उज्जैन, धारा आदि पर अधिकार बना रहा, जिसे अलाउद्दीन खिलजी के सेनापति एनुल-मुल्क ने समाप्त कर दिया। जयसिंह (१०५४-१०६० ई०), उदयादित्य (१०६०-१०८८ई०) अन्तिम समय में ऐसे राजा हुये जो विख्यात थे।[८९] १३०५ ई० के बाद पंवार उत्तर भारत तक आ गये। यही समय इनके

राजपूताना, पंजाब पश्चिमी उत्तर प्रदेश के प्रान्तों मे आने का है।

चौहान भी प्रारम्भ में गुर्जर साम्राज्य कन्नौज के आधीन थे, किन्तु बाद में स्वाधीन होगये। चौहान वंश का अग्निकुल की कथा से घनिष्ट सम्बन्ध होने से गुर्जर जाति में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। इस काल का विदेशी शक्तियों तथा विधर्मी गणों को नष्ट करने वाला 'गुर्जर' क्षत्रिय जाति अथवा वर्ण का वीर शक्तिशाली संघ—जो शीघ्र वंश परम्परागत जाति के रूप मे प्रसिद्ध होगया—क्षत्रियों में विशेष महत्व पूर्ण था। इन सबकी आपस में वर्तमान जातीय प्रथा के समान रिश्तेदारियां थीं। इन जातियों के वंशों की स्थिति इस प्रकार की रही कि यह एक ही वंश अनेक जन्मजात क्षत्रिय जातियों मे समान रूप से रहे और उनकी परम्परा एक रूप मे ही उनमें प्रचलित है, जो उनके एक ही आदिस्रोत को प्रकट करती है। गुर्जरों और उसके बाद राजपूतों में चौहानों की बहुत शाखा और अनेक राजवंश मध्ययुगीन भारत में हुए। गुर्जरों (गूजरों) में चौहान वंश के गूजरों की जनसंख्या हर एक प्रान्त में बहुत बडी बडी है और वे मध्ययुगीन चौहान राजाओं से अपना सम्बन्ध मानते हैं। इतिहास मे चौहानों को अपने उत्कर्ष का स्वर्णीय अवसर प्राप्त हुआ।[८०] अजमेर के चौहान सब मे भाग्यशाली थे। अजमेर और साभर के प्रदेशों में चौहानों का स्वतन्त्र राज्य स्थापित था। बारहवीं सदी में इस राज्य का स्वामी विग्रहराज बना, वह बड़ा महत्वाकांक्षी था, उसने धीरे २ दिल्ली पर भी अधिकार स्थापित कर लिया।[८१] यद्यपि उस समय देहली को वह पद प्राप्त नहीं था, जो वह भारत की राजधानी कहला सके। यह श्रेय कन्नौज को ही था। दिल्ली साधारण नगर था, जहा प्रतिहारों के आधीन तोमरों का साधारण राज्य था। अजमेर से देहली तक चौहान राज्य स्थापित करके विग्रहराज ने अपनी

---

[७९] परमार वंश का इतिहास (डी० सी० गागुली), धार और मालव के परमार सी० ई० लूआर्ड और के० क० ल० लै० के आधार पर प्राचीन भारत का इतिहास (त्रिपाठी) पृष्ठ २८२–२८७

[८०] गुजरात गजेटियर ५०–५१

[८१] एपिग्राफिका इण्डिका ५ पृष्ठ १०६

शक्ति बहुत बढ़ाली थी। विग्रहराज का पुत्र सोमेश्वर था और सोमेश्वर का लड़का पृथ्वीराज बहुत शक्तिशाली राजा था, जिसने चन्देल राजाओं (बुन्देलखण्ड) को जीत लिया था। अपनी महत्वाकांक्षा के कारण उसे कन्नौज के जयचन्द से विरोध रखना पड़ा और उसकी विजय के मनसूबे धराशायी होगये।

गौर राज्य के अफगान राज्यों के स्वामी मुहम्मद गौरी ने अपने साम्राज्य को बढ़ाने के लिये पश्चिमी भारत पर चढ़ाई की। ११६१ ई० में तलावड़ी के मैदान में पृथ्वीराज और मुहम्मद गौरी की भयङ्कर लड़ाई हुई, जिसमें गौरी बुरी तरह पराजित हुआ और इस अपमान के बदले के लिये उसने भारत पर अनेक आक्रमण किये। अन्तिम (१२वां) आक्रमण में पृथ्वीराज की सेनाओं को धोका देकर पीछे हटने का बहाना करके उसने छोटी छोटी टुकड़ियों से बड़ी-चौहान सेना को हराकर पृथ्वीराज को पराजित कर उसकी उदारता का बदला कत्ल करके दिया। इस प्रकार मुहम्मद गौरी का दिल्ली पर अधिकार होगया और चौहानों के साथ भारत का भी भाग्य एक समय के लिये अस्त होगया। चौहान, प्रतिहार गुर्जरों के अभ्युदय काल में पंवार तथा चन्देलों की तरह उनके आधीन थे, लेकिन गुर्जर साम्राज्य के ह्रासकाल में स्वतन्त्र होकर बहुत प्रबल होगये थे।

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में गुर्जरों के उत्कर्ष काल में प्रतिहार, पंवार, चौहान एवं सोलंकी गुर्जर राजवंशों की भांति इतिहास में इन वंशों के साथ साथ चन्देले वंश का भी बड़ा भारी महत्व है और आजतक भी चन्देले वंश (चन्दीला) गुर्जरों का मशहूर कुल है।[९१]

---

९१ जातियां तथा कबीले (क्रूक) ४४२-४५० चन्देल गुर्जरों (गूजरों) की एक महत्वपूर्ण शाखा है, जो भारत के विभिन्न प्रदेशों में महत्वपूर्ण रूप से पाई जाती है। राजपूताने में भी व आज तक पाये जाते हैं। ग्वालियर गुड़गांव में उनके अनेक प्रसिद्ध घराने आज तक हैं। राई गांव (जहां की एतिहासिक रानी मृगनयनी १६वीं शताब्दि में ग्वालियर में प्रसिद्ध हो चुकी है) के चन्देलों की गद्दी आज भी प्रसिद्ध है। एम० ए० शेरिंग ने Supplemental Glossary Vol. I Page 76 के आधार पर लिखा है कि

अनुश्रुति के आधार पर इनकी उत्पत्ति चन्द्रमा तथा गन्धर्व कुमारी से बताई जाती है।[९१] डाक्टर वी० ए० स्मिथ के मतानुसार चन्देलों की उत्पत्ति भर तथा गौंडों से हुई है। किन्तु यह कपोल कल्पित तथा भ्रमात्मक है। उनका मूल निवास मनियागढ़, जो छतरपुर राज्य में केन नदी के तट पर अवस्थित है।[९२] नवमी शताब्दि में नन्नुक चन्देल नेता प्रबल हो उठा। उत्कीर्ण लेखानुसार यह चन्देल चन्द्रवंश में उत्पन्न चन्द्रात्रेय का वंशज था। इसी कारण नन्नुक तथा उसके उत्तराधिकारी चन्देल कहलाये। नन्नुक चन्देल वंश का प्रथम राजा था। उसके पौत्र जेजा (जयसिंह) अथवा जेजाशक्ति के नाम पर राज्य भूमि का नाम जेजाक-भुक्ति प्रसिद्ध हुआ। परम्परा तथा शिलालेखों से स्पष्ट है कि अपने राज्य के प्रारम्भ काल में चन्देल कन्नौज के गुर्जर सम्राटों के करद सामन्त थे।[९३] इसका प्रथम शक्तिशाली राजा हर्ष हुआ, जिसने मिहिरभोज (गुर्जर सम्राट) के पुत्र भोज द्वितीय और महीपाल के गृह कलह में भाग लिया और इन्हीं की सहायता से भोज गद्दी पर आसीन हुआ।[९४]

चन्देल वंश की कुल मर्यादा राज्य प्रतिष्ठा को यशोवर्मन ने और भी बढ़ाया और कलचुरियों, मालवों, कौशलों के अनेक प्रान्त हड़प लिये। खजुराहो के एक अभिलेख से विदित होता है कि उसने गुर्जरों (गुजरों) तक को आतंकित कर दिया था[९५] और गुर्जरों से (कन्नौज के प्रतिहार

---

* Mr Beames states, on the authority of Dickson in Merwara *that a Chandela Branch of the Gujars inhabits* the Merwara country Hindu Tribes and Castes Rev M A Sherring M A I L B (London) Page 237

[९१] *आदि भारत (काश्यप)* अध्याय २३, पृष्ठ ४२५

[९२] अर्ली हिस्ट्री आफ इन्डिया (स्मिथ) पृष्ठ ३०३–३०४, आक्सफोर्ड हिस्ट्री आफ इंडिया (स्टूडेन्टस) आठवां संस्करण पृष्ठ ६१–६२, इंडियन एन्टीक्वेरी ३७ (१९०८) पृष्ठ १३६–३७

[९३] *एपिग्राफिका इन्डिका १९ पृष्ठ १५ १६ (बराह ताम्रपत्र)*

[९४] प्राचीन भारत का इतिहास (उपाध्याय) ३४४

[९५] एपिग्राफिका इन्डिका १ पृष्ठ १३२ श्लोक २३

गुर्जर सम्राट) उनका प्रमुख कालिंजर का किला छीन लिया। देवपाल से विष्णु की मूर्ति छीन कर खजुराहो के मन्दिर में प्रतिष्ठित की।[९८] यशोधर्मन का उत्तराधिकारी धंग राज्याधिकारी हुआ। धंग महान प्रतापी तथा विजयी था। सन् ९५० ई० से १००२ ई० तक उसने बड़ी शक्ति, नीतिज्ञता एवं प्रतिभा से राज्य किया किन्तु कन्नौज के गुर्जरों (गूजर) सम्राटों को अपना प्रभु मानता था।[९९] इससे पता चलता है कि वह विलक्षण राजनीतिज्ञ था क्योंकि पूर्ण रूपेण स्वतन्त्र होने से पहले वह अपनी स्थिति अत्यधिक दृढ़ बना लेना चाहता था. उसके ९५४ ई० के अभिलेख से यह स्पष्ट है कि उसने अपने को गुर्जर सम्राट विनायकपाल द्वितीय का माण्डलिक नृपति घोषित किया है।[१००] इसके बाद एक शिलालेख ९९८ ई० से पता चलता है कि उसने गुर्जर को पराजित कर दिया, उसका राज खजुराहो से कालंजिर तथा मालवनद, यमुना, चेदिराज्य की सीमा तथा गोपाद्रि (ग्वालियर) तक विस्तृत था।[१०१] बनारस तथा उसके पार्श्ववर्ती प्रदेश भी उसके अधिकार में आ गये थे। काशी नगरी भी उसके अधिकार में थी।[१०२] सुबुक्त गीन के हमले में जयपाल की मदद के लिये धंग ने भी सेना भेजी थी। इसका उत्तराधिकारी गन्ड अपने पिता के समान ऐश्वर्यशाली तथा प्रतिभा सम्पन्न था। शाही राजा जयपाल के पुत्र आनन्दपाल पर जब मुसलमानों ने आक्रमण किया तो उसने भी अपने पिता की भांति संघ निर्माण किया, किन्तु उसे हारना पड़ा। गण्ड का वृतान्त महमूद की टक्करों का वृतान्त है। गुर्जर सम्राट राज्यपाल ने महमूद के प्रति आत्मसमर्पण कर दिया था। गण्ड ने संघ की ओर से इस आत्मसमर्पण के विरुद्ध दण्ड देनेके लिये अपने युवराज को भेजा। विद्याधरने राज्यपाल गुर्जर नृपति को मार कर उसके पुत्र त्रिलोचनपाल को १०१८ ई०

---

९८ वही पृष्ठ १२२ श्लोक ३१, पृष्ठ १२४ श्लोक ४२

९९ वही १ पृष्ठ १२५

१०० वही पृष्ठ १९७–२०२ श्लोक ३

१०१ वही पृष्ठ १२४, १३४ श्लोक ४५

१०२ इन्डियन ऐन्टीक्वेरी १६ पृष्ठ २०२–२०४

में कन्नौज का राजा घोषित किया। भला यह खबर महमूद को किस प्रकार जंच सकती थी। महमूद १०१६ ई० में फिर लौटा और गण्ड पर हमला कर दिया। दोनों ओर की सेनायें आमने सामने खड़ी हुई थीं परन्तु एकाएक चन्देलराज गण्ड को भय ने धर दबाया और रात को अंधियारे में अपना माल असबाब लेकर भाग निकला।[१०३] १०२३ ई० में महमूद ने फिर चन्देलों पर चढ़ाई की और ग्वालियर तथा कालिंजर पर अधिकार कर लिया। गन्ड ने आत्मसमर्पण के साथ सुलह कर ली।

कीर्तिवर्मन, मदनवर्मन, परमार्दि, चन्देलों के पिछले राजाओं में अति शक्तिशाली थे। पहले तो वह कलचुरियों से हार गये थे लेकिन प्रबोध चन्द्रोदय से पता चलता है कि जो चन्देल राजा कीर्तिवर्मन, कलचूरि (हाहलिया) नरेश लक्ष्मीकर्ण से हार गया था, कर्ण राजा पर पूरी तरह विजयी हुआ। मदनवर्मन ने ११२६ ई० के कुछ पहले ११६४ ई० के कुछ बाद तक राज किया। उसने गुजरात के गुर्जर नरेश सिद्धराज जयसिंह को सम्भवत हराया। मऊ (झांसी) के अभिलेख से विदित होता है कि मदनवर्मन ने चेदि-नृपति (गया कर्ण) को परास्त किया। मालवा के परमार नरेश को उखाड़ फेंका और काशीराज को मित्रभाव से सम्मानित किया।[१०४] परमार्दि (परमाल) ने लगभग ११६५ ई० से १२०३ ई० तक राज्य किया। मदनपुर के अभिलेख और पृथ्वीराज रासो से प्रमाणित है कि पृथ्वीराज (३) चौहान ने उसे ११८२-८३ ई० में परास्त किया।[१०५] परन्तु परमाल ने शीघ्र ही अपनी स्थिति सम्भाल ली। १२०३ ई० में जब कुतुबुद्दीन ने कालिंजर पर घेरा डाला, तो पहले परमाल खूब लड़ा, पर बाद में आत्मसमर्पण कर दिया। महोबा पर भी मुसलमानों का अधिकार हो गया। १५ सदी के अन्त तक चन्देलों के छोटे-छोटे

[१०३] भारत का इतिहास इलियट २ पृष्ठ ४६४

[१०४] ऐपिग्राफिका इण्डिका १ पृष्ठ १९८, २०४

[१०५] रेपसन आर्कियालोजिकल सर्वे आफ इंडिया १९०३-१९०४ पृष्ठ ५५

राज्य बने रहे। अनुश्रुति के अनुसार आल्हा की कथाओं में प्रसिद्ध वीर आल्हा-ऊदल परमाल के ही दरबार में रहते थे, जिनकी वीरता से प्रभावित जगनिक कवि ने आल्हा काव्य की रचना की है। चन्देल असाधारण नृपति थे, उन्होंने वास्तुकला के अनेक स्थान निर्माण किये। मन्दिर व सरोवर उनके प्रिय खास शौक थे। खजुराहो के दर्शनीय मन्दिर महोबा का मदन सागर उनकी कीर्ति और कला के प्रतीक हैं।

पंजाब, पामीर, तिब्बत और यारखुन नदी के बीच का आधुनिक काश्मीर पहले समय मे झेलम और उसकी सहायक छोटी-छोटी नदियों की घाटी में बसा हुआ बहुत छोटा सा प्रदेश था और अनेक भारतीय नरेशों एवं जातियों का यहां पर प्रभुत्व स्थापित हुआ। गूजर यहां के प्राचीन निवासी नहीं हैं, वे जो आज संख्या में १० लाख हैं; पंजाब से आकर यहां बसे, जबकि ८वीं-९वीं शताब्दि मे काश्मीरसे मिले हुए प्रदेशों पर तथा जम्मू की घाटियों में गुर्जरों का शक्तिसम्पन्न राज था। इसी कारण पंजाब के तथा काश्मीर के इतिहास पर गुर्जरों का खास प्रभाव है। यहां की जनसंख्या में गुर्जर विशेष हैं। विद्वानों का यह भी प्रमाणों के आधार पर विश्वसनीय अनुमान है कि गुर्जर अथवा गूजर पंजाब के मूल निवासी हैं। काश्मीर, पंजाब एवं सरहदी इलाके तथा स्वतन्त्र कबायली इलाकों में आज दिन तक ऐसी निशानियां विद्यमान हैं एवं नगरों, प्रान्तों, शहरों के नामों की स्थिति से प्रकट होता है कि एक समय अवश्य ही इन प्रदेशों की सर्वोच्च सत्ता गुर्जरों के हाथ में रही होगी, जिसका इतिहास अभी पूर्ण रूप से प्रकाश में नहीं आया।[१०६]

उत्तरापथ के काबुल तथा पंजाब प्रान्त में शाहीवंश का राज्य था। डा० त्रिपाठी एवं महत्त्वपूर्ण इतिहासकारों ने उन्हें कुशान वंश का माना है। समुद्र गुप्त की प्रयाग प्रशस्ति में, जिस देवपुत्र शाही—शाहानुशाही का वर्णन आया है, वह काबुल की घाटी में राज्य करता था। अलबरूनी (९७३-१०४८ ई०) ने भी इस विषय में पर्याप्त विचार

[१०६] आर्कियालोजिकल सर्वे १८६२ (२) पृष्ठ ४
— बम्बई गजेटियर भाग ९ जि० १ पृष्ठ ४८२

प्रकट किये हैं, उसके कथनानुसार वहँनकिन के वशजों मे कनिष्क (कनिक) नामक शाहीय ने ६० पुश्तों तक राज्य किया। इनके वृतान्त से ऐसा प्रतीत होता है कि काबुलशाही कुशानों (कसाने) के वशज थे और बहुत वर्षों तक उन्होंने काबुल की घाटी में राज्य किया। ह्वेनसाग के समय में शाही पूर्णतया हिन्दू थे। स्वय कनिष्क के उत्तराधिकारियों ने भारतीय क्षत्रियों (राजाओं) की तरह अपनी प्रसिद्धि उन्हीं के अनुरूप दे रक्खी थी। हम पहले भी लिख चुके हैं कि जनरल कनिंघम तथा उसी का अनुसरण करते हुए इतिहास के अन्य विद्वानों ने इन्हीं कुशानों को पूर्णतया गुर्जर (गूजर) माना है। वर्तमान गुर्जरों के कुशान-कसाने गोत्रों में भी यही पता चलता है कि कुशान (कसाने) वश का गुर्जरों के उत्कर्ष से महत्वपूर्ण सम्बन्ध है। लगभग ७ शताब्दियों तक शाहियों को अरबों से सघर्ष करना पड़ा। नवमी शताब्दि में अन्तिम शाही वंश का राजा लगतुर्मान था, जिसे ब्राह्मण मन्त्री ने समाप्त करके अपने वश की नींव डाली। हूण सम्राट मिहिरकुल जिस समय सम्राट यशोवर्मन तथा बालादित्य के आक्रमणों से भाग निकला, तो उसने काश्मीर में शरण ली, जहा उसकी बड़ी आवभगत हुई और उसने तत्कालीन राजा से गद्दी छीन कर काश्मीर में राज्य किया।

ब्राह्मणशाही के सस्थापक कल्लर के समय पजाब के गूजरों के इतिहास में राजा शकरवर्मन के साथ गुर्जर राजा की शत्रुता का वर्णन मिलता है। इस ललिय (कल्लर) का गुर्जर नृपति अलाखान के साथ मित्रता का सम्बन्ध था। यहा गुर्जरों ने कन्नौज के गुर्जरों के साम्राज्य काल में टक्क देश तथा रावी चिनाब के प्रदेश गुजरात के नाम से प्रसिद्ध गुर्जरों से रक्षित प्रदेश (गुजरात) नाम के देश का सम्बन्ध सीधा—अपना गुर्जरों का साम्राज्य होने से—कन्नौज से कर लिया था। लेकिन राजतरंगिणि से पता चलता है कि शकरवर्मन ने गुर्जर राजा अलाखान पर चढाई कर दी। कन्नौज के साम्राज्य की यथासमय सहायता न मिलने से, काबुल के ललिय से सीधा सम्बन्ध स्वाभाविक रूप से—पड़ौसी शक्तिशाली राज्य होने के कारण और गुर्जरों से पूर्व के उनके राजमन्त्री होने के नाते–होना स्वाभाविक था। राजतरंगिणि के वर्णन से यह भी पता चलता है कि शकरवर्मन ने पूर्व

(८८३ ई०) गुर्जरों का वर्तमान काश्मीर के जम्मू प्रदेश पंजाब पर राज्य एवं व्यापक प्रभाव था और मिहिरभोज के समय दर्वाभिसार (दोआबा), कांगड़ा (त्रिगर्त), दक्षिण के पंजाब के प्रदेशों तथा जम्मू के विस्तृत राज्य पर गुर्जरों (अलाखान) का अधिकार था। राजतरंगिणि और अन्य प्रमाणों के आधार पर पता चलता है कि शंकरवर्मन ने झेलम और चुनाव नदियों के दोआबे पर प्रभुत्व स्थापित कर गुर्जर नरेश अलाखान तथा ललिय शाही के संघ को तोड़ कर गुर्जरों (गूजरों) को पराप्त कर दिया। मिहिरभोज द्वारा विजित प्रदेश उसने उसके उत्तराधिकारी महेन्द्रपाल प्रथम से छीन लिये। गुर्जर राजा के दृढ़ और व्यवस्थित भाग्य को लड़ाई में क्षणमात्र में उखाड़ फेंका, लेकिन गुर्जर (गूजर) राजा की उच्च एवं विनम्र भावना से टक्क देश देकर अपने गुर्जरों से रक्षित गुर्जरत्रा (गुजरात) प्रदेश की रक्षा कर ली। यह कार्य राजनीतिक व्यक्ति गुर्जर राजा का इस प्रकार का था जिस प्रकार कोई व्यक्ति प्रबल शत्रु का सामना होने पर अंगुली का बलिदान करके अपना शरीर बचा ले।[१००] इसके बाद इन प्रदेशों पर गुर्जरों की अक्षुण्णसत्ता रही। काश्मीर में भी गुर्जर शक्तिसम्पन्न रहे। जहाँगीर और उससे पूर्व बाबर के आक्रमणों से उन्हें असह्य हानि उठानी पड़ी और पंजाब में तो वे आज तक दृढ़ राजनैतिक स्थिति में रहे,[१०८] किन्तु काश्मीर में वे राज श्री-विहीन होकर घुमक्कड़ अवस्था को पहुंच गये लेकिन उनको बस्तियों में उनकी स्थिति दृढ़ रही। जहांगीर के समय में ही वे शासनतन्त्र से बाहर हो गये थे।[१०९]

भारतीय इतिहास तथा गुर्जरों के इतिहास में सिन्ध का विशेष महत्त्व है। अति प्राचीन काल में इसी देश के लरकाना प्रान्त में, मोहनजोदड़ो की सैन्धव सभ्यता का राज्य था। इसी प्रान्त पर पहले पहल अरब के मुसलमानों का हमला हुआ और यहीं उनका पहला भारतीय मुसलिम राष्ट्र खड़ा हुआ, जिसका वृतान्त अरब इतिहासकारों ने

[१००] राजतरंगिणी भाग ५ पृष्ठ १४६–५५

[१०८] पञ्जाब कास्टस (सर डेन्जिल-इवटसन) पृष्ठ २६५

[१०९] इलियट हिस्ट्री ६ भाग, पृष्ठ ३०९

देकर गुर्नर (गूजर)—जिन्हें वे अपनी भाषा में जुर्ज भी कहते थे—जाति का महत्व प्रतिष्ठित किया। दाहिर के समय ७१२ ई० में ब्राह्मनाबाद और देवल की विजय में गुर्जरों के कारण अनेक बाधायें उपस्थित हुईं। मान गुर्जर प्रधान सेनापति देवल के नेतृत्व में, जाट और गुर्जरों की सेना ने अरबों की ३५ हजार सेना को करारी हार दी थी। बगदाद के खलीफा की वक्र दृष्टि भारत पर लगी हुई थी और यहा की अहमान्य जातियों की रग रग में विद्वेष एवं फूट का घुन लगा हुआ था। देवल बन्दरगाह के आसपास अरबों के जहाजों को लूटने वाले गुर्जर तथा जाट जत्थे बन्द सरदारों की सेना थी, जिनका व्यवहार सिन्ध के नागरिकों के साथ सभ्यता का था। सर्व खाप पंचायत राज के बन्धन में यह लोग पूर्णतया बन्धे हुए थे। शाहर भी इनकी हर प्रकार से रक्षा करता था। एक बार अरबी जहाज देवल बन्दरगाह में शरण के लिये आया। दुष्ट अरबों ने, जिस जहाज द्वारा सिन्धी औरतों तथा अबोध बच्चों को भगा ले जाने का असफलतापूर्ण प्रयास किया, गुर्जर सरदारों ने अपने संघ के नेतृत्व में, जिसमें प्रधान सेनापति मान गूजर तथा मोहना जाट एवं जस्सा राजपूत तथा उनका जातीय संघ सम्मिलित था, अरबों के जहाज को लूट कर अरबों को बन्दी बना लिया। संघ द्वारा अरबी जहाज लूटा गया और सिन्ध के राजा दाहिर ने उनका कुछ भी इलाज नहीं किया और न माफी मागी। इस आर्य मान से क्रुद्ध हो खलीफा ने अब्दुल्ला के नेतृत्व में सबसे प्रथम अपनी विश्व विजयी ३५ हजार सेना सिन्ध पर भेजकर चढ़ाई कर दी। युवराज-जयशाह, मान गूजर प्रधान सेनापति जस्सा राजपूत (सेनापति) तथा मोहना जाट (सेनापति) ने प्रथम आक्रमण में ही अरबों को इतनी करारी हार दी कि उनके हाथों के तोते उड गये। संघ की इस विजय से तथा ब्राह्मणों द्वारा चच के समय के छीने गये अधिकार गूजर और जाटों (भागवत उपासक) को मिल जाने से ब्राह्मण और बौद्ध सिन्ध ही नहीं अपितु भारत की स्वतन्त्रता की जड खोदने में लग गये।

बौद्ध मन्त्री ज्ञानबुद्ध ने खलीफा को गुप्त रूप से भारत पर आक्रमण के लिये निमन्त्रण भेजा। ७१२ ई० में मुहम्मद बिनकासिम के नेतृत्व में एक विशाल अरब सेना सिन्ध तथा भारत विजय के लिये

चलदी। यदि अकेला ज्ञानबुद्ध ही बदला लेने पर तुला होता, तो युक्ति भिड़ जाती किन्तु सम्पूर्ण ब्राह्मण और बौद्ध जाति देश के भाग्य पलटने को बद्धपरिवद्ध थी। इसी द्वेष के कारण राज ज्योतिषी ने महाराजा दाहर को युद्ध में आने की व्यवस्था न दी। परन्तु गुर्जर सेनापति (प्रधान) मानू ने इसका आसानी से समाधान कर दिया और सर्व खाप पंचायत राज के नेतृत्व में गूजर, जाट एवं राजपूत सेनापतियों के साथ दाहर के पुत्र जयशाह को लेकर सिन्ध सेना विजय के लिये उत्सुक होकर चल दी। इस घमासान युद्ध में यवन सेना के पैर बुरी तरह उखड़ गये। परन्तु दुर्भाग्यवश ब्राह्मण जाति के अधिकारों तथा बौद्ध मन्दिरों की रक्षा का आश्वासन पाकर ज्ञानबुद्ध राजमन्त्री ने स्वयं दक्षिण का-किले का-दरवाजा खोल दिया, ऐसी अवस्था में वहीं हुआ। देवल जैसे सुन्दर बन्दरगाह पर जहां मानू गूजर के प्रधान सेनापतित्व—वीर राजपूत, जाट गूजरों की रण बांकी सेनाओं की सुरक्षा—में कुछ समय पूर्व अपने सुनहले अतीत को स्मरण करता हुआ परम पवित्र भगवा ध्वज मस्त हो लहरा रहा था, वहां यवन ध्वज फहराने लगा। युवराज जयशाह घायल हो गया, मोहना जाट व जस्सा राजपूत काम आये। शत्रुओं के पंजे से निकल कर किसी प्रकार से मानू गूजर प्रधान सेनापति ने दाहर को देवल के पतन की सूचना दी। यह देवल का पतन न था अपितु सारे भारत का पतन था।

दाहर ने विश्वासघात की खबर के साथ इस समाचार को सुनकर अपनी वीर सेना को फिर आह्वान किया। वीरों की भुजाएं फड़क उठी, तूणीर में शर कसमसा गये। राज ज्योतिषी के पुनः रोकने पर भी दाहर ने युद्ध के लिये प्रस्थान कर दिया। सिन्धु के तट पर विकट युद्ध हुआ। स्वतन्त्रता के अमर पुजारी दाहर और सेनापति मानू अमरत्व को प्राप्त हुए। जीवित नहीं अपितु मृत दाहर व उनके सेनापति मानू के सिर काट लिये गये और मोहना जाट, जस्सा राजपूत के सिर के साथ खलीफा के पास अरब भेज दिये गये। दाहर की महारानी ने अपने पति की मृत्यु का दुःखद समाचार सुना तो क्रोध से पागल हो उठी और तीनों सेनापतियों की धर्मपत्नियों को लेकर वीरांगणा गूजर, जाट एवं राजपूत महिलाओं के साथ अरब सेना में वह मारकाट मचाई कि कासिम को एक

बार फिर अपनी विजय के स्वप्न झूठे होते दिखाई पड़ने लगे। देश का दुर्भाग्य !!! निर्दयी मीरों ने चारों देवियों के प्राण लेलिये। युद्ध समाप्त हुआ। खलीफा वीरों के सिरों को—चेहरों पर छाई वीरता, ओज एवं शौर्य तथा उनकी क्रोधाग्नि तथा प्रतिहिंसा की भावना भरे मुखों की भयानकता—देखकर बेहोश हो गया। खलीफ़ा की आज्ञा से—आर्य ललनाओं की स्वयं कथित बेइज्जती तथा वीरों के भयानक तरीके से किये गये वध के बाद ये अपमान करने वाले सेनापति से क्षुब्ध—कासिम की जिन्दा लाश सूखी खाल में भर कर लाई गई।[११०] ७१३ ई० तक सिन्ध पूरी तरह अरबों के अधिकार में आगया। हिन्दू ब्राह्मणों के मन्दिरों को सुरक्षित रखने की तथा नये मन्दिर बनवाने की तथा उनके साथ सहिष्णुता के बर्ताव की घोषणा इसी कारण हुई।[१११] जुनैद के समय फिर अरबों ने आगे बढ़ने का प्रयत्न किया और यहाँ उनकी भीनमाल, उज्जैन तथा गुजरात पर गुर्जरों के साथ सीधी टक्कर हुई। गूजरों ने उन्हें आगे बढ़ने से रोक दिया। तब से गुर्जर अरबों तथा इस्लाम के भारत में सब से प्रबल शत्रु हो गये। इसी कारण अरबों ने गुर्जरों के सहजवैरी मान्यखेट के राष्ट्रकूटों से मैत्री की। किन्तु मिहिरभोज-गुर्जर सम्राट ने सिन्ध को अपने राज्य में फिर मिला लिया। यदि गुर्जरों ने सजग होकर अरबों की राह न रोकी होती तो निश्चय ही भारत के अन्तरग प्रान्तों पर भी अरबों का अधिकार हो गया होता।[११२]

---

[११०] सर्वखाप पंचायत का रिकार्ड जो वीर चन्द्रदत्त भट्ट तथा अब्दुलरहमान सावरी का लिखा हुआ शोरो (मुजफ्फरनगर) में चौ० कबूलसिंह के पास सुरक्षित है। इसी प्रकार का बिलकुल इसी रूप का लेख श्री वीरेन्द्रसिंह मोयाल का 'भारत के भूले लाल' एक सच्ची एतिहासिक गाथा मस्ताना जोगी अगस्त १९५० व वीर गुर्जर अंक ५ भाग २३ में इसी नाम से प्रकाशित।

[१११] डायनेस्टिक हिस्ट्री आफ नादर्न इन्डिया १ पृष्ठ २०-२४

[११२] प्राचीन भारत का इतिहास (डा० त्रिपाठी) पृष्ठ २५३,
(डा० उपाध्याय) पृष्ठ २३५, (डा० सत्यकेतु विद्यालङ्कार)
पृष्ठ ६३ आदिभारत (काश्यप) पृष्ठ ४६२-४६३

(८)

जिस प्रकार भारतीय इतिहास में गुर्जरों के विभिन्न वंशों के उत्तरोत्तर उत्कर्ष का पता चलता है, उसी प्रकार वर्तमान परम्परा और जाति की स्थिति से यह भी पता चलता है, कि गुर्जर और राजपूतों में परस्पर अनेक कुलों का आदान प्रदान पिछले समय तक होता रहा है। इस के लिये दूर जाने की आवश्यकता नहीं। भाटी तवर आदि अनेक गुर्जरों के कुल परस्पर बदलते रहे हैं।[११३] इसी प्रकार बड़गूजर, गुर्जरों एवं राजपूतों का एक खास गोत्र या कुल है, जो अपना सम्बन्ध रामचन्द्रजी के पुत्र लव से बताते हैं। इस बड़ गुर्जर का खास सम्बन्ध गुर्जर राजवंश में है। गुर्जरों में बड़गुर्जर अब भी गूजरों की एक उपजाति है, जिसमें अनेक कुल या गोत्रों का समागम है।

सहारनपुर के बड़ान् गूजर जिन्हें इलियट ने उनके महत्व के कारण बड़े या बडान् प्रसिद्ध किया है या खू-बड-गुर्जर[११४] और मध्यप्रदेश[११५] तथा पूर्व और पश्चिम खानदेश,[११६] अहमदनगर, हैदराबाद दक्षिण के बड़गुर्जर इसी प्रकार के हैं, जो अपने महत्व विशेष जातीय महत्वपूर्ण स्थिति एवं धन, राज, मान के कारण गूजर जाति में बड़गुर्जर कहलाते हैं। इसी प्रकार राजौर-गढ़ (राजगढ), माचेड़ी (अलवर) ढूंढाड़ के गुर्जर भी अपनी राजप्रतिष्ठा से बड़गुर्जर प्रसिद्ध हो गये।

---

[११३] पंजाब कास्टस, पृष्ठ १८५, शेरिंग हिन्दू कास्टस एन्ड ट्राइब्स पृष्ठ ३३६, इलियट ग्लोसरी प्रथम भाग पृष्ठ ९९–१०१

[११४] इलियट ग्लोसरी प्रथम भाग पृष्ठ १००

[११५] जातियां और कबीले मध्य प्रदेश (गूजर) आर०वी०रसेल तथा आर०बी० हीरालाल ई०ए०सी० १९१६

"The Gujar sub-divisions— The Bad Gujars who belong to Nimar consider themselves the highest deriving their name from Bara or Great Gujar. As already seen, there is a Bad Gujar clan of Rajputs The Nimar Bad Gujars are also Known a Ludhare Gujars

[११६] खानदेश गजेटियर ६२

जैसलमेर से आये भाटी सरदार एवं कौशल के यश न सिर्फ विवाह सम्बन्ध के कारण जिले बुलन्दशहर में एक रक्तवंश पर आश्रित भाटी गूजर और भाटी-राजपूत तथा दाहिमा, डाड़िया, तंवर, पंवार, हौडिया, (डोंडे), डेढे, सिकरवार आदि अनेक वंश एक ही स्थान पर दोनों जातियों में प्रतिष्ठित हैं। यश के जिस दल ने गुर्जर समूह में विवाह सम्बन्ध तथा रहन सहन द्वारा अपनी स्थिति दृढ़ करली, वे गुर्जर और जिसने राजपूतों में सम्बन्ध स्थापित कर लिया, वे राजपूत कहलाने लगे। मूलस्रोत एक होने की इस नितान्त साम्यता का इतिहास साक्षी है और एक स्थान से दूसरे स्थान परिवर्तन ने इनकी जातीय स्थिति में ऐसे विशेष परिवर्तन पैदा कर दिये। कुछ सामाजिक मान्यता मध्य-युगीन भारत में ऐसी हुई कि दोनों जातियों के पृथक-पृथक दृष्टिकोण होने से, अलग-अलग जातिय स्थिति दृढ़ होती चली गई।[११०] इसका आभास इतिहास में हम स्पष्ट रूप से विधवा विवाह और सती प्रथा के रूप में पाते हैं। गूजरी रानी मृगनयनी के चरित्र में इसकी एक झांकी स्पष्ट रूप से आई है, जो उस समय परिस्थितियों में उसज्ञ जाति के एक अकृत्य क्षत्रियोचित दृष्टिकोण को उपस्थित करती है। गूजरों के राई गांव की गूजरी बाला मृगनयनी खेतों में धनुष बाण लेकर मचान पर बैठती है। तभी उसके मन में जातीय जन्म जात-वीरता के भाव उदय होते हैं। स्त्री अबला होती है यह विचार उसे टूल देता है। स्त्रियों का जौहर अब उसे कायरता की निशानी मालूम पड़ती है। उसे आश्चर्य होता है कि स्त्रिया इतनी निर्बल क्यों होती हैं। यह सोचती है—

'राजा लोग अपने थोड़े से भाई बान्धवों को किसी गढ़ में बन्द करके लड़ते-लड़ते मर जाते हैं और उनकी स्त्रियां चिता में जलकर भस्म हो जाती हैं। क्या यह स्त्रिया तीर कमान चलाना नहीं जानती होंगी— रानियां तो पर्दे में मुंह छिपाये बैठी रहती हैं। सुनती तो आई हू; परन्तु क्या उनके हाथ पैर इतने निकम्मे होते होंगे कि अपने ऊपर आया और

---

[११०] इलियट ग्लोसरी, पृष्ठ १०२-१८० पंजाब कास्टस (सर डेन्जिल इबटसन) पृष्ठ १८६ १८७

हाथ डालने वाले पुरुष को घूंसे से धरती न सुंघा सके ? चिता मे जल कर मरें स्त्रियो पर हाथ डालने वाले ??? मैं तो कभी इस तरह नहीं मरने की।"[११८]

दोनों जातियों के इतिहास का अलग-अलग समय यही है, जब कि वे अपने अलग-अलग नामों से बसते हैं और सामूहिक सगठन द्वारा दृढ राजस्थिति को पहुँचते हैं। गूजर नाम ही यह स्पष्ट करता है कि इतिहास मे गूजर शब्द जाति के रूप में पहले का है। बडगूजर शब्द भी जहा राजपूत व गुर्जरों की अलग-अलग जातीय स्थिति में आता है, वहां गुर्जर जाति के साथ अपना पूर्व का सम्बन्ध दृढ करता है।[११९] कर्नल टाड ने बडगुर्जरों की राजधानी राज्रौरगढ (राजगढ) अलवर बताई है।[१२०] प्रतिहार गोत्र के गूजर (अपने शिलालेख में उसने अपने को बडगूजर नहीं लिखा बल्कि गूजर ही लिखा है)[१२१] राजा

---

[११८] मृगनयनी (वृन्दावन लाल वर्मा) पृष्ठ १७-१८

[११९] बम्बई गजेटियर भाग ६ जि० १ पृष्ठ ४८२ (स्पेशल क्लासेज)

[१२०] ऐनेल्स ग्राफ राजस्थान (२) पृष्ठ ३६६

[१२१] Gurjaras by Dr Bhandarkar M A, Antiquary of India Part XIII Page 416

A stone inscription has been published by Dr. Kielhorn, of a king named Mathandeva (A D 960) who is described as belonging to the Gurjar Pratihar dynasty His capital was Rajhura the modern "Rajor" in "Alwar" state, where the stone inscription was found Mathandeva is therein represented to have granted on the occasion of installation of the God Lachhu kesvara in the village of Vyaghrapataka, together with all neigh bouring field, cultivated We are distinctly told by the Gurjar It is thus plain that Mathan Deva is himself a Gurjar and belongs to the Pratihar family He held sway over a territory correspond ing to the present Alwar state and this territory was occupied by Gurjars, as they appear to have been the agricultural class there

मथनदेव (विक्रमी स० १०१६) की राजधानी राजौरगढ ही थी और वे गूजर जाति के थे।[१२२] गूजरों का राज्य इस प्रदेश पर (ई० सन् १४५८-१४८०) तक रहा। इन गुर्जरों (गूजरों) को बडगूजर नाम से प्रसिद्ध होने का समय माचेडी की बावली वाले (वि० स० १४३६, ई० सन १३८२) के शिलालेख में देखने में आया है।[१२३] उस शिलालेख से पाया जाता है कि वैशाख सुदि ६ को सुलताण (सुल्तान) पेरोजशाही (फिरोजशाह तुगलक) के शासन काल में उस माचेडी पर बडगूजर वंश के राजा आसलदेव के पुत्र महाराजाधिराज गोगदेव का राज्य था। यह बावड़ी खण्डेलवाल महाजन कुटुम्ब ने बनवाई थी। उसी गोगदेव के समय के विक्रमी संवत १४२१, १४२६ (ई० सन् १३६४ और १३६६) के शिलालेख भी देखने में आये हैं।[१२४] यह गोगदेव फिरोजशाह तुगलक का सामन्त था। वहीं दूसरी बावडी में एक शिलालेख विक्रमी संवत् १५१५ शाके १३८० (ई० सन् १४५८) का सुरताण बहलोल शाही (बहलोल लोधी) के समय का है।[१२५] इस समय माचेडी में बड गूजर वंश (गूजर) के महाराजा रामसिंह के पुत्र महाराजा राजपाल देव (रजपाल देव) राज्य करते थे। महाराजा रामसिंह गोगदेव का पौत्र या पुत्र था। वंशावली, वर्तमान परम्परा से यह स्पष्ट है कि बडगुर्जर, प्रतिहार वंश के गुर्जर थे, जो अपनी महान प्रतिष्ठा के कारण बडे (महान) गूजर होने से बड गूजर कहलाने लगे, जिस प्रकार आज भी अनेक गुर्जरवंश, जो महत्त्व पूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त किये हुए हैं, इस महत्त्वपूर्ण नाम की स्थिति रखते हैं।

मध्य भारत के देशी-राज्यों में खटाणा वंश की प्रसिद्ध गूजर रियासत के वर्तमान वंशधरों को गजेटियर आदि में बडगूजर लिखना

---

१२२ एपिग्राफिया इन्डिका जिल्द ३ पृष्ठ २६६

१२३ राजपूताना म्यूजियम (अजमेर) की ई० सन १९१८-१९ की रिपोर्ट पृष्ठ २ लेख संख्या ८

१२४ वही (रिपोर्ट १९१८-१९) पृष्ठ २ लेख ६-७

१२५ वही ई० सन १९१८-१९ की रिपोर्ट पृष्ठ ३ लेख संख्या ११

इसी आशय को स्पष्ट करता है।[126] इन्हीं राजौर के बड़गूजर नाम से प्रसिद्ध गूजरों की एक शाखा ने गंगा किनारे जाकर शरण ली, क्योंकि कछवाहों ने इनकी राजधानी पर अधिकार कर लिया था और इधर आने पर यह बड़गुर्जर पूर्णतया राजपूत जाति के जत्थे में शामिल हो गये। टाड ने जिन राजौर (राजगढ़) के बड़गुर्जरों का वर्णन अपनी खोज मे किया है,[127] उनका सम्बन्ध दशमी शताब्दि के प्रारम्भ मे अलवर-राज्य के पश्चिमी विभाग तथा उसके निकटवर्ती प्रदेशों पर राज्य करने वाले गुर्जरों (गूजरों) से है। अलवर राज्य के राजौरगढ़ नामक किले से मिले हुए प्राचीन शिलालेख विक्रमी संवत् १०१६ (ई० सन् ९६०) माघ सुदि १३ से पाया जाता है कि उस समय राज्यपुर (राजौरगढ़) पर प्रतिहार गोत्र का गुर्जर (गूजर) जाति का महाराजाधिराज मावट का पुत्र, महाराजाधिराज परमेश्वर मथनदेव राज्य करता था।[128] शिलालेख में मथनदेव को महाराजाधिराज परमेश्वर लिखने से पता चलता है, कि उसकी सत्ता एक स्वतन्त्र शासक की थी और गुर्जर जाति का होने के कारण उसका कन्नौज के विशाल गुर्जर साम्राज्य के अधिपति महीपाल से सम्बन्ध रखना जातिय तथा सुरक्षा की दृष्टि से आवश्यक था, क्योंकि शिलालेख में उसे महीपाल का सामन्त स्वीकार किया गया है।[129] इस शिलालेख में यह भी पाया जाता है कि गूजर जाति के किसान भी उस समय वहां पर थे।

हैहय वंश की एक शाखा कलचुरि का इतिहास में बहुत महत्व है, जिनको नवमी दशमी शताब्दि में डाहल (जबलपुर की पार्श्ववर्ती भूमि) प्रदेश में राज्य करने से डाहल भी कहते हैं[130] और यही डाहलिये प्रसिद्ध गुर्जरों में वंश-कुल या गोत्र की स्थिति में काफी पाये

---

[126] सेन्ट्रल इन्डिया एजेन्सी के राजाओं का वृतान्त (समनर) भारत सरकार द्वारा प्रकाशित

[127] टाड राजस्थान जि० १ पृष्ठ १४०-४१

[128] ऐपिग्राफिका इन्डिका जि० ३ पृष्ठ २६६

[129] वही जिल्द ३ पृष्ठ २६६

[130] प्राचि भारत पृष्ठ ५२६

जाते हैं और अपना वंश कार्तवीर्य-अर्जुन का वंशज बनाते हैं।

कलचुरियों अथवा हाहलवंश वास्तव में हैहयवंश के आदि पुरुष कार्तवीर्य अर्जुन के वंशज थे। नर्मदा की घाटी में वे प्राचीन समय से शासन करते चले आये हैं। महिष्मति-उनकी राजधानी थी।[१३१] प्रतिहार गुर्जर साम्राज्य काल में उनका कन्नौज से सम्बन्ध था और गुर्जर साम्राज्य के आधीन थे। क्षत्रिय उन्नतिशील गुर्जर समूह में चन्देल, पवार, सौलंकी आदि अन्य राजवंशों की भांति इस वंश का भी इनमें समावेश था। गुर्जर साम्राज्य के घरेलू मामलों में भी वे चन्देलों की तरह पूर्णतया भाग लेते थे और भोज द्वितीय की सहायता महीपाल—इसके भाई—के विरोध में इनके प्रसिद्ध राजा कोक्कल ने की थी।[१३२] इस कोक्कल ने त्रिपुरी (जबलपुर) को राजधानी बनाया। तत्कालीन शक्तिशाली सभी राजवंशों से इनके मित्रता और विवाह सम्बन्ध स्थापित थे। इस वंश का दूसरा प्रतापी राजा गंगेयदेव हुआ, जिसने १०१६-१०४१ ई० तक शासन किया और विक्रमादित्य की उपाधि धारण की। कांगड़ा घाटी तक के प्रदेश इसके अधिकार में आगये थे और कन्नौज के साम्राज्य के अन्तिम काल में प्रयाग और बनारस तक पर इनका अधिकार पाया जाता है। तिरहुत और उड़ीसा के शासकों को भी हराया।[१३३] परमार राजा भोज के समय में गंगेयदेव की शक्ति क्षीण हो गई और उसने इसे पराजित किया।[१३४]

कलचूरि (हाहल) वंश का सबसे प्रतापी शासक गंगेयदेव का उत्तराधिकारी कर्ण (१०४१-१०७२ ई०) में हुआ। बनारस पर उसकी सत्ता थी, जहां उसने कर्ण मेरू नामक शिव मन्दिर बनाया।[१३५]

---

[१३१] प्राचीन भारत का इतिहास (उपाध्याय) ३४२

[१३२] एपिग्राफिका इन्डिका पृष्ठ २५६, २६४ श्लोक १७ वही (२) पृष्ठ ३०६-श्लोक ७

[१३३] डायनस्टिक हिस्ट्री आफ नार्दर्न इन्डिया २ पृष्ठ ७७४

[१३४] हिस्ट्री आफ परमार डायनस्टी पृष्ठ ९०-९१

[१३५] ऐपिग्राफिका इन्डिका २ पृष्ठ ४, ६ श्लोक १३

चन्देल राजा विजयपाल को भी इसने हराया। गुर्जर राजा भीमदेव प्रथम (अनहिलवाडा) की सहायता से इसने भोजदेव की धारा नगरी को भी रौन्द डाला और मालवा प्रान्त को उजाड़ दिया। पाण्ड्य और कलिंग भी उसकी शक्ति मानते थे। अन्त में सोलंकी वंश के गुर्जर राजा भीमदेव से उसकी शत्रुता हो गई और भीमदेव ने इसे परास्त कर दिया। मालवे में उदयादित्य स्वतन्त्र हो गया। सोमेश्वर गुर्जर राज तथा चन्देल राज कीर्तिवर्मन ने उसे बारी-बारी से हरा दिया। इस कर्ण ने जिसे लक्ष्मीकर्ण भी कहते हैं—अपना विवाह हूण राजकुमारी आवल्ल देवी से किया। उसी का पुत्र यशकर्ण गद्दी पर बैठा लेकिन इनका भाग्य अस्त हो चला था।[११६] राज्य चारों ओर से होने वाले आक्रमणों के कारण छिन्न भिन्न हो गया। १०७० ई० में यशकर्ण की मृत्यु हो गई और उसके पुत्र गयकर्ण के समय में उनका राज्य अस्त हो गया। दक्षिण कौशल की रत्नपुर शाखा ने अपनी स्वतन्त्र सत्ता घोषित कर दी। किसी प्रकार १२वीं शताब्दि तक मध्यप्रदेश (महाकौशल) में उनकी धुंधली सी राजसत्ता टिमटिमाती रही, जिसने कभी सारे भारत पर अपनी शक्ति और वीरता से प्रभाव स्थापित किया था, वह स्वयं प्रचण्ड प्रताप दिखाकर अस्त हो गया।

यादव राजवंश के यदुवंशी क्षत्रिय वंशों का गुर्जर जाति में बहुत बड़ी संख्या में पाया जाना उनके प्राचीन ऐतिहासिक महत्व को प्रकट करता है।[११७] यदुवंशी क्षत्रियों का आरम्भ वैदिक कालीन ऐल वंशीय ययाति के पुत्र यदु से है। इस यादव वंश में कार्तवीर्य अर्जुन बड़ा प्रभावशाली राजा हुआ, जिसने राक्षसराज रावण का मान मर्दन कर उसे बन्दी बनाकर रक्खा। हैहयवंशी कलचूरि इतिहास में यादववंश की प्रतिष्ठा स्थापित करने में बहुत ऊंचा स्थान रखते हैं।

[११६] प्राचीन भारत का इतिहास (उपाध्याय) ३४३

[११७] आदि भारत (काश्यप) १३२

[११८] ट्राईब्स एण्ड कास्टस सी० पी० बरार आर० वी० रसल तथा आर० वी० हीरालाल ई० ए० सी० (१९१६) गुजर

यादव अपने को कृष्ण की सन्तान मानते हैं। इतिहास से पता चलता है कि यादवों का सम्बन्ध महाभारत तथा पौराणिक काल के मथुरा के आसपास की भूमि (व्रजमण्डल) शूरसेन जनपद से है। प्राचीन समय में ही यहां यादव वंश की शाखा शूरसेन जाति रहती थी, जिसने अपनी राजधानी मथुरा में बनाकर इस प्रदेश को अपने नाम से प्रसिद्ध कर महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त की। मथुरा की ओर से जब गुजरात आदि पश्चिमी प्रान्तों की ओर इन यादवों (सौरसेनी) का निष्क्रमण हुआ, तो उन्होंने गुर्जरों में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया और मध्यप्रदेश, निमाड, खानदेश, हैदराबाद में प्रतिष्ठित हो गये। इन का एक समूह उत्तर की ओर करनाल व गुजरात-सहारनपुर में पहुंच गया, जिनका प्रभुत्व चुलकाना के आसपास जमुना की ओर तथा तीतरों (सहारनपुर) तक स्थापित हुआ। शिमली (देहरादून) में उन्होंने ऊंची स्थिति बनाई।[११८] भाटी—यादवों की एक शाखा ने गुर्जरों में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया था।[११९]

गुर्जरों में जातीय सहयोग की भावना दृढ होने पर तत्कालीन राजसत्ता ग्रहण करने वाले क्षत्रियों के विभिन्न कुलों का, जो उच्च स्थिति रखते थे, इनमें समावेश हो गया। इसलिये हम गूजर जाति को सूर्य, चन्द्र या यदु अथवा किसी एक ही बाहरी कबीले की जाति स्वीकार नहीं कर सकते। विभिन्न वंशों ने, जिनमें परस्पर सामाजिक सम्बन्धों के बढने के साथ-साथ राजनैतिक महत्वाकांक्षा बढती गई, राजनैतिक एवं सामाजिक स्थिति दृढ होने पर, वे एक ही जाति के रूप में परिणित हो गये। इन गुर्जरों ने अपने मूल भेद को गोत्रों या कुलों के नाम से अलग अलग स्मरण रखते हुये भी, परस्पर विवाह सम्बन्ध से दृढ होकर अपने को एक सूत्र में सँगठित कर लिया। एक सी सामाजिक प्रथायें उनमें प्रचलित हो गईं। जातीय सहयोग की भावना इस कदर बढी कि

---

[११८] सहारनपुर गजेटियर पृष्ठ १०२ इलियट ग्लॅसरी पृष्ठ ९९ देहरादून गजेटियर।

[११९] बुलन्दशहर गजटियर १४९

उन्होंने कुछ पर गोत्रों के स्थान पर जाति को महत्व देना प्रारम्भ कर दिया, फिर भी वंशों के ऐतिहासिक महत्व को भुलाया नहीं जा सकता, क्योंकि जाति का इतिहास अनेक कुलों के ऐतिहासिक महत्व पर ही आश्रित है।

मध्य कालीन भारत मे ११८७ ई० के आसपास यादवो ने, जो प्रारम्भ में राष्ट्रकूटों तथा कल्याणी के चालुक्यों के सामन्त मात्र थे, भिल्लम पंचम के नेतृत्व में सोमेश्वर (४) तथा कृष्ण से अनेक प्रदेश हथिया कर वर्तमान दौलताबाद (हैदराबाद) में देवगिरि के नाम से अपनी राजधानी बनाई। द्वारसमुद्र के होयसल (यादव कुल तिलक) यादवों की दूसरी तत्कालीन प्रसिद्ध शाखा के बल्लाल ने इन्हें फिर आगे बढ़ने से रोक दिया। किन्तु भिल्लम के पुत्र जैत्रपाल प्रथम ने १२१० ई० तक राज्य करते हुये यादव शक्ति का दक्षिण की ओर विकास एवं प्रसार किया। उसने काकतीय—तैलंगों को युद्ध में परास्त किया, सिंघण के ३७ वर्ष के (१२१० ई० के बाद) शासनकाल में पश्चिमी चालुक्यों के बराबर साम्राज्य स्थापित कर दिया और बल्लाल द्वितीय को हरा कर पिछली हार का बदला लिया तथा १२४७ ई० तक तत्कालीन शिलाहार होयसल मालव चेदि और बघेला तथा गुजरात के शासकों को आनकित रहना पड़ा। इन यादवों का खानदेश में विस्तार हुआ, जहां पटने में उन्होंने ज्योतिष का विद्यालय भी खुलवाया। सारंगधर (संगीत रत्नाकर का रचयिता) चांगदेव भास्कराचार्य (सिद्धान्त शिरोमणि का रचयिता) उसकी सभा के रत्न थे। सिंघण के बाद कृष्ण (कन्हर) यादवों का राजा हुआ, जिसके मालवा, कोंकण और गुजरात के राजाओं से संघर्ष हुए। इसके आश्रित काश्मीरी कवि जल्हण ने 'सूक्ति मुक्तावलि' और अमलानन्द ने अपना वेदान्त 'कल्पतरु' रचा। १२६० ई० में इसका देहान्त होने पर महादेव (कन्हर का भाई) गद्दी पर बैठा, जिसके राज्यकाल में कोंकण, कर्नाट तथा लाट तक यादवों की तलवार चमकी। यह भी विद्वानों का आश्रयदाता था। ज्ञानेश्वर की मराठी भाषा में गीता की टीका तथा हेमाद्रि पण्डित द्वारा चतुर्वर्ग चिन्तामणि इसी के समय में

लिखी गई। १२९४ ई० में यादव राजा रामचन्द्र ने अलाउद्दीन की अतिथि स्वीकार किया और अपना कुसमय देखते हुए ६०० मन मोती, २ मन रत्न, १००० मन चांदी, ४००० रेशमी थान और ऐलिचपुर का इलाका देकर सन्धि करली और दिल्ली का करद राज्य होगया।[१३०] बाद में यादवों ने कर देना बन्द कर दिया और १३०७ ई० में अलाउद्दीन के सेनापति मलिक काफ़ूर ने रामचन्द्र को कैद कर देहली भेज दिया,[१३१] परन्तु अलाउद्दीन ने उसकी बड़ी आवभगत की और उसका राज्य लौटा दिया। १३०९ ई० में रामचन्द्र का पुत्र शङ्कर देवगिरि का राजा हुआ, जिसने अलाउद्दीन से लोहा लिया और कर देना बन्द कर दिया। १३१२ ई० में मलिक काफ़ूर ने शङ्कर को युद्ध में मार डाला और यादव राज का अन्त होगया। सुलतान मुबारिकशाह के समय में रामचन्द्र के जामाता हरपाल ने विद्रोह किया, किन्तु उसे पकड़ कर उसकी खाल खिंचवा ली गई।[१३२]

(३)

भारतीय इतिहास में गुर्जर जाति के संगठन, राज्य एवं साम्राज्य स्थापन के विषय में यदि विचारपूर्ण दृष्टि से सिंहावलोकन किया जाय तो पता चलता है कि इनके राज्य की पृष्ठ भूमि किसी साम्राज्य के नष्ट हुए अवशेषों पर नहीं हुई थी, जिन्हें न संघ निर्माण की आवश्यकता पड़ती, न किसी प्रबल सेना का सामना करना पड़ता। इनकी परिस्थिति तो दूसरी ही तरह की थी, देश सङ्कटपूर्ण स्थिति में था। प्राचीन राज वंशों के असहमान्य सत्ताधारी सम्राट अपने निरंकुश शासन में आप ही समाप्त हो बैठे थे। ब्राह्मण-क्षत्रिय जिनके हाथ में देश की सर्वोच्चसत्ता थी, शेष प्रजा को आधीन, गुलाम और अस्वाभाविक परिस्थिति में रखने के लिये नये नये सिद्धान्त-उन्हें सदा सर्वदा को कुचलने के लिये विधान द्वारा-बना रहे थे। मनुष्य-मनुष्य, जाति-जाति में निरपेक्ष अन्तर—जो सर्वथा अस्वाभाविक था—में शासकों में झूठा अभिमान

[१३०] ब्रिग्स फरिश्ता १ पृष्ठ १३०

[१३१] इलियट इतिहास भारत (३) पृष्ठ ७७-२००

[१३२] प्राचीन भारत का इतिहास (डा० भगवतशरण उपाध्याय)

अय्याशी और दम्भ पैदा हो चुका था, जिसके कारण साम्राज्य एवं जातियों के अस्तित्व खतरे में पड़ चुके थे। ब्राह्मण दूसरों को खोकर अपना सब कुछ खो चुका था। क्षत्रिय ईर्ष्या-द्वेष की अग्नि में अपने आप झुलस कर मूर्छित हो चुका था। एक-के बाद-एक मध्यएशिया की जत्थेबन्द जातियां भारत पर आक्रमण कर रही थीं। नये-नये वंशों के नाम से राज्य स्थापित करने की होड़ चल रही थी। विश्व विजेता धर्मान्ध अरब राष्ट्र—जिनके आगे बड़े २ शक्तिशाली राष्ट्र एवं जातियाँ नतमस्तक हो चुकी थीं—भारत में सिन्ध की ओर से आक्रमण करके सफल हो चुकी थी। ऐसे संघर्ष शील इतिहास के परिवर्तनकाल में क्षत्रियों की गुर्जर शाखा का अभ्युत्थान ब्राह्मण-क्षत्रियवाद पर देश के नव निर्माण के लिये हुआ।

सौभाग्यवश गुर्जर जाति का इतिहास इस बात का प्रमाण है कि इस जाति के राज्यों एवं विशाल साम्राज्य के राजा महाराजाओं ने अपने सामने जनता-जनार्दन, आर्य संस्कृति, आर्य जाति एवं भारत देश की रक्षा एवं हित को सर्वोपरि रक्खा। यही कारण है कि उनके नाम अनेक प्रदेश—सुरक्षित समृद्धशाली होने के नाते गुजरात (गुर्जरत्रा) गुर्जर, गुर्जर देश, गुर्जर मन्डल, गुर्जर भूमि आदि के नाम से प्रसिद्ध होते चले। यह नाम जनता ने प्रजारंजन, आदर्श शासक होने के कारण स्वेच्छापूर्वक दिये, जो आज भी जाति के अस्तित्व के साथ सुरक्षित हैं। आज तक उनके नाम पर नगरों, प्रान्तों की प्रसिद्धि इसका मुख्य प्रमाण है, जो अतीत भारत के उस काल की—गुर्जरों की—महत्ता को स्वीकार करा रहे हैं, जबकि भारत एवं बृहत्तर भारत में गुर्जरों की दिग्विजय की ध्वजा फहरा रही थी, एशिया की विश्व विजेता जातियां इनमें आत्मसात हो रही थीं और इन्हों ने प्रबल अरब राष्ट्रों की सेनाओं के आक्रमणों की दिशाओं को एक दम घुमा दिया और उनका आतंक सदा के लिये समाप्त कर दिया। उनकी घुड़सवार सेना संसार भर में उस काल में ईर्ष्या की वस्तु रही। पूरे एक हजार वर्ष तक उन में एक से एक शक्तिशाली, राजनीतिज्ञ, दूरदर्शी, गम्भीर नेता उत्पन्न होते रहे, जिन्होंने गुर्जर राज्यों का सघ बिखरने नहीं दिया और बाहरी शत्रुओं से देश की रक्षा की। आक्रमण प्रत्याक्रमणों द्वारा राज्यों को

बढ़ाते हुए साम्राज्य निर्माण किया। ज्यों-ज्यों उनपर संकट आते गये त्यों-त्यों वे उत्कर्ष को प्राप्त हो गय। इस गुर्जर संघ म प्रारम्भ क राज्य भीनमाल के साथ सगठित रहे, बाद म कन्नौज के साथ उनका संघ समस्त उत्तरीय भारत को अपनी केन्द्रीय सत्ता क आधीन बनाये रहा। शक्तिशाली अरबों दक्षिण के राष्ट्रकूटों, बगाल के पालों के साथ उनके निरंतर चलने वाले युद्ध उन्हें शौर्य की उत्कृष्ट भावना के साथ जागृत बनाये रहे, किन्तु अन्त मे लडते-लडते आपसी राजशक्तियों के द्वेष केन्द्र के आधीन सामन्तों के स्वतन्त्र हो जाने तथा तुर्कों, अरबों, राठौरों, पालों एव परस्पर के सदियों तक चलन वाले युद्धों ने उनका पराभव काल उपस्थित कर दिया और यकायक अरबों का प्रभाव समाप्त करने के साथ साथ गजनी और गौरी वश के नये आक्रमणों को बर्दाश्त न करने के कारण वे पीछे हट गये। बार-बार के आक्रमणों, युद्धों एव आन्तरिक फूट के कारण देश की सर्वोच्च सत्ता उनके हाथ से निकल गई। शासन व्यवस्था का आधार-केन्द्रीय राजसत्ता के निर्बल पड जाने पर-निज सामन्तों एव सामन्त राजाओं के हाथ में आया उन्होंने अपने अमर्त्य नेताओं तथा विभिन्न राजवंशों के आपसी द्वेष तथा ईर्ष्या एव पारस्परिक द्वन्द्व से भारतीय एकता का महत्त्व कम कर दिया। मिथ्या गर्व तथा अहकार एव मद से भरे अपने-अपने छोटे-छोटे राज्य स्थापित करने की होड में विदेशी आक्रमणकारी लोगों की बन आई और इस सुन्दर उर्वरा भारत भूमि को—गुर्जर राजाओं तथा उनके विभिन्न सम्राटों द्वारा निरन्तर सुरक्षित रखने के प्रयत्न में युद्धरत रहने पर भी—अन्त में पदाक्रान्त तथा भ्रष्ट होना पडा।

अन्धकार युगीन भारतीय इतिहास के प्रकाश में आने पर विदेशी जातियों के निरन्तर होने वाले आक्रमण काल म जिन राजवंशों ने भारत की मर्यादा सुरक्षित रक्खा उनम गुर्जरों का महत्त्व किसी से कम न था। गुर्जर जाति क नाम स उनका सगठन राजनीतिक अव्यवस्था तथा अराजकता के युग में उनके द्वारा देश धर्म तथा जातीयता की रक्षा, इतिहास की सबसे महत्त्वपूर्ण घटना है। उनके द्वारा स्थापित राज धानियाँ देश की सुरक्षा की कसौटी थीं। आत्मसम्मान के साथ देश धर्म की रक्षा की खातिर क मर्यादा उनको निरन्तर आगे बढाने में

सहायक रही, किन्तु गुर्जरों के सर्वस्व समर्पण करने पर भी और उनके राजा और सामन्तों एवं सेनानियों द्वारा देश को सुरक्षित रखने के प्रयत्न में युद्ध करते रहने पर भी अन्त में पराजय का मुख देखना पड़ा। देश की आन्तरिक एवं बाहरी आक्रमणों के कारण-संतुलन व्यवस्था भंग हो गई। कन्नौज के आधीन राज्यों की स्वतन्त्र हो उठने की प्रवृत्ति ने गुर्जर साम्राज्य को चकनाचूर कर दिया। वास्तव में लड़ाई की आग बड़ी भयंकर होती है। युद्ध की ज्वाला में जाति की संस्कृति, मर्यादा, निर्माण कला एवं आंतरिक व्यवस्था, संघ तथा राजव्यवस्था सभी समाप्त हो गई।

परिस्थिति-वश अनेक दुर्गुणों का समावेश जाति में हो जाना स्वाभाविक था। भाटों एवं खुशामदी लोगों की चाटुकारिता से जाति में प्रमाद घर कर गया। नशेबाजी के अत्यधिक प्रयोग ने जाति की बुद्धि कुंठित कर दी। बहुविवाह, कन्यावध आदि सामाजिक कुप्रथाओं ने, शान्तिपूर्ण विचारशक्ति के अभाव में निरन्तर युद्धप्रियता ने—जिसका ब्राह्मण शास्त्रकारों ने पोषण किया—तथा जातिय अहंकार की भावना ने, जिससे छोटे २ कारणों से लड़ाई झगड़े होते रहते थे, उनके मस्तिष्क विकृत कर दिये और उच्च कोटि का साहस, देश प्रेम, भक्ति, सम्मान, अतिथि सत्कार, मादगी एवं वीरता तथा उच्च चरित्रवान होते हुए भी ये नये आक्रमणकारी लोगों का मुकाबला न कर सके। जिस गुर्जर सेना ने, अरबों, पालों, राष्ट्रकूटों के दांत खट्टे कर दिये, उसमें आत्मीय जनों की विशेषता थी, जिनका स्वदेश प्रेम, स्वामीनिष्ठा उच्च श्रेणी की थी। कन्नौज गुर्जर साम्राज्य काल में ७०—६० लाख सेना प्रत्येक दिशा में थी, जो साम्राज्य के भङ्ग होते ही समस्त उत्तरी भारत के शस्य श्यामल हरे भरे मैदानों—उस समय के उपजाऊ प्रदेशों—पर छा गई और जिस प्रकार गुर्जर घुड़सवार—कन्नौज एवं गुजरात के—समस्त उत्तरीय भारत में प्रसिद्ध थे—उसी प्रकार अपने अपने देहातों में भी प्रसिद्धि प्राप्त कर गये। उसी समय की गुर्जर आबादी पेशावर से लेकर नर्मदा तक, पवित्र नदियों के किनारे, समतल मैदानों में, प्रसिद्ध २ राजधानियों के निकट चली आ रही है,

पशुपति होकर धरती माता की सेवा में लग गये। कृषि, पशुपालन, जमींदारिया, छोटी छोटी आबादियों में स्थित राजधानिया बनाकर प्रजापालन करना, अपना जातिय संघ संकट काल के लिये बनाये रखना, उनके मुख्य धन्धे हो गये। जिन लोगों का ध्येय भारतीय राष्ट्र की उन्नति के लिये गुर्जर राष्ट्र गुर्जर साम्राज्य का निर्माण था, जिस सर्वमान्य भारत की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये आत्मीय गुर्जर सेना का निर्माण करके उन्होंने विश्व को आश्चर्य मे डाल दिया था, भला वे आत्माभिमानी सैनिक अपने भाईयों, देशवासियों का सिर काटने वाली सेना मे, जो विदेशियों की सेना थी, किस प्रकार शामिल हो सकते थे। दूसरों की सिपाहीगिरी करना उन्होंने छोड दिया किन्तु उनका सैनिक क्षत्रिय स्वभाव बना रहा और अपने इलाकों मे, उन्होंने अत्याचारियों का डट कर मुकाबला किया।

खुशामद और भेट डालकर शासन करने की गुलाम वंश की नीति में गुर्जर शरीक नहीं हुए और राजपूत, जाट, गूजर आदि लडाकू वीर जातियों के होते हुए भी लाहौर से लखनौती तक (ई० सन् १२०६-१२१०) गुलाम साम्राज्य कायम होगया। अगर १२२० ई० म इलतुतमिश के समय चंगेजखां मङ्गोल का आक्रमण भारत पर होजाता, तो भारतीय इतिहास का प्रवाह बदल जाता और गुलामी में आराम करने वाले तत्कालीन शासकों—भारतीय—मे नव चेतना पैदा होती किन्तु वह सिन्ध की गर्मी से व्याकुल हो पीछे लौट गया। सुल्तान नासीरुद्दीन (ई० १२४६-१२६६) के समय—जो एक धर्मपरायण सन्त सरल शासक था—बलबन वजीर ने गुर्जरों, खोखरों का फिर दमन किया और बादशाह होने पर, उसने दोआबे के गुर्जरों को सिर उठाने का मौका नहीं दिया किन्तु उनकी मनोवृत्ति नहीं बदल सका और वे अनुकूल अवसर की तलाश म रहे। खिलजी वंश के समय अलाउद्दीन ने गुजरात, रणथम्भौर पर अनेक आक्रमण किये और उत्तर तथा दक्षिण मे शक्तिशाली किन्तु बिखरे हुये फूट के शिकार अनेक राजाओं को विजय कर लिया और गुर्जर एवं राजपूतों के संघ मे एक दरार पैदा करदी और विलासी राजा मुबारिकशाह को गुजरात के हिन्दू से मुसलमान

हुए खुसरो खां ने ४० हजार गुजराती मुसलमानों की सेना बना कर कत्ल कर दिया और १५ अप्रैल से ५ सितम्बर १३२० ई० तक राज्य किया। इन दिनों देहली के आसपास की सैनिक क्षत्रिय जातियों ने सब जातियों को एक सूत्र में बान्धकर, भारत की रक्षा तथा खास कर देहातों में उत्पन्न अराजकता को दबाकर, आक्रमणकारियों से देहाती जीवन की रक्षा का बीड़ा उठाया। मोहम्मद तुगलक के समय दोआबे की जनता पर बड़े अत्याचार हुए और भयंकर अकाल के समय भी कर वसूली में इतनी सख्ती हुई कि दोआबे की जनता त्राहि-त्राहि पुकार उठी। इस समय पचायत अस्तित्व मे आचुकी थी और सुल्तान को वास्तविक स्थिति से परिचित कराया गया और बर्बाद हुई दोआबे की जनता में काम करने का गुर्जर, जाट, राजपूत नेताओं को अच्छा अवसर प्राप्त हुआ और भविष्य के संकटों से बचने के लिये एक सेना का निर्माण वीर सरदार जोगराज सिंह गुर्जर (गूजर) के प्रधान सेनापतित्व में हुआ। सचमुच महमूद तुगलक के समय इस सेना ने खास काम किया। तैमूर के आक्रमण को इतिहासकारों ने भगवान का कोप कहा है। यह बरलास वंश का तुर्की योधा था। समस्त पश्चिमी एशिया उसके चरणों पर लोटने लगी थी। १३६८ ई० में पीर मोहम्मद को सेना के अग्रिम दस्ते की कमान सौंप कर, भारत पर ६८००० सैनिकों के साथ सिन्ध को पार कर, पंजाब के गवर्नर मुबारिकशाह को पराजित किया। दिल्ली के रास्ते में पड़ने वाले अनेक हिन्दू सरदारों को पराजित कर, उसने १००,००० हिन्दू जवान बन्दी बनाए। जाट, राजपूत एवं गुर्जरों को जबरदस्ती मुसलमान बनाने का भी यही समय है।[१४३] पश्चिम के इलाके को जीतता हुआ तैमूर देहली पहुचा। सुल्तान महमूद ने १० हजार घुड़-सवार, चालिस हजार पैदल, आठसौ पच्चीस लड़ाकू हाथियों के साथ युद्ध में उसका मुकाबला किया लेकिन पराजित होकर भाग गया। देहली की गलियां रक्त से भर उठीं और तैमूर ने अपने को भारत का सम्राट

१४३ ट्राईब्स एण्ड कास्टस डब्लू०क्रूक भाग २ पृष्ठ ४४६

"This to the compulsion of Timur when he attacked Delhi and converted all in the Neighbourhood by Force."

घोषित किया किन्तु तैमूर की विजय एवं सम्राट बनने की घोषणा को पानीपत, देहली से हरिद्वार तक के इलाके की वीर जनता ने स्वप्न बना दिया।

देहली की सल्तनत कमजोर होते ही सर्व खाप पंचायत ने ८०००० सेना तैमूर की सेना को विनाश करने के लिये तुरन्त भेज दी और अस्सी हजार सेना भाले, नेजे और तलवारों से सुसज्जित आत्म बलिदान द्वारा देश रक्षा के लिए तैयार हो गई। इस सेना का प्रधान सेनापति वीर जोगराजसिंह गुर्जर (गूजर) था। यह गुर्जर प्रधान सेनापति अपने समय का सबसे बलवान संगठन एवं शिक्षित युद्धकला निपुण व्यक्ति था जो पवार (खूबड़) वंश का था और हरिद्वार के पास जिले सहारनपुर का रहने वाला था। उसका वजन ८ मन के करीब (६३ धड़ी) था और ७२ सेर दूध, १ सेर घी ४ सेर अन्न उसकी साधारण खुराक थी। प्रधान राणा देवपाल ने सेना की बागडोर इसके हाथ में देकर वीर गुर्जर - जाति की युद्ध परायणता से प्रभावित हो, इस इलाके को सर्वनाश से बचा लिया। महिलाओं की सेना का नेतृत्व रामप्यारी गुर्जर बाला ने किया। जाट, गूजर, राजपूत सभी युद्धप्रिय जातियों ने पूरा-पूरा सहयोग दिया। सामचन्द गुर्जर उपसेनापति एवं सूबेदार साडू गुर्जर व शम्भूसिंह गुर्जर भी उल्लेखनीय सरदार थे। सेना में दूसरा सैनिक जातियों के भी सरदार थे। इस सेना ने देहली से मेरठ, मुजफ्फर नगर, सहारनपुर, रुड़की, हरिद्वार तक मोर्चे सम्भाल और तैमूर की सेना को कहीं भी टिकने नहीं दिया और जब तैमूर देहली से मेरठ की ओर मुड़ा तो उसकी सेना को सांस नहीं लेने दिया और मेरठ सहारनपुर, हरिद्वार में तीन बार जोगराज सिंह गुर्जर (प्रधान सेनापति) ने तैमूर और उसके गवर्नर खिजरखां का बड़े जोर से मुकाबला किया। तैमूर के भारत सम्राट बनने के स्वप्न समाप्त कर दिये। गुर्जर सेनापति की सेना का हिन्दू दुखिया रसद पहुंचाती रहीं और तैमूर की सेना भूख से तड़फ गई। तैमूर लड़ता रहा और भागता रहा। उसकी सेना गाजर मूली की तरह काट दी गई। जोगराज सिंह गुर्जर के अन्तिम युद्ध में ४५ संगीन घाव आये और अन्तिम समय तक होश में रहा और सैन्य

सञ्चालन करते हुए दुश्मन को हरियाणा की सीमा के बाहर कर दिया।[१४४] इसके बाद भी ई० सन १४५१–१४८८ तक बहलोल लोधी के समय देहली के आसपास अनेक विद्रोह हुए, जिनको सेना के बल पर दबाने का उपक्रम किया जाता रहा किन्तु गुर्जरों और दूसरी सैनिक क्षत्रिय आदर्श की जातियों के संघ ने अपने ग्रामों की रक्षा योजना निर्माण करके ग्रामों को स्वतन्त्र इकाई बना दिया।

ऐतिहासिक अन्वेषणों द्वारा यह बात प्रमाणित हो चुकी है कि ईसवी सन् के प्रारम्भ में गुर्जरों का जातीय विकास प्रारम्भ हो चुका था। गुर्जर जाति प्रारम्भिक आर्य जाति थी। आर्य लोग प्राय खेती का धन्धा तथा पशुपालन करते थे, अत स्वभावतया उन्हें जङ्गली अथवा ऐसा देश प्रिय था, जहा पर वर्षा न बहुत अधिक होती, न बहुत कम, भूमि समतल और उपजाऊ हो। पश्चिमी राजपूताने का रेतीला मैदान और पूर्वी राजपूताने का पहाडी प्रदेश उनके लिये उपयुक्त न था। ऐसी दशा में भील, आभीर, द्राविड आदि जातियों की ही बस्तियां यहा पर थीं। पुष्कर सरोवर का वर्णन अत्यन्त प्राचीन है, किन्तु उसे दण्डकारण्य के समान पुष्करारण्य में होना बताया है, जिससे पता चलता है कि यह बहुत दिनों तक जङ्गल ही रहा और प्रारम्भ में वहाँ पर तपस्या और पूजा के भाव से रहने वाले ब्राह्मण क्षत्रिय ऋषि मुनियों की बस्ती रही होगी और हमारे निश्चिन–गुर्जरों के जातिय विकास काल—समय में यहा पर गुर्जर तथा अन्य क्षत्रियों

---

[१४४] सम्राट (सिद्धा तो) कार्तिक कृष्णा ६ वि० सम्वत् २००७ बुधवार पृ० ४–५ तैमूर और पचायत लेख—तवारीख फरिश्ता से भी यही पता चलता है कि तैमूर की सेना को घोर प्रतिरोध सहना पडा। तैमूर पचायत की सेना और जोगराज गूजर के नाम से कापता था और अगर भारतीयों में इसी प्रकार का सगठन होता, तो उनको कोई भी नही हरा सकता था। ऐसा वर्णन हुसैनबक्श मिरासी लिखता है। मोहम्मद बख्श कदूदुसी लिखता है कि विदेशी आक्रमणों से रक्षा करने के लिए और आपसी झगडों को निमटाने के लिये पचायत पर इनका अटूट विश्वास था। वीर चन्द्रदत्त भट्ट अब्दुलरहमान सावरी का लिखा पचायत रिकार्ड। विशेष देखिये कबूल सिंह चौधरी का शोरम स्थित रिकार्ड।

भी नई शाखा बनी होगी। इतिहास के आधार पर यह अनुमान असंगत नहीं ठहरता कि वैदिक क्षत्रियों के रहने के अयोग्य इस रेतील, पर्वतमय देश में ईसवी सन् के प्रारम्भ में जो बसावट प्रारम्भ की, उसका कारण पंजाब और गङ्गा प्रदेश के उनके प्राचीन स्थानों पर निरन्तर विदेशी जातियों के आक्रमण होते रहना था। धन धान्य प्रदेशों से खदेड़े जाने पर राजपूताने ने क्षत्रियों एवं उनके प्रधान गुर्जरों को बराबर सहारा दिया। ऐतिहासिक आधार पर यह बात भी भली प्रकार जानी गई है कि इस प्रदेश का वर्तमान नाम मरुभूमि में सब से पीछे आश्रय लेने वाले राठौर राजपूतों के कारण हुआ है। जयचन्द राठौर का पराभव होने पर राठौर गङ्गा का प्रदेश कन्नौज छोड़ कर मारवाड़ के प्रदेश में जा बसे और इसी काल (११६४ ई० सन्) के पश्चात् इसका नाम राजपूताना प्रसिद्ध हुआ। इससे पूर्व विदेशी आक्रमणकारियों के लगातार के हमलों से जब गुर्जरों (गूजरों) को उनके मूल स्थान पंजाब से हटाकर धकेल कर दिया, तब उन्होंने मारवाड़ की मरुभूमि में आश्रय लेकर अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा की और अपने नाम पर उन्होंने वर्तमान राजस्थान राजपूताना की मरुभूमि को गुजरात के नाम से प्रसिद्ध किया और एक समय तक वर्तमान राजपूताना गुजरात के नाम से प्रसिद्ध रहा।[१११]

(१०)

आबू पर्वत के आसपास गुर्जरों की प्रारम्भिक बस्तियां स्थापित हुईं, जो धीरे धीरे विजयी शाखा के रूप में अजमेर तथा मत्स्य देश की ओर बढ़ती चली गईं। भीनमाल राजौरगढ़ (अलवर) के अतिरिक्त ११वीं शताब्दि के अन्त और बारहवीं शताब्दि के प्रारम्भ तक गुर्जरों का अजमेर तथा उसके आसपास के प्रदेशों पर राज्य रहा, जो मालवे तक था।

[१११] मिडिवल हिन्दू इंडिया अध्याय ६ पृष्ठ ६८–६६

— अर्ली हिस्ट्री आफ इंडिया स्मिथ ४११

— कान्यकुब्ज ब्राह्मण परिचय (आर० एल० भागव आई० एम० पी०) चाद जौलाई १६३२ पृष्ठ २५४–५५

— नागरी प्रचारणी पत्रिका पृष्ठ ३०६ जि० १०

— राजपूताने का इतिहास पृष्ठ २, १४७, १४८

मध्यभारत और राजपूताने के गणराज्यों के अन्तिम संरक्षक 'भोजरावत' नाम से प्रसिद्ध २४ बाघ रावत (बगड़ावत) थे, जो उन्हीं की रक्षा में शहीद हुए। हमीर के पुत्र कुंतल ने गुर्जरों से राणनगर (भिणाय) लेकर जब यहां अपनी राजधानी स्थापित करली, तो कुंतल के पुत्र बाघ को गोठण गांव के गूजर सरदार बाघराव के पुत्र भोज ने मार दिया और उसकी युवा रानी को जिसकी मंगनी उसी से थी और जो स्वयं उसके पुरुषत्व पर मोहित थी, अपने यहां ले आये। राणा हिन्दू पत-राय के साथ गुर्जरों का भयंकर युद्ध हुआ और इन युद्धों में भिणायगर से इनका अधिकार कुछ समय के लिए हट गया। २४ भाई वीर-गति को प्राप्त हुए। रानी जयमति के गीत राजपूताने में घर-घर गाये जाते हैं। भोजरावत गुर्जर की रानी गर्भवती थी और शत्रुओं से रक्षा के लिये वह उज्जैन पहुँच गई, जहां उसका भाई दुल्हेराव खटाणा प्रभावशाली सामन्त था। यहीं देवनारायण का असाधारण परिस्थितियों में जन्म तथा पालन पोषण हुआ। काल भैरव राक्षस को उन्होंने बचपन में मार कर बड़ा सुयश प्राप्त किया और अपना समय भक्ति व गौ-ब्राह्मण-सेवा में व्यतीत किया। ७४० ग्वाले और सवालाख गाय इनके पास थीं। फरनाजी नाम स्थान पर इनका महल व मन्दिर बड़ा विख्यात है, जो एक किले की शक्ल में ऊंचे स्थान पर बना हुआ है। इस स्थान पर जब इनके भाट (चौंचू) ने इन्हें इनके पूर्वजों के युद्ध में मारे जाने का वृत्तान्त सुनाया, तो इनका पौरुष प्रबल हो उठा और इन्होंने गुर्जर गणतन्त्र की स्थापना की और राणा बाघ के पुत्र भुद्ध पर चढ़ाई करके भिणाय (राण नगर) को जीत कर लूट लिया और वहां अपना राज्य कायम किया और राणा का वंश वहां से भाग कर बघेलखण्ड में जा बसा। देवनारायण धार्मिक प्रवृत्ति के पुरुष थे। उनका विवाह धारा नगर के पवार राजा की सुन्दरी कन्या पार्वती देवी से हुआ। इनका सारा जीवन चमत्कारमय था। हजारों मन्दिर उनके नाम से राजपूताने में बने हुए हैं, जो उनके धार्मिक, राजनैतिक संगठन व गणतन्त्र के परिचायक हैं। सांखा (राजगढ़), गढ़ा (भोपाल), इन्दौर, पुष्कर (अजमेर), कामा (भरतपुर) व फरनाजी (मालवा) के अतिरिक्त आसीन्द के सामने खारी नदी के तट पर सवाईभोज का एक प्रसिद्ध मन्दिर है, जहां इनके पूर्वजों

पद्म पुराण सृष्टि खन्ड अध्याय १, एक नवीन दृष्टिकोण की ओर संकेत करता है। पवित्रता के लिहाज से गुर्जर देवी, देवता के समान भी पूजे गये हैं। पुष्कर स्थान को पवित्र जानकर ब्रह्मा जी ने यज्ञ करना निश्चय किया। इसलिये इन्द्र की अनुमति के द्वारा, पवित्र जानकर गुर्जर कन्या गायत्री के साथ ब्रह्मा जी ने विवाह करके यज्ञ पूर्ण किया। आज तक भी पुष्कर में गुर्जर कन्या गायत्री की पूजा देवी स्वरूपा होती है। १८०

---

१८० रायल एशियाटिक सोसायटी जर्नल २ पृष्ठ २३७, २५२ तथा अजमेर मेरवाड़ा (हरविलास शारदा) राजपूताना गजेटियर भाग २ पृष्ठ ६७

"Pushkar Mahatmy of the Padma Purana Brahma was perplexed as to where he should perform the sacrifice according to the Vadas, as he had no temple on earth like other deities As he reflected, the lotus fell from his hand, and he determined to perform his sacrifice wherever it fell. The lotus, rebounding, struck the earth in three places, water issued from all three, and Brahma, descending called the name of the place Pushkar after the lotus Brahma then collected all the Gods and on the eleventh day of the bright half of Kartik, everything was ready. Each God and Rishi had his own special duty assign to him, and Brahma stood with a jar of Amrit on his head. The sacrifice, however could not begin until Savitri appeared, and she refused to come without Lakshmi, Parvati, and Indrani, whom Pavan had been sent to Summon. On hearing of his refusal, Brahma became in raged and said to Indra "Search me out a girl that I may marry her and commence the sacrifice for the jar of Amrit weighs heavy on my head." Indra accordingly went, but found none accept a Gujar's daughter whom he purified by passing her through the body of a cow, and then bringing her to Brahma, told what he had done. Vishnu observed—"Brahman and cows are in reality identical. You have taken her from the womb of a cow and this may be considered a second birth." Shiva added that as he had passed through a cow

(बगडावतों) की मूर्तियां बनी हुई हैं। अपने उत्कर्ष के समय गूजर जिस प्रकार बिना किसी भेद-भाव के प्राणीमात्र को भोजन दिया करते थे, उसी प्रथा का आज तक इस मन्दिर में कृष्ण भण्डारे के नाम से पालन होता है। प्रतिदिन भोजन तैयार होने पर आवाज लगाई जाती है कि देवनारायण क्षेत्र में कोई भूखा, अपाहज, अपंग हो तो भोजन करले। गूजरों की गोठा व गोल आज भी प्रसिद्ध है।

बाघरावतों के पूर्व पुरुष हरिराम जी सोलंकी बड़े वीर पुरुष थे और चौहान राजा अजयपाल से उनके सम्बन्ध थे। चामुन्डा के बाघ को मार, उसके सिर को लेकर, जब वे पुष्कर स्नान को गये, तो चौहान राजा की बहिन नील देवी, उनके वीर रूप पर मोहित होगई और स्वयं वर प्रथा के अनुसार उनका नीलदेवी से सम्बन्ध होगया। इन्हीं के पुत्र बाघ जी बड़े वीर पुरुष थे, जिन्हें गुघरा घाटी जैसे खतरनाक स्थान का अधिकारी नियुक्त किया। सावन के महीने में रेशम का रस्सा डालकर लड़कियों को झूलने का लालच दिया और अपने गिर्द साथ चक्कर लगवाकर लड़कियों को झुलाता रहा और बारह लड़कियों पर अधिकार करके उनसे विवाह सम्बन्ध कर लिये, जिनसे २४ बगडावत प्रसिद्ध हुए, जिनमें भोजरावत सब से वीर पराक्रमी थे, जिन्होंने निरकुंश अत्याचारी सत्ता के मद में अहंकार भरे, अनेक राजाओं और सामन्तों से लोहा लेकर प्रजातन्त्र गणराज कायम किये।[१९६]

---

१९६ बम्बई गजेटियर (सर जेम्स केम्पबेल) ६ भाग, जि० १ पृष्ठ ४८७

—गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास पृष्ठ १६७-१६६

—गुजरों का तीर्थ सवाई भोज (मधु सूदन गुजल)

—गुजरों का प्राचीन धार्मिक, ऐतिहासिक स्मारक फरनाजी मालवा (कु० लक्ष्मणसिंह मोकडी) वीर गुर्जर वर्ष २२ अङ्क ११-१२-१६५०, प्रजातन्त्र अङ्क पृष्ठ ३५-३६, २३, ७४, २५

—राजपूताना का इतिहास प्रथम भाग (ओझा) पृष्ठ १६०। ओझा महोदय ने यह लिखा है कि भोज गूजर के बेटे ऊदल ने अपने पिता का वैर लेने को बाघ पडिहार के पुत्र सुद्ध पर चढ़ाई की, राण नगर को लूटा और पडिहार वहां से भाग निकले। पृष्ठ १६०

पद्म पुराण सृष्टि खन्ड अध्याय १, एक नवीन दृष्टिकोण की ओर संकेत करता है। पवित्रता के लिहाज से गुर्जर देवी, देवता के समान भी पूजे गये हैं। पुष्कर स्थान को पवित्र जानकर ब्रह्मा जी ने यज्ञ करना निश्चय किया। इसलिये इन्द्र की अनुमति के द्वारा, पवित्र जानकर गुर्जर कन्या गायत्री के साथ ब्रह्मा जी ने विवाह करके यज्ञ पूर्ण किया। आज तक भी पुष्कर में गुर्जर कन्या गायत्री की पूजा देवी स्वरूपा होती है।[१३१]

---

[१३१] रायल एशियाटिक सोसायटी जर्नल २ पृष्ठ २३७, ३५२ तथा अजमेर मेरवाडा (हरविलास शारदा) राजपूताना गजेटियर भाग २ पृष्ठ ६७

"Pushkar Mahatmy of the Padma Purana Brahma was perplexed as to where he should perform the sacrifice according to the Vadas as he had no temple on earth like other deities. As he reflected, the lotus fell from his hand, and he determined to perform his sacrifice wherever it fell. The lotus, rebounding, struck the earth in three places water issued from all three, and Brahma, descending called the name of the place Pushkar after the lotus. Brahma then collected all the Gods, and on the eleventh day of the bright half of Kartik, everything was ready. Each God and Rishi had his own special duty assign to him, and Brahma stood with a jar of Amrit on his head. The sacrifice, however could not begin until Savitri appeared, and she refused to come without Lakshmi, Parvati, and Indrani, whom Pavan had been sent to Summon. On hearing of his refusal, Brahma became in raged and said to Indra 'Search me out a girl that I may marry her and commence the sacrifice for the jar of Amrit weighs heavy on my head." India accordingly went, but found none accept a Gujar's daughter whom he purified by passing her through the body of a cow, and then bringing her to Brahma, told what he had done. Vishnu observed—"Brahman and cows are in reality identical. You have taken her from the womb of a cow, and this may be considered a second birth." Shiva added that as he had passed through a cow

राजपूताने के प्राचीन तीर्थ पुष्कर पर गुर्जरों का पूर्ण रूप से अधिकार रहा है। नाहड़राव (नागभट्ट) ने इस पर पूर्ण अधिकार कर रक्खा था। चेची गूजर पुष्कर और उसके आसपास के प्रदेशों पर शासन करते थे और कर वसूल किया करते थे, चेची गूजरों का बड़ा पवित्र वंश है और ११०० ई० तक पुष्कर में पूजा के अधिकार भी इनके सुरक्षित थे। जे० डी० लोट्रूस ने इसका विस्तार से वर्णन किया है। सन्यासी और ब्राह्मणों को इनका यह अधिकार असह्य हुआ और उन्होंने पुराने अधिकारियों के स्थान पर नये अधिकारी ब्राह्मणों को नियुक्त करने का आश्वासन देते हुए गूजरों को दिवाली की रात को विष देकर मरवा दिया।[१८८] फिर भी वहां के इतिहास पर गुर्जरों का अमिट प्रभाव है। अब भी तमाम अजमेर के ४०-४० कोस के गूजर मृतकों का अन्तिम संस्कार पुष्कर में होता है। इनके अनेक मन्दिर आज भी हैं।

---

she should be called Gayatri. The Brahman agreed that the *sacrifice might now proceed, and Brahma having married* Gayatri and having enjoyed silence on her, placed on her head the jar of Amrit, and the Yajna commenced."

Rajputana Gazetteer Vol. II, Page 67.

१८८ गुर्जरों का प्रारम्भिक इतिहास पृष्ठ १७४
— बम्बई गजेटियर भाग ६ जि० १ पृष्ठ ४६४
राजपूताना गजेटियर भाग २ पृष्ठ ६६

"The virtue of the lake is said to have been forgotten *till it was re-discovered by Raja Nahar* Rao Parihar of Mandor, who follows a white boar to the margin of the lake, and then this mounting to quench his thirst, found on touching the water, that he was cured of skin-disease. He is accordingly said to have had the lake excavated, and to have built ghats. Pushkar, after this appears to have come into possession of Chechi Gujars, for

मेवाड़ (राजस्थान) में उदयपुर से १०० मील उत्तर पूर्व में मान्डलगढ़ का प्रसिद्ध किला है। जनश्रुति तथा आख्यायिकाओं से पता चलता है कि चानणा गूजर ने माड़िया भील की मदद से पारस पथरी पाकर इस किले को बनाया।[१२६] निश्चित यह है कि किला माण्डलगढ़ को गूजरों ने भीलों की सहायता से बनवाकर उस प्रान्त में प्रजातन्त्र स्थापित किया। आक्रमणकारियों से भीलों की रक्षा की। मेवाड़ राज्य की स्थापना में गुर्जर सैनिकों, सरदारों का महत्वपूर्ण भाग है। अनेक कठिन अवसरों पर, ये युद्ध में महाराणाओं के साथ जूझे। नेकाडी सरदार नगराज की प्रसिद्धि सैन्य एवं शासन सूत्र सम्भालने में विशेष रही और गुर्जरों में अनेक जागीरें आजतक भी इनकी उच्चस्थिति को प्रकट करती हैं। कांकरोली से अनुमान १० मील पश्चिम में गडबोर गांव में चार भुजा का प्रसिद्ध विष्णु मन्दिर है, जिसमें मेवाड तथा मारवाड आदि से बहुत से लोग यात्रार्थ आते हैं। भाद्रपद शुदि ११ को यहां बड़ा भारी मेला लगता है। यहां के मन्दिर के अधिकारी प्रारम्भ से गूजर हैं। पुजारी भी गूजर ही हैं। १४४४ ई० में इस मन्दिर का जीर्णोद्धार हुआ। इससे पता चलता है कि यह मन्दिर उससे भी पुराना है और गूजरों का

---

there is a legend that some seven hundred years ago a large body of Sanyasis came to bathe in Pushkar, they disapproved the Gujars being in possession of the ghats, killed them all in the night of the Dewali, and turning out the Kanpada Jogis, who had become priests of the temples, themselves left a representative at each temple "

Rajputana Gazetteer volume II, Page 69

१२६ राजपूताने का इतिहास प्रथम खण्ड, प्रथम सस्करण, (ओझा) पृष्ठ ३६०।

उस पर अधिकार उनके वैभव काल का है।[११०] अत्यन्त प्राचीन गुर्जर साम्राज्य के उत्कर्ष काल में ही उनके अनेक सामन्तों ने स्वतन्त्र सत्ता स्थापित कर रक्खी थी, जिनमें राजौरगढ़ (अलवर) के प्रतिहार गुर्जर तथा गुढ़ला (करौली) के पास के बैंसले (भौंसले) गुर्जर-प्रमुख थे। राजपूतों के शासनकाल में भी उनके अधिकार सुरक्षित रहे। ⊛

---

११० राजपूताने का इतिहास प्रथम भाग, प्रथम संस्करण म० म० गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा का नोट उदयपुर राज्य (मेवाड़) के धार्मिक स्थान।

⊛बैंसलों को पिछली ४-५ शताब्दियों में अपने अधिकार सुरक्षित रखने के लिये अनेक संघर्ष करने पड़े, जिसमें उनकी शक्ति का ह्रास होगया और उन्हें इधर उधर अनेक स्थानों में जाकर बसना पड़ा, जिनमें भरतपुर, देहली, कोटला, मुबारिकपुर, लोनी परगने के बैंसले (चिरौड़ी आदि) प्रसिद्ध हैं। इनको अपने सैनिक उदार स्वभाव और पहले से चली आई, बड़ी २ दावतों के करने से स्वतन्त्र भारत में भी असह्य क्षति उठानी पड़ी, जबकि गुर्जा (करौली) में तीस हजार व्यक्तियों के भोज में पुलिस हस्तक्षेप के कारण २६ आफिसर व सिपाही इनके द्वारा जान से मार डाले गये। सुन्दरावली (भरतपुर) के बैंसले सरदार मोतीराम महाराजा सूरजमल के दाहिने हाथ थे और उनका युद्धकौशल अपूर्व था। सरदार ग्यासीराम (हेलक) महाराजा बलवन्तसिंह के प्रधान मन्त्री रहे। चिड़ावल के बैंसले प्रमुख सैनिक, विशिष्ट सरदार एवं उत्तम प्रबन्धक रहे। अङ्गरेजों के भारत में आने पर और राजपूताने में विभिन्न राजपूत एवं जाट राज्यों की स्थापना पर, सेना और प्रबन्ध सम्बन्धी व्यवस्था में गुर्जरों का महत्वपूर्ण स्थान रहा। जगरौटी का वह हिस्सा जो जयपुर, भरतपुर, अलवर, करौली, धौलपुर आदि प्रमुख राज्यों से घिरा है, फौज का खास अंश है। करौली, धौलपुर, भरतपुर, अलवर, किशनगढ़, कोटा, झालावाड़, मेवाड़ आदि स्थानों के गुर्जर सेना में विशेष महत्व रखते हैं। भरतपुर राज्य में सेना और शासन सूत्र का सञ्चालन अन्तिम काल तक भी खटाणा गुर्जरों के अधिकार में रहा, जिनमें प्रमुख रावबहादुर सरदार रघुवीर सिंह जी सी० आई० ई० और बख्सी कर्नल गिरधर सिंह जी

१५ वीं शताब्दि मे भारत का संगठित साम्राज्य बिल्कुल नष्ट प्राय: होगया। पंजाब और देहली में लोधी वंश के सुल्तानों का प्रभुत्व था। उत्तर-प्रदेश में शर्की वंश के सुल्तान प्रबल हो चुके थे। विहार में पठान सिर उठा रहे थे। राजपूताने मे राणा कुम्भा और संग्रामसिंह अपनी संगठित राजशक्ति में लगे हुए थे। मालवे में खिलजी वंश के सुल्तान गयासउद्दीन का मांडूगढ़ पर राज्य था। गुजरात में महमूद बघर्रा अपनी राक्षसी भूख के लिये इतिहास में प्रसिद्ध था और अपने साम्राज्य-विस्तार का स्वप्न देख रहा था। ग्वालियर में तोमर (तंवर) मानसिंह की प्रभुता स्थापित थी। देहली और आगरा, ग्वालियर, बुन्देलखण्ड के आसपास गुर्जर एक बार फिर सिर उठा रहे थे, दोआने में वे पूर्ण शक्ति-सम्पन्न होने के लिए बेचैन थे।

इतिहास के इस युग मे राई ग्राम सांक नदी—ग्वालियर से ६ मील सांक नदी के किनारे—ने विशेष महत्त्व प्रकट किया। यहां और आसपास के गांवों के गुर्जरो को संगठित रूप से अनवरत युद्ध करते हुए एक नई ज्योति प्राप्त हुई। मानसिंह तवर को सिकन्दर लोधी से अनेक टक्कर लेनी पड़ी। उसकी विशाल सेना ने समुद्र की तरह ग्वालियर के किले को आत्मसात कर लेना चाहा, किन्तु पत्थर के दुर्ग-से टकराकर समुद्र की शक्ति क्षीण हो गई, किला बच गया। गावों मे लोधी की सेना द्वारा होने वाले अत्याचारों से एक नई जिन्दगी प्रारम्भ हो गई। वीरता की परम्परा स्त्री और पुरुष मे समान रूप से कायम होगई।

राई ग्राम मे वीर गुर्जरों का सैनिक परिवार रहता था, जिसमें मृगनयनी का जन्म हुआ। उसके माता पिता युद्ध में काम आ चुके थे। अपने भाई अटल के साथ मृगनयनी लक्ष्यवेध के लिये प्रसिद्ध थी। उसके वीर रूप एवं सौन्दर्य की पहुँच, लक्ष्य भेद और कला के क्षेत्र में चमकने वाला संगीत के यश का सौरभ, गांव के समीर में मिलकर मालवा,

---

प्रमुख थे। मोराका के कर्नल जुगलसिंह जी का भी सेना में उच्च स्थान था। राजपूताना गजेटियर भरतपुर करौली आदि के गूजरों का दर्जा राजपूतों के बराबर मानता है, जो उनकी वर्तमान समय तक की उच्च स्थिति के एवं सैनिक और शासन सम्बन्धी परम्परा के कारण ही है।

गुजरात और ग्वालियर के राजमहलों तक जा पहुचा। मालवा और गुजरात के सुल्तान महिला रत्न गुर्जरबाला मृगनयनी को पाने के लिये पागल हो उठे। नटों (पोटा, पिल्की) द्वारा इस पर गहनों, फलों के जाल फेंके गये। चार-तुर्क घुड़सवार नटों की सहायता से जगल में शिकार खेलने समय उसे पकड़ने के लिये भेजे गये, जिनमें से दो को बाणों द्वारा मार भगाया और दो यहा से घायल होकर भाग गये। तुर्कों के इधर आने के समाचार से राना मानसिंह तवर राई के जगलों में शिकार खेलने के बहाने प्रजा को ढाढस देने, युद्धस्थिति निरीक्षण को सदल गुर्जरों के मोर्चे राई गढी पर पहुच गये। शिकार के समय मृगनयनी ने अद्भुत वीरता प्रदर्शित की, उसने तीर से अरने भैंसे और नाहर (शेर) को मारा। तवर गुर्जर ही थे किन्तु राजपूतों की अलग जातीय सत्ता इस काल में स्थापित हो चुकी थी तथा परस्पर विवाह सम्बन्ध होते थे। मृगनयनी से राजा मानसिंह का विवाह हो गया। यही गूजरी रानी मृगनयनी इस काल के इतिहास में प्रसिद्ध हुई। उसने अपनी जातीय सत्ता—राजमहल में रहकर विलीन नहीं होने दी।- उसने सयम पूर्वक रहकर राना मानसिंह को प्रेरणा दी। अपने गाव की साक नदी से नहर निकलवा कर ग्वालियर तक पहुचाया। किले में गूजरी महल उसी के नाम पर बना। मानसिंह तोमर राजपूत था और मृगनयनी गूजर बाला, दोनों के विवाह से गुर्जर—राजपूतों में एकता, साहस की भावना बढ़ी। सकट के समय देश, रक्षा को कटिबद्ध होगया। मृगनयनी का भाई अटल स्वभाव से वीर योधा था, उसने चन्देरी का दुर्ग सुलतान गयासुद्दीन के हाथो से बचा लिया। नरवरगढ के क़िले की रक्षा की और स्वय सगठन तथा एकता की लहर क्षत्रिय जातियों में पैदा करने के लिये प्राचीन वीर यादवों से विवाह सम्बन्ध स्थापित किया। युद्ध एव सैन्य सञ्चालन की सुविधा के लिये ग्वालियर का रक्षात्मक मोर्चा राई गाव में विशाल गढी बनाकर स्थापित किया गया और गुर्जर सेना अटल के सैनिक सरक्षण में रहने लगी। इसी समय सिकन्दर युद्ध करते हुए विशालसेना के साथ ग्वालियर पर आ धमका। मानसिंह ने उसे कई जगह हराया, पर वह हटा नहीं। सुरक्षा के विचार से मानसिंह किले में आगया।

ग्वालियर का किला घेर कर सिकन्दर ने राई की गढ़ी पर आक्रमण कर दिया। अटल ने स्वयं सेना का नेतृत्व किया। गुर्जरों ने तुर्कों का साहसपूर्वक सामना किया किन्तु वे बराबर आक्रमण कर रहे थे, ग्वालियर का घेरा तोड़ कर राई पर डाल दिया गया। अटल की रानी (लाखो रानी) ने रात को कवच पहन कर किले का निरीक्षण किया। एक स्थान पर शत्रु के सैनिक किले की दीवार पर चढ़ते दिखाई दिये। लाखो रानी ने उन्हें बाणों से परमधाम पहुँचा दिया। अचानक शत्रु के एक तीर से वह भी स्वर्गधाम पहुँच गईं। प्रियतम की याद में अन्तिम सांस लेते हुये उसने गुर्जरों को युद्ध में जूझने के लिये रणभेरी के साथ निमन्त्रण दिया। किले के फाटक खोल कर गुर्जर सैनिक अटल के साथ केसरिया बाना पहिन कर बाहर आ निकले और सिकन्दर लोधी की सेना पर आक्रमण कर दिया। अटल वीरतापूर्वक युद्ध में काम आया, परन्तु सिकन्दर के छक्के छूट चुके थे। उसने घेरा उठा दिया और नरवरगढ़ को वीरान करता हुआ देहली की ओर प्रस्थान कर गया।

गूजरी रानी मृगनयनी ने राजा मानसिंह को नई प्रेरणा दी। शास्त्र सम्मत सङ्गीत प्रणालियों, परिमार्जन और संशोधन किये गये नये राग, मौलिक ध्वनियों की रचना के साथ उसने 'गूजरी', 'बहुल गूजरी', 'माल गूजरी', 'मङ्गल गूजरी' राग बनाये। उसने राजा मानसिंह को साहित्य, सङ्गीत एवं कला की उन्नति करते हुए जीवन के संघर्ष की वास्तविकता से मुंह न चुराने का आदर्श उपस्थित किया। सत्यं, शिवं और सुन्दरम् को अपने जीवन में समन्वित किया और संयम के साथ आदर्श जीवन व्यतीत किया। वीरता, आत्मनिर्माण, स्वावलम्बन तथा कला के प्रति अभिरुचि स्थापित करते हुए निर्माण कला पर भी ध्यान आकर्षित किया और गूजरी महल, मान मन्दिर, सांक नदी की नहर उसकी खास स्मृति हैं। उसने मानसिंह को बताया कि—"वीणा को बजाते बजाते काम पड़ने पर यदि तुरन्त तलवार न उठ पाई, कोमल सेज पर सोते सोते संकट आने पर यदि उछल कर कमर न कसी, ध्रुपद को गाते-गाते शत्रु के सामने आ खड़े होने पर यदि तुरन्त गरज कर चुनौती न दे पाई तो—ऐसी वीणा, सेज और ध्रुपद की तानों का काम

ही क्या है। उसने महिलाओं को बताया कि चिता में जल मरने की अपेक्षा युद्ध के मैदान में लड़कर मरना और अपने ऊपर आंखें और हाथ डालने वाले पुरुष को धूल में से धरती सुंघाना, पर्दे में मुंह छिपाये बैठे रहने की अपेक्षा उचित कर्त्तव्य है। अपने जीवन में तुर्कों द्वारा नटों के षड्यन्त्र रचे जाने पर उसने किया भी यही। युद्ध के समय में भी उसने आचार्य विजय जंगम और बैजू को आश्रय देकर कला की मञ्जुल परिपाटी को उन्नत किया और सुरा सुन्दरी की लिप्सा के उपभोग में मस्त रहने वाले राजाओं को प्रजा पालन की नवीन प्रेरणा दी, जिसने उसे अमर कर दिया। उसने बताया कि वे क्षत्रिया धन्य हैं, जिन्होंने आग और चिता को प्यार किया किन्तु उन्हें तीर कमान और तलवार को सखी बनाकर उनके साथ भी उतना ही प्यार करना चाहिये। नारी जीवन की एक प्रेरणा है, उषा जैसी सजग, उसका महत्व स्थिरता में है, जीवन के भोग विलास में नहीं, संयम द्वारा प्रेम को अचल बनाने में है।[१११]

इतिहास में गुर्जरों का स्वर्णयुग तुर्कों के आगमन के साथ ही साथ समाप्त होगया था। आक्रमणकारियों की स्वर्ण संचय की कामना, मार काट की आकांक्षा, स्त्रियों के अपहरण की वासना, राज्य स्थापित करने के लोभ और मजहब के विस्तार के मोह को लेकर पठान और तुर्क आक्रमक भारत में घुसे थे। उनके समय का अधिकांश इतिहास काल कराल, कठोर तथा काला युग था। गांव मिटा दिये जाते थे। खेती उजाड़ दी जाती थी। शहर वीरान करके लूटमार और अपहरण से सभ्यता व संस्कृति का विनाश करने का उपक्रम किया जाता था। मन्दिरों का विध्वंस करके मुल्ला मोलवियों के हाथों में निरंकुश धार्मिक जीवन समर्पित कर दिया जाता था। धर्म, गौ, ब्राह्मण वर्णाश्रम व्यवस्था की रक्षा करने वाले क्षत्रियों, गुर्जरों, राजपूतों में आपस में फूट घर कर रही थी।

१११ मृगनयनी-(वृन्दावन लाल वर्मा) के आधार पर तथा कनिंघम आर्चियालोजिकल सर्वे की रिपोर्ट जि० २ पृष्ठ ६३-६४ ग्वालियर गजटियर के आधार पर।

(११)

वैभव भरे समृद्धिपूर्ण गुर्जर राज्य एवं साम्राज्यों की विदेशी लोगों द्वारा प्रशंसित इतिहास की सुनहरी कहानी, महत्वपूर्ण ऐतिहासिक राजधानियों की सुनहरी झांकी प्रजा की रक्षा के लिये कटिबद्ध लाखों सैनिकों के आत्म बलिदान की गाथाएं, गुर्जरों के साम्राज्य के समाप्त होने के साथ ही साथ छिपते हुए सूर्य की स्वर्ण आभा की समाप्ति के बाद की अमावस की अंधियारी तामस रजनी में परिवर्तित हो जाती है। भयानक रात्रि के अन्धकार से, जिस प्रकार चन्द्रमा आकाश में पदार्पण नहीं करता, मनुष्य घर द्वार बन्द कर शान्त निद्रा में मग्न हो जाता है। जंगली जानवर अपनी खुखार प्रकृति छोड़कर कन्दराओं में जा छिपते हैं। पक्षी पेड़ की ऊंची शाखाओं पर बने घोंसलों में जा पहुँचते हैं। वृक्ष भी सोते हुए विषैली वायु छोड़ते नजर आते हैं, श्रान्ति से अपरिचित वेगवती नदी का प्रवाह भी स्थिर हो जाता है, ठीक उसी प्रकार का भयानक समय गुर्जरों पर भी आता है। इनके सम्बन्ध में तरह तरह की लोकोक्ति घड़ ली जाती हैं।[११२]

उत्थान ही पतन का मूल कारण है, जो वृक्ष सबसे ऊंचा है, उसी पर सब से पहले बिजली गिरती है, जो देश सब से अधिक धन धान्य और प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण होता है, सबसे पहले बाहरी शत्रुओं की आखें उसी पर लगती हैं और उसे अपने आधिपत्य में लेकर पद दलित किया जाता है। जो पुष्प सबसे सुन्दर और सरस होता है उस पर ही मधु-मक्खिका सबसे पहले आक्रमण करती है। जो जाति राजनैतिक दृष्टि से सफल होती है, उसे पहले सामान्य तथा लुटेरे और डाकू के अर्थों में भी प्रयोग करते हैं और इतिहास की उस सामान्य स्थिति के लिए, जिसको सभी पराक्रमी जातियों ने ग्रहण किया है, गुर्जरों (गूजरों) को भी अपना हिस्सा लेना चाहिये। मराठा, जाट एवं राजपूतों के साथ भी यही बर्ताव हुआ है, जिसकी भावना समय समय पर अनेक इतिहासकारों ने प्रकट की है। *दोषमुक्त कोई नहीं है किन्तु भारत* के परतन्त्र काल में, जो दोषारोपण गुर्जरों के उपद्रवी स्वभाव का, लड़ाकू प्रवृत्ति का, विद्रोहमयी भावना का किया है, उसके अन्तस्तल में

११२ पंजाब कास्टस (सर डंजिल इबस्टन) पृष्ठ १६३

उनकी स्वतन्त्रता की उत्कट इच्छा, सैनिक जीवन, साहस का शौर्य एवं ओज सन्निहित है।

गुर्जर साम्राज्य के पतन के पश्चात मुसलिम आक्रान्ताओं ने और उसके बाद ईस्ट इण्डिया कम्पनी एवं अङ्गरेजों ने भारत को गुलामी की बेड़ियों में ही नहीं जकड़ा, अपितु उनकी वीरता शौर्य, ओज सभ्यता एवं संस्कृति को भी नष्ट भ्रष्ट कर दिया। नई-नई व्यवस्थाओं द्वारा उन्हें कुचलने के उपक्रम किये जाने लगे। इस काल के इतिहास मे गुर्जरो के साथ सब से अधिक अप्रिय प्रसग उपस्थित हुए किन्तु फिर भी उन्होंने अपने स्वाभाविक क्षत्रिय धर्म को नहीं छोड़ा। भारत-विजेता बादशाह बाबर लिखता है कि जब मैं भारत मे आया, गूजरों ने बराबर नियमित रूप से बहुत बड़ी सख्या में पहाड़ियों से उतरते हुए सेना का सामान तेल, भैंसे बहुत बड़ी तादाद मे हटा लिये और सैनिक कैम्पों पर छापे मारे। हमारी विजयों मे इनके कारण बड़ी भारी बाधा उपस्थित हुई, पिछली युद्ध पक्ति के सेनापति ने सैनिक कैम्प में गड़बड़ करने वाले गूजर सरदारों के सिर काट कर बादशाह के सामने पेश किये।[१११] इसी प्रकार बलबन सम्राट के समय में भी गुर्जर विद्रोह बहुत बड़े पैमाने पर हुआ। ई० सन् १५४० में देहली, आगरे के बार-बार रुकावट डालने पर भी गूजरों ने दोआबे में अपनी शक्ति विशेष रूप से बढ़ा ली, जिसके कारण बादशाह शेरशाह को इनके विरुद्ध प्रबल सैनिक कार्यवाही करने को बाध्य होना पड़ा।[११२] देहली में शाह शेरशाह द्वारा जिस समय शान्ति स्थापना सेना के बल पर की जा रही

[१११] इलियट इतिहास (डावसन) ६ भाग पृ० २३१-२४१ बाबर लेडिन पृष्ठ २६४

[११२] Early History of India IV Edition Page 477 'as early as 1540 A. D. they made their power felt in the Dwaba, so that Sher Shah was compelled to take vigorous proceedings against them" (Distt. Gazetteer Saharanpur H. R Neval Page 117)

थी। तो पाली और पाखल के (भड़ाने) गूजरों ने संगठित सशस्त्र विद्रोह किया और अराजकता पैदा करके व्यवस्था और शासन तन्त्र को ढीला कर दिया; बादशाह शेरशाह ने स्वयं पहाड़ियों में आकर उनके ग्रामों को आग लगवा दी और तोपों से आदमी मरवा दिये, सरदारों को फांसी दी गई और उनके सँगठन को पूरी तरह से कुचल दिया गया।[१११]

भारतीय इतिहास से पता चलता है कि मुगल साम्राज्य काल के प्रारम्भ में ही गुर्जर (गूजर) जाति का सगठन प्रारम्भ होगया था। बाबर के आक्रमण प्रत्याक्रमणों में वे कांटे की तरह साम्राज्यवादियों की आंखों में खटकने लगे, उन्होंने उनके साथ टक्कर भी ली।[११२] अकबर ने पंजाब व गुजरात के गूजरों की वीरता का सम्मान किया और गुजरात में

[१११] "The Gujars of Pali and Pakhal become exceedingly audacious while Sher Shah fortifying Delhi, so he marched to the hills and expelled them so that not a wastage of their habitions was left." Dawsons Elliet, IV Part, Page 477

भड़ाने गुजरो के १२ गाव आज दिन भी अपनी महत्यपूर्ण स्थिति में विद्यमान है और इनका सैनिक शौर्य उत्कृष्ट है। १९४७ ई० म जब भारत विभाजन केलिये मुसलिम लीग का आन्दोलन मेवात में फैला तो मेवो से मिले हुए गुजरो के गांवों को बड़ा खतरा उपस्थित हुआ और सभी गुजरो ने अपना सामूहिक सगठन करके मेवो को मार भगाया। बेसलों के एक छोटे से गाव की धौलर गूजरी ने मेवों की बडी धाड को घायल होते हुए भी भारी शकिस्त दी। मेवो से घिरा हुआ पाली पाखल के भड़ानो का १२ गाव का इतिहास प्रसिद्ध इलाका इस अवसर पर अपने नेता चौधरी नेतराम सिह भवाना कोह के नतृत्व में इलाके की रक्षा करने में ऐतिहासिक प्रसिद्धि प्राप्त कर गया और उनकी सशस्त्र जत्थबन्दी आक्रमणात्मक एव रक्षात्मक रूप से अपूर्व रही।

[११२] इलियट (डासन) (४) २३१–२४०, ४७७, बाबरनामा (लेडिन) २९४

उनकी राजनैतिक-स्थिति इस काल (१४५६-१६०४ ई०) काफी दृढ़ होगई और इनके एक चेची सरदार ने गुजरात शहर को नये सिरे से बसाया[११७] और गुजरात में अपना राजनीतिक-प्रभाव स्थापित करके आज तक अपनी सत्ता अक्षुण्ण रक्खी। इसके अतिरिक्त तमाम उपरी पंजाब में, ये एक शक्तिशाली जाति के रूप में समझे जाने लगे। इस समय से हजारा जिले के गूजरों की शक्ति बढ़नी प्रारम्भ हो गई। हजारा का नाम हजारा गूजर प्रसिद्ध हो गया। मध्य हजारा (पखाय) में उनका कई गावों पर प्रभुत्व स्थापित होगया। तरीन वंश के गूजर सरदारों ने हजारा के अधिकांश भाग पर (ई० १७५०-१७६६) तक अधिकार कर लिया। इस काल में कोट नजीबुल्ला, सिकन्दरपुर, खानदिलाजक, सराय सालिह, गनेहा उनके खास ठिकाने स्थापित हुए।[११८]

औरंगजेब (ई०१६५८-१७०७) अपने पिता को बन्दी बनाकर तथा अपने भाईयों के रक्त से अपने हाथ रंग कर देहली साम्राज्य का स्वामी हो गया। साम्राज्यवाद के प्रभाव से ओत-प्रोत उसकी राजनीति, संकीर्ण मुसलिम मनोवृत्ति—मुसलिम परस्त धार्मिक नीति से राजपूत, जाट, गूजर, सिक्ख, मराठा सभी वीरकर्मा जातियों में असन्तोष फैल गया और सारे साम्राज्य में विद्रोह की चिनगारी सुलग गई। सिक्खों और मरहठों ने मुगल साम्राज्य की रीढ़ तोड़दी। शाहजी भौंसले के पुत्र शिवाजी ने मराठा संगठन करके स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया और भारत से मुगल साम्राज्य का अन्त करने की ठान ली।

प्रसिद्ध इतिहास लेखक सर-यदुनाथ सरकार लिखते हैं कि शिवाजी के मराठा संगठन का प्रारम्भिक आधार क्षत्रियों के तत्कालीन पांच राजवंशों (क्षत्रिय) पर हुआ-यादव, मोरे, पवार, सिन्दे और गूजर।[११९] मराठा राजनैतिक दल का यह पहला संगठन है, जो गुर्जरों

---

[११७] आर्कियालोजिकल रिपोर्ट (२) ६१

[११८] हजारा गजेटियर ६८, ८१, ८२,

[११९] राजपूत मराठा (सर यदुनाथ सरकार के० सी० एस० आई०) का निबन्ध, राजपूत मराठा सभ द्वारा प्रकाशित (देवास)

के महत्व को प्रकट करता है। इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान चिन्तामणि विनायक वैद्य ने यह स्पष्ट किया है कि 'वर्तमान समय के शिर्के, शेलार, महाडिक गूजर आदि मराठा प्राचीन क्षत्रिय ही हैं।[१६०] गूजर भारतवर्ष की महान योद्धा एवं सैनिक जाति रही और मरहठों में भी इनका सैनिक सम्मान उच्चकोटि का था। "सेनापति का पद मराठा राजत्वकाल में, फालकर, गूजर, मोहिते, घोरपड़े जाधव आदि आठ योद्धा घरानों में ही रहा है"।[१६१] मराठा इतिहास में शिवाजी के महत्व के साथ प्रतापराव गूजर का महत्व बहुत अधिक है, जो शिवाजी की अश्वारोही सेना का सेनापति था और औरंगाबाद की जागीर का मालिक था। यह शिवाजी का दायाँ हाथ था, जिसका पहला नाम कड़तो जी था। प्रतापराव को अपने सेनापतित्व काल में मराठा राज्य कायम करने के लिये, मुगल साम्राज्य, बीजापुर राज्य, जंजीरा के हब्शी और पुर्तगाली राज की ताकतों से लोहा लेकर लड़ना पड़ा। प्रताप राव गूजर उच्च श्रेणी का घुड़सवार सेना का सेनापति था। मराठा वंश में गूजर सैनिक और गूजर राजवंश का महत्वपूर्ण स्थान है। दक्षिण के मावल गूजर बड़े योद्धा तथा सैनिक कला निपुण थे, इनमें से प्रत्येक के अधिकार में १०-१०-२०-२० हजार घोड़े रहते थे।[१६२]

प्रताप राव अपूर्व सैनिक कला निपुण सेनापति थे। १६६२ ई० में जब माल्हेर को मुगलों ने घेरा, तो प्रताप राव गूजर ने मुगलों की असंख्य सेना का सामना कर उसे पूर्ण पराजित कर दिया।[१६३] प्रताप राव गूजर ने सूरत को लूटा और खानदेश के पूर्वीय भागों पर जहां से कभी भी चौथ वसूल नहीं की गई थी, चौथ तथा सर देशमुखी वसूल कर अधिकार स्थापित किया।[१६४] घुड़ सवार

१६० हिन्दू भारत का उत्कर्ष पृष्ठ ४५६

१६१ पेशवाओं के रोजनामचे के कुछ वृतान्त, मराठों का उत्कर्ष (न्यायमूर्ति रानाडे) पृ० २७१

१६२ मराठों का उत्कर्ष (जस्टिस रानाडे) पृष्ठ ३८

१६३ वही पृष्ठ ८२   १६४ वही पृष्ठ ११४

सेनाओं के सेनापति प्रताप राव गूजर को, शिवाजी ने बालगाव की मुगल सेना, पन्हाल सीटी की बीजापुर सेना के पराभव करने के कठिन कार्य के लिये रायगढ़ से नियुक्त किया। उन्होंने भी अपने स्वामी की इच्छानुसार इस महान उत्तर-दायित्व को बहुत अच्छी तरह पूर्ण किया। शिवाजी ने जब मुगलशाही सेना के साथ सुलह करके औरङ्गाबाद में अपनी सेना रक्खी, तो उसके सेनापति पद पर प्रताप राव को ही नियुक्त किया था। शक्तिशाली बीजापुर की सेना को पराजित कर पीछे हटा देना प्रतापराव गूजर का ही काम था।[१११] जब प्रताप राव गूजर अपने घुड सवारों सहित औरङ्गाबाद छावनी में थे तो उन्होंने ही औरंगजेब का वह भेद—जो शक्ति युक्ति से अपने पुत्र दक्षिण के सूबेदार को शिवाजी को गिरफ्तार करने का षडयन्त्र था—खोला था जिसके कारण औरंगजेब के दक्षिण विजय के सब स्वप्न भंग होगये। मराठा राज के उत्कर्ष काल व शिवाजी के मराठा साम्राज्य के कायम करने में गूजरों का जबरदस्त हाथ था। मराठा इतिहास में निम्न वर्णन इस सम्बन्ध में विशेष उल्लेखनीय है, जो प्रताप राव गूजर के असाधारण व्यक्तित्व को प्रकट करता है।

"सन् १६६३ ई० की बात है। इस वर्ष रविवार ५ अप्रैल की रात्रि के समय शिवाजी ने ४०० सैनिकों के साथ पूना पर छापा मारा। रमजान का छठा दिन था। शायस्तखां दक्षिण का मुगल वायसराय और इनके आदमी खा पीकर गाढ़ा निद्रा में सोए हुए थे कि अचानक रात्रि में यह विपत्ति उनके लिए शिवाजी के रूप में आई। संघर्ष में शिवाजी के ६ आदमी मारे गये और ४० घायल हुए। उधर जो मारे गये उनकी संख्या इस प्रकार है— शायस्त खां का एक लडका और एक कप्तान, ४० नौकर, ६ बांदियां व उनकी नौकरानियां, और जख्मी हुए शायस्त खां के दो और लडके, आठ और औरतें और शायस्त खाँ खुद। इनका अंगूठा काट लिया गया था।"[११२]

[१११] वही पृष्ठ ८२
[११२] वही पृष्ठ ११३

"इस घटना के बाद मरहठे कतरज घाट होते हुए सिंहगढ़ के किले की तरफ चले। कतरज पहाडी पर उन्होंने मशालें जलाई', मुगलों को चुनौती देने के लिये और उनका उपहास करने के लिये। मुगलों ने उनका पीछा किया और नगाड़े बजाते हुए व तलवारें चमचमाते हुए सिंहगढ़ दुर्ग के पास पहुचे। शिवाजी ने मुगलों को किले के नजदीक आने दिया और फिर बडी तोपों से उनका स्वागत किया। इस पर मुगल भाग छुटे पर मुगलो की मुसीबत का अभी अन्त नहीं हुआ। मरहठा अश्व सेना का नायक कडतोजी गूजर उन पर टूट पड़ा और उनके दांत खट्टे कर दिये। मुगल सेना तितर बितर होगई और बदनामी का सेहरा उनके माथे बधा। प्रसिद्ध इतिहासज्ञ ग्रान्ट डफ (Grant Duff) लिखता है कि यह पहिला अवसर था जब कि मुगल अश्व सेना का पीछा मरहठों ने किया। अपनी विजय से प्रोत्साहित हो, कडतो जी गूजर ने मुगलों की कई छोटी २ टुकडियां काट डालीं और परिणामस्वरूप मुगलों को अपनी चौकियों का दृढ बनाने के लिये मजबूर किया।"

• "सन् १६६१ ई० मे, आम्बेर के वयोवृद्ध मिर्जा राजा जयसिंह के आमन्त्रण पर, शिवा जी मुगल सम्राट औरंगजेब से मिलने आगरा जाने के लिये तय्यार होगये। श्री गोविन्द सखाराम सर देसाई "मरहठों का नवीन इतिहास" नामक पुस्तक में लिखते हैं कि जब शिवा जी का आगरा जाना निश्चित हो गया तो शिवा जी ने अपनी अनुपस्थिति में राज्य प्रबन्ध व राज्य का सारा भार राजमाता जीजाबाई को सौंप दिया और मोरोपन्त पेशवा नीलोपन्त मजमूदार, और प्रतापराव गूजर सेनापति की एक कार्य्य कारिणी समिति (Executive Council) बनादी। यहाँ हम प्रतापराव गूजर को एक्जीक्यूटिव काउंसिल के एक मेम्बर के रूप में देखते हैं। शिवाजी के विश्वासपात्र होने के कारण ही प्रतापराव गूजर को इतना ऊंचा व जिम्मेवार ओहदा मिला।"

'सन् १६६७ ई० में शाहजादा मुअज्जम दक्षिण के गवर्नर नियुक्त हुए। महाराजा जसवंतसिंह इनके साथ थे। शिवा जी और मुगलों में सन्धि हुई, जिसके फलस्वरूप औरंगजेब की तरफ से शिवा जी को 'राजा' की उपाधि दी गई और अपने पिता की जागीर के अलावा, बरार

में शिवाजी को और जागीर मिली। शिवा जी ने मुगलों को बीजापुर के विरुद्ध सहायता देना स्वीकार किया। शम्भाजी कुछ घुड़सवारों के साथ औरंगाबाद शाहजादा मुअज्जम के पास भेजे गए पर चूंकि अभी इनकी उम्र कम थी यह शिवाजी के पास वापिस भेज दिए गये, और इनकी जगह कड़तोजी गूजर नियुक्त हुए। शिवाजी ने इनको प्रतापराव की उपाधि प्रदान की और इनका औहदा घुड़सवारों का सरे नौबत था यानी शिवाजी के घुड़सवारों के यह सेनापति थे। पैदल फौज के दूसरे सेनापति थे।"

'औरंगाबाद में, शाहजादा मुअज्जम, महाराजा जसवन्तसिंह, सेनापति प्रतापराव गूजर और नीराजी रावजी जो शिवाजी के राजदूत थे—इन सब में अच्छी पटती थी। दिन या तो आखेट में बीत जाता था या मन बहलाने वाली कई चीजों द्वारा। यह सब दिलेरखां से नहीं देखा गया। दिलेरखां शाहजादा मोअज्जम के मातहत एक अफसर था, पर औरंगजेब का कृपापात्र था। औरंगजेब को दिलेरखां पर शाहजादे से अधिक विश्वास था। दिलेरखां ने मुगल सम्राट के पास रिपोर्ट भेजी कि आप किस नींद में सो रहे हैं। शाहजादा मरहठों की मदद से आपके राज्य से अलग कर खुद सम्राट बनना चाहता है। इस रिपोर्ट के मिलते ही औरंगजेब ने फौरन एक हुक्म जारी किया कि शाहजादा, प्रतापराव गूजर और नीराजी को गिरफ्तार कर ले। शाहजादा मरहठों का मित्र था।

देहली के अपने गुप्तचर द्वारा इस समाचार के मिलते ही, उन्होंने चुपचाप इस बात की सूचना अपने मित्रों को देदी और उधर इस सूचना के मिलते ही, प्रतापराव गूजर अपनी सेना सहित रायगढ़ के लिये रवाना हो गये। जब बादशाह का फरमान औरंगाबाद पहुँचा तो शाहजादा मुअज्जम सच्चाई के साथ यह कह सके कि औरंगाबाद में प्रतापराव गूजर व एक भी मरहठा नहीं है मैं किसे गिरफ्तार करूं। शिवाजी ने जब यह सब सुना तो कहा "मुगलों ने निजी खर्च से दो साल तक मेरे घुड़सवारों की देख रेख की। अब मैं उन्हे बतलाऊंगा कि मेरे घोड़े क्या कर सकते हैं"।

"मुगलों और मरहठों के बीच फिर युद्ध आरम्भ हो गया। शिवाजी ने कई किले मुगलों से जीत लिये। सन् १६७० ई० में सेनापति प्रतापराव गूजर ने शिवाजी की आज्ञानुसार खानदेश पर धावा बोल दिया। कई बड़े शहर लूटे। करजा के शहर में एक करोड़ रुपये का माल मिला, जो चार हजार बैल व गधों पर लाद कर शिवाजी को भेजा गया। इसी समय से मरहठों के आक्रमणों से बचने के लिये और अपनी रक्षा के लिये बहुत से नगरों ने शिवाजी को चौथ-यानी सरकारी मालगुजारी का चतुर्थांश देना स्वीकार किया।"

"मुगलों की हार के कारण, औरंगजेब ने सन् १६७० ई० में, दक्षिण में, मशहूर सेनापति महावतखाँ को ४०००० सेना के साथ भेजा। सल्हेड़ का किला, जो खानदेश और गुजरात की सीमा पर है, शिवाजी ने जनवरी सन् १६७१ ई० में ले लिया। महाबतखा ने इस किले को फतह करने की कोशिश की। इस काम के लिये इखलासखां चुने गये और इनका मुकाबला करने के लिये शिवाजी की तरफ से प्रतापराव गूजर और मोरोपन्त भेजे गये। ग्रान्ट डफ लिखते हैं कि प्रतापराव गूजर अग्र सेना के सेनानायक थे और जब इन्होंने देखा कि इखलासखां इनसे मुठभेड लेने के लिये बहुत उत्सुक है, तो उनको आगे आने दिया और आप पीछे हटते गये और जब मुगल सेना की नियमित रचना बिगड गई, तब मोरोपन्त की सहायता लेकर शत्रु पर टूट पड़े। यह काम इन्होंने ऐसे ही किया जैसे कि विलियम प्रथम ने इंगलेन्ड में सेनलेक व हेस्टिंग्स के युद्ध के अवसर पर सन १०६६ ई० में किया था। बुरी तरह हार कर मुगलों ने फिर सगठित होने की कोशिश की, पर असमर्थ रहे। विजय शिवाजी की सेना की रही। यह विजय कोई चोरी छिपके छापा मारने के कारण नहीं हुई बल्कि मैदान में खुल्लम खुल्ला मुकाबले का यह नतीजा था। महाबतखां की सल्हेड़ किले के लेने की उम्मीदों पर पानी फिर गया और मुगल फौज वापिस औरंगाबाद चली गई। ६००० घोड़े, ६००० ऊट, १२५ हाथी, मुगलों का सब सामान मय खजाना व जवाहरात के मरहठों ने प्राप्त किया। महाबतखा का तबादला अफगानिस्तान कर दिया गया जहां इनकी मृत्यु हो गई।"

"नवम्बर सन् १६७२ ई० में बीजापुर का सुलतान अली आदिलशाह मर गया। सुलतान के अफसरों में फूट पड़ गई और वे आपस में लड़ने लगे। शिवाजी ने भी अपनी शक्ति बढ़ाने का यह अवसर उचित समझा। पनहाला, सतारा, पारली के दुर्ग शिवाजी ने जीत लिये।"

"बीजापुर के मन्त्री खवासखां ने बहलोलखां को पनहाला दुर्ग वापिस लेने के लिये भेजा। शिवाजी की तरफ से प्रतापराव गूजर और आनन्दराव मकाजी बहलोलखां से लड़े। अप्रैल सन् १६७३ ई० में बीजापुर से ३६ मील पश्चिम में उमरानी के स्थान पर घमासान युद्ध हुआ; बीजापुर वाले हार गये और उनके बहुत आदमी मारे गये। प्रतापराव गूजर ने उदारता दिखाते हुए बहलोलखां और उसकी बची हुई फौज को छोड़ दिया। बहलोलखां ने वचन दिया था कि वह शिवाजी के विरुद्ध अब युद्ध नहीं करेगा; पर यह सिर्फ कहने की बात थी। छोड़े जाने के कुछ दिनों बाद, बहलोलखां ने फिर युद्ध छेड़ दिया। शिवाजी ने जब यह सब वृतान्त सुना तब इनको अपने पंजे में आये हुए दुश्मन को छोड़ देने की प्रतापराव गूजर की उदारता की नीति पसन्द नहीं आई और प्रतापराव गूजर को इन्होंने कहला भेजा कि बहलोलखां पर पूर्ण विजय प्राप्त किये बिना मुझेअपना मुंह मत दिखाना। प्रतापराव गूजर को शिवाजी का इस प्रकार नाराज होना बहुत खला और वह बहलोलखां से द्वन्द्व युद्ध का अवसर ढूंढने लगे। बहलोलखां और सर्जाखां दोनों अपनी फौजों के साथ चले आ रहे थे।" इस समाचार के मिलते ही प्रतापराव ने धावा बोल दिया और उन पर टूट पड़े। प्रतापराव के पास उस समय केवल ६ अथवा ७ आदमी ही थे। बाकी इनकी फौज कुछ दूरी पर थी। नेसारी की घाटी में इन आठ वीरों ने बीजापुर की सेना पर आक्रमण कर दिया। यह वीरता उसी ढंग की थी, जो सन् १५९१ ई० में सर रिचर्ड ग्रेनविल ने अकेले होते हुए ५३ स्पेन के जहाजों से लड़ने में दिखाई थी। "कहां एक तरफ आठ आदमी, कहां दूसरी तरफ हजारों की संख्या में सशस्त्र सेना। २४ फरवरी सन् १६७४ ई० को इस प्रकार लड़ते हुए, प्रतापराव वीरगति को प्राप्त हुए। बीजापुरवाले इस युद्ध में हार गये।

अपने सेनापति की मृत्यु के समाचार सुन शिवाजी को बहुत दु ख हुआ। प्रतापराव के वशजों व रिश्तेदारों को शिवाजी ने जमीनें दीं और ६ वर्ष बाद प्रतापराव की लडकी का विवाह अपने दूसरे लडके राजाराम के साथ कर दिया।"[११७]

मराठों के अलावा सिक्खों मे भी गूजरो की महत्वपूर्ण सख्या है और सिक्खों के अभ्युत्थान मे गूजरों का विशेष महत्व है। उनके उत्कर्ष काल मे विजयी सिक्ख सेना में गूजर सैनिकों का महत्वपूर्ण स्थान था।[११८]

(१२)

इस काल के इतिहास मे, यादवों की एक शाखा भाटी गूजरों का इतिहास मे बड़ा महत्व है। महाभारत काल मे यह यादव गिरिव्रज— सिन्ध नदी के दोआबे मे बस गये, जिसे आज भी यदु का डुग्ग कहते हैं। इन मे राजा गज बड़ा प्रसिद्ध हुआ, जिसने गजनी शहर बसाया और समरकन्द तक राज बढ़ाया और यह ऊपर की ओर भारत मे बाहर भी चले गये। राजा के पुत्र शालिवाहन ने ई० सन् १६ मे शालमानपुर (स्यालकोट) बसाया और फिर तमाम इलाका गजनी तक का अपने राज्य में ले लिया। इसका पौत्र भाटी था, जो प्रसिद्ध योधा था और उसने तमाम राजाओं को विजय करके, अपना राज्य विस्तार दूर दूर तक बढ़ाकर, इस वश को भाटी नाम से प्रसिद्ध किया। कुछ दिनो बाद गजनी की ओर से बाहरी आक्रमणों के कारण यह लोग, फिर सतलज के इस

[११७] इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान प्रोफेसर देवराज गोपालराम M. A. प्रधान अध्यापक इतिहास जसवन्त कालिज जोधपुर वीर गुर्जर माह नवम्बर १६५० (कर्नल डफ के मराठा इतिहास के आधार पर)

[११८] The Sikhs are almost Jats or Gujars Bombay Gazetteer जि० ६ भाग १ पृष्ठ ४८१.

"Their army being swelled by large numbers of Gujars and Ranghaes from the part of the district Saharanpur, Saharanpur Gazetteer Page 196.

ओर हट आये और रेगिस्तान में आकर शरण ली। इस बीच में इन्होंने भाटिया शहर (भेड़ा) झेलम के किनारे बसाया; यही भाटिया राज्य था, जिसके स्वामी भाटिया गूजर पंजाब (होशियारपुर) के इसी भाटी वंश के हैं। काबुल के अन्तिम चार राजा भाटिया वंश के थे। राजपूताने में बसी हुई लड़ग, जोहिया, महिल आदि जातियों को निकाल कर इन्होंने तुनोली, देवरावल और जैसलमेर आदि नगर आबाद किये। देवराज भाटी ने देवरावल ८३६ ई० के बाद बसाया। बराहाओं के साथ हुये भयानक युद्ध में इनको भारी क्षति पहुंची किन्तु इससे देवराज की युद्धकला, निपुण राजनैतिक शक्ति का बड़ा विकास हुआ। ११५६ ई० में इसी की छटी पीढ़ी में जयमल हुआ, जिसने जयमलमेर आबाद किया। भाटी वंश की उपाधि रावल थी।[९९] जयमल के कई भाई थे, जिन्हों ने अलग-अलग स्थानों में राज स्थापित किया। १२वीं शताब्दि के मध्य में इनके प्रसिद्ध सरदार राव कीरान पृथ्वीराज सम्राट देहली के महासामन्त थे। ११८६ ई० में इन्होंने कामना आबाद किया, जो उनकी राजधानी थी। यह स्थान आज भी जमुना से ४ मील, देहली अलीगढ़ की पुरानी सड़क पर, खन्डहरात के रूप में विद्यमान हैं। इनके साथी देव और काले गूजरों ने मेवों के गाँव छीन लिये। तुर्कों के आगमन के साथ-साथ इनकी शक्ति बढ़ती गई और १५,२२,३१५ दाम इनकी आय रही, जिस पर इसी काल (१८४४ ई०) तक इनका स्वामित्व रहा। इनके विवाह सम्बन्ध कसाने, हूण तथा पंवारों (कलानोर) के साथ हुए। जमुना के दोनों ओर ३६५ गांवों में यह भाटी वंश प्रसिद्ध है, जिनमें से अधिकांश गूजर, शेष मुसलमान (तिल और घोड़ी) एवं १२ गांव भाटी राजपूतों के (धूम-आमका आदि) एक ही वंश के प्रसिद्ध हैं।[१००]

---

[९९] राजपूताना गजेटियर भाग २ पृष्ठ १७१
— राजस्थान का इतिहास (कर्नल जेम्स टाड) अध्याय ६ पृष्ठ ४५-४६

[१००] मंमोर माफ जिला बुलन्दशहर (लक्ष्मण सिंह राजा) पृष्ठ ४८, १४५, १७६, १७७

अरबों के बाद तुर्कों, पठानों एवं मुगलों की आसुरी प्रवृत्ति नहीं रुकी। गुर्जरों के राज तथा गणतन्त्र देहली के चारों ओर, जहां उनकी बहुसंख्यक बस्तियां थीं स्थापित होगये और भाटियों की बहुसंख्यक आबादी से यह प्रदेश जिसे भटनेर [121] और गुर्जरों की सामूहिक आबादी के कारण गुजरात [122] कहते थे संघर्ष शील रहे। जिसमें उनकी शक्ति दूसरे गुर्जर वंशों की महत्वपूर्ण आबादी और राजशक्ति के साथ बढ़ती घटती रही। १६वीं सदी के प्रारम्भ में वे महान् शक्तिशाली राजशक्ति सम्पन्न होगये [123] किन्तु आक्रमणकारियों द्वारा वे बराबर टक्कर लेने के कारण तहस नहस होते रहे। अन्य बहुत सी जातियों के नृपति वंशों की तरह उन्होंने बैंत की सी नीति नहीं अपनाई, जो आंधी आने पर झुक जाती है और उसके निकल जाने पर पूर्ववत् मद से झूमने लगती है। समय २ पर उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा की और बूढ़े-जवान रण में जूझने लगे, जिसके कारण उनके गांव, आबादियां अनेक बार नष्ट, बर्बाद हुए, खेती कुचली गई और सामन्त काट डाले गये, पर वे टस से मस न हुए। उनके रौन्दे गांव फिर आबाद हुए, खेती लहरा उठी और इलाका प्रत्येक मूल्य पर—जो आजादी की रक्षा के लिये दिया जाता है—उनका रहा। मोहम्मद तुगलक के समय, में एक ओर अकाल का ताण्डव नृत्य होरहा था, न घरों में अन्न था, न खलिहानों में, नर नारी अकाल में मर रहे थे। उधर कर वसूल होरहा था। इस समय भी इन गुर्जरों ने राज्य से शत्रुवत् व्यवहार करके संघर्ष किया और प्रजा को बर्बर राजा के अत्याचारों से बचाया। मरहठों को अलीगढ़ राजधानी बनाने और देहली से चौथ वसूल करने में गूजरों का भारी हाथ था। १७६० ई० में जब अहमद शाह ने पानीपत में मरहठों को हरा दिया, तो मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, मेरठ तथा उत्तरीय बुलन्दशहर की

[121] इलियट ग्लोसरी-पृ० १०० 'The Tract opposite to Delhi, from to Kasana, was called Bhatner, from the prevalence of the Bhatti Gujars"

[122] मेमायर आफ जिला बुलन्दशहर पृ० १७६

[123] स्मीथ हिस्ट्री आफ इंडिया ४ पृ० ४७७

बच्च सत्ता म्हेलों के हाथ में आगई।[१०३] गूजरों की शक्ति को अनुभव करते हुए दूसरे जिलों की भांति भटनेर का इलाका स्वतन्त्र रहा और उन्होंने अपनी स्थिति दृढ़ करली। १८१३ ई० में वजीर नजीबुद्दौला ने भटनेर का इलाका कटहडा के राव दरगाईसिंह को विवश होकर अर्पित कर दिया।[१०४] राजा शम्भूसिंह तथा राजा अजीतसिंह के हाथ में शासन सत्ता बदस्तूर रही। इलाके में शान्ति सुव्यवस्था के लिये ७६०००) रु० की मुआफी के ११३ गांव इनके पास रहे। इन सनदों को मरहठों और अङ्गरेजों ने भी स्वीकार किया।[१०५] भाटियों के एक सरदार अमरा ने शक्तिशाली भूरट जाति को छिन्न भिन्न एवं परास्त कर दिया। कटहडा के समीप ही दादरी को इन्होंने अपनी राजधानी बना लिया। सन् १८१६ ई० में राव अजीतसिंह के बाद राव रोशनसिंह के समय अंगरेजों ने अपनी राज्य प्रसार नीति अपनाई और ताल्लुकेदार तथा सामन्तों को मिटाने के लिये बन्दोबस्त का तरीका अपनाया गया और ४००) माहवार की पेंशन तय करके दादरी जब्त करली गई।

भारतीय स्वतन्त्रता के प्रथम महायुद्ध के समय भाटी गुर्जरों को सात समुद्र पार की व्यवसायी जाति की भारत को परतन्त्र करने की नीति पसन्द नहीं आई और जब मेरठ और देहली की जनता बन्धन मुक्त होने के लिये छटपटा उठी, तो इस इलाके के भाटी गूजरों ने अपने साथी नागडी, कपासिये, खटाणा, विधुडी आदि से मिलकर सशस्त्र विद्रोह में बडा महत्वपूर्ण भाग लिया। बुलन्दशहर की जेल तोड दी। थाने, कचहरी और पुलिस पोस्ट एव डाक बगले जला दिये। १८५७ ई० तक कटहडा के उमरावसिंह के पास राजा का पद था और उसने उसे स्वयं वापिस कर दिया। जिले की प्रधान जातियों—गूजर और मुसलमान राजपूतों ने सामूहिक रूप से ब्रिटिश गवर्नमेंट का विरोध बलपूर्वक किया।[१०६] अनेक फौजी दस्तों को उन्होंने हटा दिया और अपने बलिदानों की सीमा

[१०३] मेरठ गजेटियर पृष्ट १२६

[१०४] बुलन्दशहर गजेटियर पृष्ट १९६, मेरठ गजेटियर पृष्ट ६६

[१०५] डिस्क्रिप्टिव एन्ड हिस्टोरिकल एकाउन्टस नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सज आफ इन्डिया पृष्ट १४६

खींच कर, भारतीय स्वतन्त्रता की रक्षा के आन्दोलन का श्रीगणेश करते हुए, अपने को भयानक खतरे में डाल दिया। आपकी फूट में अंगरेजों के उखड़ते पैर जम गये। गुर्जरों के घर-बार, जमीन जायदाद जब्त होगई। साम्राज्यवाद की भीषण रक्त पिपासा, सूली और फांसियों से बुझाते हुए, गुर्जर कुटुम्ब एवं परिवार तहस नहस कर दिये गये।[१५८] जाति को निर्धन तथा अशिक्षित रखने में कोई कसर नहीं छोड़ी गई।

उत्तर पश्चिम भारत के गुर्जरों में नागड़ी राजवंश का महत्व भी किसी से कम नहीं है। उत्तर प्रदेश व पंजाब, राजपूताना आदि में नागड़ी मुख्य गुर्जर हैं। जिले बुलन्दशहर में वे विशेष शक्तिशाली हैं,[१५९] जो जमुना के दूसरी ओर भी फैले हुए हैं और नीमका तिगाँव (गुड़गाँव) उनका खास स्थान है। गुजरात के नागर ब्राह्मण नागड़ी गूजरों से ही सम्बन्धित हैं।[१६०]

नागड़ी गुर्जरों का सम्बन्ध इतिहास प्रसिद्ध शिव के उपासक भारशिव नागों से है और दद्दा गुर्जर भडौंच से पराजित होकर,[१६१] यह कुल—जो वीरकर्मा राजवंश था—गुर्जर कुल समूह में आत्मसात हो गया। जिस ऐतिहासिक युग को इतिहासकारों ने अन्धकार युगीन भारत कहा है, उस युग (सन् १५० ई०—३५० ई०) में कुशान साम्राज्य के अन्तिम काल (सन् १६५ ई०) में अश्वमेधी भारशिवों ने अपना

---

[१५८] "Among the village communities the Jats as a rule were for the British Government, and the Gujar and Musalman Rajputs were against it

Memoir of Zila Bulandshahar by Lachaman Singh 1774 A D, Page 43

[१५९] वही पृष्ठ १४०-१६२-१७६-३३४, १७७-१७८

[१६०] बम्बई गजेटियर भाग ६ जि० २ पृष्ठ ४६४, एन डब्लू पी गजेटियर ३ पृष्ठ ४८

[१६१] कम्परे एपिग्राफिका इण्डिका (१) पृष्ठ २६५-३०३

[१६२] इण्डियन एटीक्वेरी भाग १३ पृष्ठ ५६०

राज्याभिषेक भागीरथी (गंगा) के पवित्र जल से, करके आर्य मर्यादा की रक्षा की।[१८१]

ईसा की तीसरी चौथी शताब्दि में नाग कुल ने भारतीय राजनीति में एक क्रान्ति पैदा कर दी। कुशान साम्राज्य के पतन के पश्चात मथुरा तथा गंगा के पूर्व के वर्तमान उत्तर प्रदेश पश्चिमी बिहार, बुन्देलखण्ड और बघेल खंड में इन नागवंशी भारशिवों के स्वतन्त्र राज्य थे। इनका मूल निवास नरवर के निकट पद्मावती (पद्मावती) था पुराणों में इनके कई प्रसिद्ध केन्द्र हैं .— (१) विदिशा (आधुनिक भिलसा), (२) पद्मावती, (३) कान्तिपुरी आदि (कान्तित राज मिर्जापुर—यह आश्चर्य की बात है कि मुगल साम्राज्य से एवं सैयदों से लोहा लेते हुए दयाराम नागड़ी सरदार को मिर्जापुर जिले में कान्तित नरेश के यहां ही शरण मिली, जो नागवंश की एक प्राचीन राजधानी थी)। इनमें वीरसेन प्रबल राजा हुआ, जिसके कारण कुषाण साम्राज्य के ऊपर नागों का मालन्य छा गया। इन नागों ने दशाश्वमेध घाट को बनारस में दश अश्वमेध करके प्रसिद्ध किया। इनके राजस्थान, कोशाम्बी तथा पाटलिपुत्र में भी राज्य थे।

नागर लिपि या नागरी लिपि का नाम डा० काशी प्रसाद जयसवाल के अनुसार नाग राजवंश के कारण ही पड़ा क्योंकि शीर्ष लेखा लगाकर अक्षरों को लिखने की प्रथा उन्हीं के समय चली थी और नागों के शासन प्रबल स्थानों में ही यह लिपि सबसे अधिक प्रसिद्ध रही। गौ की पवित्रता, साड की रक्षा इनका पवित्र धर्म था। ये स्वय अपने को नन्दी

---

[१८१] फ्लीट कृत गुप्ताज इन्सक्रप्शन्स पृष्ठ २४५, २३६ 'उन भारशिवों के वंश का, जिन्होंने शिव लिंग को अपने कंधा पर रख कर शिव को सन्तुष्ट किया और भागीरथी के जल से अपना राज्याभिषेक किया और अश्वमेध यज्ञ करके अवभृथ स्नान किया था। "अंसभार सन्निवेशितशिव लिंगोद्वाहनशिव सुपरितुष्टसमुत्पादितराजवंशानाम पराक्रम अधिगत=भागीरथी=अमल जल मूर्धाभिषिक्तानाम दशाश्वमेध=अवभृथ स्नानाम भारशिवानाम्।"

मानते थे. आधुनिक हिन्दुत्व की नींव इसी नागवंश ने रक्खी, जो बाद में विस्तार की गई।[१८७] नागौर (राजपूताना) में, जो नागवंशी गुर्जर ऐतिहासिक युग में स्थानीय शासक थे, वे नागड़ी कहलाये। डा० जायसवाल का विश्वास है कि नाग शब्द के साथ जो 'र' लगा है वह उनका सम्बन्ध नागों से सूचित करता है।[१८८] हमारा भी यही विश्वास है, नागरी या नागड़ी नागवंश से घनिष्ठ सम्बन्धित हैं। यह नागवंश के लोग कलाप्रिय थे। उनके बनाये शिव मन्दिर सौन्दर्य कला के प्रतीक-नागर-स्थापत्य कला के प्रतीक हैं, जिनका परिचय नागवाया के मन्दिर, नागर और निगोरा में मिले हिन्दू मन्दिरों से चलता है। नागपुर की प्रसिद्धि इसी वश से है। कुरुक्षेत्र के आसपास के प्रदेशों में भी नागवंशी प्रजा थी।

१८ वीं शताब्दि के प्रारम्भ में मुगल साम्राज्य काल में गुर्जरों में ही क्या भारत में नई जागृति पैदा हुई। इतिहास से पता चलता है कि राज्य एवं साम्राज्यों की कर्तृत्व शक्ति १०-५ पीढ़ी या २५०-३०० वर्ष में ही समाप्त हो जाती है। मुगल साम्राज्य की भी यही स्थिति रही। विषम परिस्थिति और शक्तिशाली साम्राज्यों के अंगों के बिखर जाने से गुर्जरों ने मुगल सम्राटों की अकर्मण्यता एवं निष्क्रियता से फायदा उठा कर साम्राज्य के ताज के निकट संघर्ष प्रारम्भ कर दिया। तलवार की मूठ कमजोर पड़ने पर हलकी मूठ ने उनकी वीरता एवं शौर्य पर विलास की छाया नहीं पड़ने दी।

राव जैतसिंह नागड़ी ने, जो नीमका-तिगांव (बल्लभगढ़) के एक शक्तिशाली नागड़ी कुल का सरदार था, साम्राज्य के विरुद्ध अपने हथियार उठा लिये और थोड़े ही समय में जमुना और गंगा के घाटों पर अपनी सैनिक चौकियां स्थापित करलीं। रुहेलखण्ड तक के तमाम स्थानों पर अधिकार करके देहातों में अपना प्रभाव स्थापित कर लिया। सल्तनत के अधिकारी और देहली के बादशाह इसे सिर्फ एक खतरनाक डाकू ही

---

[१८७] अन्धकार युगीन भारत (डा० काशीप्रसाद जायसवाल) पृष्ठ १३२-१३३-१३०-१३१

[१८८] वही पृष्ठ ११६-२०

समझते रहे किन्तु इसने इसको शासन कला के रूप में बदल कर देहली के बादशाह, रूहेले एवं मरहठों को चुनौती दे दी। जब तक जैतसिंह ने बादशाह अहमदशाह के मुख्य सेनापति सूबेदार प्रतापसिंह के साथी को समाप्त नहीं कर दिया, तब तक देहली के सम्राट ने उस पर कोई कार्यवाही नहीं की। सूबेदार प्रतापसिंह स्वयं देहली साम्राज्य की सेना लेकर गूजरों को दबाने और आतंकित करने को पहुँचा, लेकिन वह बुरी तरह पराजित हुआ और मारा गया। कुमर अलीशाह-कोतवाल देहली भी फौज लेकर गूजरों को पराजित करने को सेना के साथ पहुँचा, लेकिन गुर्जरों के आगे उसकी एक न चली और अहंकारी कोतवाल युद्ध के मैदान में मारा गया और उसकी सेना काम आई। इसके बाद कुछ और भी व्यक्ति और मुगल साम्राज्य की सेना के महत्वपूर्ण सरदार, नैनसिंह की गुर्जर सेना को दबाने के लिये पहुचे लेकिन सब की वही दशा हुई। मुगल सेना पराजित होकर छिन्न-भिन्न दशा में देहली वापिस आई और सेनापति काम आये। देहली के बादशाह ने जैतसिंह और दूसरे गूजर सरदारों को—*अन्य कोई उपाय न देखकर*—*देहली बुला लिया और सुलह करली* और देहली के आसपास शान्तिपूर्ण व्यवस्था एवं उपद्रव रोकने-चोरी डकैती आदि खत्म करने का आश्वासन देते हुए, राव जैतसिंह को मेरठ जिले के पूर्वीय परगने, राव दरगाई सिंह को दादरी का इलाका और कुचेसर के मगनी राम जाट नेता (जैतसिंह के साथी) को यू. ठ. स्याना, फरीदा का इलाका दे दिया गया।

परीक्षितगढ नागड़ी राजवंश की राजधानी स्थापित होगई। राव जैतसिंह नि सन्तान मर गया और उसका भतीजा राजा नैनसिंह गद्दी पर बैठा, जो बड़ा शक्ति सम्पन्न व्यक्ति था। मरहठा गवर्नर पैरा (अलीगढ) ने ३५० गाव की जागीर और देदी। अंग्रेजों का राज्याधिकार होने पर नैनसिंह को मराठा सनद के अधिकार दे दिये गये किन्तु बाद में फिर अपनी नई नीति के अनुसार शक्ति सम्पन्न स्वतन्त्रता प्रिय नेताओं के अधिकार सीमित करते हुए, उनके अधिकार बोर्ड आफ रेवेन्यू के रिकार्ड १ अक्टोबर १८०५ ई०-१३ सितम्बर १८०५ ई० के अनुसार जन्म पर्यन्त रहे। नैनसिंह बड़ा वीर, गम्भीर, राजनीतिज्ञ नेता था। उसने सिक्खों से

अपने राजनैतिक सम्बन्ध स्थापित कर लिये। सैयदों के हिन्दुओं पर होने वाले अत्याचार सदा के लिये बन्द करा दिये। अंग्रेजों से इसके मित्रता के सम्बन्ध नहीं रहे। ई० सन् १८१८ में नैनसिंह का स्वर्गवास होगया और उसका पुत्र नत्थासिंह राज्याधिकारी हुआ, जिसे अंग्रेजों की साम्राज्यवादी नीति का शिकार होना पडा। अंग्रेजों ने सच्चाई को ताक में रखकर सुलहनामों और सनदों को अलग छोड़ते हुये परीक्षितगढ़ और बहसूमा के नागडी-गुर्जर राज्य को समाप्त करने की ठानली। २४३ गांवों की जमीदारी में उसे मालगुजारी के अधिकार दे दिये गये। अहमदशाह की दी गई हजारों गांवों की सनद को यह कह कर टाल दिया कि साम्राज्य के ह्रास काल की सनद होने से इसकी कुछ कीमत नहीं। शेष १८३ गांवों में ५ फी सदी नानकारा तय कर दिया। राजा नत्थासिंह का दिवानी दावा स्वीकार हुआ और ८७४ गांव, जिनकी मालगुजारी ४००००) थी उसे मिलने लगी। १८३६ ई० में २० गांव राजा नैनसिंह के रिश्तेदारों को दे दिये गये। इसी बीच में इनका स्वर्गवास हो गया। राजा नत्थासिंह के एक कन्या लाड़ कुंअरी थी, जो राजा खुशहालसिंह (लढ़ौरा) को व्याही गई। १८२६ ई० में रानी धन कुंवरी राज्य का प्रबन्ध करने लगी और मेरठ तथा सहारनपुर के गुर्जरों की सम्पत्ति आपस में मिल गई।[१८५]

---

[१८५] मेरठ गजेटियर (एच० आर० नेविल आई० सी० एस०) पृष्ठ ९६-९७

—इस राजवंश के अन्तिम काल में कुंअर चन्दनसिंह (ढिकौली) गुर्जरों के प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता रहे, जिन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन में महत्वपूर्ण भाग लेकर भारत को स्वतन्त्र कराने में योग दिया, शिक्षा, समाज सुधार सम्बन्धी आन्दोलनों में उनका नेतृत्व प्रख्यात था।

नागडी वंश के गूजर बुलन्दशहर में बहुत शक्तिशाली रहे, जहां इन्होंने दनकौर में मुरटों के नेता भट्टा को मारकर कनारसी, पिपलका में बसावट की, वहां यह २७ प्रसिद्ध गावों के स्वामी रहे। १८५७ ई० के स्वतन्त्र युद्ध में इनकी जमीदारी काफी छिन गई। गुलावठी परगने के भट्टा-मसावर के नागडी यही के थे, जहां ७ गांव की भूमि के वे स्वामी थे, उनके

(बुजुर्गा इन्द्रसिंह, कान्हा) को गदर में फांसी हुई और गांव छीन कर जाटों को दे दिये गये। यही हाल जनेदपुर के दरयावसिंह, राजपुर के सरजीतसिंह, गुनपुरा के रामबक्स को फांसी की सजा देकर, किया (मेमोर आफ बुलन्दशहर पृष्ठ १७८)

Meerut Gazetteer Vol IV by H R Nevill, I C S, Page No 96 and 97

'Gujar families The chief Gujars in this district are those of Parichhatgarh, who sprang into prominence during the troublous times at the end of the 18th century The founder of the family was one Rao Jit Singh who was a notorious leader of banditti He held command of all the ghats leading into Rohilkhand and reduced the art of levying blackmail to a science Although his depredations were well known to the court of Delhi, no notice was taken of his conduct until he happened to kill a follower of one Partab Singh, a subahdar of the Deccan, who was a favourite of the mother of Ahmad Shah Partab Singh marched with a force to chastise the Gujars, but was defeated and slain Kumar Ali, the Kotwal of Delhi, next tried his hands against Jit Singh but suffered the same fate, as did several others Accordingly the Emperor summoned Jit Singh and other Gujar leaders to Delhi, and gave them authority over the country that they held on condition that they should prevent others from thieving Thus Dargahi Singh obtained Dadri and the neighbouring lands, Mangni Ram, the Jat leader of Kuchesar, received Sivana, Puth and Farida, and Jit Singh obtained possession of the eastern parganas of this district He died without leaving any male issue and was succeeded by his nephew, Nain Singh, to whom Perron, the Maharatta Governor of Aligarh gave over 300 villages in jagir, on the occupation of Meerut by the British, Nain Singh was permitted to hold his estate on the terms granted him by the Mahrattas, and subsequently this concession was made to him for his life * Nain Singh first esta

*Board's records, October 1st, 1804 and September 13th, 1805

blished himself at Panchhat Garh, and subsequently at Bahsuna He gave much trouble to the authorities by harbouring offenders and engaging in a smuggling trade in salt.

Nain Singh died in 1818 and was succeeded by his son, Natha Singh The latter made no claims to his father's muqararri, but sued for the proprietary right in 183 villages under a zamindari farman by right of inheritance, and for similar rights in 35 1/2 villages by virtue of a lease at a fixed revenue in his own name The validity of these sanads was acknowledged by Government,* as well as of certain decrees founded upon them Unfortunately, at the time the decrees were given, the distinction between the different interests which attach to land, its produce and rent, was imperfectly understood, and under the general term zamindari proprietors of very different kinds were comprehended The Government ruled that the sanads produced by Natha Singh could not be held 'to vest the grantees with more than hereditary right of collection and management with the perquisites ordinarily attaching to such malguzars, to which was subsequently added the advantages of a fixed contract There seems not to be the slightest ground for supposing that it was in any degree intended to interfere with the rights which might be enjoyed by cultivators and malguzars whom the grantee is enjoined to favour and protect The sanads were granted in the disturbed reign of Ahmad Shah and the tenure of the Raja would seem to have originated a short time before the deposition and death of that monarch and it would have been peculiarly improper to allow any latitude of interpretation and the character of Natha Singh appeared unfortunately to be such as to afford a strong ground of objection to his being admitted to engagements for the Government revenue The objection prevailed, of course with peculiar force in regard to mahals subject to a full assessment" It was therefore resolved that, with the exception of the 35 1/2 villages which

*August 28th, 1833, 13 M T

(६३)

औरंगजेब के दक्षिण जाने के बाद उत्तरीय भारत पर से उसका अधिकार हट गया और उत्तरीय भारत में उनका शासन प्रबन्ध ढीला पड़ गया। मराठा संगठन के कारण दक्षिण ही मुगल साम्राज्य के पतन का कारण बना। अन्तिम समय (सन् १७०७ ई०) में इसने स्वयं अपने पुत्र आजम को लिखा कि "मैंने देश और जनता के लिये कुछ नहीं किया, भविष्य में कुछ आशा नहीं—मैं अकेला आया और अकेला जा रहा हूँ"। इसका पुत्र बहादुरशाह प्रथम (मोअज्जम) १७१२ ई० में मर गया और मुगल साम्राज्य की गिरती दशा रोकने में असफल रहा। जहांदारशाह बिल्कुल

Natha Singh had been allowed to hold under a lease at a fixed revenue, he should be excluded from the management of the *villages held by his father in muqarrari but should have an* allowance of five percent, on their revenue as a nankar allowance.

Natha Singh died on 10th August, 1833, and the villages held by him *escheated to Government.* *Through some misapprehension* of the terms of the grant a payment amounting to Rs 9000 a year, continued to be made by Government to Natha Singh's widow on account of these villages and five percent allowance till Sir H. M. Elliot took up the settlement of the district in 1836. He, with much show of reason pointed out the absence of any authority or cause for this payment, and showed that the documents relied upon by Natha Singh in support of his claims, though accepted by the civil courts were Impudent forgeries." The muqarrari at the conquest comprised 274 villages, held at a fixed revenue of R. 50,000/, which on their lapse were assessed at Rs 1,87,068 for 1226 to 1230 Fasli (1818-23). In 1836 there were 136 of these villages with acknowledged proprietors, of which 20 were held by relatives of Nain Singh. In the remainder the claim to the proprietary right was disputed. Natha Singh left one daughter 'Lad Kunwar' who married Khushal Singh of the Landaura family, and thus the Meerut and Saharanpur families became amalgamated.

निकम्मा और अयोग्य बादशाह था, जो सैयद भाईयों की मदद से (सन् १७१३ ई०) में मार डाला गया और फर्रुखसियर गद्दी पर बैठा। इन दिनों देहली में सैयदों की तूती बोल रही थी और अब्दुल्ला प्रधान मन्त्री तथा उसका भाई हुसैनअली प्रधान सेनापति बना। ई० सन् १७१६ में विरोध के कारण सैयद भाईयों ने निकम्मा अयोग्य करार देकर इसे भी मार डाला।

१८वीं शताब्दि के प्रारम्भ में समस्त उत्तरीय भारत—देहली के चारों ओर अराजकता पैदा होगई। देश उजड़ गया। खेती-बाड़ी, व्यापार चौपट होगया, मुगल साम्राज्य की सैनिक शक्ति का ह्रास हो गया और स्वतन्त्रता के जन्म देने वाले तथा उसकी वृद्धि करने वाले आर्य-हिन्दू धर्माभिमानी गणतन्त्र-स्वतन्त्र समाज एक ही रक्तवंश पर आश्रित एक ही जाति वाले जाट, गुर्जर, राजपूत देहली के चारों ओर हिन्दू राज्य स्थापित करने के लिये जातिय संगठन द्वारा सामूहिक रूप से तैयार हो गये। शिवाजी और मरहठा संघ ने इस भावना को और भी प्रबल कर दिया। साम्राज्य-वाद ने जिन जातियों को भूत कालीन गौरव समाप्त कर दिया था और जो लोग अपने पूर्वजों की सभी परम्पराओं को भूल रहे थे, वे राष्ट्र संगठन सम्बन्धी स्वतन्त्रता के लिये छटपटाने लगे। संघ वाली शासनप्रणाली—पंचायत राज विकसित और परिवर्धित होने लगी। बराबरी का अधिकार रखने वाली जातियों ने जिनका राष्ट्रीय महत्त्व बढ़ा चढ़ा था, एक-एक शक्ति को अपना नेता मानकर, प्रजा को अत्याचारों से मुक्त करने की ठान ली। मुगल साम्राज्य के ह्रास काल से पूर्व ही गुर्जर संगठित और शक्ति सम्पन्न होकर देहली के चारों ओर राजनीतिक शक्ति अपनी सुसंगठित-पूर्व आयोजना के रूप में—हो चुके थे। गणतन्त्र संगठन के आधार पर समान रक्तवंश पर आश्रित कुलों (खांप) के रूप में गावों की सामूहिक इकाई ठोस जत्थेबन्दी बनकर स्वतन्त्र होने की प्रतीक्षा में अन्दर ही अन्दर सगठित होती रही। सकट के समय परिस्थितिवश राजपूत, जाटों एवं अन्य इसी प्रकार की जातियों के साथ इनका संगठन व्यापक, प्रभावशाली हो गया। प्रत्येक खांप—कुल का एक ही नेता माना जाने लगा और सामूहिक एवं जातिगत पचायतों द्वारा जातियों का ढांचा इस

घाल में अपनी सुरक्षा और याद में स्वतन्त्र सत्ता स्थापित करने के लिये नवीन रूप से नये नियमों में आबद्ध हो गया। नागडी और भाटी, कपासिया, बिधुडी केन्द्र की सत्ता पर लगातार प्रहार कर मुगल साम्राज्य की जड़ में ही अपनी स्वाधीन सत्ता की घोषणा कर चुके थे। देहली में ग्यारी बैसोया, बामटे, डेढे (सौलंकी), बिधुड़ी (चौहान) नागर, रमाने बैसले, भडाने, भोमले और खटाने प्रगतिशील हो उठे। पानीपत के छौंकर (यादव) और रावल गूजर, जो पंजाब की शक्तिशाली खोखर (जिन्होंने धमियक स्थान पर सुल्तान मौहम्मद गौरी का वध किया था) क्षत्रिय शाखा से सम्बन्धित हैं, अपने इलाके के स्वामी थे।[१८६]

कैराना झिन्झाना के इलाके में कलसियान ८४ गावों में, गंगोह लखनौती के इलाके में बटार (भट्टारक), नानौता, नीतरौ के इलाके में छौंकर तथा सरसावा के आसपास राठी अपनी सामूहिक शक्ति ठोस जत्थेबन्दी के रूप में गावों के स्वामी थे। नगाधरा से लेकर सहारनपुर जिले के थोडे से हिस्से को छोड कर तमाम इलाके पर खूबड गुर्जर वंश का स्वामित्व था, जो अपने महत्त्व के कारण सवा लाख गावों के स्वामी कहाये जाने से सवालाखा खडानू के नाम से प्रसिद्ध थे। जन जाच की गई तो १६वीं शताब्दि में भी करीब-करीब ३००० गावों पर उनका स्वामित्व था। गॉवों की कृषि सुरक्षा, शान्ति व्यवस्था इन्हीं के हाथ में थी।[१८७] अंग्रेजो के भारत में आगमन काल में भी लन्ढौरा अपना पहला विस्तृत राज्य विस्तार कम होने पर भी जिले और डिवीजन में सबसे बडा राज्य था। यद्यपि इतिहास द्वारा कोई निश्चित प्रमाण इस राज्य के प्रारम्भिक समय का पता नहीं मिलता, किन्तु यह निश्चित है कि अत्यन्त प्राचीन काल से खूबड गौत्र के गूजर सरदारों का प्रभुत्व इस इलाक पर है।[१८८]

मुगलों से पूर्व खिलजी वंश के शासनकाल (१२६०–१३३०) में

---

१८६ मैमोरस् हिस्ट्री फोकलार एंड डिस्ट्रीब्यूशन आफ रेसज (सर हेनरी इलियट के० सी० बी०) पृष्ठ ६६

१८७ वही पृष्ठ १००

१८८ सहारनपुर गजटियर पृष्ठ ११७

ही गुजर मालवे की ओर से सामूहिक निष्क्रमण कर चुके थे। लंढौरा राज वंश का सम्बन्ध शक्तिशाली गुजरात (सहारनपुर) के स्वामी खूबड़ गुर्जर-वंश से है, जो पँवार वंश के जगदेव पंवार के वंशज हैं। समय के अनेक उलट फेर घटनाओं की आन्धियों में कहीं से कहीं वंश तथा जाति पहुँच जाती हैं। सन् १३०५ ई० में जब अल्लाउद्दीन खिलजी के सेना नायक ऐनुलमुल्क ने आक्रमण करके माण्डु, उज्जैन धारा आदि नगरों को विध्वंस कर दिया, तो वहां परमारों की इतिश्री हो गई।[१८९] वहां से हटकर गुर्जर पंवारों की श्रेणी दक्षिण की ओर खानदेश (बम्बई प्रान्त) में पहुंची, जहां वे आज भी प्रतिष्ठित रूप से बसे हुए हैं। इन्हीं के एक सरदार को शाहजहां के समय (१६२८-१६५८ ई०) चौपड़ा की देशमुखी प्राप्त हुई, जो उनके पास आज तक है। यह काश्यप ऋषि की शाखा के पंवार हैं।[१९०] इन्हीं की दूसरी शाखा धारा से रनिया-सिरसा, कसूर होती हुई फिरोजपुर पहुँची।[१९१] इनकी भी ऋषि-शाखा काश्यप है। कलानौर आये हुए पमारों की तीसरी शाखा गुर्जर पंवारों की सहारनपुर इलाके में करनाल होकर आई। यह बड़े महत्वाकांक्षी, आत्माभिमानी ऊंचे रहन-सहन व शान-शौकत के गूजर थे और हर समय दम्भ-दर्प तथा राज्य प्रतिष्ठा राजवंश के अहंकार में चूर रहते थे। बड़ी-बड़ी दाढ़ी रखते थे और शाही तरीके से रहते थे। शान्ति और युद्ध के निर्णायक थे। इन्हीं के कारण यह प्रदेश गुजरात कहलाता था। इनका दूसरे गूजरों से अधिक महत्वपूर्ण संख्या, मानप्रतिष्ठा तथा बजाय उत्कर्ष होने से इन्हें 'बड़ान' का पद प्राप्त हुआ और पंवार के राज्य खूबड़ गुर्जर कहलाने लगे।[१९२] इनका भी ऋषि गोत्र काश्यप है।

लंढौरा राज्य-भारतीय मध्यकालीन गुर्जर राज्य एवं साम्राज्य की एक उत्तरीय भारत में स्पष्ट निशानी है, जो गुर्जर राजवंश के अमिट गौरव को प्रकट करता है

१८९ आदि भारत (काश्यप) पृष्ठ ५३

१९० खानदेश गजेटियर पृष्ठ ६८

१९१ पंजाब कास्टस पृष्ठ १६३

१९२ इलियट ग्लौसरी पृष्ठ १००

ई० सन १५४० में इनका दोआबे में अधिकार होगया, लेकिन शेरशाह और उसके बाद मुगल साम्राज्य के कारण उनके वैभव काल में यह अपनी सामूहिक स्वतन्त्र सत्ता स्थापित करने में असमर्थ रहे। अनेक बार इनके खिलाफ सामूहिक साम्राज्य सम्बन्धी सन्धियां की गई, किन्तु शाहजहां के अन्तिम काल में यह प्रसन्न हो उठे और औरङ्गजेब ने ५१६ गांव तथा कुछ छोटे मौजों पर जंगली प्रदेश पर इनका स्वामित्व स्वीकार किया। झबरेड़ा और बाद में लन्ढौरा इनकी राजधानी रहा। पवित्र कनखल, मायापुर-ज्वालापुर इनके अधिकार में था और लन्ढौरा तक का जंगल सुरक्षित रहा। धार्मिक प्रवृत्ति और तैमूर के आक्रमणों से हरिद्वार के युद्ध में, इस वंश के वीर जोगराज सिंह प्रधान सेनापति की वीरता के कारण, इन्हें हरिद्वारी राजा की उपाधि प्राप्त थी। वहाँ पर इस वंश के विख्यात पुरुषों ने अनेक मन्दिर, धर्मशाला छतरी एवं भवन बनाये, जो उनकी कीर्ति के रूप में आज भी सुरक्षित हैं।※ सभाचन्द नाहरसिंह इस राजवंश के मुख्य राजा थे। औरङ्गजेब और उसकी मृत्यु के बाद (१६५८-१७०७ ई०) के उलट-फेर में मरहठों, रुहेलों, सैयद तथा मुगलों की शक्ति सन्तुलन में गुर्जरों के खूबड़ वंश तथा लन्ढौरा राज्य वंश ने बहुत फायदा उठाया और पारस्परिक द्वन्द्व में गुर्जरों का वैभव उन्नति के शिखर पर रहा। इतनी राजनैतिक शक्ति का विकास किसी भी जाति ने इतने अल्प समय में नहीं किया। १७३८ ई० में मोहम्मद शाह के समय फारस के बादशाह नादिरशाह ने भारत पर आक्रमण किया। दोआब पर इसका कोई आक्रमण नहीं हुआ और मुगल साम्राज्य की शोचनीय दशा से गुर्जरों को और भी राज्य सत्ता स्थापित करने का अवसर प्राप्त हुआ। इस काल में औरंगजेब की सनद के अतिरिक्त ६०० गांवों पर इनका प्रभुत्त्व मोहम्मदशाह ने

※ दक्ष प्रजापति का विशाल मन्दिर, सती घाट जिसके कारण कनखल का खास महात्म्य है। राजघाट तथा शिव एवं कृष्ण मन्दिर, छतरी राजा रघुवीर सिंह, बाग चौक की दो आलीशान इमारत (कनखल में) कुशावर्त घाट की धर्मशाला तथा विशाल भवन हर की पैड़ी (बलरामपुर लन्ढौरा दोनों द्वारा) और उसके पास गंगा घाट पर दो आलीशान इमारत (हरिद्वार), सहारनपुर गजटियर पृष्ठ १०२

फरमान द्वारा स्वीकार किया। सन १७५४ ई० से अहमदशाह देहली की गद्दी पर बैठा। इसके समय (१७५८ ई० से १७६७ ई० तक) अहमदशाह अब्दाली के भारत पर कई आक्रमण हुए और पंजाब तथा उत्तर प्रदेश की राजनीतिक स्थिति में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए। सिक्खों का पंजाब में अभ्युत्थान हुआ। मरहठे आगे तक बढ़ आये। १७६१ ई० में पानीपत के प्रसिद्ध युद्ध क्षेत्र में मरहठे अहमदशाह अब्दाली से हार गये और उसका परिणाम यह हुआ कि उनकी साम्राज्यवादी नीति को बड़ा धक्का पहुंचा और सिक्खों को प्रोत्साहन मिला। रुहेला गवर्नर नजीबुद्दौला की ताकत बहुत बढ़ गई और उसने दोआबे के गूजरों की महत्वपूर्ण राजनीतिक स्थिति और उच्च सैनिक संगठन शक्ति अनुभव करते हुए उनसे सुलहनामे कर लिये। दादरी (बुलन्दशहर) परीक्षितगढ़ (मेरठ) का प्रभुत्व उनके इलाकों पर स्वीकार किया। १७५६ ई० में लन्ढौरा के राजा मनोहरसिंह को ५०५ बड़े गांव और ३१ माजरे दे दिये। जिस समय नजीबुद्दौला दोआबे में अपनी शक्ति बढ़ा रहा था, उस समय गूजर जाति के शक्तिशाली खूबड़ गूजरों का संगठन बहुत बढ़ा चढ़ा था। उसे ऐसी शक्तिशाली जाति के संघ की सहायता की बड़ी भारी आवश्यकता थी। मनोहरसिंह के बाद क्रमशः रानी लाडकुँवरी, राजा बुधसिंह, राजा माहरसिंह और राजा रामदयाल सिंह गद्दी पर बैठे। सन् १८०५ ई० में जिस समय सहारनपुर जिले की सत्ता ब्रिटिश गवर्नमेंट के हाथों आई, लंढौरा के राजा रामदयाल सिंह बहुत शक्ति सम्पन्न थे। उनके पास ७९४ बड़े-बड़े गावों तथा ३६ छोटे माजरों का राज्य था। ५० वर्ष के रूहेला और मरहठों के राज्यकाल में देश की राजनैतिक शक्ति के छिन्न-भिन्न होने एवं मुगल साम्राज्य की सत्ता कमजोर होने के समय गूजरों ने परिवर्तन काल का खास फायदा उठाया, जो किसी अन्य वीर जाति ने नहीं उठाया और न कोई इतना उत्कर्ष अल्प समय में प्राप्त कर सकता था। राजा रामदयाल सिंह का राज्य पद और राज्य स्थिति सुदृढ़ थी, किन्तु अंग्रेज कम्पनी की अमलदारी शक्तिशाली राज्य सत्ता को मिटाने पर तुली हुई थी और उन्होंने १,११,५७६) रुपया वार्षिक कर राज्य पर लगा दिया।

सन् १८१० ई० में भूमि सम्बन्धी अधिकारों की एक नई पद्धति जारी हुई और उसके अनुसार राजा लन्ढौरा का अधिकार ४६६ गांव, ३१ माजरों पर तथा ३५ गांव व ४ माजरों पर उसके भाई बन्दों का स्वामित्व माना गया। बाकी २६० गांव में रिकार्ड के अनुसार 'खाना खाली' दर्ज हो गया। २८ मार्च १८१३ ई० में राजा रामदयाल सिंह का स्वर्गवास हो गया। इस साल में एक नवीन नियमानुसार बन्दोबस्त (भूमि सम्बन्धी) प्रारम्भ हुआ।

उत्तर के प्रदेशों की सत्ता जब अंग्रेजों के हाथ में आई, तो देहली के आसपास गुर्जरों के हाथ में दोआबे की सम्पूर्ण सत्ता देहली तक देखकर उनकी दृष्टि चकाचौंध हो गई। उन्होंने गुर्जर जातीय मनोवृत्ति का अध्ययन किया और पूर्वकालीन जातीय परम्परा का इतिहास उनके सामने से गुजरा, तो उन्हें घोर गुर्जरों से एक खतरा दिखाई देने लगा। भाटी और नागड़ी गुर्जरों को अहमदशाह की दी गई सनदों को उन्होंने साम्राज्य के क्षीण होने के समय की बनाकर टाल दिया [१४१] और लढौरा की औरंगजेब और मोहम्मदशाह की सनदों को जाली बताकर,[१४२] शक्ति सन्तुलन और अधिकार कम करने का उपक्रम किया।

राजा रामदयाल सिंह के समय तो वे इसके प्रभुत्व को देख कर चुप रहे किन्तु बाद को अपनी 'सर्वग्राही' नीति का अवलम्बन करने लगे। इस काल के ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के बन्दोबस्त का आशय यही था कि भूमि हरण कर के शक्तिशाली जातियों को तथा उनके नेताओं को क्षीण किया जाय। एक विशेष एक्ट द्वारा फौजी अंग्रेजों को जमीन पर अधिकार (बन्दोबस्त) करने के लिये, अधिकार देकर सम्मानित जातियों के कुल, मानव, मर्यादा को क्षीण करके, उनके जातीय संघ को—जो बहुत शक्तिशाली थे—बिखेर देने का उपक्रम किया, जिससे वे पुनः विदेशी सत्ता के विरुद्ध सिर उठाने लायक न रहें और साम्राज्यवाद का फौलादी पंजा उन्हें बराबर जकड़े रहे। तकदीर के मारे लाखों परिवार इस अत्याचार के शिकार भूमिविहीन होकर दरिद्रता के शिकार

[१४१] मेरठ गजेटियर पृष्ठ ६६—६७

[१४२] सहारनपुर गजेटियर पृष्ठ १०३

धनहर निम्न श्रेणी में आ गये।[१९१] तलवार से ली गई जमीनों को कागजों और सनदों के बहाने छीन लिया गया। इस काम में जो अत्याचार बन्दोबस्त के अफसरों द्वारा हुए, वे बड़े लोमहर्षण थे।[१९९]

भारतवर्ष की परम्परा में भूमि सम्पत्ति ही मान का कारण है। बन्दोबस्त के नाम से जमीनों पर से जमींदारों के अधिकार ले लिये। लालराज की अपनी जमीनों के कागजात पेश कराने की आज्ञा हुई, कब्जा पुराना होने पर भी कागजात या तो नष्ट हो चुके थे या दीमक ने अपना घर बना लिया था। अंग्रेजों ने जमीनों की जप्ती की संहारक नीति अपना ली और छोटे बड़े सब इसके शिकार हो गये।

सहारनपुर में चेम्बरलेन ने बन्दोबस्त शुरू किया। ८७७ गांव ३६ माजरों पर राज्य लंढौरा का स्वामित्व था। ४६९ गांव और तमाम छोटे माजरों की औरंगजेब व मोहम्मदशाह की सनदें जाली करार दी गई और सिर्फ नजीबुद्दौला के दिये हुए गांवों की सनद सही मानी गई। बन्दोबस्त की ताकत को कोई न रोक सका। इस परिवर्तन से गुर्जरों के चित्त अशान्त होने लगे और अन्दर ही अन्दर विद्रोह की अग्नि सुलगने लगी।

यद्यपि यह निश्चित था कि लंढौरा राज्य का प्राचीन समय से सहारनपुर के बहुत बड़े भूभाग पर अधिकार था। लार्ड विलियम बेन्टिंक के समय में, जो बन्दोबस्त काम में लाया गया, उसका आन्तरिक उद्देश्य ब्रिटिश सत्ता का प्रभुत्व, मान-मर्यादा जन साधारण की नजरों से घटा देना था, जिसके लिये प्रत्यक्ष में बड़े सुन्दर शब्दों में घोषणा हुई कि-"दरिद्र और असहाय किसान तथा धनी ताल्लुकेदार दोनों के अधिकारों के निरूपण उनकी रक्षा सरकार करेगी।[२००] यद्यपि इस राजनीति से बढ

[१९१] के—सिपाई वार-भाग १ पृष्ठ १७७

[१९९] लाडलो थोट्स ओन पोलसी ५ पृष्ठ २७२

[२००] Lettor of Mr. John Throutous, secretary to Govt. N. W. P. to Mr. H. M Eilliot, secretary to Board of Revenue April 30, 1854

पर कोई उदारनीति नहीं कही जा सकती, पर परोक्ष नीति का परिणाम बन्दोबस्त के अफसरों द्वारा बड़े भयंकर हुए और उन्होंने बढ़ी हुई आगे को उभरने वाली शक्तियों को कुचलने के लिए खास तरीके इस्तेमाल किये। न्याय के स्थान पर अन्याय हुआ। बन्दोबस्त के दिनों में माल विभाग के कर्मचारियों की पुस्तक के पृष्ठ दो कालमों में विभक्त थे—एक कालम किसानों के लिये और दूसरा जमींदार, ताल्लुकेदारों के लिये था। प्राय: जमींदार ताल्लुकेदार का कालम खाली पड़ा रहता था या उन्हें किसान के स्तम्भ में लिख डालते थे। जब आदि पुरुष आदम बाबा जमीन खोदने लगे, तब धनी कौन था? जिस दिन सबसे पहले गाव की नींव पड़ी, उस दिन जमीन किस की थी? यही न्याय की तत्कालीन आधारशिला थी, जिसका अर्थ यही था कि नवीन विदेशी शक्ति के स्थायी प्रभुत्व के लिये पहले की शक्ति सम्पन्न जातियों का अस्तित्व मिटा दिया जाय, जो इस समय तलवार के बल पर स्थापित प्राचीन सत्ता के अधिकारी थे। अनुदार भाव से राजनीति की अक्षुण्ण शक्ति पैदा होती है, यह चक्की के समान चारों ओर संहार करती है और प्रतिकूलता से पुष्ट होकर अन्त में समूल नाश कर डालती है। राज शक्ति से घटनाचक्र बचना इन्द्रजाल समझा जाता है। फल यह हुआ कि लढौरा के २६० गाव 'खाना खाली' के शिकार हुए और ५६६ गाव और तमाम माजरों की औरंगजेब और मोहम्मदशाह की सनदें जाली करार दी गई। बन्दोबस्त के अलावा बिक्री का कानून भी लढौरा की शक्ति को पैरों तले रौंद रहा था। दुर्भिक्ष-अकाल से पीड़ित होने से लगान स्थगित हो जाने पर उनकी जमीन नीलाम कर दी गई। समय पर लगान न देने के कारण नहसूमा, परीक्षितगढ़ दादरी और लढौरा घराने को सर्वस्व हीन कर दिया गया।[१८८] रार्बटसन् ने लिखा था कि—'मुझे पूरा शक है कि ताल्लुकेदारी का बन्दोबस्त, जमीन की कुर्की और नीलाम थोड़े दिनों में उच्च श्रेणी के सब चिन्हों को मिटा देंगे।'[१८९] मार्टिन गोमिन्स ने राज कर वसूल करने की

---

[१८८] सहारनपुर गजेटियर पृष्ठ ११८–११९–१२० मेरठ गजेटियर पृ० ६७ बुलन्दशहर गजेटियर पृ० १४६

प्रणाली में अनेक दोष बताये हैं और कठोरता के व्यवहार की निन्दा की है।[200] विधवाओं की जमीनें हड़पी गईं, जायदाद कई हिस्सों में बांट कर केन्द्र को शक्तिहीन निरुपाय कर दिया गया। जनसाधारण पर से नेता का विश्वास अत्याचारों द्वारा उठा दिया गया। दुर्भाग्य कभी अकेला नहीं आता राजा रामदयाल सिंह का ऐश्वर्य, प्रभुत्व तथा दबदबा उनके साथ ही समाप्त हो गया और उनके मरने के बाद माल विभाग की तोड़-फोड़ नीति तथा आपस के झगड़ों से राज्य अनेक टुकड़ों में बंट गया। राजा रामदयाल सिंह का बड़ा राजकुमार सवाई सिंह, जो उनके सामने ही एक पुत्र कुं० बदन सिंह और दूसरी विधवा रानी सदा कुंअरी को छोड़कर स्वर्ग सिधार गये। यह अंग्रेजों का कट्टर शत्रु था और अपने पिता के सामने ही अनेक साजिशें इनके विरुद्ध कीं। स्वर्गीय राजा की दूसरी रानी धन कुंअरी का पुत्र राजा खुशहाल सिंह था। इन दिनों परीक्षितगढ़ के गूजर राजा नैनसिंह ने बीच में पड़ कर इनके आपसी झगड़ों को, जो राज्याधिकार पर हो रहे थे, खत्म करा दिया। थीतकी ताल्लुका परगना देवबन्द में २३६ गांव और कुछ मजरों का था, यह राजा खुशहालसिंह और रानी धनकुंअरी को दिया गया, जिसकी मालगुजारी बन्दोबस्त के अफसरों ने १,६०,४५४ बढ़ा कर कर दी, जो बाद में १,७३,४०५ हो गई, किन्तु सात साल बाद ही दूसरे बन्दोबस्त (१८१८-१८२४ ई०) में राजा खुशहालसिंह के अधिकार रानी धनकुंअरी के प्रबन्ध में मालगुजारी बढ़ा कर दे दिये। इतना अन्याय रानी कहां बर्दाश्त कर सकती थी। उसने मालगुजारी देने से इन्कार कर दिया। रानी का इलाके पर प्रभाव था और उसने माल विभाग को सीधा लगान जमींदारों से वसूल करने का तरीका फेल कर दिया। आखिर १४½ गांव मुआफी और शेष वसूल मालगुजारी पर रानी को राजा खुशहालसिंह के अधिकार से मि० रोस ने निश्चित कर दिये। अन्त में अंग्रेज, जो करना चाहते थे, वही किया और मालकाना के सब गांवों के अधिकार ले लिये गये। सिर्फ १४½ गांव मुआफी के

---

[199] रिटर्न आन रेवेन्यू सर्वे, इन्डिया १८२३, पृ० १२५

[200] नबीन म्युटिनीज, इन अवध पृष्ठ ४३६

राना खुशहालसिंह के पास रहे। मालविभाग के स्वेच्छापूर्ण अन्याय के आगे रानी-राना किसी की नहीं सुनी गई। राना खुशहालसिंह का परीक्षितगढ के राना नत्थासिंह की राजकुमारी लाडकुँअरी से विवाह सम्बन्ध हो गया और इनकी माता (रानी धनकुँअरी) का ई० सन् १८३६ में स्वर्गवास हो गया और १८४६ ई० में रानी लाडकुँअरी का भी स्वर्गवास हो गया। इसमें पूर्व मालकाना की अपील खारिज हो गई। उनका पुत्र राना हरबलसिंह परीक्षितगढ में था और गवर्नमेंट ने मुआफी के गांव भी हड़प कर जमीदारों से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर लिया।

रानी सदाकुँअरी का राज्य का भाग झबरेडी का ताल्लुका ४६ गांवों का था, जिनमें से मालविभाग द्वारा मालगुजारी बढाने से ११ गांव वापिस कर दिये गये और २४ १६०) रुपये पर विवश होकर शेष प्रबन्ध स्वीकार कर लिया गया। बन्दोबस्त की मेहरबानी से इस भी हड़पने की अनेक चाल चली गई और १८ गांवों में (१४ पूरे अधिकार से और ४ गावों में १० प्रतिशत मालकाना) रानी का अधिकार स्वीकार हुआ।*

तीसरा ताल्लुका बलेध का २४ गाँव का था जिसका अधिकारी बदनसिंह था। उसने सिर्फ मालगुजारी की ज्यादती के कारण २० गांव अपने अधिकार में रक्खे और सन् १८१६ ई० में इनको भी ले लिया गया और सिर्फ खास बलेध गांव उसके पास रहा। उसी वंश का कुंजा भगवानपुर के इलाके में एक और ताल्लुका था, जिसके आधीन ४४ गांव थे और कूडासिंह उसका स्वामी था। १८१६ ई० में इसका उत्तराधिकारी राना विजयसिंह हुआ। विजयसिंह असाधारण महत्वाकांक्षी और ईस्ट इन्डिया कम्पनी की नाजायज हरकतों के कारण अङ्गरेजों का कट्टर शत्रु होगया। उसने अपने बुजुर्गों की तलवार-शक्ति तथा प्रजा

*झबरेडा (सहारनपुर) का राजघराना आज दिन तक भी अपनी महत्वपूर्ण उच्चस्थिति के लिये प्रसिद्ध है। वर्तमान ठिकानेदार चौ० भरतसिंह, अध्यक्ष नगरपालिका व उनके अनुज भ्राता चौ० चरतसिंह आदर्श मानव हितैषी उच्च चरित्रवान पुरुष हैं।

रंजन द्वारा प्राप्त रियासत को, जो अराजकता के समय उसके पूर्व पुरुषों ने इलाके को सुरक्षित रखकर यश के साथ प्राप्त की थी,- नष्ट होते देखा और अनुभव किया कि यह आग, जो इसके भाईयों तथा लाखों नहीं करोड़ों व्यक्तियों के अन्दर जल रही है, बिना खून के और किसी तरह नहीं बुझ सकती। उसने निश्चय कर लिया कि जब तक हमारे हाथ में तलवार रहेगी, तब तक हमारी जमीन कोई नहीं ले सकता और एक व्यापक विद्रोह की तैयारी करदी। एच० जी० वाल्टन आई० सी० एम० ने देहरादून गजेटियर में तथा एच० आर० नेविल ने सहारनपुर गजेटियर में विस्तार के साथ दर्जनों पृष्ठों में इसको भयानक विद्रोह लिख कर वर्णन किया है।[२०१]

इस विजयसिंह राजा कुंजा के विद्रोह का खास कारण अङ्गरेजों के अत्याचार—जो मालविभाग नवीन के प्रबन्ध के नाम से किये जारहे थे—खास था और अंग्रेजों को सत्ता उत्तरीय भारत से उखाड देना उनका लक्ष्य था। वे लिखते हैं कि "अक्तूबर सन् १८२२ ई० में माल विभाग के उच्च अधिकारियों को गूजरों के एक खास गिरोह के कारण बडी परेशानी और विघ्न बाधाओं का सामना करना पडा। इतना बडा व्यापक सशस्त्र क्रान्ति का सामूहिक प्रयत्न इससे पूर्व इन जिलों में कभी नहीं हुआ। इस गिरोह का सरदार कलवा गूजर था—जिसने कल्याण सिंह राजा की उपाधि धारण कर रक्खी थी और कुंजा के राजा विजय सिंह का दॉया हाथ था। गूजरों के इस जबरदस्त गिरोह का आतंक गढ़वाल, देहरादून, शिवालिक-उपत्यकाओं, बिजनौर, मुरादाबाद तथा सहारनपुर में पूरा-पूरा था और कोई भी व्यक्ति उनकी साजिशों को प्रकट करने की हिम्मत नहीं करता था। सिरमौर बटेलियन, गोरखा पलटन और पुलिस (नवीनतम अस्त्र शस्त्रों से लैस) का इन्होंने सफलता से मुकाबला किया और वे इनका कुछ भी न बिगाड सकीं और न उनकी चालों को पहिचान सकीं। इन लोगों ने रायपुर और दूसरे अनेक गावों में सीधी मालगुजारी वसूल करनी प्रारम्भ करदी। पुलिस और फौज का

[२०१] सहारनपुर गजेटियर पृष्ठ १९७, १९८ तथा देहरादून गजेटियर पृष्ठ १८४-१८५-१८६-१८७-१८८-१८९

मुकाबला करने को हजारों सशस्त्र गूजर गिरोहों म तैयार रहते थे। काले और भूरे दो गूजरों ने गूजर और रांघड़ों (राजपूत) का तलवार, भालों और अन्य हथियारों से लैस जबरदस्त गिरोह फौजी तरीके से बना लिया। इन सबका केन्द्र स्थान कुंजा (भगवानपुर) का विजयसिंह का किला था। उसने आसपास के सब बड़े बड़े जमींदारों को अपने साथ मिला लिया और कम से कम मेरठ और मुरादाबाद में उसका खास प्रभुत्व व प्रभाव स्थापित होगया। सम्भावना यह है कि दूर दूर तक के जिलों म उसका प्रभाव था। कटारपुर, भगवानपुर, रुड़की और ज्वालापुर आदि पर इनका प्रभाव था और तहसील का खजाना और करों को भी इन्होंने लूटा। देहातों से सीधी मालगुजारी वसूल करनी प्रारम्भ कर दी और ब्रिटिश गवर्नमेंट कथित ८०-९० डकैत सरदार हर समय उसके पास रहने लगे। तत्कालीन कलक्टर मैन्डियल ने इनके आक्रमणों के महत्व को समझते हुए पुलिस द्वारा जाकर किले की दीवारों में गोली चलाई और कलक्टर न वहां के ताल्लुकेदार को आदेश दिया कि फौरन इन क्रान्तिकारी गिरोह (डकैतों) को तितर बितर कर दो, जिसकी राना विजयसिंह ने कोई भी परवाह नहीं की और नय-नये आक्रमणों की तैयारी शुरू हो गई। १ अक्टोबर को २०० पुलिस गार्ड (आधुनिकतम हथियारों से लैस) की सुरक्षा में एक बहुत बड़ा खजाना ज्वालापुर से सहारनपुर जा रहा था, जहां उसका सामना भगवानपुर के उत्तर में कालाहाना पर हुआ। गूजरों के जबरदस्त आक्रमण से पुलिस गार्ड बेतरह हताश हुआ और वे खजाने को छोड़कर भाग खड़े हुए। कल्याण सिंह राना अन्य रानाओं की तरह शान से रहने लगा। अपना राज्य स्थिर करने के लिये उसने कुंजा से चारों ओर फरमान-हुक्मनामे जारी कर दिये। एक हजार आदमियों की फौज उसके पास रहने लगी। उसने हुक्म जारी कर दिया कि कैदियों को जेल से रिहा कर दो और ऐलान जारी कर दिया कि विदेशियों (अंग्रेजों) को अपने देश से बाहर निकाल दो। उसके घोषणा पत्र से सहारनपुर और आसपास म खलबली मच गई। रायवाला ने ४००) मालगुजारी उसे दे दी और भी अनेक सामूहिक ग्रामों ने उनकी सत्ता स्वीकार कर ली।

बहुत कुछ सोच विचार के बाद गवर्नमेन्ट ने गोरखा पलटन के कमान्डर को आदेश दिया कि वह मि० ग्रेन्टियर और शोरी (ज्वाय-ट मजिस्ट्रेट) के तरीके के अनुसार विद्रोहियों पर अचानक आक्रमण करें। किले के बाहर युद्ध हुआ, किन्तु उस युद्ध में कल्याणसिंह राजा मारा गया और गोरखों की हिम्मत बढ़ गई। उन्होंने किले पर घेरा डाल दिया। किले की दीवार इतनी ऊंची थी कि उन पर से गोलियों का कोई असर नहीं होता था। गोरखों ने खुरपियों से पेड़ काटे और सीढ़ी बना कर किले की दीवारों पर चढ़ गये और आक्रमण किया। दिन रात बराबर की लड़ाई हुई, गोरखा फौज और शोरी के आदमी तलवार व सगीनों से लैस थे। आखिर पहले कल्याणसिंह और बाद में राजा विजयसिंह के मारे जाने से बागी भाग खड़े हुए और इनके १५२ आदमी मारे गये, ४१ गिरफ्तार हुए। गोरखा पलटन के १६ आदमी मारे गए, ९६ जख्मी हुए। मि० शोरी को जबरदस्त जख्म आये, बागी भाग कर खेतों में छिप गये। बड़े विद्रोह का अन्त हो गया, किन्तु किले से बचे हुए भूरा और कूड़े गूजर ने बराबर अपनी कार्रवाही जारी रक्खी और जनवरी १८२५ ई० में उन्होंने फिर हिम्मत की और अंग्रेजों के खिलाफ फिर गिरोह बनाया। अपना मुख्य स्थान ऋषिकेश बना कर भरती शुरू कर दी, और हरिद्वार के आसपास बहुत विद्रोह मचाया, किन्तु कुंजा में घायल हुआ भूरा मर गया और कूड़े पुलिस से मुकाबिला करते हुए मारा गया।"[१०१]

---

[१०१] देहरादून गजेटियर (एच० जी० वाल्टन आइ० सी० एस०) पृष्ठ १८४ से १८६ तक। सहारनपुर गजेटियर ने भी इस सम्बन्ध में सक्षेप पूर्वक निम्न प्रकाश डाला है।

Saharanpur Gazetteer Vol II by H R Nevill, I C S F R G S, F S S, M R A S

Page 197–198 (Saharanpur District)

The Gujar rising —"Comparative tranquillity then ensued till 1813, when the death of Raja Ram Dayal and the resumption of his enormous estate occasioned a Gujar rising, which

विजय सिंह ने बहुत दिनों से अंग्रेजी सत्ता मिटाने की तैयारी कर रक्खी थी, जो बहुत सोच विचार कर की गई थी जिसके लिये दूसरे ज़िलों की प्रधान शक्तियों से सहायता प्राप्त करने का आयोजन था, पर गूजर नेताओं की मृत्यु से उनका यह प्रयत्न असफल रहा। भारत के भाग्य में अभी कुछ और देखना था और गूजरों को अपनी स्वतन्त्र रहन को और भारत से अरबों की तरह अंग्रेजों को निकालने की साध मन की मन में रह गई। विजय सिंह के १८२४ ई० के अन्त के इस भयानक विद्रोह में मारे जाने के बाद राज्य गांव के जमींदारों में बांट दिया गया।

---

was fortunately quelled before it became serious. The war with the Gurkhas in 1814 did not affect Saharanpur though an indirect result was the attachment of Dehradun to the District under Regulation IV of 1817, this arrangement lasting till 1825, when the Dun was assigned to Kumaun. In 1824 a somewhat dangerous distrubance was caused by two Gujars, Kalwa, a celebrated dacoit, who for years harassed the submontane tracts of Kumaun and Garhwal, and Bijai Singh, the taluqdar of Kunja near Roorkee, who was related to the late Raja Ram Dayal. Without the knowledge of the authorities they collected a large armed force at Kunja and only attracted notice when they sacked the town of Bhagwanpur and plundered a strong treasure escort bringing in money from the *Jwalapur* tahsil. Mr Grindall, then Magistrate of Saharanpur, obtained a reinforcement of Gurkha *troops belonging to the Sirmor battalion* and at once attacked the insurgents in company with Mr Shore his Joint Magistrate. A stubborn fight ensued, lasting for a whole day, and eventually the rebels were totally defeated, with a loss of nearly two hundred killed and wounded, among the former being the two leaders. It was afterwards found that the attack on Kunja had been most fortunately planned, for the rebels had devised a rising on a very large scale, *and numerous reinforcements were actually coming* to their assistance from this and other districts when the death of the leading characters made the whole conspiracy collapse."

परगने भगवानपुर में दाइली ताल्लुका ३२ गांव और २ माजरों का था, जो गुलाब सिंह के पास था, जिसका उत्तराधिकारी मोहरसिंह हुआ, जो माल विभाग के कोप का शिकार हुआ और मालगुजारी अदा न होने से जप्त हो गया। कानूनी कठोरता से एक के बाद एक ताल्लुकों का नाश होने लगा।

तलहेड़ी बुजुर्ग रानी दया कुँअरी (राजा बख्त सिंह की विधवा पत्नी) के अधिकार में था, जिसमें ७४ गॉव और ३ माजरे परगने नागल और देवबन्द में थे। जिस पर १६,६४१) मालगुजारी और बाद में घटा कर १५०००) कर दी गई। इस पर रानी ने असन्तुष्ट होकर सब चार्ज किसानों को दे दिया। १८२७ ई० में रोस ने ७ गांव का मालिकाना ५ प्रतिशत और तलहेड़ी बुजुर्ग अन्तिम समय तक रानी के पास रहने की स्वीकृति दी।

ताल्लुका जड़ौल ४५ गांव तथा १३ मौजों का था। इसके मालिक ने किसी भी प्रकार की मालगुजारी देने से इन्कार कर दिया और ताल्लुका जमींदारों में बांट दिया। ठीक इसी प्रकार की स्थिति त्रिशाल सिंह के ४२ गांव और २ मौजों की रही, जो परगना हरौरा में थे और इसी प्रकार शक्तिशाली इन ताल्लुकेदारों का खात्मा हो गया, जिनका तमाम जिले पर अधिकार था।

राजा हरवंश सिंह के अधिकार में आने के समय तक विस्तृत लण्ढौरा और परीक्षितगढ़ के गुर्जर राज्य बहुत छोटे रह गये। ई० सन् १८४० में नाबालिग उत्तराधिकारी राजकुमार रघुवीर सिंह को छोड़ कर, राजा हरवंशसिंह का स्वर्गवास हो गया। उसके पास सिर्फ जिले सहारनपुर में ३८ गांव थे, जिनकी मालगुजारी २६०००) रुपये थी। राजा को ११ गांव सिपाही विद्रोह के दिनों में मुआफी के दिये गये, जबकि राव साहिब सिंह मुंढलाना ने राजा की नाबालगी में गूजरों का राजनीति के अनुसार नेतृत्व किया।* १८६७ ई० में कोर्ट आफ वार्डस ने २ गांव

*राव साहिब सिंह अपने समय के विख्यात नेता थे। रियासत लण्ढौरा और मुण्डलाना दोनों मुख्य घरानों को कठिन संकट के समय सम्भाले

और खरीद कर राजा रघुवीर सिंह को राज्य का अधिकार दे दिया। अप्रैल में असाधारण परिस्थितियों में राजा रघुवीर सिंह का देहान्त हो गया। उसका एकलौता राज कुँअर युवराज जगत प्रकाश भी शीघ्र ही उसके बाद मर गया। राज्य का प्रबन्ध राजा रघुवीर सिंह की माता रानी कमला कुँअरी और धर्मपत्नी रानी धर्म कुँअरी ने सम्भाला। रानी कमला कुँअरी का एक रिश्तेदार कुं० दलीप सिंह (मुण्डलाना) गोद लिया

रखना उन्ही का काम था। राजनीतिक उथल पुथल में जिले सहारनपुर के गूजरो की बागडोर उनके हाथ में रही और उन्होंने समय को देखकर जाति की नाव को मझधार में से साहसपूर्वक निकाला। गावों की मुआफी और महत्वपूर्ण सम्मान उन्हें असाधारण परिस्थिति में भी प्राप्त हुआ। "The most prominent recipient was Padhan Sahib Singh, the uncle of the young Raja of Landhaura, who though a Gujar, kept the members of his clan in subjection and rendered good service in the east of the district; he obtained the title of Rao and the grant of two villeges revenue-free for life, Saharanpur District, History. (Gazetteer) Page 204.

इनके पुत्र राव मानसिंह, राव माडेसिंह अपने समय के एक असाधारण व्यक्तित्व वाले प्रभाव पूर्ण नेता थे। जिले की राजनीति को उन्होंने गूजरों के हाथो में पूर्णतया सुरक्षित रखा। राव माडेसिंह के सुपुत्र प्रधान महाराज सिंह के सम्बन्ध में इतना ही लिखना पर्याप्त है कि उन्होंने ही उत्तर पश्चिम भारत में जाति को सबल दिया और अपनी सम्पूर्ण शक्ति द्वारा जातिय उत्थान के लिये अनवरत प्रयत्न किया। शिक्षा, समाज सुधार, राजनीति एवं सैनिक योग्यता में जाति को ऊंचे स्थान पर प्रतिष्ठित करना उनका ही काम था। वर्ष १८५७ ई० के विद्रोह के बाद अंग्रेजो ने गूजरो को कुचलने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी थी। राष्ट्रीय जागृति के लिए उन्होंने जिले सहारनपुर में क्षेत्र तैयार किया, जिसमें उनके सुपुत्र

गया ○ लेकिन यह राजवंश के गोत्र-कुल का नहीं था। सूड़-गुर्जर राजवंश के व्यक्तियों के ऐतराज पर मोहनामा खारिज करा दिया गया और क्षति पूर्ति के रूप में एक भारी रकम उसे दे दी गई। ई० सन् १८७४ में न्यायविभाग में एक व्यक्ति ने अपने को राजा रघुवीर सिंह होने का दावा किया और अदालत को बताया कि, किस प्रकार आन्धी व वर्षा आने से उसका सन्दूक में बन्द 'विष दिया शरीर' गंगा में प्रवाहित कर दिया गया और उसे मल्लाहों की सहायता से साधुओं ने निकाल लिया और खाली चिता में ही उस समय आग लगाई गई, वह नहीं जला और जल के असर तथा दवाईयों से होश में आ गया, किन्तु स्वयं रानी धर्म कुंअरी तथा अन्य साक्षियों के आधार पर उसे अदालत ने फर्जी करार दे दिया और दोषी होने के कारण कैद में डाल दिया गया।×

प्रधान भोपाल सिंह ने और उनके दूधले के रिश्तेदारों ने तथा रणदेवे के गुरू ने महत्वपूर्ण योग देकर भारतीय स्वतन्त्रता के लिये अंग्रेजों से कई बार मोर्चा लिया। प्रधान प्रताप सिंह, प्रधान जगपाल सिंह इसी विख्यात महापुरुष के उत्तराधिकारी हैं।

○राजकुंअर दलीपसिंह के वंश में मुण्डलाने में अनेक विख्यात धनी मानी प्रतिष्ठित सरदार हैं; जिनमें प्रधान कबूल सिंह, प्रधान जयपालसिंह बी० एससी०, एलएल० बी० जिला कृषि नियोजन अधिकारी मुजफ्फर नगर अपने धार्मिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय विचारों के लिये तथा सम्पन्नता के लिये प्रसिद्ध हैं।

×राजा रघुवीर सिंह लन्ढौरा के सम्बन्ध में अनेक रागीत, होली, ग्राम्य गीत, कथोपकथन इस प्रकार के प्रसिद्ध किये गये जिससे राजाको मौसी द्वारा जहर दिलवाना और इसी प्रकार की अनर्गल बातें प्रचलित हुईं, जिनका वास्तविक इतिहास से कोई सम्बन्ध नहीं। वास्तव में राजा के कोई भी मौसी नहीं थी। रानी कमला कुंअरी स्वयं उनकी माता थी, जो मुण्डलाने के प्रसिद्ध दाव (चौहान) परिवार की थी और यह वंश महत्वपूर्ण स्थिति का था। इसी प्रकार राजा रघुवीर सिंह की विदुषी धर्मपत्नी

इसके बाद १३ जनवरी १८६६ ई० को जन्धेडा समसपुर के चौ० रामनिवास सिंह के सुपुत्र श्री जगजन्न सिंह (जन्म संवत् १६३६ चैत शुदि ३ सोमवार) को गोद लिया गया। जिसे बाद मे विरोध होने पर भी हाई कोर्ट तथा प्रीवी कौन्सिल द्वारा स्वीकार किया गया। १६०६ ई० मे ४६ गाव और ४७ गावों में जिले सहारनपुर में लंढौरा की जमींदारी रह गई, जो २६,५३५ एकड़ थी, जिसकी मालगुजारी ३७,७०६ रुपया रही। इसके अतिरिक्त राज्य की जमींदारी ४७,१७०) रुपये की मालगुजारी की जायदाद जिले मेरठ में, १०,८७३) रुपये की जिले बिजनौर में ७,६४५) रुपये की जिले मुजफ्फरनगर मे और ७,०६०) रुपये की जिले सहारनपुर में रही,[२०१] जो अब जमींदारी उन्मूलन के बाद बहुत सीमित रह गई है।

रानी धम कुंअरी मेरठ जिले के उत्कृष्ट घरान पीरनगर के प्रधान नारायण सिंह प्रधान, खड्क सिंह की सहोदरा बहिन थी। प्रधान जयकरण सिंह, प्रधान पीतम सिंह बी० ए० एलएल० बी० ख्यातनामा प्रतिष्ठित पीर नगर के घरान के पुरुष हैं सदा से ही यह सार्वई घराना अपने रहन सहन एव उच्चस्थिति के लिये प्रसिद्ध है। दिवगत आत्माओ के लिए जो लढौरा गुजराना—पीरनगर जैसे एतिहासिक परिवारो से सम्बन्धित थी, ऐसी निर्मूल कल्पना निस्सार एव प्रमाण रहित है।

[२०१] Saharanpur Gazetter Vol II by H R Nevill I C S F R G S, F S S, M R A S

Page 117—122 LANDHAURA —

' Though now comprising but a fraction of its former area the Landhaura estate is still the largest in the district Of its *origin no certain information has been preserved* but it seems probable that for a long period there existed a Gujar principality in the western parganas, headed by chieftains of the Khubar Got At all events it appears that the first of these to obtain recognition from the ruling authority was Chaudhri Manohar Singh, who in 1759 obtained a grant of 505 villages and 31 hamlets at a fixed revenue from the Rohilla governor Najib ud

राजा बलवन्तसिंह एक जातिय भावना से ओतप्रोत परोपकारी व्यक्ति रहे। आप ने गूजरों को सेना सम्बन्धी योग्यता प्राप्त कराने का काफी प्रचार किया। आप आनरेरी लेफ्टिनेंट भी थे। सहारनपुर जिला बोर्ड के आप वर्षों अध्यक्ष रहे और प्रान्तीय लेजिस्लेटिव असेम्बली के मेम्बर भी रहे। आपकी बड़ी रानी श्रीमती राम कुंअरी देवी से राजकुमारी (अब हर हायनेस महारानी) कृष्णा कुमारी का जन्म हुआ, जिनका विवाह सुप्रसिद्ध समथर के हिज़ हायनेस महाराजा राधाचरणसिंह जी देवबहादुर से ९ फर्वरी १९३३ ई० में हुआ। श्रीमती रानी सरस्वती देवी (दूसरी) से ६ फर्वरी सन् १९२३ ई० को राजकुमार कृष्णकुमारसिंह का व ४ अप्रैल १९३५ ई० को राजकुमार नरेन्द्र सिंह का जन्म हुआ, जो शिक्षित, योग्य एवं प्राणिमात्र के हितैषी तथा सात्विक प्रवृत्ति के युवक हैं। लंढौरा के विशाल राज की सम्पत्ति के स्वामी राजा बलवन्त सिंह एक वीतराग सन्यासी थे। उदारता, क्षमाशीलता उनके अलौकिक दैवी गुण थे। ७४ वर्ष की अवस्था में १६ नवम्बर १९५८ ई० को ६ बज कर ४५ मिनट पर उनका स्वर्गवास हो गया। अन्तिम समय से पूर्व उन्होंने दस हजार रुपये रामपुर गूजर कालिज को दिये। गूजर क्षत्रिय महासभा के भी आप वर्षों प्रधान रहे।

---

daula This grant was obviously in confirmation of existing conditions rather than any bestowal of a new property. Najib ud daula was at that time endeavouring to consolidate his acquisitions in the Doab and was glad to purchase the assistance of such a powerful ally as the head of the leading subdivision of the Gujar clan. Manohar Singh was succeeded by Lal Kunwar, after whom came Budh Singh, Mohar Singh and then Ramdayal who was found in possession of 794 villages and 36 hamlets when the district came into the possession of the British in 1803. The remarkable growth the estate during the preceeding fifty years illustrates the power of the Gujars, who in all places seemed to have derived more benefit than any other caste from the disturbed state of the country under the domination of the Rohillas and

Marathas The Raja, as he was invariably styled, then paid a fixed annual revenue of Rs 1,11,597 which was confirmed to him for life. This tenure was called muqarrari, and a statement of the property prepared in 1810 showed that the Raja was actually proprietor of 496 villages and 31 hamlets, 35 villages and five hamlets were held by other members of the family, while in the remaining 260 villages there was no recorded proprietor, these estates being designated as khanakhali Ram dayal died on the 28th of March 1813, and the revenue of that year was collected direct from the cultivators A regular settlement was then undertaken by Mr Chamberlain, who found that the estate comprised 827 villages and 36 hamlets, the Raja's heirs claiming to be proprietors in 596 villages and all the hamlets on the strength of two farmans alleged to have been granted by Aurangzeb and Muhammad Shah Mr Chamberlain found that these documents were forgeries, but that the Raja and his predecessors were rightfully in possession of the villages granted by Najib ud daula Consequently engagements were concluded with the Raja's heirs for these villages on the ground of occupancy, since Ramdayal had always exerted himself in support of the British Government, but where the Raja's heirs had acknowledged the proprietary right to be vested in others the settlement was made after enquiry with the respective zamindars In many cases also, though the villages were included in Najib-ud-daula's grant there appeared claimants who were acknowledged to be the possessors of the proprietary right but still their position was ignored for the time being, on the plea that the Raja had asserted his claim to the title in all these villages by the list furnished in 1810, and that he had carried on the management of them for a very long period It was, moreover, considered expedient that the claims in the entire estate should be investigated and decided at one and the same time

The estate did not then form a single property, but

included five small taluqas which the Raja had made over to certain of his relatives and this distribution was maintained The eldest son of Ramdayal was Siwai Singh, who had predeceased his father, leaving a widow, Rani Sada Kunwar, and a son, Badan Singh, by another wife The second son of the late Raja was Khushhal Singh, whose mother was Rani Dhan Kunwar Disputes arose between these members of the family regarding the disposition of the remaining villages, and these were finally settled by the intervention as arbitrator of Nain Singh, the Gujar chieftain of Parichhatgarh in Meerut who assigned the Thitki taluqa to Khushhal Singh while the remainder was divided into two taluqas and given to Rani Sada Kunwar and Badan Singh respectively The Thitki estate called after a village in pargana Deoband, consisted of 239 villages and some hamlets, and this was settled with Rani Dhan Kunwar at a revenue of Rs 1 90 475, with a progressive increase for the remaining year of the settlement This was considered excessive and in 1817 the progressive increase was relinquished and the initial assessment reduced by one-eleventh making the total demand of Rs 1,73405 The next settlement was made for seven years from 1818 to 1824 inclusive and was accepted by the Rani on behalf of her son at the revenue of 1817-18, the last year of the previous settlement Subsequently she refused to abide by the agreement, and the Collector was directed to form a village settlement, but scarcely had this been done when the Rani again applied to be admitted The estate was inspected by Mr Ross then senior member of the Board of Revenue, who found that the Rani had been using her influence to bring about a decrease of cultivation and consequently a reduced demand, and that while she had by her own act resigned the right to engage it was in every way desirable that the settlement should be made with the village zamindars who continued to press their claims to the proprietary right but that as the title of Khushhal Singh had not yet been disproved he should be allowed

to retain the 15 1/2 revenue-free villages belonging to the estate and a malikana of five percent, on the collections in the remainder. These proposals were sanctioned on the understanding that the grant of the malikana conferred no prescriptive right, and the allowance ceased at his death in 1829. In the meantime it was decided that the proprietary right belonged to the village zamindars, and after the death of her son Rani Dhan Kunwar retained only the revenue-free villages. Khushhal Singh had married Lad Kunwar, the daughter of Natha Singh of Parichhatgarh, and thus had acquired all the latter property. Rani Lad Kunwar succeeded in the management on the death of Rani Dhan Kunwar in 1836, and petitioned for the restoration of the malikana allowance, though without success. She died in 1849, leaving Parichhatgarh to Harbans Singh while the revenue-free villages in this district were resumed and settlement made with the villages zamindars.

The share obtained by Rani Sada Kunwar was known as the Jabarheri taluqa and consisted of 49 villages. She refused to engage for eleven of these, but accepted the remainder at an assessment which ultimately amounted to Rs. 24 162, a small reduction having been made on the analogy of the procedure adopted in the case of Jhinjhana. In 1822 she was permitted to retain the estate on the recommendation of Mr Ross, as the management had been satisfactory and the village communities were contented, but at the same time it was ordered that a detailed settlement should be made under regulation VII of 1822. This was completed by Mr Turner and took effect from 1833, but as the Rani was now incapable of managing the estate an agreement was made whereby Rani Dhan Kunwar was to be jointly responsible for the revenue, and to take half the net profits as consideration for the trouble of management. This peculiar arrangement was maintained after the death of Dhan Kunwar, but as yet the settlement proceedings were imperfect as the Rani's title had not yet been investigated, nor

even had the rents been recorded Accordingly Mr Thornton was directed to review the settlement in 1936, with the result that engagements were taken from the village communities, except in 18 villages, 14 of which were settled with the Rani in full proprietary right, while in the remaining four she was granted a malikana of ten per cent

The third taluqa forming the share of Badan Singh, was known as Baledh, and consisted of 24 villages Badan Singh accepted the assessments for 20 of these, but subsequently he failed to fulfil his engagements, and in 1819 the taluqa was settled with the village proprietors, the sole exception being Baledh itself, where he resided

The history of the other five taluqas held by collateral branches of the family was very similar Kunja in pargana Bhagwanpur comprised 44 villages and was settled with Kora Singh and in 1819 with his son, Bijai Singh The latter created a serious disturbance in 1824, for which reference must be made to the district history he was killed in an attack on Kunja, and his estate made over to the village proprietors The Dadli taluqa, also in Bhagwanpur, consisted of 32 villages and two hamlets, which was settled with Gulab Singh, whose son, Mohar Singh, engaged in 1819 but afterwards failed to pay his revenue, with the result that a village settlement was effected in the following year Falheri was held by Ram Daya Kunwar, the widow of Bakht Singh, and comprised 24 villages and three hamlets in parganas Nagal and Deoband, for which she engaged at a progressive revenue amounting in 1819 to Rs 16,941, though this was reduced in the following year to Rs 15 000 She then made over the managements to a farmer, whose extortions caused such complaints that in 1822 Mr Ross cancelled the engagements and admitted the village proprietors to settlement except in Falheri itself, which the Rani held till her death in addition to a malikana of five percent in seven villages The Jataul taluqa in pargana Nagal consisted of 45 villages and 13 hamle and

was held by Kura Singh but he refused to engage and the settlement was made with the zamindars A similar course was followed in the case of Chaundaheri, which comprised 42 village and two hamlets in pargana Haraura hitherto held by Basawan Singh

It will thus be seen that very little remained of the vast estates of Landhaura and Parichhatgarh when Harbans Singh came into possession He died in 1850, leaving a minor son, Raghubir Singh whose property was placed under the management of the Civil Court of Wards The whole comprised 38 villages yielding in this district a revenue of Rs 26,000 a year, but this was increased by the addition of eleven villages granted to the Raja for his good conduct during the Mutiny, and by two villages acquired by purchase The estate was released in December 1867, and in April of the following year Raghubir Singh died under somewhat suspicious circumstances, leaving a son Jagat Prakash whose death followed shortly after. The management then passed into the hands of Kamla Kunwar the mother, and Dharam Kunwar, the widow of Raghubir Singh. The latter is now in sole possession, and keeps the estate under her personal management, with the assistance of Karindas a large number of the villages being held on lease by contractors After the death of her husband she adopted one Dalip Singh a relative of Raghubir Singh's mother, but as he was not of the same Got the clansmen raised objections and the adoption was ultimately cancelled Dalip Singh receiving a grant of money as compensation In 1874 a considerble sensation was caused by the appearance of a man who claimed to be *Raghubir Singh* stating that he had been poisoned and half burned, but that he had been

जैसा कि हम पहले ही लिख चुके हैं कि देहली के चारों ओर दूर-दूर तक गूजर मुग़ल साम्राज्य के ह्रास काल में एक बार फिर शक्ति सम्पन्न हो गये। जिस प्रकार उनका प्राचीन महत्त्व उनके नाम पर बसे हुए काठियावाड़ के गुजरात प्रान्त और पंजाब के गुजरात जिले के नाम से प्रकट है। उसी प्रकार इस काल में भी अनेक प्रान्तों की प्रसिद्धि उनके नाम से हुई। १८ वीं शताब्दि में सहारनपुर का गुजरात और बुलन्दशहर मेरठ में वर्तमान समय में विभक्त भटनेर और गुजरात का महत्त्व इतिहास द्वारा प्रकट है। १८११ ई० में कर्नल टाड, जिस समय भूमि सम्बन्धी जांच (सर्वे) के लिये चम्बल की तलहटियों में पहुँचे, तो गूजरों की महत्त्वपूर्ण आबादी—स्थिति में एक जिला गूजरवार

---

rescued and had recovered from his injuries. On inquiry, however, he was proved to be an impostor and was imprisoned. Subsequently the Rani adopted one Balwant Singh, whom she afterwards repudiated, but costly and protracted litigation ensued with the result that the adoption was finally upheld by the High Court. The property in this district comprises 19 whole villages and shares in 42 others, situated in every pargana except Gangoh, with a total area of 39,535 acres and a revenue demand of Rs. 37,709. There are 14 villages and 16 shares in pargana Manglaur, six villages and five shares in Jawalapur, 17 villages in Faizabad, three villages and five shares in Deoband, three villages and two shares in Nagal, four villages in Sultanpur, one in Rampur, one village and two shares in Roorkee, six Shares in Bhagwanpur and one share in Saharanpur, Haraura, Nakur and Sarasawa. In addition the estate comprises Land paying Rs 42,122 as revenue in Meerut, Rs. 10,823 in Bijnor, Rs. 7,945 in Muzaffarnagar and Rs. 2,060 in Bulandshahr."

कहलाता था।[२००] इस गूजरघार की प्रसिद्धि, जो बाद मे ग्वालियर का एक प्रसिद्ध जिला रहा और अब मध्यभारत में जिला मुरैना, भिन्ड और धौलपुर तथा उत्तर प्रदेश के आगरे के कुछ हिस्से को अपने मे सम्मिलित कर रहा है और एक समय गूजरों का इतिहास बनाकर जाति का नाम अमर कर चुका है, गूजरो के अनेक प्रजातन्त्र और राजतन्त्र राज्य इस इलाके मे प्रसिद्ध थे। स्वतन्त्रता का मूल्य चुकाने के लिए वीर जातियो को सर्वस्व की बाजी लगानी पडती है। १८वीं शताब्दि मे गूजरों को अपने नाममात्र के सत्ताधीश राजा भरतपुर के सूरजमल जाट के अमानवीय नृशंसतापूर्ण अत्याचारों का शिकार होना पडा जो इनकी प्रजातन्त्र पद्धति को कुचलकर नये राजवंश की प्रतिष्ठा स्थापित कर रहा था। गूजरों की सामूहिक आबादियों, इनके गांवो को नष्ट करने के लिये उसने वही तरीका अपनाया, जो जनमेजय ने तक्षक वंश को मिटाने के लिये अख्तियार किया था और रात मे हमला कर के गूजरों को असावधान हालत मे अपनी हथियारो से सुसज्जित सेना द्वारा नष्ट कर दिया और जिन्दा स्त्री पुरुष बच्चों को भयानक रूप से प्रज्वलित अग्नि की खाई, खन्दकों में डाल दिया।[२०१] किन्तु भरतपुर और आगरे

---

[२००] साईक्लोपीडिया आफ इंडिया एण्ड ईस्टर्न एण्ड साउथर्न एशिया (सर जॉन जनरल एडवर्ड बलफोर) भाग १ पृष्ठ १२६१ "In 1811 Colonel *Tod's duties called him to a survey*, amidst the ravines of the Chambal, of the tract called Gujargar, a district inhabited by the *Gujar tribe*"

[२०१] वही पृष्ठ १२६१

"About the middle of the 18th century, their nominal Prince, Surajmull, the Jat chief of Bharatpur, had pursued exactly the same plan towards the population of these villages who he captured in a night attack, that Janmejai did to the Takshak, as described in Mahabharat he threw them into its with cumbustibles, and actually thus consumed them"

के आसपास उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता प्रत्येक मूल्य पर कायम रक्खी। सन् १७६३ ई० में सूरजमल मारा गया। न केवल भरतपुर किन्तु आस पास के प्रदेशों पर गूजर अपनी स्वतन्त्र प्रकृति के अनुसार पूर्णतया शक्ति सम्पन्न रहे। भरतपुर के राज्य की सत्ता उनके अधिकार में—सेना के सर्वोच्च अधिकार एवं राज्य मन्त्रिमण्डल की सर्वोच्च सत्ता—ब्रिटिश काल तक रही। स्वयं महाराजा सूरजमल के मुसाहिब आला व सेना के सर्वोच्च सलाहकार सरदार मोनीराम बैंसला (सुन्दरावली) रहे और भरतपुर में जाट गूजर का प्रश्न पैदा नहीं होने दिया। महाराजा बलवन्तसिंह के समय (१८२५) में दुर्जनशाल द्वारा भयंकर गृह कलह उपस्थित होने पर सरदार ग्यासीराम बैंसले ने नाबालिग राजा और इस राज्य की रक्षा की। सन् १८८२ ई० से सन् १९२५ ई० पूर्व तक भरतपुर रियासत की सर्वोच्च सत्ता गूजरों के हाथ में रही और उनके प्रबन्ध काल में कभी भी किसी प्रकार का कोई अप्रिय प्रसंग उपस्थित नहीं हुआ।[१०१]

---

[१०१] संक्षिप्त जीवनी सरदार रघुवीरसिंह पृ० ७, ८, ९

"इस काल में भरतपुर राज्य का प्रबन्ध राव बहादुर सरदार रघुवीर सिंह सी० आई० ई० (चतुर इन्दु शिरोमणि, ब्रजेन्द्र आर्डर) के हाथ में रहा। वे राज्य भरतपुर की राज कौंसिल के प्रधान (President of Councile) रहे। इससे पूर्व विभिन्न समय में गृह विभाग, माल विभाग, न्याय विभाग, अर्थ विभाग, सेना विभाग के मेम्बर रहे। फौज की सर्वोच्च सत्ता इन लोगों के हाथ में काफी समय तक रही। कर्नल जुगल सिंह व कर्नल बख्शी गिरधर सिंह सेना के सर्वोच्च पद पर वर्षों प्रतिष्ठित रहे। गुर्जर नेताओं ने कभी भी दोनों जातियों में द्वेष भाव नहीं फैलने दिया और राज्य प्रबन्ध एवं राज परिवार की सुरक्षा में विशेष महत्व तथा प्रतिष्ठा का रिकार्ड स्थापित किया। २८ नवम्बर १९१८ ई० म महाराजा किशन सिंह के राज्याधिकार ग्रहण करने के अवसर पर स्वयं तत्कालीन वायसराय—गवर्नर जनरल लार्ड चेम्सफोर्ड ने निम्न वक्तव्य दिया था, जो गूजर सरदार के गौरव को प्रकट करता है —

"That they have played their part well and earned the praise of generals under whom they have served, is due to the efficiency maintained

गूजरघार से प्रभावित धौलपुर और आगरा में गूजरों का व्यापक प्रभाव था। आनन्दीपुर करकौली के ताल्लुकेदार फ़तहसिंह-तेजसिंह के पास अंग्रेजों के हाथ में सत्ता आने के बाद भी २४ गाँव तहसील फिरोजाबाद, ६ गांव फतिहाबाद तथा १ गांव बाह में रहा, जो उनकी पहले की स्थिति की उच्चता और दृढ़ता को प्रकट करता है।[११७] इनकी गद्दी भी प्रसिद्ध हैं। रोहा के ठाकुर लक्ष्मनसिंह और उनके पूर्ववर्ती वहाँ शक्तिशाली घराने के स्वामी थे। इसके अतिरिक्त नौर, पिलुआ, सैयां आदि में संगठित रूप से गूजर शक्ति सम्पन्न रहे। धौलपुर के देवहंस गूजर ने तो १८५७ ई० में व्यापक रूप से आगरा जिले को आतंकित कर दिया था।[११८] गूजरघार के छावड़ी गूजर जो अपना सम्बन्ध चौहान शाखा से करते हैं, सम्राट अकबर (ई० सन् १५५६-१६०५) के समय में प्रसिद्धि प्राप्त कर गये थे। अकबर द्वारा शिकार के समय एक नौकर-साधारण पक्षी की जीवन रक्षा के लिये इनके एक

---

in time of peace for which I tender my most grateful thanks to the Member of Council in charge of the Military Department"

इसके अतिरिक्त महाराजा किशन सिंह ने भी उनके सम्बन्ध में, जो विश्वास, श्रद्धा एव अपूर्व भक्ति प्रकट की है, वह गूजर सरदार के उच्च चरित्र के अनुरूप ही है।

"He has shown himself to be not only capable and trustworthy but also loyal to the Bharatpur state and the supreme Government. I need not say any more on this point for the Rao Bahadur Sardar Raghubir Singh Sahib's services are well-known to Your Excellency and the officers of the Imperial Government."

सरदार साहिब की एकमात्र सन्तान श्रीमती गिरधर कुंवर गूजर जाति के एक प्रतिष्ठित घराने के सरदार चौ० देवीसिंह चलवा (मुजफ्फरनगर) के ज्येष्ठ पुत्र कुंवर करणसिंह को ब्याही गई।

[११७] आगरा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर पृष्ठ ६८

[११८] आगरा गजेटियर पृष्ठ १०६

सरदार ने, जो बाद में राणा शरणदेव (शारगाडेराव) के नाम से प्रसिद्ध हुवे, मुगल सम्राट के सेनापति से द्वन्द युद्ध करके बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त की थी और स्वयं सम्राट ने उनको सम्मानित किया। कदहबन के प्रसिद्ध सन्त आश्रम की सुरक्षा इन्ही लोगों के हाथ मे रही। राणा जनवेद सिंह की प्रसिद्धि मराठा शासक जियाजी राव सिन्धिया के शासन काल मे विशेष रही, जिन्होने गुर्जरो की स्वतन्त्रता तथा सत्ता के लिये सामूहिक आन्दोलन एव युद्ध किये। सिन्धिया की फौजों का वीरता से सामना उनके नेतृत्व में किया गया* जो उसके पूर्ववर्ती प्रभाव को प्रकट करता है। भरतपुर के छावडी, जो उज्जैन के आसपास हैं, स्वतन्त्रता प्रिय एव सघर्षशील रहे हैं। मराठा शासन काल में दनगस कुल के पास सिरसौर व देहली की जागीर सुरक्षित रही। उनकी सैनिक क्षमता अपूर्व रही। कसाने, तँवर, कुण, मावई, हरसाने, भडाने आदि अनेक गुर्जरों की खाप पृथक-पृथक आबादियों में स्वतन्त्र इकाई के रूप में आज तक बसी हुई हैं। उनके देहातों की सर्वोच्च सत्ता आज तक भी उनके हाथ मे सुरक्षित रही है। उनकी उत्कृष्ट शौर्य भावना, सगठन तथा स्वतन्त्र रहने की प्रवृत्ति इतिहास प्रसिद्ध है। धौलपुर के गुजर अपने वीरतायुक्त प्रशसनीय स्वभाव, स्वतन्त्र मनोवृत्ति, आदर्श सगठन, सुन्दर शारीरिक बनावट के लिये आज तक प्रसिद्ध हैं। यद्यपि वीर जातियों को प्रतिकूल परिस्थिति मे सत्ता विहीन होने के बाद, जिन परिस्थितियों मे से होकर गुजरना पडता है, उनमे गूजर पूरी तरह से से गुजरते रहे, किन्तु प्रत्येक समय कर्मण्य एव सावधान रहे। वे गुण, जो उनके शासन काल में देश मे शान्ति और व्यवस्था रखते थे, दूसरी शक्तियों के हाथ मे राजतन्त्र के रूप मे सत्ता हस्तान्तरित होने के बाद,

---

*यह अपने मौसेरे भाई के धोखे म पकड़वा लिये गये। इनके विषय म यह प्रसिद्ध है और चारण भी यही गाते हैं कि—

"माता ऐसो पूत जण जस जनवद सरीसो होय।
अठारह गूजर खलबली परी नित उठ समर चन्दी होय॥

इतिहास प्रसिद्ध राई के छावडी सरदार अब भी 'राव' कहलाते है। इटावली के सरदार 'राणा' के नाम से प्रसिद्ध है।

राजनीतिक एवं सामाजिक दुर्गुणों में परिणित हो गये।

गूजरधार की खास प्रसिद्धि शिकरवार (सूर्य वंश) गोत्र के घुरय्या गूजरों के कारण है। राजा मानसिंह तवर के समय में ही सिकन्दर लोधी के ग्वालियर पर होने वाले हमलों के समय इन्होंने अपना सैनिक संगठन छावड़ी गूजरों की भांति गूजरधार में कर लिया था और तवर धार के साथ–साथ परगना सुमहावली, जोगनी, नूराबाद, मौरेना आदि के वर्तमान इलाके की सुरक्षा व शान्तिपूर्ण राजव्यवस्था इनके हाथ में रही। औरंगजेब की मृत्यु के बाद सनदों द्वारा इस समस्त इलाके का राज्य इनको समय समय पर मुगल सम्राटों ने दिया। फरुखसियर (१७१३–१७१६ ई०) की और इनके बाद की देहली के मुगल सम्राट की सनदें इन्हें अनायास ही प्राप्त हो गई। राजा स्योपति सिंह इस काल में इनका प्रसिद्ध राजा हुआ, जिसका प्रभाव व व्यापक दबदबा मुगल तथा मरहठे समान रूप से मानते थे। इन्होंने सिन्धिया, दतिया, टेहरीशाह तथा भांसी के पेशवाओं से सीधी लडाइयां लड़ीं। महाराजा सिन्धिया की फौज के सेनापति जेम्स स्किनर का भी युद्ध इनके साथ हुआ। घुरय्या बसई इनकी राजधानी थी और राजा रामपाल सिंह (१७८४ ई०) के समय में, जब यह बुन्देलखण्ड तक प्रसिद्ध होकर राजसत्ता स्थापित करने में लगे हुये थे, इनका सीधा मुकाबिला हुआ। अपने एक पत्र में सिन्धिया की फौज के सेनापति जेम्स स्किनर ने स्वयं लिखा है कि-"मैंने १७८४ ई० में स्योंढा का किला फतह करके घुरय्या बसई (गूजरों की राजधानी) चम्बल नदी के किनारे पहुँचा। यहां का गूजर क्षत्रिय राजा रामपालसिंह बड़ा बहादुर है। उससे हमारा घोर युद्ध हुआ। मेरे भाई की–उसकी गोली लगने से मृत्यु हो गई। इस राजा को विजय करने के लिये मेरी सेना को बड़ी कठिनाई उठानी पड़ी।"[११६] परगना गोहद में पारसेन के ऐतिहासिक स्थान पर भी इस घुरय्या वंश का प्रभुत्व रहा। राजा रानाराम घुरय्या का घराना वीरतापूर्वक लड़ते हुए जिस प्रकार मारा गया, उसे सुनकर तथा देख कर आज भी

[११६] सरदार सूबा साहिब मालेराव रामचन्द्र के सग्रहीत ऐतिहासिक पत्र लेखों में जेम्स स्किनर का पत्र

सतकुईया पर तरुणों की धमनियों का वीर रक्त खौलने लगता है। अनेक बार चण्डी की पिपासा वीरों के रक्त से यहां बुझाई गई।

(१४)

वीर जातियों का कोई मुख्य स्थान नहीं होता। इतिहास के परिवर्तन काल में इसके महत्व को समझते हुये जागृत रहकर, वे जहां भी राष्ट्र एवं जनता जनार्दन की हित साधना करती हैं, वहीं उनका स्थान बन जाता है। बुन्देलखण्ड, जहां बुन्देले वीरों के वीर रक्त से भूमि का प्रत्येक कण रंजित है। वीर छत्रसाल ने, जिस पवित्र भूमि को स्वतन्त्र रखने के लिये अपने सर्वस्व की बाजी लगाकर सुरक्षित रक्खा और अपना नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित कर दिया। इतिहास के परिवर्तन काल से फायदा उठाकर इसी वीर भूमि में सूर्यवंश की शाखा खटाणा कुल के गुर्जरों ने बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत २५ अंश ३३ कला व २५ अंश ४७ कला उत्तर अक्षांश तथा ७४ अंश ४८ कला व ७६ अंश ७ कला पूर्व देशान्तर में शमशेरगढ़ (समथर) राज्य की नींव डाली। १७३३ ई० में दतिया के महाराजा रामचन्द्र की मृत्यु पर गृह कलह उपस्थित होने पर नौनेशाह गूजर (सेनापति) का महत्व बहुत बढ़ गया और महाराजा इन्द्रजीत के हाथ में दतिया की राज्यशक्ति आने पर, किला समथर व ५ गांव का राज्याधिकार मदनसिंह को मिल गया। मरहठों के हाथ में शक्ति आने पर राजा देवीसिंह ने अपने स्वतन्त्र होने की घोषणा कर दी। समथर के आसपास के सम्पूर्ण इलाके पर उनका अधिकार हो गया।[११०] अंग्रेजों के (Treaty) सन्धि पत्र (१८१७ ई०) से पूर्व राज्य का क्षेत्रफल ४५० वर्ग मील था, परन्तु सन्धि के समय १७८ वर्ग मील पर समथर के राज्याधिकारी का प्रभुत्व रहा, जिसकी आय लगभग ६ लाख रु० वार्षिक रही। समथर राज्य अंग्रेजी राज्यकाल में बुन्देलखण्ड एजेन्सी में पोलीटिकल एजेन्ट द्वारा सर्वोच्च सत्ता के आधीन गूजरों का राज्य प्रसिद्ध रहा, जिसके उत्तर में जिला जालौन, राज्य ग्वालियर, दक्षिण में दतिया राज्य,

११० इम्पीरियल गजेटियर भाग २३ नवीन संस्करण १९०८

पृ० ७६

झांसी जिला, पूर्व में जिला जालौन तथा पश्चिम में ग्वालियर राज्य रहा। पहुज और बेतवा नदी इसको शस्य श्यामल उर्वरा बनाये हुए रही। बेतवा की नहर द्वारा सिंचाई का प्रबन्ध होने से राज्य में अकाल का भय कभी नहीं रहा। राज्य में एक पर्वत है, जिसमें पीली मिट्टी निकलती है और उसके शिखर पर कपिल नाथ जी का प्रसिद्ध मन्दिर है। फाल्गुन में यहा प्रसिद्ध मेला होता है। अपने पूर्वज महाराजा रामचन्द्र जी के जन्म दिवस पर पूरे तीन दिन तक पहले समय में यहा का रामनवमी का मेला प्रसिद्ध है। शमशेर गढ का किला राज्य के प्राचीन वैभव की स्मृति है, जिसकी तुलना बुन्देलखण्ड तथा भारत के देसी राज्यों के ऐतिहासिक थोड़े ही किले कर सकते हैं। यह इचगढ के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें तीन परकोटे हैं, जिसमें मध्य में फूल बाग, रंग महल, चौखुंटे कोट की इमारतें, खास महल, शाही तोपखाना, शिवन महल, भगवान रामचन्द्र जी का मन्दिर दर्शनीय एवं प्रसिद्ध हैं। चित्रेरा सागर, ताल कठोरा, चतुर्भुज जी का मन्दिर, विजय मन्दिर तथा विजय पैलेस प्रसिद्ध हैं। राज्य की चारों तहसील शमशेरगढ, अमरगढ, लोहगढ, महाराज गंज राज्य में उत्तम व्यापारिक केन्द्र हैं और अच्छी इमारतों के लिये प्रसिद्ध हैं।

रियासत समथर के पूर्व पुरुषाओं का सम्बन्ध जैसा राज्याधिकारी वंश परम्परागत भट्ट गण तथा ऐतिहासिक विद्वान स्वीकार करते हैं, महाराजा रामचन्द्र जी के ज्येष्ठ पुत्र लव से सम्बन्धित होने से प्रसिद्ध सूर्य वंश से है। अत्यन्त प्राचीन काल में गूजरों की खटाना, बडगूजर, शिकरवार आदि सूर्यवंश की शाखायें राजशक्ति सम्पन्न रही हैं। इस वंश के पूर्व पुरुषाओं ने अपना यश, पराक्रम तथा अतुलित वैभव एवं अपना सौरभ फैला कर ऐतिहासिक गगन में अपने को अमर कर रक्खा है। रामायण, रघुवंश जैसी महान पुस्तक इस सूर्य वंश के गौरव से ओतप्रोत हैं। महान सिकन्दर तथा सुबुक्तगीन का इसी वंश के राजा कैराय तथा चन्द्रसैन ने मुकाबला किया था। एक अर्से तक इनकी राजधानी दौसा (जयपुर) तथा राजौरगढ़ (अलवर) में रही। १२वीं शताब्दि में राजौर गढ़ के पतन के बाद यह लोग तिरर

विनर होगये। इस वंश के माधवसिंह के पुत्र कमोदसिंह ने कमायू प्रदेश में रक्षा पाकर रुहेलखण्ड के नव्वाब दिलावर खां व बहादुरखां को पराजित करके दरिया खन्देशी के तट पर खटियाना नामक किला व शहर आबाद किया, जिसके खन्डहर तहसील पुवायां (शाहजहांपुर) में आज भी एक छोटे से गांव के नाम से प्रसिद्ध है। राजा खटाना की इस स्थान पर डोला मांगने के सवाल पर देहली के मुगल बादशाह शाहजहां से बड़ी जबरदस्त लड़ाई हुई, जिसमें शाही सेना के ६७ हजार आदमी काम आये और यह राजधानी नष्ट करदी गई। इसके उपरान्त इन्होंने दोआबे का मुल्क पार करते हुये सूबे कालपी, ऐंछर, माहोनी, भांडेर एवं कोंच पर अधिकार करके शमशेरगढ़ (वर्तमान समथर) को अपनी राजधानी बनाया। तत्कालीन पड़ोसी राजाओं तथा बादशाह देहली से निरन्तर लड़ते रहने से राजा प्रतापभान सिंह और शमशेरगढ़ इतिहास में प्रसिद्ध होगये। साथ ही राज्य का बहुत सा हिस्सा इसके अधिकार से निकल गया।[१११]

राजा प्रतापभान सिंह के बाद राजा दयारामसिंह ने राज्य कार्य जिस तिस प्रकार साधारण स्थिति से चलाया, किन्तु इनके उत्तराधिकारी राजा परशुरामसिंह ने रियासत को फिर बुन्देलखण्ड में अपने पुराने गौरव से विभूषित कर दिया। इनके बाद राजा नोनेशाह व राजा मदनसिंह ने राज कार्य उत्तम प्रकार से संभाला, किन्तु इनके समय में कोई उल्लेखनीय घटना नहीं हुई। राजा विष्णु सिंह बड़े प्रतापी राजा हुए, इन्होंने अपने भुजबल से मरहठा राज्य से राजा पृथ्वीसिंह से थौंढ़ा का किला जीतकर दतिया राज्य को दिलाया। राजा शम्भूजीत के समय में 'कन्नौली' स्थान पर राजा विष्णुसिंह समथर नरेश के साथ बड़ी भारी लड़ाई हुई, जिसमें लोद छिन जाने से पेरोनेवाला सामन्त जवाहर सिंह शर्म के मारे अपने आप मर गया और राजा दतिया के साले मुसाहिब हीरासिंह भी मारे गए। इन्हीं के राज्यकाल में तत्कालीन झांसी के सूबेदार रघुनाथ राव हरि और शिवनाथ राव हरि ने राजा समथर पर चढ़ाई की, किन्तु लड़ियासार के घाट पर पूर्ण रूप से परास्त हुए। राजा साहिब ने

[१११] तवारीख गुलदस्ताइ (नवलकिशोर प्रेस लखनऊ) भ० १

भागते हुये मुन्दार की पगडी भाले से खींचली।

राना विष्णुसिंह के कोई सन्तान न होने से उनके स्वर्गधाम के पश्चात् उनके छोटे भाई राजा देवीसिंह को राज्य मिला। इनके तीन राजकुमार—राना पहाडसिंह, राना विजयबहादुर सिंह और राना रणजीतसिंह हुए। राना रणजीतसिंह वीर पराक्रमशाली होने से 'धरती डगन' के नाम से प्रसिद्ध राज्याधिकारी हुए। इनके समय में भी दतिया के सरदारों ने समथर राज्य पर चढ़ाई की जिसमें उनको बुरी तरह हार खानी पडी और बहुत सी रसद व हथियार समथर राज्य के अधिकार मे आये।

परिस्थितिवश राधाकृष्ण शिरस्दार राव भाई साहिब राव दीवान ने परगना मऊ, कोंच, महोनी, दतिया को दिला दिये, जिनके बदले में दीवान को मौजा मऊ दे दिया, जो अब तक उनके पास है और दतिया रियासत के परगने ग्वालियर के राज्य मे मिल गये और रियासत समथर के परगने खिलहटी और मऊ भी, जिन दिनों मथुरा से ग्वालियर छावनी आई, महाराज दौलतराव सिन्धिया के समय में निकल गए। इसी समय में राना धर्मपाल सिंह साहिब रईस टेहरी ने किला अमरगढ़ (समथर) पर चढ़ाई की, किन्तु सुलह होगई और राना शम्भुनाथसिंह ने मौजा गिरा पर कब्जा करना चाहा, जिसको किलेदार ने मार डाला और राजा का साला भी इस लड़ाई में मारा गया, जिसकी लाश दुश्मन को न देकर वहीं पर चबूतरा बनवा दिया गया जो अब तक है।

राजा रणजीतसिंह के कोई सन्तान न होने से उनकी रानी ने पहाड़पुर वालों को राना बनाया जो दूसरे वंश के थे और केवल ११ दिन राज्य कर पाए। बाद में अमरोल के ठाकुर उदय शाह के पुत्र राजगद्दी पर बैठे, जो रणजीतसिंह द्वितीय के नाम से प्रसिद्ध हैं। इनके समय में राज्य की बड़ी भारी उन्नति हुई।

ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने जिस समय पेशवा बुन्देलखण्ड पर कब्जा किया, तो उस समय एक सन्धि पत्र समथर राज्य और ब्रिटिश गवर्नर के बीच में तत्कालीन गवर्नर साहिब बहादुर की आज्ञानुसार १० नवम्बर १८१७ ई० को लिखा गया जो निम्न प्रकार है —

अहदनामा (सन्धिपत्र) जो दरमियान राजा रणजीतसिंह बहादुर राजा समथर और ईस्ट इन्डिया कम्पनी इंगलैंड के दरमियान सम्वत् १८६६ में हुआ—"जो कि रणजीतसिंह राजा समथर ने एक पत्र वाजिबुलअर्ज का तारीख बाईस फरवरी सन् १८०५ ई० अर्थात् तीन फाल्गुन सन १२१४ फसली को वास्ते रक्षा और मदद पाने सरकार कम्पनी अंग्रेज बहादुर के मयेत, भिन्न भिन्न ६ दफाओं के, जिनको कर्नल जानबैली साहब बहादुर, एजेन्ट नव्वाब मुस्तताब मुअल्ला अलकाब अशरफुल अशराफ गवर्नर जनरल बहादुर की शरण में गुजरान कर सब दफाओं को मंजूर और कबूल किया था और जो कोई दफात की तफसील पीछे जाहिर होने पूरे होने अहदनामा दरमियान सरकार दौलतमदार कम्पनी अंग्रेज बहादुर और राजा रणजीतसिंह के, जिनका बयान नकशा के द्वारा हुआ था और उन पर उस समय अमल नहीं हुआ था और यह भी किसी समय प्रशंसित राजा को इस सरकार दौलतमदार के शरण और साया में आना होगा दरख्वास्त किया और बारम्बार कौल और केल अर्थात कौल करार करने में और काम करने में सुर्खरुई के दरजे इस सरकार की बाबत जो जो खैरख्वाही सच्चे इरादे से किये थे, अच्छे प्रकार साबित किये। इस वास्ते यह सरकार इस बात पर यकीन कर राजा साहब पूर्ण नसीहत उसी प्रकार इस सरकार दौलतमदार के नेक काम करने की लिहाज अपनी आंखों में रख कर, जो कुछ कौल-करार इस सरकार दौलतमदार से बाबत तावेदारी काम करने के हुए हैं, सच्चे दिल से उन पर आरूढ़ रहेंगे। अब उनकी आरजू और इल्तिमास कबूल की गई और अहदनामा दालो और अपनायत का दरमियान सरकार और राजा साहिब व उनके उत्तराधिकारियों के लिये भिन्न दफाओं के अनुसार अच्छे प्रकार शोभित हुआ।"

'(१) राजा रणजीतसिंह राजा समथर, सरकार अंग्रेज बहादुर के दोस्तों को दोस्त और उनके शत्रुओं को शत्रु जानेंगे, प्रतिज्ञा करते हैं कि जो रईस और सरदार इस दौलतमदार से वसीला मुहब्बत रखता है उससे किसी प्रकार की दुश्मनी व रोक टोक न रक्खेंगे। सरकार के बदख्वाह व दुश्मनों को कभी भी अपने राज्य में रहने न देंगे। उनके साथ किसी प्रकार की लिखा पढ़ी या व्यवहार न रक्खेंगे। बल्कि सरकार की मददगारी करने का उद्योग करेंगे।

(२) अहलियान सरकार दौलतमदार अंग्रेज बहादुर ने सरदार समथर की खैरख्वाही और वफादारी के बदले में, इसके जिम्मेदार होंगे कि राना रणजीतसिंह और उनके उत्तराधिकारियों को, जो मुल्क इस समय उनके आधीन है तथा बुन्देलखण्ड में अंग्रेज बहादुर के दखल होने के समय जो भूमि राना साहिब के कब्जे में है, उसको बहाल रक्खेगी। सरकार दौलतमदार यह भी करार करती है कि राज्य की भूमि की रक्षा दूसरे मुल्क के अन्य सरदारों की जबरदस्ती से भी रक्खेगी।

(३) पूर्व वर्णित दफा के अनुसार जो कि राज्य समथर की रक्षा करने का भार सरकार दौलतमदार ने अपने ऊपर दूसरे राज्यों की बाबत लिया है। इस अवस्था में दोनों तरफ से प्रतिज्ञा हुई है कि जब कभी राना समथर को इस बात का खटका हो कि दूसरे मुल्क का सरदार किसी झगड़े अथवा अन्य प्रकार से दोष लगा कर राना साहिब के मुल्क पर चढ़ाई करे और वे इस मामले की कैफियत सरकार दौलतमदार में करें तो उस वक्त अहाली सरकार अपने वर्मले के द्वारा खुद फैसला करेंगे और लिखित राजा साहिब सरकार के बन्च कारगुजार व फैसले पर, जिसको वे अच्छे प्रकार से करेंगे सुचितवृत्ति से कबूल और मंजूर करेंगे और जो गैरमुल्क का सरदार अपनी चित्तवृत्ति से इस मुल्क पर चढ़ाई का इरादा रखता हो तो अहाली इस सरकार के उसके प्रति लिखने और पढ़ने और समझाने के द्वारा उसके हटाने का उद्योग करेंगे और जो इस प्रकार से भी तरफ्सानी सरदार बावजूद कबूल करने लिखित राना फैसला सरकार अपने इरादे को न छोड़े और सरकार का उद्योग निष्फल पड़े, तो उस समय में प्रशासित सरकार के अहाली जो तदबीर राना की भलाई और रक्षा के निमित्त मुनासिब समझेंगे, करेंगे।

(४) राना समथर इस सरकार के करने की बाबत जिम्मेदारी और हिमायत अपने हाल पर समक्ष के दो दफा पूर्व लिखित के अनुसार प्रतिज्ञा करते हैं कि अपनी फौज को समेत उसके खर्चा अपनी ओर से जब जरूरत पड़े, इस सरकार व सरकार की फौज को, जिस प्रकार से समय दिशि को गुणदायी हो, शामिल करेंगे और देंगे, इस सूरत में फौज समथर के आधीन और रक्षित प्रति यमू इस फौज के होगी।

(५) अगर किसी समय राजा समथर किसी राना या रईस से, जो इस सरकार दौलतमदार से वास्ता रखता हो, नाराज हों, तो लिखित राजा प्रतिज्ञा करते हैं कि उनके निर्णय के लिये इस सरकार के अहालियों के समर्पण करेंगे और जो उस विषय में अहाली सरकार फैसला करे उसको कबूल और मंजूर करेंगे और कभी किसी प्रकार दूसरी तरफ वाले पर जबरदस्ती और अन्याय न करेंगे और अपने दावे को पाने के निमित्त या कोई जुल्म इन पर हो, उसके तदारुख के निमित्त गिला करें, तो अपनी फौज न देंगे और सरकारी अहाली की दिशि से यह प्रतिज्ञा होती है कि इस सरकार की स्वाधीन रियासत की दिशि से राना समथर पर किसी प्रकार जबरदस्ती न होने पावेगी और उनका और लिखित राजा का फैसला अच्छे प्रकार के न्याय से फैसला किया जायेगा और राना भी यह प्रतिज्ञा करते हैं कि सरकार दौलतमदार का किया हुआ फैसला उज्र मंजूर और कबूल करेंगे।

(६) राजा समथर करार करते हैं कि सदैव जो रास्ता या निकास उनके मुल्क का है, जिस मार्ग से लुटेरे लोग सरकार दौलतमदार के मुल्क के मध्य जा सकते हों, उनके रोकने का उद्योग करते रहेंगे।

(७) जिस समय सरकार दौलतमदार को जरूरत पड़े कि अपनी फौज राना समथर के मुल्क होकर रवाना करे या उनके मुल्क की हद में ठहरना मुनासिब जानें तो प्रशमित सरकार को उसमें अख्तियार होगा, जिसको राजा समथर कबूल करेंगे और साहब सरगरोह फौज सरकार को, जो कभी जरूरत पर मुल्क समथर होकर निकले या थोड़े दिन वहां टिकें, तो वे हरगिज किसी प्रकार से लिखित राना के मुल्क और रियासत पर दखल न करेंगे और जो असबाब या पदार्थ रसद आदि इस सरकार दौलतमदार की फौज के खर्च के निमित्त, जितने दिन वहां रहेगी, लिखित राना के मुल्क में होगा, उसको राना साहिब के कारिंदे या रिआया तुरन्त बगैर उज्र देते रहेंगे और मोल उसका बाजार के भाव के अनुसार पाते रहेंगे।

(८) राना रणजीतसिंह प्रतिज्ञा करते हैं कि किसी पुरुष को चाहे सरकार की रिआया हो या कोई विलायती अंग्रेज हो या और किसी

प्रकार का हो, बगैर मंजूरी और इजाजत अहाली सरकार दौलतमदार के हरगिज उस पर दृष्टिपथ न रक्खेंगे।

(९) राना समथर इकरार करते हैं कि बगैर हुक्म अहाली सरकार दौलतमदार कम्पनी अंग्रेज बहादुर के, गैर मुल्क के सरदारों के साथ किसी प्रकार की लिखा पढ़ी न करेंगे।

(१०) राजा समथर करार करते हैं कि सरकार दौलतमदार के गुनहगार अर्थात् दोषी पुरुष और बाकीदारों को, जो इस इलाका में भाग के आवें, उनकी रक्षा न करेंगे और न उनको छिपावेंगे और जो लोग बाकीदारों के पीछा करने के लिये मुकर्रर किये जावें, तो लिखित राना साहिब प्रतिज्ञा करते हैं कि सब प्रकार से जहां तक हो सकेगा, सरकारी अहलकारों के साथ वास्ते गिरफ्तारी इनके गुनहगारों और बाकीदारों का उद्योग करते रहेंगे।

(११) यह अहदनामा अर्थात् प्रतिज्ञा पत्र ११ दफा में लिखा हुआ बीच दरमियान सरकार दौलतमदार कम्पनी अंग्रेज बहादुर और राजा रणजीतसिंह राजा समथर के मारफत मिस्टर जानवाकिन साहब बहादुर मुख्तार कार, इस अधिकार के द्वारा, जिसको उन्होंने नवाब मुख्तार मुअल्ला अल्काब अशरफुल अशराफ मारकिस आफ हेस्टिंग्ज गवर्नर जनरल बहादुर से पाया था, और दरियावसिंह वकील राजा रणजीत सिंह की तरफ से, उसे अधिकार के द्वारा, जिसको उन्होंने पूर्व प्रशंसित राजा साहिब से पाया था, लिख कर शोभित हुआ और मिस्टर जानवाकिन साहिब बहादुर और वर्णित वकील दोनों पुरुषों ने इस अहदनामा पर अपने अपने दस्तखत और मोहर अंग्रेजी और फारसी और हिन्दी में किया और उन दोनों में से एक नवाब मुख्तार मुअल्ला अल्काब मारकिस आफ हेस्टिंग्ज गवर्नर जनरल बहादुर के दस्तखतों के शोभित होने के पश्चात लिखित दरियावसिंह के समर्पण किया जायगा और लिखित वकील इकरार करते हैं कि दूसरे प्रतिज्ञा पत्र पर राना रणजीत सिंह के दस्तखत और मोहर कराके उसी समय मिस्टर जानवाकिन साहिब बहादुर के हवाले करेंगे।"[१११]

(Treaty) स्टेट होने से समथर राज्य का बहुत बड़ा दर्जा माना जाता था। सन् १८२६ ई० में नवम्बर मास में ६० वरस की अवस्था में आपके युवराज हिन्दूपति हुए, जिन्हें ६ बरस का छोड़कर ११ जौलाई १८२७ ई० को आप परलोक सिधार गये।

राजा हिन्दूपति फारसी, अंग्रेजी और संस्कृत के बड़े विद्वान थे। आप बड़े मिलनसार, साधु स्वभाव, योग्य, अनुभवी शासक थे। भारतीय नरेश व तत्कालीन अंग्रेज अधिकारियों से आपका बहुत मेलजोल था। अन्तिम समय में राजा साहिब पर कुछ ऐसी मुसीबत पड़ी कि आपका दिमाग फिर गया। सरकार ने राज्य की बिगड़ती दशा देखकर राजकार्य रानी साहिबा के सुपुर्द कर दिया। कुछ अयोग्य व्यक्तियों की सलाह से, राज्य की दशा छिन्न भिन्न हो गई और रानी साहिबा ने बजाय बड़े राजकुमार महाराजा चतुरसिंह के छोटे राजकुमार अर्जुनसिंह उपनाम अली बहादुर को राज्याधिकार दे दिया, किन्तु सरकार के दखल देने से चौथाई राज्य राजमाता साहिबा व हिन्दूपति को देकर बाकी समस्त राज्य महाराजा चतुरसिंह को मिल गया।

५ फरवरी सन् १८६५ ई० में इस कार्यवाही पर अमलदरामद हुआ और महाराजा साहिब बहादुर शमशेरगढ़ में और राजा हिन्दूपति अमरगढ़ में, अलग रानी साहिबा व राजकुमार अली बहादुर के साथ पहले निश्चय के अनुसार रहने लगे।

महाराजा चतुरसिंह बड़े प्रबन्ध कुशल व योग्य शासक साबित हुये। इनसे पूर्व राज्य की दशा छिन्न भिन्न हो गई थी। रियासत का कोष रिक्त हो चुका था। जन साधारण की दशा शोचनीय थी किन्तु शीघ्र ही आपने राज्य की बिगड़ी दशा को सम्भाल लिया, न्याय,

---

१११ यह अहदनामा मुकाम तिरहुन पर दस्तखत और मुहर होकर बदला बदल हुआ तारीख १२ नवम्बर सन् १८१७ ई० अर्थात् १८ माह कातिक सम्वत् १८७४ मुताबिक २ माह मोहर्रम सन् १२३३ हिजरी यह अहदनामा तारीख १३ नवम्बर सन् १८१७ ई० का है। मुकाम लश्कर निकट तालगाव में नव्वाब गवर्नर बहादुर के इजलास में तसदीक और मन्जूर है।

पुलिस व फौज तथा माल का उत्तम प्रबन्ध कर, राज्य कार्य में उत्तम व्यक्तियों को नियुक्त किया। व्यापार, कृषि की उन्नति के लिये बैंक स्थापित किया गया जिसमें कम सूद पर रुपया दिया जाने लगा। प्रजा की भलाई के लिये अनेक उपयोगी कार्य अस्पताल, मदर्सा सदाव्रत आदि का प्रबन्ध किया गया। अपराधियों को कठोर दण्ड दिया जाने लगा, जिससे अपराधों की संख्या बहुत कम होगई। २०—२५ लाख रुपया लगा कर आपने किले की मरम्मत करा कर, उसमें नई नई इमारतें बनवाईं। साथ ही शमशेर गढ़, महाराज गंज, अमरगढ़, लोहागढ़, साकून और अमरोहा में बाजार बनवाये। राज्य के भण्डार में अनेक बहुमूल्य सामान संग्रह कराये, जिनमें स्वर्ण सिंहासन प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त यह महाराजा बड़े विद्या प्रेमी नरेश थे। फारसी व संस्कृत में आपकी योग्यता महान थी। आपने 'चतुरप्रकाश' नाम का एक ग्रन्थ बनाया जिसके अलंकार समझ कर लोग चकित रह जाते हैं।

राना हिन्दूपति की जिन्दगी भर के लिये परगना अमरगढ़ गवर्नमेंट ने समथर राज्य से अलग कर दिया था, किन्तु प्रबन्ध उत्तम न होने से सन् १८८८ ई० में यह परगना राज्य में मिला दिया गया, और राना हिन्दूपति को २०००) माहवार तथा उनके छोटे युवराज अली बहादुर को १०००) माहवार तय कर दिया और ६ हजार रुपया सालाना आमदनी का गाव कोठी व महल बनवाकर दे दिया, जिससे उनकी जिन्दगी बड़े आनन्द से व्यतीत हुई। राना अली बहादुर ने अपने खर्च से बचाकर परगना कौंच, जिला जालौन में कुछ गाव मोल ले लिये, जो अब तक सामी वालों के पास हैं। इन्हीं दिनों देहली दरबार के अवसर पर नजराना पुश्त दर पुश्त के लिये मुआफ होगया और ११ तोप की सलामी गवर्नमेंट द्वारा दीगई। आपके समय में राज्य की आमदनी ६ लाख रुपया होगई। आपने ठाकुर मेहरबानसिंह मसनेह वाले दीवान को १० हजार रुपये की आमदनी के २ मौजे तथा मुसाहिब बादल जू को १ मौजा जागीर में उनकी उत्तम राजकीय सेवा के उपलक्ष में दिया।

आपके ५ सन्तान हुईं, एक राजकुमारी जो राजा घुरईवमई के यहा व्याही गई, तथा ४ राजकुमार क्रमश महाराना वीरसिंह जूदेव,

राजा विक्रमाजीतसिंह, राजा जगतराज बहादुर व राजा रघुवीर सिंह थे, जिनको उत्तमोत्तम विद्यायें, सब प्रकार की हिन्दी, अंग्रेजी, फारसी की शिक्षा दीगई। इसके अतिरिक्त फौजी तथा राजकार्य एवं सब प्रकार की व्यवहारिक शिक्षा दी। महाराजा चतुरसिंह के स्वर्गवास के पश्चात् राजगद्दी पर महाराजा बीरसिंह सुशोभित हुए।*** आप बड़े धर्मवीर प्रजावत्सल नरेश हुए। धर्म भाव, भक्ति भाव आपमें कूट-कूट कर भरा

SAMTHAR STATE.

212 Imperial Gazetteer of India Vol. XXII, Pare 23–26.

Treaty state in Central India, under the Bundelkhand Political Agency, lying with an area 25043' and 25 57' N and 78 48' and 79 7' E, with an area of about 178 square miles The name is most probably a corruption of Shamshergarh, by which the capital is still known It is bounded on the North and East by the Jalaun District of the United Province, on the South by Jhansi District, and on the West by the Bhander Pargana of the Gwalior State and by Jhansi District The territory consists of an almost unbroken level plain paresly covered with trees. The soil is only moderately fertile, and, though traversed by the Pahuj and Betwa, both large streams, is entirely dependent on the rainfall for its productivity Geologically, the state consists of Bundelkhand gneiss and allied rocks, in great part concealed by alluvium The climate is generally temperate though hotter than that of Malwa The rainfall, as shown by ten year's record, average 30 inches

On the death of Maharaja Ram Chandra of Datia in 1733, a dispute arose regarding the succession to that state. In this contest with rival claimants Indarjit, who succeeded, had been assisted by various petty Chiefs, among whom was Naune Sah Gujar, son of a man in the service of the Datia State On his accession to power Indrajit regarded Naune Sah's son Madan Singh, with the title of Rajdhar and the Governorship of Samthar Fort, a Jagir of five villages being later on granted to his son

Devi Singh The latter was succeeded by his son Ranjit Singh During the disturbances caused by the Maratha invasion, Ranjit Singh became independent and received the title of Raja from the Marathas On the establishment of the British supremacy, he requested to be taken under protection and a treaty was concluded in 1817, confirming him in possession of the territory he then held In 1827, Ranjit Singh died and was succeeded by his son Hindupat, who, however, became of unsound mind, the administration being entrusted to his Rani In 1862 an adoption Sanad was granted to the Chief the obligation to pay succession dues being remitted (1877) in the case of a direct successor In 1864 the eldest son Chatur Singh asserted his claim to rule the State, which was recognized by the Government, the pargana of Amargarh (Amra) being assigned for the maintenance of the Ex Chief, his Rani, and a younger son, Arjun Singh (Alias Ali Bahadur) In 1883 this arrangment was changed, a cash allowance being given in lieu of the Pargana Hindupat died in 1890 and Government, in consideration of the length of time Chatur Singh had been actual ruler decided that no formal recognition of his succession was needed

Chatur Singh was a good administrator and improved the condition of the state considerably During his rule a Salt Convention was made with the British Government (1879), by which the state received Rs 1,450 as compensation for dues formerly levied, and land was ceded for the Betwa Canal (1882) and for a Railway (1884) In 1877 Chatur Singh received the title of Maharaja as a personal distinction He died in 1896, and was succeeded by his son Bir Singh Deo the present ruler who received the title of Maharaja as a personal distinction in 1898 The chief bears the hereditary titles of His Highness and Raja, and receives a salute of 11 gun

The population of the state has been (1881) 38,633, (1891) 40,541, and (1901) 33,472 It decreased by 17 per cent durin

the last decade owing to famine Hindus number 31,211, or 93 per cent, and Musalmans 2,229, or 7 per cent The density in 1901 was 188 persons per square mile The principal castes are Chamars, 4300, or 13 per cent, Brahmans, 3,800, or 11 percent, Lodhis, 3,000 or 9 percent, Kachhis and Gujars 2 000 each or 7 percent, Gadarias 1,700 or 5 percent The state contains 90 villag s and one town, SAMTHAR (Population 8 286), the Capital For a Hindu State in this part of India the percent age of Muslmans is unusually high The Muhammadan element also takes a considerable part in the administration The pre vailing form of speech is Bundelkhandi About 33 percent of the population are supported by agriculture and 17 percent by general labour

The soil is for the most part poor and the country is singularly devoid of tanks which are fairly common in the rest of Bundelkhand The principal soils are MAR, an inferior black soil, Kabar, a grey soil Parua a yellowish red soil which is the most prevelent, and Rankar, a stony soil, strewn with boulders of gneiss, and of very little agricultural value Of the total area, 85 square miles or 42 percent, are cultivated, of which only 519 acres are irrigable, 49 square miles or 25 percent, are cultivable but not cultivated, and the rest is jungle and waste Of the cropped area, jowar occupies 30 squares miles or 35 percent, wheat 20 sqaure miles, or 23 percent, gram 19 square miles, or 22 percent, and cotton 5 square miles

The only metalled road in the state is 8 miles in length, and leads to Moth, on the Great Indian Peninsula Railway The opening of the railway in 1888 has greatly facilitated the export of gram, for which there was formerly no market Saltpetre is exported in some quantity mainly to Bhopal

The administration is carried on by the Chief, assisted by his Wazir (Minister) The state is divided into four Parganas with Headquarters at Shamshergarh Amargarh Maharajganj

मिला। ३ जून १९१७ ई० मे आपको ब्रिटिश गवर्नमेन्ट की ओर से के० सी० आई० ई० का खिताब मिला। अन्तिम समय तक आप ईश्वर भक्ति में लगे रहे और राज्य व्यवस्था उत्तम रही। आपके समय में राज्य के दीवान कु० सुजानसिंह जागीरो वाले रहे, जो प्रबन्धक कुशल तथा न्याय, नीति निपुण सरदार हैं आपकी सादगी तथा निर्भिमानता प्रसिद्ध है। फारसी, हिन्दी, अंग्रेजी का आपको उत्तम ज्ञान है।

श्रीमन्त हिज हायनैस महाराजा वीरसिंह जूदेव के० सी० आई० ई० का २६ मार्च सन् १९३६ ई० को स्वर्गवास हो गया।

अपने राज्य काल में ही आपने अपने सुपुत्र एकमात्र उत्तराधिकारी महाराज कुमार युवराज राधाचरणसिंहजू देव बहादुर को ६ अक्टोबर १९३५ ई० मे राजगद्दी दे दी।

हुआ था। प्रजा के साथ आप का बर्ताव सौजन्यता पूर्ण हुआ एवं उदारता का था, आपको ११ तोप की सलामी व अख्तियारात कपास हासिल रहे। तारीख २ जनवरी १९०७ ई० में आपको कैसरेहिन्द मैडल प्रथम श्रेणी का

---

and Lohagarh, each under a Tahsildar. In all general administrative matters the Wazir has full powers. The Chief exercises plenary Criminal Jurisdiction and is the final court of reference in other matters.

The revenue of the state before its territories were reduced by the Marathas, are said to have amounted to 12 lakhs. The annual receipts are now 1.5 lakhs, mostly derived from land. The expenditure is about the same.

A regular settlement was made in 1895 by Maharaja *Chatur Singh, under which the land is farmed out and the* revenue collected in cash from the Patta (Lease) holders in two instalment. The incidence of the land revenue demand is R. 5 per acre of the cultivated area. No land is alienated in jagirs. Until Maharaja Chatur Singh's time when the British rupee was made legal tender the currency consisted of the Nana Shahi rupee of Jhansi and the Datia coin.

The troops consist of the Chief's bodyguard of 12 horsemen and 40 footmen and an irregular force employed as police, which numbers 200 horses and 500 footmen. There are also six guns manned by 50 gunners. A jail, a post office, a hospital and five schools with 190 pupils are maintained in the state.

SAMTHAR TOWN—

Capital of the state of the same name in Central India situated in 25 50 N and 78 55 E about 8 miles from the Moth station on the Great Indian Peninsula Railway. Population (1901) 8 286. The town which is often called Shamsher garh, was built in the seventeenth century, and was subsequently reconstructed by Chatur Singh. It contains the Raja's Palace, a Jail, a Post Office, and a Hospital.

मिला। ३ जून १९१४ ई० में आपको ब्रिटिश गवर्नमेन्ट की ओर से के० सी० आई० ई० का खिताब मिला। अन्तिम समय तक आप ईश्वर भक्ति में लगे रहे और राज्य व्यवस्था उत्तम रही। आपके समय में राज्य के दीवान कु० सुजानसिंह जारौली वाले रहे, जो प्रबन्धक कुशल तथा न्याय, नीति निपुण सरदार हैं आपकी सादगी तथा निर्भिमानता प्रसिद्ध है। फारसी, हिन्दी, अंग्रेजी का आपको उत्तम ज्ञान है।

श्रीमन्न हिज हायनेस महाराजा वीरसिंह जूदेव के० सी० आई० ई० का २६ मार्च सन् १९३९ ई० को स्वर्गवास हो गया।

अपने राज्य काल में ही आपने अपने सुपुत्र एकमात्र उत्तराधिकारी महाराज कुमार युवराज राधाचरणसिंह जू देव बहादुर को ६ अक्टोबर १९३५ ई० में राजगद्दी दे दी।

हिज हायनेस महाराजा राधा चरण सिंह जू देव बहादुर की शिक्षा दीक्षा प्रारम्भ में डेली कालिज इन्दौर एवं नौ गाव (बुन्देलखण्ड) हाई स्कूल में योग्य महानुभावों की संरक्षता में हुई। ६ फरवरी १९३३ ई० को आपका विवाह उत्तर भारत के प्रसिद्ध गुर्जर राजघराने में लेफ्टिनेन्ट राजा बलवन्तसिंह जी की सुपुत्री राजकुमारी कृष्णा कुमारी (अब हर हायनेस महारानी समथर) के साथ बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ। महारानी समथर हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी एवं फ्रेंच भाषा की बड़ी विद्वान विदुषी महिला रत्न हैं, जो अपनी उदारता, प्रजा प्रेम एवं राज्य प्रबन्ध के लिये प्रसिद्ध रहीं।

वर्तमान महाराजा समथर ने अपने राज्यकाल में राज्य में शिक्षा, समाज सुधार एवं भूमि सम्बन्धी व्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये। जनसाधारण की रक्षा व न्याय का विशेष प्रबन्ध किया। हाईकोर्ट की उत्तम व्यवस्था की। कृषकों को लाखों रुपये की मुआफी दी। स्वास्थ्य रक्षा के लिये अस्पताल खुलवाये गये। हाई स्कूल व प्रारम्भिक पाठशालायें स्थापित की गईं। प्रजा को शासन में अधिकार दिये। एकतन्त्रवाद की बुराइयां देशी राज्यों में स्वभाविक रूप में पाई जाती रही हैं, राजाओं का पालन पोषण ऐसे वातावरण में होता रहा है कि उसमें प्रजा के प्रति सद्भावना की गुंजायश कम हो पाती है, लेकिन समथर

इसका अपवाद रहा और उसने प्रजातन्त्र में महत्वपूर्ण योग दिया, और प्रगतिशील राज्यों की भांति शासन सुधारों की प्रजा की मांग को सर्व प्रथम पूरा किया। भारतीय देशी राज्यों की स्थिति आरम्भ में स्वतन्त्र थी, लेकिन अंग्रेजों के भारत में आने के बाद रियासतों की मर्यादित सत्ता ब्रिटिश सम्राट द्वारा निश्चित की जाती थी, इसलिए १५ मई १९४७ ई० को भारतवर्ष के पूर्णरूपेण स्वतन्त्र होने पर राष्ट्रीय सरकार ने रियासतों की स्थिति और उपयोगिता पर विशेष रूप से विचार किया। समथर नरेश हिज हायनेस महाराजा राधाचरण सिंह जू देव बहादुर ने, समय की गति अनुभव करके स्वतन्त्रता की रक्षा के महत्व को समझ कर, श्वेतपत्र के तीसरे हिस्से के अनुसार रियासत समथर का विलीनीकरण स्वीकार करते हुए, राज्य की समस्त सत्ता केन्द्र के आधीन करदी और प्रारम्भ में नवीन विंध्य प्रदेश बनने पर समथर राज उसमें सम्मिलित होगया, किन्तु बाद में सीमा एवं प्रबन्ध सम्बन्धी व्यवस्था को देखते हुये महाराज की सहमति से उत्तरप्रदेश के साथ जोड़ दिया गया। महाराजा समथर उत्तरप्रदेश की राजधानी लखनऊ व समथर दोनों स्थानों पर सुविधा की दृष्टि से रहने लगे। आपको निजी व्यय के लिये पचपन हजार रुपया वार्षिक मिलता है। आपके चार योग्य सन्तानें हैं। महाराज कुमारी ऊषा राजे खटाणा (जन्म मार्गशीर्ष १२ शुक्रवार सम्वत् १९९७ विक्रमी), महाराज कुमारी ज्योतिप्ना राजे खटाणा (जन्म भाद्रपद शुक्ला ७ वृहस्पतिवार सवत् १९९५ विक्रमी), महाराज कुमारी मजुल राजे खटाणा (जन्म मार्गशीर्ष कृष्णा १ बुधवार १९९८ वि०) तथा महाराज कुमार युवराज रणजीत सिंह (जन्म सावन सुदि १ सोमवार सवत् २००० विक्रमी)। चारों बहिन-भाई उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं और मेधावी, प्रतिभाशाली एवं उच्च चरित्र वान हैं। हिज हायनेस समथर अखिल भारतीय गूजर क्षत्रिय महासभा के प्रधान हैं।*

---

*समथर में सदा गूजरों को महत्व मिला और अनेक घराने नवीन प्रतिष्ठा प्राप्त कर गये, जो आज भी महत्वपूर्ण हैं। इस रियासत की प्रसिद्धि के साथ साथ बावई, साकन, हरद्वोई गूजर, जिगनेवा, बगरा,

(१५)

अंग्रेज व्यापारियों ने अपनी रानी एलिजाबेथ से आज्ञा लेकर सन् १६०० ई० में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना की। १६०८ ई० में विलियम होकिंस मुगल सम्राट जहांगीर के दरबार में आया और सूरत में एक अंग्रेज कम्पनी खोलने की स्वीकृति प्राप्त की। सन् १६१५ ई० में सर टामसरो ने भारत आकर बिना कर दिए व्यापार करने की आज्ञा प्राप्त की। १६३९ ई० में अंग्रेजों ने मछलीपट्टम में और सन् १६४० ई० में मद्रास में कोठी स्थापित की और वहां रक्षा के लिये फोर्ट विलियम की स्थापना की। १६५७ ई० में हुगली और कासिम बाजार में कोठी स्थापित की। उन्हीं दिनों इग्लैंड के चार्ल्स (सम्राट) ने कम्पनी को बम्बई दे दिया। औरंगजेब की मृत्यु के बाद बंगाल के सूबेदारों से अंग्रेजों का झगडा होगया। सन् १७१५ ई० में जो दो प्रतिनिधि मुगल दरबार में गये, उनमें से हेमिल्टन ने मुगल बादशाह फरुखसियर की भयंकर रोग से रक्षा की, जिसके उपलक्ष में कम्पनी को कलकत्ता और मद्रास में कुछ गांव दे दिये गये। अब अंग्रेजों ने अपनी रक्षा के लिये

खकसीस, कैथ, सहाव, बरहल आदि ठिकानों के घरानों का बुन्देलखण्ड में विशेष महत्व रहा, जो अपनी भूसम्पत्ति के साथ साथ वंश परम्परा से प्रतिष्ठित घराने समझे जाते रहे हैं। जालौन गजेटियर के अनुसार यद्यपि उनकी आबादी कुल ४८७१ है किन्तु वह जिले की आठ प्रतिशत भूमि के स्वामी हैं और उनकी खास आबादी परगना कौंच में १५ प्रतिशत एवं जालौन में १४ प्रतिशत भूमि उनके अधिकार में है। जालौन गजेटियर पृष्ठ ६६-७५।

बनारस में भी भाटी गूजरों के कई प्रसिद्ध घराने महत्वपूर्ण रहे। मिर्जापुर जिले के मनवार गांव के स्वामी और उनके वंशजों के अनेक गांव 'भूरतिया' के नाम से प्रसिद्ध रहे, वे मुजफ्फरनगर के सैयदों के शासन क्षेत्र जानसठ के पास के दयाराम सिंह नागडी के वंशज हैं। अपनी गृहलक्ष्मी के अनुरोध पर उसने हिन्दू महिलाओं पर अत्याचार करने वाले मुगलों (देहली सम्राट) एवं शासक बनाने वाले सैयदों की बेगमों के डोले अपहरण कर लिए और उन्हें

किले बनवाये और सेना रखनी शुरू की। १६६८ ई० में धनी व्यापारिक कम्पनी के साथ पहली कम्पनी का झगड़ा होने से १७०८ ई० में दोनों कम्पनी एक करदी गई। इस कम्पनी के प्रयत्नों के फलस्वरूप भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना हुई। २४ जून सन् १७५७ ई० को प्लासी के युद्ध में बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला को मीरजाफर द्वारा धोखा देने से अंग्रेजों (लार्ड क्लाइव) की विजय होगई और अंग्रेजों के हाथ में भारत के सबसे धनी प्रान्त की बागडोर आगई। केन्द्र की शक्ति घट जाने से उनकी और बन आई, हैदरअली, टीपू सुल्तान और मीरकासिम प्रत्येक को वान्छनीय अवान्छनीय प्रयत्नों द्वारा कुचल कर अंग्रेजों ने भारत में अपनी जड़ जमाई। इसके बाद लखनऊ, बनारस, देहली, नागपुर, झांसी आदि राज्यों के साथ जो कुछ हुआ वह बड़ी रोमांचकारी कहानी है।

देशी नरेशों के राज्य अंग्रेजी राज्य में मिलाये जाने लगे, बहुत

सावधान करके ससम्मान वापिस कर दिया। अनेक संघर्षों के बाद इन्हें विवश होकर मिर्जापुर के जंगलों में साथियों सहित शरण लेनी पड़ी। इन्हीं दिनों मोतले (मुंडेल मुन्डन) गूजरों ने अपने संघर्ष शील–किन्तु निर्माण कार्य में प्रवृत्ति रखते हुये रांगड़ और जाटों के मध्य मेरठ, मुजफ्फरनगर की सरहद पर दादरी, सन्हौरा के आसपास पांच गांवों का उपनिवेश बसाया, जिसकी सब व्यवस्था जमींदारी कृषि प्रबन्ध–उन्हीं के हाथों में रही। दादरी आज भी एक आदर्श गांव है। कर्नाल की कैथल तहसील में कौंडक के साथ कुछ गांवों की स्थिति स्वतन्त्र सत्ता वाले गणराज्यों की थी, कौंडक के तवरों ने, रांघड़ तथा मुगलों पठानों के अतिरिक्त सिक्खों से भी अनेक बार मुठभेड़ ली। सिक्खों के साथ तो उनकी इतनी जबरदस्त लड़ाई हुई कि सारा गांव ही एक बार बर्बाद होगया, लेकिन गौरव अजय दुर्ग बना रहा और उस पर कोई भी अधिकार न कर सका। इलाके में गूजरों की जनसंख्या कम होते हुए भी इस गांव की स्थिति प्रत्येक अवसर पर दृढ़ रही है। आज भी यहां वंश विशुद्धता का विशेष महत्व है। लम्बे सुडौल, वीर, हृष्ट पुष्ट, सौन्दर्य पूर्ण यह गूजर बड़े प्रसिद्ध हैं।

से व्यक्तियों की पेंशन बन्द करदी गई। जमीदार तथा ताल्लुकेदारों से उनकी जमीन वापिस ले ली गई, जिससे उनमें असन्तोष और अप्रसन्नता छागई। जनता को अपने बड़े-बड़े नेताओं के अपमान, अपहरण एवं जमीदारी छीनने मे अंग्रेजो की साम्राज्यवादी नीति पसन्द नहीं आई। इंग्लैण्ड के नालायक एवं निकम्मे युवकों ने भारत को अपनी बेईमानी, लूट और राज्य प्रसार नीति से तबाह और बर्बाद कर दिया। आपसी फूट के कारण भारतीय राजा महाराजाओं के साधारण नौकर और सौदागर अंग्रेज देश के शासक हो गये। लार्ड विलियम बैंटिक (१८२८ ३५ ई०) ने सुधारों के नाम पर भारत की सामाजिक राजनीतिक व्यवस्था मे ऐसे परिवर्तन कर दिये कि देश क्षुब्ध हो उठा। उत्तर पश्चिम भारत के प्रदेशों पर बन्दोबस्त की व्यवस्था के नाम से सशस्त्र जमीदारों, सामन्तों, सत्ता वादी जातिय संघ के नेताओं एव मध्यम वर्ग को बुरी तरह कुचल दिया गया। १८५७ ई० के भयानक विप्लव से ५० वर्ष पूर्व भारत का राज्य मुगलों के हाथ से निकल गया था। देहली के लाल किले मे रहकर वे पेंशन खा रहे थे। पूर्ण सत्ता तो इनके हाथ से मरहठा शक्ति के समय ही निकल चुकी थी। देहली के चारों ओर गूजरों की बड़ी २ आबादियों राजसत्ता एवं छोटी-बड़ी अनेक जागीरें थीं। राजपूतों का उत्कर्ष बढ़ा चढ़ा था, मरहठे सत्ताधारी थे। हिन्दू और मुसलमान छोटे बड़े जमीदार मुगल साम्राज्य के अवकाश प्राप्त पेन्शनर, जागीरदार, ओहदेदार राजदरबार में सम्मानित होने वाले वर्तमान व पूर्व पुरुषों के वंशधर सभी अङ्गरेजों की शोषक नीति के शिकार हो रहे थे। सत्ताधारी राजाओं के स्वतन्त्र राज्य मिटाये जारहे थे, किन्तु देहली के चारो ओर अब तक भी लोग बादशाह से सनद व खिलअत लेने में गौरव समझते थे, परन्तु कम्पनी के बनियों के प्रभाव से न केवल बादशाह को अपनी शक्ति सम्मान एवं चिन्हों से वंचित होना पड़ा, वरन् सभी सत्ताधारी जातियों को मिटाने का उपक्रम किया जाने लगा। सन् १८५७ ई० में पर्याप्त समय से जनता में सुलगी हुई भावना विप्लव की चिनगारी ज्वालामुखी बनकर राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिये शस्त्र क्रान्ति के रूप में बदल गई, जिसका ध्येय भारत से अङ्गरेजी राज्य का अन्त करना था। इसमे भारत के विभिन्न

वर्गों ने भाग लिया और कुछ समय के लिये अङ्गरेजों पर भारतीय स्वतन्त्रता के वीरों का आतङ्क छा गया।

अंग्रेजों के विरुद्ध, स्वाधीनता के संग्राम में देहली के चारों ओर सैनिकों के अलावा जनता वर्ग में से सामूहिक रूप से गूजरों ने सर्वप्रथम स्वाधीनता का झण्डा खड़ा किया। अगर गूजरों को इस और नाना, तान्त्याटोपी और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई में से एक का भी नेतृत्व मिल जाता, तो निश्चय ही भारतवर्ष ६ दशाब्दि तक अंग्रेज रूपी दुर्दैव दानव से दलित न होता। दुर्दान्त शत्रु ब्रिटिश सिंह को कंपा देने वाले गूजरों की सामूहिक सशस्त्र क्रान्ति से शासन के अन्तिम काल तक भी अंग्रेजों की एक भयानक प्रतिहिंसा की भावना गूजरों के प्रति बनी रही। प्रत्येक तत्कालीन गवर्नमेन्ट के रिकार्ड में गूजरों द्वारा सामूहिक रूप से किये गये कारनामों का विशद् वर्णन है। किस प्रकार सरकारी भवन, कचहरी, डाकखाने, डाक बंगले, रिकार्ड आफिस, तारघर, थाने, तहसील आवागमन के साधन, गूजरों द्वारा नष्ट किये गये, तहसील व खजाने लूट लिये गये, जेल तोड़ दी गईं, यह बहुत बड़ी कहानी है।

गूजरों ने इस विकट संग्राम में अपने सर्वस्व की आहुति दे दी। देहली, मथुरा, आगरा, मेरठ, बुलन्दशहर और सहारनपुर आदि सभी स्थानों में उन्होंने संगठित सशस्त्र क्रान्ति की सफल आयोजना बनाई, जोरदार मुठभेड़ हुई। कुछ समय के लिये गूजरों का आतंक देहली के चारों ओर छागया। देहली, आगरा, अम्बाला तथा मेरठ की छावनी में सम्बन्धित तार, डाक और यातायात की व्यवस्था पूरी तरह भंग करदी गई। अंग्रेजों की सत्ता समाप्त होने पर गूजरों का आतंक सर्व साधारण पर छागया और वही कहावत चरितार्थ हुई कि अराजकता और विद्रोह के समय न गूजर किसी का और न कोई गूजर का। क्रान्तिकारी गूजरों, थोड़े से नेता विहीन सैनिकों और मुगल शासकों की अन्तिम पीढ़ी के अय्याश, निर्बल, स्वार्थपरायण शासक जाति के झूठे अभिमानी व्यक्तियों के किये कुछ न बन पड़ा और स्वतन्त्रता के इस प्रथम संग्राम को अंग्रेज इतिहासकारों ने गदर (Mutiny) का

नाम दिया। उत्तरीय भारत में विभिन्न जातियों—खासकर सामूहिक रूप से गूजरों—द्वारा अंग्रेजों को मार डाला गया और उनकी राजसत्ता कुछ समय के लिये समाप्त कर दी गई, विप्लवकारियों का दमन अंग्रेजों ने बड़े जोर से किया। सिक्ख, गोरखा, भोपाल एवं हैदराबाद के शासकों ने विप्लवकारियों के दमन में बहुत सहायता की। भयानक रक्तपात के पश्चात अंग्रेज सफल हुए उन्होंने भारतीयों के साथ बहुत बुरा, कठोर, अमानुषीय व्यवहार किया। गूजरों को घर-बार, जर-जमीन और जनविहीन कर दिया गया। साम्राज्यवाद की भीषण रक्त-पिपासा सूली और फांसी से बुझाई गई, इनके इलाके तहस नहस कर दिये गये।[१११] गूजरों ने, जो अपनी स्वतन्त्र

[१११] इन्डियन म्यूटिनी १८५७ ई० एन० डब्लू० पी० इन्टेलिजेन्स रिकार्ड (सर विलियम म्योर के० सी० एस० आई०) भाग प्रथम लेटर्स फ्रोम आगरा पृष्ठ २६ "हापुड़ के पश्चिम की ओर के गूजर जमींदार इस आपत्ति के समय का नाजायज फायदा उठा रहे हैं, बदला, हिंसा और अराजकता की पुरानी आदत के अनुसार वे उठ खड़े हुए और उन्होंने तार तथा डाक की व्यवस्था तोड़ दी और घोड़े आदि सब हांक ले गये।"

—वही पृष्ठ ८८ "मेरठ और मुजफ्फरनगर के गूजर बहुत ही अशान्ति और कष्ट देने वाले सिद्ध हो रहे हैं। आगरा कैम्प और मेरठ के बीच में डाक का सब सिलसिला उन्होंने समाप्त कर दिया।"

-- वही पृष्ठ १२६ "हमने मालगुजारी लेना अभी (सोनडस के अनुसार) स्थगित रक्खा है। गूजरों के बहुत से गावों ने पिछले मुगल सम्राट को मालगुजारी देदी है। इस बारे में बहुत विचार की आवश्यकता है। जाटों ने बादशाह को मालगुजारी देना स्वीकार नहीं किया। दोबारा देने में गूजरों को बार बार नुकसान होगा और आश्चर्य नहीं कि गूजर गांव छोड़ कर भाग जाय। जो लोग हमारे विरोधियों—उपद्रवी लोगों के खजाने भर रहे हैं, उनसे फिर पूरी मालगुजारी ली जायगी और इनके साथ कोई रियायत न होगी तथा उनपर पूरी तरह से सख्ती बरती जायगी।

—वही पृष्ठ २६७ "बुलन्दशहर में उपद्रवी बहुत बढ़ गये हैं। खजाना और जेल को घेरे हुए हैं। जोधपुर लान्सर्स के विद्रोह की खबर है कि वे

रहने की मनोवृत्ति का परिचय दिया और अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह भरी हिंसात्मक क्रान्ति की, वह भारतीयों की आपसी फूट और योग्य नेताओं के अभाव में सफल न हो सकी और जाति को उपद्रवी, झगडालू तथा अराजकतावादी अनेक ऐसी उपाधियां एवं लज्जास्पद शब्दों में इनके

बढ़ गये हैं, गूजर उसमें बड़ी संख्या में शामिल होगये हैं। उनके विरुद्ध एक मजबूत पार्टी भेजनी जरूरी है।

—वही पृष्ठ ९७ "देहली की स्थिति नाजुक है, सारा और बागी सिपाहियों ने जमना पार करके अपनी स्थिति देहली में दृढ करली। सामूहिक रूप से गूजरों (डकैत–लुटेरा) ने सड़कों को घेर लिया है और उपद्रव प्रारम्भ कर दिये हैं। उन्होंने सैंकडों घुड़सवार और पैदलों को खतम कर दिया।

—वही पृष्ठ ३२७ "१ जनवरी १८५८ ई० में डनलप का कहना है कि डासना और गूजरों के बर्बाद हुवे मवाना के गांवों के अलावा और सब जगह वसूल होरहा है। ६ लाख इकट्ठा भी कर लिया।

वही पृष्ठ ४१८ "हर नारायण जमींदार मेहरी (आगरा) ने, जो विद्रोह को दबाने को भेजा गया था, बताया कि सूबा देवहंस कैद में है। १६ गूजर और १०० सिपाही लड़ाई में मारे गये। गूजरों ने बगावत का ऐलान कर दिया है और हमले करने प्रारम्भ कर दिये।"

—मथुरा डिस्ट्रिक्ट गजेटियर पृष्ठ ११२ "१८५७ ई० के विद्रोह में गूजरों ने खुलेआम अंग्रेजों के विरुद्ध बगावत की और अनेक महत्वपूर्ण वारदातें उनके द्वारा हुईं। शेरगढ़ी के पास उनकी शक्ति बढ़ी हुई थी, जो पूर्णतया नष्ट कर दी गई। दस गांव छीनकर हाथरस के जाट राजा को दे दिये गये।"

आगरा गजेटियर पृष्ठ १७६ धौलपुर के गूजर सरदार देवहंस ने सन् १८५७ ई० के विद्रोह में आगरे के दक्षिण भाग पर अधिकार कर लिया। १५ जौलाई को इरादतनगर, शेर, साधुपुर तथा तहसील पर हमला करके लूट लिया। जाजऊ में ३००० आदमी २ गन उसके हाथ आई। राधुपुरा का जमींदार ३०० आदमी लेकर उसके मुकाबिले को आया और मारा गया। २ लाख का माल उसके हाथ लगा।"

गदर–दिल्ली की डायरी लेखक नवाब मुईनुद्दीन हसनखां तथा मुंशी

द्वारा स्मरण किया गया कि सचमुच गूजरों के सम्बन्ध में मिथ्या धारणा फैल गई और साम्राज्यवाद के फौलादी पंजों से जकड़ी जाकर देहली के आसपास गूजर जाति निर्जीव, निर्दय, निर्धन और अशिक्षित होती चली

जीवनलाल, सग्रहकर्त्ता तथा प्रस्तावना लेखक सर जान मेटकाफ, भूमिका लेखक ख्वाजा हसन निजामी (प्रकाशक कर्मयोगी प्रेस लिमिटेड रैन बसेरा इलाहाबाद)

• पृष्ठ ४५–४६ सरजान मेटकाफ लिखते हैं कि— "उपवस्तियो में भव्य महलो के खन्डहर पड़े हैं, जिनमें मेटकाफ हाउस उल्लेखनीय है, इसे मेरे पिता सर टामस मेटकाफ रेजिडेन्ट देहली ने निर्माण कराया। दिल्ली को उन्होंने अपना घर बना लिया था। इङ्गलैंड से वे अपने परिवार की गृहस्थ सम्बन्धी एवं अन्य अनमोल वस्तुओं तथा समस्त पुस्तकों को ले आये थे। उस समय उन्हें क्या मालूम था कि उनके साथ क्या व्यवहार होने वाला है और वह चन्द्रावल के देहाती (गूजरो) के हाथो तबाह और बरबाद हो जायेंगे। यह मकान १००० एकड के बाग में स्थित है, नारंगी के पेड़ खड़े थे। पेड़ काट डाले गये, अग्नि भी लगाई गई। गोलो और गोली द्वारा छेद दी गई दिवारो और एक महिला के दस्तानों को छोड़ कर कुछ नहीं बचा। महिला स्वामिनी भी बच गई।

—वही पृष्ठ ८३– नवाब मुईनुद्दीन लिखित रोजनामचा— "गूजर भी डेरो निकल पड़े, वजीराबाद और चन्द्रावल से झुन्ड के झुन्ड प्रत्येक दिशा में लूटमार कर रहे थे। मेटकाफ भवन को चन्द्रावल के जमीदारों (गूजरो) ने लूटा और बाद में उसे जला डाला। हरएक यूरोपियन और ईसाई के मकान को पहले तो लूटा, तदनन्तर अग्नि की भेंट कर दिया। तीस योरोपियन निर्दयता से कत्ल कर डाले गये।

—वही पृष्ठ ९२–९३ बारूद की मेगजीन शहर दिल्ली के बाहर वजीराबाद में स्थित थी, जिसे स्थानीय जमीदारों (गूजरों) ने लूट लिया और बारूद लेकर चम्पत होगए। मेगजीन में एक लाख रुपये से अधिक की बन्दूक मिली, ये सब शाही अधिकार में चली गई।

—वही पृष्ठ १०४ मैदान छोड़ कर भागने वालों पर गूजरों ने आक्रमण किया और उनके अस्त्र शस्त्र, रुपये-पैसे छीन लिये। नवाब

गई। अगले वर्षों मे जाति की दशा गिराने के लिये, जो भी प्रयत्न सिविल सर्विस के उच्च अधिकारी कर सकते थे, किये गये। गावों के भूमि सम्बन्धी अधिकार छीन कर सरकारी नौकरियों में स्थान न

यात्रूच या घेरे के समय छिपे बैठे थे, गुप्त रूप से भाग गये। गूजरों ने आक्रमण करके उनका वध कर दिया और धन सम्पत्ति लूट ली।

—वही पृष्ठ १०२ (मुन्शी जीवन लाल का रोजनामचा) "सूचना मिली कि चन्द्रावल के गूजर दयाराम के नेतृत्व में एकत्रित होकर दहली की बस्तियों को लूट रहे हैं। दो योरोपियन (पुरुष-स्त्री) बाहर निकाल कर सुरक्षित भेज दिये गये और गूजरों के गाव में आग लगा दी गई।

—वही पृष्ठ १३७ "दो सौ (२००) उपद्रवकारी रुपया लूटने के बाद अपने घरों को लौटकर जा रहे थे कि मार्ग में गूजरों ने उन पर आक्रमण करके सारा सामान छीन लिया।

—वही पृष्ठ १४२—"बहुत से उपद्रवकारी, जो रुपया लेकर भाग गये थे, उन्हे गूजरों ने मार्ग में लूट लिया वे केवल अपनी जान बचाकर शहर में फिर लौट आये।

—वही पृष्ठ १४७ "गूजरों का एक झुण्ड मेगजीन के बारूद शस्त्रास्त्र हटाते हुए गिरफ्तार हुआ।

—वही पृष्ठ १५४—"किशनदास के तालाब के पास सिपाही गूजरों ने लूट लिये और एक को मार डाला।

—वही पृष्ठ १६१—'समाचार मिला कि ७ जून को रसद की १६ गाडियाँ जो अंग्रेजी सेनाओं के लिये थी, मार्ग मे गूजरों के हाथों लुट गई, यह सब गाडिया बादशाह की सेवा मे उपस्थित की गई।

—वही पृष्ठ २००—'बादशाह को इस बात की सूचना मिली कि सीकरी मे ३००० (तीन सहस्र) गूजर, कुछ सिपाहियों के साथ मिलकर कुछ गावों को लूटने के बाद मेरठ चले गये हैं। अंग्रेजों ने गोरों की एक पलटन दो तोपों के साथ वहा भेज दी, जिसने १०० आदमियों को बध करने के बाद, उन्हें तितर-बितर कर दिया है। इस युद्ध में अंग्रेजों के दो सार्जेन्ट, १६ सिपाही खेत रहे। सब गाँवों को जलाकर खाक कर दिया गया।"

देकर[११] शिक्षा सम्बन्धी सुविधा न देकर. रिकार्ड में ये सिर पैर की बातें जोड़ कर गूजर जाति को हीन बनाने के लिये अपराधी जाति तक बनाने की कोशिश की गई। स्वतन्त्रता के १८५७ ई० के इस महायुद्ध में, जिसे अंग्रेजों ने ग़दर का नाम दिया. ग़दर की कहानी बहुत रूपों में गूजर जाति के सम्बन्ध में बनाई और लिखी गई।

—वही पृष्ठ २३२ "अंग्रेजी लश्कर के दो सवार भाग कर आये और बताया कि सहारनपुर से कमसियरट की सामग्री संग्रह के लिये हमें मेरठ से भेजा गया है। मार्ग में गूजरों ने हम पर आक्रमण किया और सब सामग्री पर अधिकार कर लिया।

—वही पृष्ठ २०८—"समाचार प्राप्त हुआ कि गुजरात के आसपास रहने वाली जातियों ने शहर को लूट लिया और पांच सौ आदमियों को मार डाला (गुजरात के आसपास सामूहिक रूप से गूजरों की ही आबादियां हैं)। जमुना नदी के अति निकट रहने वाले बहुत बड़े जमींदार मदनसिंह को, १८ जौलाई को बादशाह की ओर से लिखा गया कि लूट मार करने, हत्याकाण्ड व संहार का बाजार गर्म न रक्खा जाय।

—वही पृष्ठ २७० "२० अगस्त का समाचार है कि सब दिशाओं के गूजर (बागी) दो टुकड़ियां में बंट गये हैं और लूट मार में व्यस्त हैं।"

सहारनपुर गजेटियर भाग २ एच० आर० नेविल आई०सी०एस० पृष्ठ १६८ से २०५ तक—"१८५७ ई० का ग़दर सहारनपुर के इतिहास में बड़ा महत्वपूर्ण है। मुख्य उपद्रव गूजर और रांघड़ों ने किया और १० मई को मेरठ की बगावत सुनकर, वे एकदम बागी हो गये और बैंकों, साहूकारों को लूट कर शासन तन्त्र ढीला कर दिया। फौजों द्वारा उन पर चढ़ाई की गई। देवबन्द के पास के गूजरों के कुछ गांवों पर चढ़ाई की गई, जिनमें फतहपुर सांवला व बाबूपुर आदि मुख्य थे। गूजरों ने मुकाबला किया, गांव फूंक दिये गये। माणकपुर का उमराव सिंह, जो स्वयं को राजा कहलाने लगा था, स्वतन्त्र हो उठा था और विद्रोह में उसने खास भाग लिया। गांवों की मालगुजारी भी वसूल करनी प्रारम्भ कर दी थी। इस पर उनको ने फौजों के साथ

सर हेनरी इलियट के० सी० बी० ने लिखा कि "गूजरों ने उत्तर पश्चिमी भारत के मेरठ डिवीजन में ग़दर (१८५७ ई०) के दिनों में खास उपद्रव किये और हम लोगों को तकलीफ पहुंचाई। उन्होंने सिकन्दराबाद को लूटा और अनेक स्थानों पर इसी प्रकार की कार्यवाही की। हमारे खिलाफ देहाती जनता में सिर्फ गूजर और रांघड़ ही थे, जो संकट काल में अराजकता पैदा करके अंग्रेजों के विरुद्ध हो उठे थे।"१११

आक्रमण किया, किन्तु वह बच गया। गूजरों ने खजाने (सरकारी) पर भी आक्रमण कर दिया। २० जून को नकुड़ पर गूजरों ने हमला किया, तहसील और थाना फूंक दिया, तमाम शहर लूट लिया। रोबर्टसन ने सेना के साथ पीछा किया और फतेहपुर गांव फूंक दिया। आगे जमकर युद्ध हुआ और गूजरों के चार गांव जला दिये। साढ़ौली, रणधावा के साथ भी यही बर्ताव हुआ। फौज बूढ़ाखेड़ी गूजरों के मुख्य स्थान पर पहुंची, जो बर्बाद कर दिया गया। सरसावा की भी गूजरों ने नकुड़ की सी हालत कर दी। सेनापति वेअर्ड स्मिथ ने यह अनुभव किया कि गूजरों से रक्षात्मक कार्यवाही करनी आवश्यक है, क्योंकि वे विद्रोही हो गये, रुड़की में नहर तोड़ने का उनका खास प्रोग्राम था, जो फौज की सुरक्षात्मक कार्यवाही से रह गया। २१ जून को मंगलौर में गूजर बड़ी संख्या में विद्रोही होकर आ गये थे। गूजर पुरकाजी पर चारों ओर से छा गये। एक तिहाई कस्बा खत्म कर दिया गया। काठे के गूजर, रांघड़ और पुन्ढीर बागी हो चुके थे। जिले में इनके सिवाय सब जातियां शान्त थीं और उपद्रवी खास सहारनपुर में आ गये। सुरक्षा के लिये भी व्यवस्था की गई। साढ़ौली के पास फिर गूजर तैयारी में पाये गये।"

– बुलन्दशहर गजेटियर पृष्ठ १२५, १२६, १६१, बुलन्दशहर के सब गूजर गदर के दिनों में सामूहिक रूप से दिन प्रति दिन साहसी और आक्रमणकारी हो रहे थे। जत्थों के रूप में सामूहिक रूप में उन्होंने ग्रान्ट ट्रन्क रोड रोक दी और तारों की लाइन, तारघर, रेस्ट हाउस, थाना, पुलिस चौकी, सिकन्दराबाद की तहसील, थाना, कस्बा सब लूट लिया। बुलन्दशहर की जेल तोड़ दी। चार दिन में सरकारी स्थान

डब्लू० सी० क्रूक बगाल सिविल सर्विस ने जो प्रसिद्ध इतिहास लेखक है, इस सम्बन्ध मे लिखा है कि 'जिस प्रकार बाबर, शेरशाह आदि के समय मे गूजरो ने विद्रोह, अराजकता एवं उपद्रव करके साम्राज्य स्थापन की सुरक्षा में अशान्ति और झगडे पैदा किये, उसी प्रकार गदर (१८५७ ई०) मे भी इन्होने अपने अराजकता एव उपद्रव

बिलकुल खाली कर दिये। रिकार्ड या तो जला दिये अथवा लोग उठा ले गये। अट्टा-अमावर, नन्दवासिया के गूजरों ने वलीदाद खा पठान का साथ देकर विद्रोह मे भाग लिया। अङ्गरेजों का साथ देने वाले प्रसिद्ध गावों को भी लूट लिया। तमाम उपद्रव के दिनों में जाट ब्रिटिश गवर्नमेंट की ओर रहे और भाटी राजपूत (मुसलमान) और गूजर विद्रोही रहे। सिकन्दराबाद को उनके द्वारा बड़ी क्षति पहुंची। उनकी दादरी, दनकोर, सिकन्दराबाद आदि मे बड़ी-बड़ी जायदाद थी, जो छीन ली गई।"

मेमोर आफ जिला बुलन्दशहर (लछमणसिंह) १८७४ सन् १८५७ ई० के प्रसिद्ध स्वतन्त्रता के आन्दोलन के दिनों में राजा लछमणसिंह की जानकारी विशेष महत्वपूर्ण है और उन्होने विस्तार के साथ अपनी पुस्तक मे, उन सब बातों का और परिस्थितियों का वर्णन किया है। सम्पूर्ण जानकारी के लिये यह पुस्तक पढ़िये। सक्षेप मे उनका निम्न महत्वपूर्ण वर्णन विशेष है—

पृष्ठ १४०, १४५, १७८ आदि आदि

"गूजरों ने—जो तहसील सिकन्दराबाद मे बहुत बड़ी सख्या मे अन्डे सैंकड़ो गाँव के जमीदार थे और ७००-१३३ गाव, भाटी दादरी राजवंश पर थे—गदर मे सामूहिक रूप से भाग लिया और एक दम विद्रोही हो गये। सिकन्दराबाद ग्रान्ट ट्रन्क रोड पर सब स्थानों की सरकारी चौकियों पर अधिकार करके लूट कर, इन्होने आग लगा दी। बुलन्दशहर की जेल तोड दी, सारे जिले मे अव्यवस्था, अराजकता, उपद्रव और *लूटमार का बाजार गर्म होगया। बिशनसिंह, अगरतसिंह, राव शम्भूसिंह* के पोते खासतौर से विद्रोही रहे। उन्हे भारी सजा दी गई। कटहड़ा के उमरावसिंह ने अपने को १८५७ ई० में राजा मान लिया। नन्द वासियों और कराभियों ने मालागढ के वलीदाद खा नवाब का साथ दिया और

सम्बन्धी स्वभाव को कायम रक्खा और खुल्ल होकर तरह तरह के जुल्म किये और अंग्रेजों की फौजी कार्यवाही में बुरी तरह—बहुत रोड़ा अटकाया।"[११६]

सर जॉन जनरल महरर्ट बलफोर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'साइक्लो पीडिया इन्डिया एन्ड आफ ईस्टर्न साउथर्न एशिया' में लिखते हैं कि—

'सन् १८५७ ई० के प्रसिद्ध भारतीय विद्रोह (गदर) में देहली के चारों ओर के गूजरों के गांव—पिछले पचास वर्ष तक बिलकुल शान्त रहने के बाद—एकदम बिगड़ गये, और गदर के शुरू होने के चन्द घण्टों के भीतर ही भीतर उन्होंने तमाम जिलों को लूट लिया। यदि कोई महत्व पूर्ण अधिकारी उनके गांवों में शरण के लिये गया तो उसे भी नहीं छोड़ा गया। ब्रिटिश गवर्नमेन्ट का शासन हटने के साथ ही गूजरों ने, जो देहली के चारों ओर बसे हुये हैं और इनके समान दूसरी उपद्रवी जातियों ने खुलेआम बगावत कर दी और अपनी लूट मार करने वाली पुरानी आदत फिर ग्रहण कर ली।"[११७]

गदर में पूरा पूरा हिस्सा लिया। भाटी, नागड़ी आदि सभी गूजरों की जरयेचन्द आबादियां सामूहिक रूप से विद्रोही रहीं। उनके गाँव जला दिये गये। नेताओं को फांसी देदी गई और जाटों तथा ऐंग्लो इन्डियन परिवारों को मार दे दिये गये, सबसे अधिक उनको हानि उठानी पड़ी। अट्टा के कान्हा इन्द्रसिंह, असावर के ऐमनसिंह, जनेदपुर के दरयावसिंह रानपुर के सरनीतसिंह, अट्टा के नत्थासिंह, शुनपुरा के रामरखश आदि को फांस सजायें दी गई।"

[११७] वर्तमान उत्तरप्रदेश—की ब्रिटिश राज्यकालीन १६३६ ई० की द्वितीय महायुद्ध से पूर्व—प्रान्तीय लेजिस्लेटिव असेम्बली के मेम्बर चौधरी भगत सिंह सहारनपुर ने उत्तर प्रदेश के गूजरों के सम्बन्ध में कुछ अनस्टार्ड सवाल पूछे थे जिनके उत्तर से यह पता चला कि गदर के बाद से इतना समय बीत जाने पर भी गूजरों को प्रान्तीय सर्विसों में में कोई स्थान न था। सिर्फ ७ नायब तहसीलदार, पी० डब्लू० डी० में साधारण १६ (साधारण अफसर या गजेटिड नहीं), ऐग्रीकल्चर में

मार्टिन्स इण्डियन ऐम्पायर भाग २ पृष्ठ १४७ के अनुसार गदर का इतिहासकार लिखता है कि "मेरठ से जो सवार दिल्ली आये थे, वे संख्या में अधिक न थे, पर थोड़ी देर बाद पैदल सेना और दिल्ली के निवासी मुसलमान भी आ मिले। दिल्ली की भारतीय सेना भी इनके साथ हो गई, पर दिल्ली की सर्व साधारण प्रजा ने इनका साथ नहीं दिया, यहां तक कि मजदूर भी इनके साथ न हुए,

---

३ साधारण कर्मचारी थानदार आदि, मेडिकल में २ साधारण (डाक्टर नहीं), पुलिस विभाग अफसर कोई नहीं, सब इन्सपेक्टर ४ हेडकान्स्टेबिल २, नायक ४ कान्स्टेबिल १४४, इसमें छोटे दर्जे के नौकर १, ग्राम सुधार विभाग में २ आरगनाइजर व १ चपरासी सर्विस में थे।

संयुक्तप्रान्त (उत्तरप्रदेश) के जिले सहारनपुर, मुजफ्फरनगर आदि के उन गांवों को १८५७ ई० के गदर का रिकार्ड पढ़ने वाले अंग्रेज अफसरों की मेहरबानी क्रिमिनल ट्राईब्स एक्ट (जरायम पेशा कानून) में ले लिया गया। 'संयुक्त प्रान्त की अपराधी जातियां' नामक उत्तरप्रदेश सरकार द्वारा प्रकाशित पुस्तक के लेखक ने गवर्नमेन्ट रिपोर्ट के आधार पर गूजरों की गणना जरायम पेशा जातियों में करते हुये भी उनका महत्वपूर्ण इतिहास २२१–२२–२३–२४ पृष्ठ पर लिखा और पृष्ठ १७६ पर अपराधी जातियों के सम्बन्ध में विशेष रूप से लिखते हुए गूजरों के सम्बन्ध में स्पष्ट लिखा कि'—

"गूजर एक सम्मानित जाति है चोरी करना उनका उद्योग और और व्यवसाय नहीं है।" इसी पुस्तक के पृष्ठ १८७ पर मि० बलन्ट ने उनकी आपसी पंचायतों के महत्व को स्वीकार करते हुये लिखा है कि'— "प्रत्येक गूजरों के गांव में एक स्थायी पांच व्यक्तियों की पंचायत होती है, जिसका सरपन्च पुश्तैनी होता है यदि कोई भी जटिल मामला पंचायत के सामने आता है, तो उसका निर्णय कई गांवों की पंचायत द्वारा चुनी हुई विशेष पचायत करती है।" वास्तव में ६० बरसो के अंग्रेजों के राज्य में गूजरों की बर्बादी उनके दृढ़ सगठन से ही बची रही। वरना विदेशी शासक ने कुछ कसर बाकी नहीं छोड़ी।

पर दिल्ली के चारों ओर गूजरों की बस्तियां थीं, उनमें से कुछ खेती का काम करते और शेष गाय भैंस पालते थे। मौके पर लूटना और डाका डालने से यह लोग न चूकते थे, इस समय विद्रोही सिपाहियों और मुसलमानों के साथ गूजर शामिल हो गये। कप्तान डगलस, फ्रेजर (कमिश्नर) और हचिन्सन (चीफ कमिश्नर) उत्तेजित भीड़ को समझा रहे थे। जो अंग्रेजों को द्वेष की दृष्टि से देखते थे और जो उन्हें अपनी अवनति का कारण समझते थे, वे सिपाही लोगों के साथ अंग्रेज जाति का नाश करने का निश्चय करके उठे थे और नर रक्त बहाकर अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर रहे थे। कम्पनी के विरुद्ध खड़ा होने में उन्हें भय नहीं लगा, निर्भयता पूर्वक अंग्रेजों का खून करने लगे। फ्रेजर, डगलस की एक न चली। फ्रेजर भाग खड़े हुये और जीने के पास खड़े एक आदमी ने तलवार चलाकर उनके टुकड़े कर दिये। उत्तेजित भीड़ ऊपर गई और उसने डगलस आदि सब अंग्रेजों को क्षण भर में मार दिया। देहली में चारों ओर नंगानाच फैल गई। मेजला पहाड़ और छावनी के बीच में गोल घर था। डाक्टर बाटसन काला रंग पोत कर सन्यासी के वेष में दिल्ली की दुर्दशा और अंग्रेजों के सामूहिक विनाश की खबर लेकर निगेटियर प्रेन्स की मिट्टी के साथ नदी पर नाव की प्रतीक्षा में पहुँचे। आंख की पुतली से गूजरों ने उसे पहचान कर गोली छोड़ना शुरू कर दिया। गूजरों ने उसकी नंगा झोली ली और सब सामान छीनकर बिल्कुल नंगा कर दिया। जान बचाने की लालसा में वे बिल्कुल निडर करनाल की ओर भाग निकले। विद्रोही, बादशाह की वफादारी के साथ झुन्ड के झुन्ड शहर में घूम रहे थे और

---

[२१५] मेमोर्स आन दी हिस्ट्री फोक-लार एन्ड डिस्ट्रीब्यूशन आफ दी रेसज आफ दी नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज आफ इन्डिया सर हेनरी एम० इलियट के० सी० बी० पृष्ठ १८६

[२१६] दी ट्राइब्स एन्ड कास्टस आफ दी नार्थ वेस्टर्न प्राविन्सेज आफ अवध डब्लू० सी० क्रूक बी० ए० बी० सी० एस० भाग २ पृष्ठ ४४७

[२१७] साइक्लोपीडिया आफ इन्डिया एन्ड आफ ईस्टर्न एन्ड साउथर्न ऐशिया (सर जान जनरल ऐडवर्ड बलफोर), पृष्ठ १२६१

पहले के समान अधिकार, और सम्मान पाने के लिये सिपाहियों का साथ देने लगे। भयानक तरंगों से शहर लहराने लगा। ३८ वीं सेना के एक अफसर ने यह लिखा कि "हमारी सबसे अधिक दुर्गति गूजरों ने की।"[३१८] भागे हुए अंग्रेज स्त्री और बच्चों को आसपास के देहातों में शरण मिली।

जिस समय देहली में खून की होली हो रही थी, कोमलांगी अंग्रेज महिलायें छोटे छोटे बच्चे प्राणों के भय से भाग रहे थे, दरख्तों, झाड़ियों, खन्दकों और टूटे मकानों में छिप-छिप कर दिन बिता रहे थे, कांटों से लहू लुहान, गर्मी से तड़फे, घावों से घायल, स्वजनों के विरह से दुःखी लोगों को उस समय अगर देहली के आसपास बसे हुये गूजर मानवता के नाते इनकी रक्षा न करते, तो वे तड़प २ कर मर जाते। उस जमाने में अखबारों में गदर की लोमहर्षण घटनाओं का विवरण छपता था। मेमों पर अत्याचार और पाशविकता की बातें लिखकर अंग्रेजों ने सब को चौंका दिया था। अंग्रेज स्त्रियों और कुमारी युवतियों पर लोगों ने किस प्रकार बलात् पशु बल प्रयोग कर सरलतामयी युवतियों को दुर्दशाग्रस्त किया और उनके शरीर की दुर्गति करके किस प्रकार छुरों से तड़पा २ कर वे काटी गईं, यह सब विवरण उस समय अखबारों में निकले थे। मोहमयी कल्पना के बल पर, स्वार्थी लोगों ने जोश में पागल होकर, स्वार्थ से प्रेरित होकर, ऐसी अनर्गल बातों में सबको शरीक कर लिया था। लेकिन गूजरों के सम्बन्ध में सामूहिक रूप से इस सिलसिले में, जो विवरण अंग्रेजों (तत्कालीन) ने दिया, वह बड़ा महत्वपूर्ण है। इस स्वतन्त्रता के युद्ध में, जो बर्ताव उन्होंने स्त्रियों, बच्चों (अंग्रेजों) के साथ किया वह आर्य सभ्यता और संस्कृति में चार चांद लगाता है। प्रतिहिंसा की भावना में भी, जो उनके चरित्र के सम्बन्ध में लिखा है, उसमें गूजर और साथ ही भारत तथा आर्य जाति का मुंह उज्वल हो जाता है और ऐसे समय में जब देहली में अंग्रेजों के विनाश में, दिमाग की सम्पूर्ण

[३१८] गदर का इतिहास (शिवनारायण द्विवेदी मार्टिन इन्डियन ऐम्पायर) भाग २ पृष्ठ १४७-१४६-१६०-१६१-१६३-१६४-१६७-१६६-१७४-१५१-१५२-१५३-१५४

शक्ति विक्षिप्त हो रही थी और हिंसा की आग में मर्म भावनायें समाप्त हो गई थीं, गूजरों ने अपना मानसिक सन्तुलन आर्य भावना संस्कृति के नाते ठीक रक्खा, यह गौरव और ईर्ष्या की वस्तु है और उन ऐतिहासिक लोगों के मुंह पर एक करारा तमाचा है, जो गूजरों को असभ्य एवं जंगली समझते अथवा लिखते हैं। जस्टिस मेकार्थी को इसीलिये जांच के समय लिखना पड़ा कि गदर में हम लोगों की क्रोधाग्नि इस प्रकार की अफवाहों से भड़काई गई कि "अंग्रेज महिलाओं की बेइज्जती की गई, निर्दयता के साथ उनके अंग भग किये गये, बलात्कार चरम सीमा तक पहुँच गया। सच तो यह है कि उनमें अनावश्यक वितरण के सिवाय कोई काम नहीं लिया गया, न उनका अपमान किया, न उन पर अत्याचार हुआ, न उनके कपड़े उतारे गये, न उनकी बेइज्जती की गई और न जान बूझ कर अंग भंग किया गया।"

मार्टिन्स इण्डियन ऐम्पायर में सहृदय अंग्रेज लेखक का निम्न वर्णन बड़ा महत्वपूर्ण है और गूजरों की एक विशिष्ट संस्कृति को प्रकट करता है। उन्हीं के शब्दों में निम्न उद्धरण पढ़कर भावी पीढ़ी का मस्तिष्क गर्व से ऊंचा हो उठेगा।

"अंग्रेज स्त्रियों पर बलात्कार अत्याचार होने की, जो बातें कही गई हैं, वे किसी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य से तो हो ही नहीं सकती थी, क्योंकि वे स्वयं अंग्रेजों को अछूत समझते थे। उन्हें अपनी जाति और वर्ण का विचार था। इसके अतिरिक्त उच्च हिन्दू जाति का धार्मिक अभिमान, पवित्र सदाचारमय चरित्र ऐसा था, कि उसके कारण उनमें ऐसा हो ही नहीं सकता था। गदर में सबसे अधिक विद्रोही गूजर थे, वे लूट मार करते, धन छीनते और अंग्रेजों को जान से भी मार डालते थे। पर यह पाप उन्होंने कभी नहीं किया। हमारे यहां अंग्रेजों में अंग्रेज स्त्री की अंगूठी लेना बड़ा पाप समझा जाता है और यह बड़ा अशुभ है, क्योंकि इससे उसका विवाह टूटा समझ लिया जाता है। गूजरों को जब यह बात मालूम हुई, तो किसी भी गूजर ने मेम की अंगूठी को हाथ तक नहीं लगाया और भूल से ली हुई अंगूठियां अपने को खतरे में डालकर वापिस कर दीं। मुसलमानों की बात पृथक है, उनकी कुरान में चाहे जो लिखा हो, पर उन्होंने योग्य

के शहर जीतते समय भी वे सब अत्याचार किये। दिल्ली में भी उनके अत्याचार भयानक थे। हिन्दू सिपाही अंग्रेजों के दुश्मन हो चुके थे, उन्होंने हथियारों से अंग्रेजों की जान ली, मकानों को जलाया, पर जानवरों की तरह स्त्रियों पर उन्होंने अनाचार नहीं किया. पर मुसलमानों ने लूट की, अपने पराये को लूटा. अगर स्त्री पर जहां कहीं जबरदस्ती हुई, तो वह मुसलमानों द्वारा।"[११६]

दिल्ली में गदर होने के बाद अंग्रेजों ने कम अत्याचार नहीं किया और गूजरों पर जो जुल्म किये वे बड़े मार्मिक हैं। अंग्रेजों ने रास्ते के गांवों में ७ नम्बरदारों को फांसी देकर चार गांवों में आग लगादी।[११७] प्रतिहिंसा की समाप्ति बड़ी हृदय विदारक है जितना भयानक काण्ड गूजरों ने किया था, उससे चौगुना वीभत्स काम अब अंग्रेजों ने करना शुरू कर दिया। उदारता, दया और न्याय का कहीं नाम न रहा, चारों ओर हिंसा, बदला और खून ही खून हो गया। सौ अपराधी छूट जांय, पर एक निरापराधी को सजा न मिले, यह आदर्श लुप्त हो गया। हिन्दू पेट्रियट ने इस अवसर पर सच ही लिखा था कि "गवर्नर, अगर सेनापति नील और दूसरे फौजी अत्याचारों की रीति को अच्छा समझते हैं तो उन्हें चाहिये कि कुछ कसाइयों के हाथ में देश को सौंप कर यहां से विदा हो जाय"। अंग्रेज अत्याचारों के शिकार सबसे पहले गूजर हुये। मेरठ गजेटियर लिखता है कि "मेरठ कैन्ट के आसपास के गूजरों के गांवों का साहस इतना बढ़ गया था कि उनके खिलाफ सर्व प्रथम कार्यवाही करना आवश्यक था। पुलिस अधिकारी मेजर विलियम और डनलप ने एक वालन्टियर कोर बनाई और उसका नाम वर्दी के नाम पर 'खाकी रिसाला' प्रसिद्ध होगया। उन्होंने तमाम योरोपियन, ४५ घुड़सवार योरोपियन सैनिक ११ वफादार फौजी ट्रूप्स ३८ वीं इन्फेन्टरी, २ योरोपियन सारजेन्ट, दो तोपें (जिन पर ७ सारजेन्ट योरोपियन) को तथा १० सैनिक विशेषज्ञ इसमें लिये और ४ जौलाई १८५७ ई० को सबसे पहले गूजरों के बहुत से गांवों पर अचानक हमला

[११६] मार्टिनस इण्डियन एम्पायर भाग २ पृष्ठ १७२–१७३

[११७] चोल्स इण्डियन म्यूटिनी भाग १ पृष्ठ १८६

किया। इनमें मुख्य गाँव घाट–पाचली और नगला आदि थे। इन गावों के निवासी उपद्रव के लिए खास प्रसिद्धि प्राप्त कर गये। प्रातःकाल ही गाव (घाट पाचली नगला) घेर लिया गया। अधिकांश व्यक्ति मारे गये। ४६ कैद कर लिये, जिनमें से ४० को तत्काल फांसी पर लटका दिया गया। सब पशु सामान छीन लिया गया और गावों में आग लगा दी गई। फिर, इन तीनों घाट पाचली नगला बुजुर्ग, भूपरा गांवों में 'खाकी रिसाला' कुछ दिनों बाद पहुँचा और उन्होंने इसी प्रकार की उचित सजायें (अङ्गरेजों की समझ में) दी गई।"[१११]

सीकरी गाव में भी यही स्थिति और भयानक कांड हुआ और गाव फूंक दिया गया। ३० आदमियों को फांसी दी गई और बहुत से मारे गये।[११२] मेरठ जिले में और भी बहुत से गांवों के साथ यही तरीका हुआ। सैकड़ों गाव जप्त करके अङ्गरेजों के वफादारों को दे दिये गये। जिला बुलन्दशहर (स्वतन्त्रता के प्रथम युद्ध १८५७ ई०) में सबसे प्रसिद्ध था और यह जिला सामूहिक रूप से अत्याचारों का शिकार हुआ। क्योंकि इस जिले में नागड़ी, भाटी, कपासिये, बिधुड़ी, खटाने आदि सभी गूजरों ने सामूहिक रूप से विद्रोह में भाग लेकर अंगरेजा

---

[१११] मेरठ गजेटियर पृष्ट १७६, १८०, १६६

The first expedition of this corps was made on the 4th of July, when they went out against several villages about six miles from Meerut in company with 100 men of the Rifles 60 carabineers and two horse artilery guns The princpal villages were Panchlighat and Nagla, the inhabitants of which had made themselves especially notorious, they were successfully surrounded a little after daybreak, and a large number of the male inhabitants were killed 46 taken prisoners, of whom 40 were subsequently hanged, and all the cattle carried off, the village then were burnt (176)

Again the Khaki Risala were obliged to take the field against the villagers of Panchli Buzurg, Nagla and Bhupra who met with a well deserved punishment (Page 180)

[११२] वही पृष्ट १८७

की सत्ता समाप्त कर दी थी और युद्ध के सबसे बड़े सेनापति वलीदादखां पठान मालागढ़ के साथी प्रेमसिंह, कान्हा तथा कटहड़ा के राजा उमराव-सिंह भाटी के नेतृत्व में भयानक रूप से सशस्त्र क्रान्ति द्वारा अंगरेजी सत्ता को थोड़े दिनों के लिये समाप्त कर दिया था और तारघर, डाकबंगले, जेल, कचहरी के रिकार्ड, थाने, फौजी चौकियाँ आदि सब समाप्त करदी।[३३१] अंगरेजों ने गांव जलाकर एवं सम्पत्ति भग्न तथा नष्ट कर जमीनों के अधिकार भी छीन लिये। नेताओं और साधारण जनता को खुलेआम पेड़ों पर फांसी दे दी गई। सड़कों पर राह चलते हर आदमी को जो 'ए' को 'ओ' के स्वर में उच्चारण करता था, गूजर समझते हुए आम रास्तों व सड़कों पर तुरन्त फांसी के फन्दों में झुला दिया। सहारनपुर जिले में मि० स्पनकी (Spankie)—जिन्हें आमतौर से पन्नी साहिब कहते थे—के हाथ में जिले की बागडोर थी। यद्यपि सारा जिला विद्रोही हो चुका था, पर मुण्डलाने के राव साहिब सिंह ने अपनी दूरदर्शिता में विद्रोह का परिणाम कुछ न होते देखकर जगह-जगह के उपद्रवी जत्थों को, जो रामपुर और मगलौर के आसपास एकत्रित थे, लन्ढौरा के शिशु राजा के साथ लोगों को अपने असर से प्रभावित वफादार साथी बनाकर बहुत सी जायदादें बचा लीं। इनके कारण इन्हें और लढौरा को १२ गांव की जागीर भी मिली, किन्तु लखनौती,—गंगोह, नकुड़, सरसावे तथा पुरकाजी के आसपास के गूजर खास विद्रोही रहे और उनकी जायदादें जब्त करके उनके मुख्य व्यक्तियों को फांसी दे दी गई। अनेक गांव फूंक दिये गये। बाबु-पुर, फतेहपुर, सांपला बक्कल के गूजरों के साथ भयानक युद्ध हुआ और यह गांव परास्त करके बुरी तरह जला दिये गये। ३० मई को माणिकपुर के गूजर नेता उमराव सिंह ने अपने को राजा घोषित कर दिया और गावों से सीधी मालगुजारी वसूल करने लगे, इसे दबाने और अपने नष्ट हुए दबदबे को स्थापित करने के लिए रोबर्टसन और स्पन्की सेना के साथ पहुँचे, किन्तु उसे नहीं पकड़ सके और स्वतन्त्रता के प्रेमियों को युद्ध में पराजित होने पर समाप्त करके माणकपुर,-अमरपुर गाँव

[३३१] बुलन्दशहर गजेटियर २१, ४४, १५५–१५६–१६५, २६० मेमोर आफ जिला बुलन्दशहर (लक्ष्मण सिंह) १८७४, पृष्ठ १४०, १७८

ज़ब्त कर लिए गए और जला दिये गए। नकुड़ तहसील में फिर गूजरों के चार गांव जलाये गये। युद्ध गैड़ी, सांढ़ौली, रणधावा आदि के साथ भी यही बर्ताव हुआ।[११०]

मथुरा जिले के छाता, मथुरा, महावन के हिस्सों में गूजरों की स्वतन्त्रता के युद्ध १८५७ ई० में बड़ी अच्छी आबादी थी और अपने गांवों के स्वतन्त्र स्वामी थे। शेरगढ़ी के आसपास के गूजरों ने खुले आम विद्रोह में भाग लिया और उनके १० ग्राम हाथरस के जाट राजा टीकमसिंह, गोविन्दसिंह को राजभक्ति के परिणाम स्वरूप दिये गये।[१११] क्रान्तिकारी स्वतन्त्रता के प्रेमी इन गूजरों के गांवों से हाथरस के ब्रिटिश राजभक्त घराने में यह असर पैदा हुआ कि इस वंश में प्रसिद्ध देशभक्त राजा महेन्द्र प्रताप जैसे स्वतन्त्रता के प्रेमी पैदा हुये, जिन्होंने अंग्रेजों के साम्राज्यवाद का विरोध और भारतीय स्वतन्त्रता का समर्थन विदेशी शक्तियों से—जो अंग्रेजों के विरुद्ध थीं—कराया और अपनी रियासत का अधिकांश धन जनहित में लगाया।

(१६)

ब्रिटिश शासन के उच्च अधिकारियों ने, भारतीयों के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम की महान राज्यक्रान्ति को सन् १८५७ ई० का गदर बताया और इसकी जिम्मेदारी कम्पनी पर थोपी गई। कम्पनी के शासन का अन्त करने की मांग पार्लियामेन्ट में उपस्थित की गई और सन् १८५८ ई० से शासन की बागडोर महाराणी विक्टोरिया के हाथ में आने से कम्पनी के शासन का अन्त हो गया। सन् १८५८ ई० के ऐक्ट के अनुसार, जो अधिकार कम्पनी के प्रति बोर्ड आफ डायरेक्टर्स एवं बोर्ड आफ कन्ट्रोल को प्राप्त थे, वे पार्लियामेन्ट के प्रति भारत सचिव को प्राप्त हुए, जो पार्लियामेन्ट एवं मन्त्री मंडल का सदस्य होता था। इसकी सहायता के लिये इन्डिया कौंसिल का निर्माण हुआ, जिसके चौदह सदस्य होते थे। भारत मन्त्री की आज्ञाओं का पालन करने

[११०] सहारनपुर गजटियर पृष्ट १६८, १६६, २०३, २०४
[१११] मथुरा गजटियर (डी० एल० ड्रेक ब्रोकमन) पृष्ट ११२

हुए गवर्नर जनरल को सम्पूर्ण शासन का अधिकार दिया गया, जो महारानी विक्टोरिया के समय से उनका वायसराय बनाया गया और भविष्य में इसी नाम से प्रसिद्ध हुआ। लार्ड केनिंग ऐसा प्रथम गवर्नर जनरल था, जो भारत का पहला वायसराय कहलाया। महारानी विक्टोरिया का महान आज्ञापत्र (Magna Charta) वायसराय लार्ड केनिंग ने १ नवम्बर १८५८ ई० को इलाहाबाद में पढ़ कर सुनाया। विद्रोहियों को क्षमा की घोषणा की गई, राजाओं के अधिकार सुरक्षित रखने, अच्छा व्यवहार करने, उद्योग धन्धों को प्रोत्साहन देने, धार्मिक स्वतन्त्रता, योग्यता के अनुसार सरकारी सेनाओं में तथा अन्य नौकरियों में स्थान देने की भारतियों के लिये घोषणा हुई।

वास्तव में स्वतन्त्रता प्रिय, अङ्गरेजों के अनुसार ग़दर की बागी जातियों को, जो भी सख्त से सख्त सजा दी जा सकती थी, वह तत्काल ही दे दी गई और उनकी जायदाद जप्त कर, उन्हें अत्यन्त असहाय स्थिति में कर दिया, ताकि न तो वे फिर कभी सिर उठा सकें और न शिक्षा प्राप्त करके सरकारी नौकरी प्राप्त कर अपनी स्थिति उच्च कर सकें। गूजरों के सम्बन्ध में विद्रोह के बाद, जो रिपोर्ट व साहित्य तथा इतिहास गवर्नमेंट की ओर से प्रकाशित किया गया, उसमें सरकार ने महारानी विक्टोरिया की घोषणा के अनुसार उन्हें न क्षमा किया, न सुविधा दी, उलटा प्रान्तीय गवर्नरों, उच्च अधिकारियों ने उनके खिलाफ, जो चाहा मनमाना लिख दिया। भू सम्पत्ति विहीन, स्थान च्युत होने के बाद जातियों में कुछ बुराई परिस्थितिवश पैदा हो जाना स्वाभाविक ही है। पर उसका इलाज सरकार के हाथ में था, बजाय उसके कि वह इस समस्या का समाधान करती, उसने इन पर दोषारोपण करके कुचलना शुरु कर दिया। प्रतिकूल परिस्थिति में वीरकर्मा, संघर्षशील जातियों की, जो परिस्थिति होती है वही गूजर जाति की हुई। उनके वे गुण, जो उनके शासन काल में देश में व्यवस्था, शान्ति और सुरक्षा के कारण थे, सत्ता छिन जाने के बाद सामाजिक और राजनीतिक दुर्गुणों में परिणित हो गये। राजपूतों के साथ यही व्यवहार हुआ। मरहठा जैसी स्वतन्त्र जाति को लुटेरे, डाकू के अर्थों में ही प्रयोग में लाया गया।

७वीं शताब्दि में सिन्ध में ब्राह्मण राजा चच ने वीर जाटों के साथ यही बर्ताव किया। उनके समस्त अधिकार छीन लिये गये, ब्राह्मणवाद के खास परकोटे में तो उनका प्रवेश निषिद्ध था ही, किन्तु चच राज्य की सीमा में भी वे गांवों के परकोटे के बाहर रक्खे जाने लगे। तलवार बान्धने, उत्तम श्रेणी के कपड़े पहिनने, घोड़ों पर जीन बान्धकर सवारी करने की उन्हें आज्ञा नहीं थी। अपनी अलग पहिचान के लिये उन्हें कुत्ते लेकर चलना होता था, सिर पैर नंगे रखने होते थे। ब्राह्मणवाद में राजाओं की रसोई के लिये लकड़ी लाना, चौकीदारी (सारे गांवों में) उनका खास काम था। चोरी होने पर अपराध की जिम्मेदारी उन पर थी।[११६] लेकिन जाट संघर्षशील क्षत्रिय थे, उन्होंने कष्टों को बर्दाश्त किया, पर उन्हें ब्राह्मणवाद के अरबों से मित्रता के सम्बन्ध नहीं रुचे, इन्होंने अन्त तक विद्रोह किया और अरब-भारत व्यापार के मुख्य केन्द्र देवल के आसपास वे संगठित होकर स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करने लगे।[११७] अरबों को लूटना और सिन्ध के नागरिकों की रक्षा करना उन्होंने अपना उद्देश्य बनाया। लेकिन ब्राह्मण राजा चच और अरबों ने जाटों को डकैत-चोर ही प्रसिद्ध किया। यही वीर जाट आगे चलकर अरबों से लड़े।[११८] और भारतीय (सिन्ध) सुन्दर बालिकाओं, युवतियों को अरब में ले जाने वाले जहाजों को मय सामान के लूटने के कारण वे अरबों की आंखों में खटक गये। दाहिर के साथ युद्ध में यह लड़े और खूब लड़े, पर ब्राह्मणों ने दाहिर को धोका देकर अरबों को भारत में सिन्ध द्वारा प्रवेश दिला दिया, जिसे बाद में सिन्ध की ओर से २५० वर्ष तक गूजरों ने रोक कर, आर्य मर्यादा की रक्षा करके, क्षात्र धर्म पालन करते हुए अपने को अरबों का और इस्लाम का खास शत्रु प्रसिद्ध किया।[११९] किन्तु सिन्ध के जाटों के साथ अरबों और उनके सलाहकार

---

[११६] देखो चचनामा (इलियट) भाग १ पृ० १५१—जाट इतिहास (प्रर्ली) डा० कालिका रजन कानूनगो पृ० २८

—[११७] वही पृ० २८

[११८] चचनामा मिर्जा कालिक बेग का अनुवाद पृ० १२४,१३७

[११९] यही पुस्तक गुर्जर इतिहास पृ० २४७ अध्याय ५

पुराने अमात्यों का व्यवहार यही रहा। मोहम्मद बिनकासिम ने जब अपने शत्रु जाटों की स्थिति मालूम की, तो उसे दाहिर के पूर्व मन्त्री ने भी वही स्थिति बताई। "यहां (सिन्ध) जाटों को बढ़िया वस्त्र पहिनने की आज्ञा नहीं है इसलिये वे मोटी लुंगी, काला कम्बल या कन्धे पर मोटी चद्दर की चादर रखते हैं। पहिचान के लिये कुत्ते साथ साथ रखते हैं। उनमें छोटे-बड़े की तमीज नहीं. उनकी दशा गुलामों की सी है। राज-साम्राज्य के साथ बगावत करना उनका काम है। जब कहीं लूटमार होती है, तो वे ही पकड़े जाते हैं, क्योंकि यह उनका आम पेशा है। देवल के आसपास वे बड़े २ हकैत हैं। जाटों में राजपरिवर्तन का कोई असर नहीं। उनपर काफी सख्ती है। बिनकासिम ने ब्राह्मणवाद का पहला विधान उनके लिये लागू रक्खा।[२१०] जब स्वदेशी जाति ही स्वाधीन जातियों को इस प्रकार अधिकारों से वंचित रख सकती है. तो भला सात समुद्र पार के अंगरेज इस मौके पर कैसे चूक सकते थे।

जहां गूजर जाति का ऐतिहासिक कोण उपस्थित करते हुए प्रसिद्ध इतिहासकार सर जॉन एडवर्ड बलफोर ने लिखा कि "गूजर जाति का महत्व इससे पता चलता है कि इनके कारण पंजाब के एक भाग का नाम गुजरात और पश्चिमी भारत के एक प्रदेश का नाम भी इसी नाम से प्रसिद्ध हुआ। उनके सम्बन्ध में यह निश्चित धारणा है कि वे प्राचीन आर्यों के वंशज हैं। इसी प्रकार टाड इन्हें राजपूतों की एक श्रेणी (वीर गूजर) मानता है। नागपुर प्रदेश के गूजर अपने को रामचन्द्र जी के पुत्र लव की सन्तान (सूर्यवंश) मानते हैं, जो निःसन्देह स्वीकरणीय है। एक समय वे निश्चित रूप से भारतीय गुर्जर साम्राज्य के स्वामी थे, जिसके लिये 'इदरसी' और इब्न खुर्दबाह ने 'गुर्जर' और गुर्जरों के सम्राट का वर्णन किया है. जिसे उनने जुर्ज या हुज्र लिखा है।"[२११] "गूजर आर्य हैं, क्योंकि आर्यों से पूर्व की किसी भी अनार्य

[२१०] जाट इतिहास (कानूनगो) प्रथम भाग २६ (चचनामा १२४—१३७ के आधार पर)

[२११] साईक्लोपीडिया आफ इन्डिया एन्ड आफ इस्टर्न साउथर्न ऐशिया (सर जान जनरल एडवर्ड बलफोर) भाग १ पृष्ठ १२६१

जाति से उनका किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं है, वे हृष्ट पुष्ट, आकर्षक, सुन्दर आर्य पवित्र नस्ल के हैं। उनकी महिलायें (गूजरी) विशेष रूप से आकर्षक, सौन्दर्य पूर्ण, दृढ़ शारीरिक गठन वाली, साहसी और स्वच्छन्द स्वभाव की श्रेष्ठ आचरण वाली होती हैं" ।[१११]

आगे यही बलफोर महोदय लिखते हैं कि, "गूजरों मे जाटों की तरह विधवा विवाह हो सकता है, वे मांसाहारी हैं किन्तु गाय, बैल, भैंस आदि का मांस कभी नहीं खाते। जगली सुअर को अधिक पसन्द करते हैं। शराब, तम्बाकू, गांजा, अफीम, भांग का भी सेवन करते हैं। औरतें प्यार तथा बच्चों को अफीम खिलाती हैं। गूजर पूर्णतया अशिक्षित और पढ़ने से घृणा करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप उनकी परम्परा में शिक्षा पौरुषहीन समझी जाती है।"[११२]

वास्तव में उनकी शिक्षा सम्बन्धी घृणा स्वाभाविक नहीं, सरकारी नौकरियों में उपेक्षा तथा गवर्नमेंट की उनके प्रति उपेक्षा—जो अंग्रेज उच्च अधिकारियों द्वारा बरती गई—१८५७ ई० के विद्रोह सम्बन्धी नीति का परिणाम था। वर्ना अनुकूल अवसर प्राप्त होने पर उनमें शिक्षा का प्रसार बड़ी तेजी से हुआ और पहले से भी वे शिक्षा को महत्व देते हैं, जिसका उदाहरण आज का स्वतन्त्र भारत है।[११३] जहां १८५७ ई०

—[१११] वही पृष्ठ १२६१

—[११२] वही पृष्ठ १२६१

[११३] मेरठ, मुजफ्फरनगर, सहारनपुर, बुलन्दशहर एव देहली के आसपास गुड़गांव तथा करनाल जिलों में गूजरों के प्रत्येक बड़े गांवों में जिलाबोर्ड की ओर से हायस्कूल, जुनियर हाईस्कूल है। प्रारम्भिक माध्यमिक शालाएं तो गाव-गाव में हैं। स्वय सहारनपुर, मुजफ्फरनगर में गूजर शिक्षा प्रचारणी सभा की ओर से रामपुर में गूजर ऐग्रीकलचर कालिज, सन्दरावली में गूजर हायस्कूल एव अनेक जुनियर हायस्कूल्स हैं। मवाना में नवजीवन गूजर कालिज, चिरोड़ी में किसान (गूजर) हायर सेकेन्डरी स्कूल तथा बुलन्दशहर में दादरी (भाटी गूजरों की प्राचीन राजधानी) में गूजर सस्कृत कालिज है। साईक्लोपीडिया आफ इन्डिया इस्टर्न साउथर्न ऐशिया सर जान जनरल एडवर्ड बलफोर (भाग १ पृ० १२६१) तथा सर विलियम क्रुक ने भी

मे स्वतन्त्रता के प्रथम सामूहिक प्रयत्न मे असफल होने पर उनके सम्बन्ध में इन्हीं बलफोर तथा दूसरे अंग्रेजों ने लिखा कि "ईसाऊ के पुत्रों की तरह गूजरों की मनोवृत्ति में एक प्रकार की उपद्रव भरी तथा स्वतन्त्र रहने की प्रवृत्ति है। वे प्रत्येक के खिलाफ रहते हैं और प्रत्येक उनके विरुद्ध रहता है" आगे फिर यही १८५७ ई० के उनके द्वारा किये गये अंगरेजों के विरुद्ध हिंसात्मक प्रयत्नों का वर्णन करने के बाद लिखता है कि 'गूजर, अविश्वासी, जिद्दी स्वभाव वाले, पूरे तौर पर बदला लेने वाले और उस समय के लिये पूर्ण अविवेकी उच्च श्रेणी के कानून तथा व्यवस्था को भंग करने वाले, पूर्ण अराजकतावादी, शरारत पसन्द और किसी भी शासन के प्रति विश्वसनीय नहीं हैं। पशुओं की चोरी मे सफल होते हैं। अपनी स्वाभाविक प्रकृति के अनुसार लूट मार आदि की निपुणता तथा चतुराई से प्रसन्न होने वाले, एवं राज नियम तथा व्यवस्था को भंग करने वाले, पहले के अपने कारनामों पर अभिमान करने वाले और पिछले कार्मों को सुनकर प्रसन्न होने वाले होते हैं" [१११]

इसी प्रकार की अनर्गल, बे सिर पैर की बातें तत्कालीन और उसके बाद के उसी वातावरण में पले अंग्रेज अधिकारियों ने उन गूजरों के सम्बन्ध में जोड़ी, जिन्होंने अपनी दुर्बल स्थिति में भी १८५७ ई० में एक बार फिर अपने देश के शत्रु को मार भगाने के लिये अपने को सर्वस्व की बलि देकर अँग्रेजों के विरुद्ध खड़ा किया था। यह वह जाति रही,

---

उनको १८५७ ई० के विद्रोह में अंग्रेजो के खिलाफ पूरी २ कार्यवाही करने के कारण अराजकतावादी कहा है और १८५७ ई० के विद्रोह का तथा बाबर एवं शेरशाह के समय में इसी प्रकार उनको शासन सत्ता स्थापित करने में अड़चन डालने वाला बताते हुए, विघ्नकारी एवं पशुओं की चोरी करने वाला लिखा और उनके सम्बन्ध में गूजर, राघड़ो के न होने पर खुले किवाड़ो सोने की कहावत दर्ज की है। देखो दी ट्राईब्स एन्ड कास्टस (क्रूक) भाग २ पृष्ठ ४४८, इसी प्रकार सर डेन्जोल इबटसन तथा रिसले ने भी अनेक कहावत तथा मनमाने किस्से-कवित दिए हैं, जो आग्नेय वर्तमान सभी जातियों के लिये प्रचलित हैं। देखो पंजाब कास्टस (इबटसन) पीपुल आफ इन्डिया (रिजले) गूजर।

[१११] गाईडनोटीडिया आफ इन्डिया (बल फोर) पृ० १२६१

जिनके द्वारा प्रबल अरबों को मुंह की खानी पड़ी और लिखना पड़ा कि इस्लाम राज्य—अरब और मुसलमान धर्म के भारत में सबसे प्रबल शत्रु गूजर हैं। इन्होंने ही बाबर और शेरशाह, औरंगजेब तथा मौहम्मद शाह और उसके बाद के मुगल शासकों से—लम्बे युद्ध से थके हुए भी वीरोचित संग्राम किया और जीतते हारते हुए भी शक्ति के अत्यन्त क्षीण होने पर भी अन्यायपूर्वक अधिकार करने वाली विदेशी शक्तियों का मुकाबिला किया। भारतीय स्वतन्त्रता के लिये किये गये प्रयत्न, जिन्हें गूजर या मरहठा अथवा अन्य वीर जातियों ने किये उसे राष्ट्र एवं जाति की चेतना का लोप करने के लिये इकैत जातियों एवं निरंकुश सामन्तों का विद्रोह बनाया और उनके बलिदान को—जो स्वतन्त्रता की बलि वेदि पर दिया गया था—देशद्रोह बना कर को समुचित दण्ड दिया गया और उपद्रवी लड़ाकू गूजर जैसी जातियों को कुचल कर देश में प्रथम बार शान्ति साम्राज्य स्थापित किया गया आदि सफेद झूठ लिखे गये। शब्दों को तोड़ मोड़कर जाति को राष्ट्र से विपथ करने के लिये ही इन उपाधियुक्त शब्दों की सृष्टि करनी पड़ी। इस विष का परिणाम जो गूजरों को सामूहिक रूप से दिया गया, यह हुआ कि हमारी जाति एक दम लक्ष्यहीन होकर भयभीत होती चली गई और अवनति की ओर बढ़ती गई। संस्कृत की एक प्रसिद्ध उक्ति 'यस्यास्ति वित्तं स नरः कुलीनः स पण्डितः स श्रुतिमान गुणज्ञः' निर्देश करती है कि मानव मस्तिष्क स्वभावतः सम्पूर्ण बुद्धि और महत्ता का आरोप धनी और शक्तिशाली लोगों—जातियों में कर देता है, जिसका परिणाम, वे स्वयं भी अपने को हेय समझने लगे, स्वाभाविक था। गूजरों की निन्दा का रहस्य अंग्रेजों के प्रति विद्वेष में निहित है। यह हम भी मानते हैं कि कोई भी जाति पूर्णतया निर्दोष नहीं है। जाति में आज दिन की लक्षित बुराइयां उस समय भी थीं, जब हम विजयी, गौरवशाली थे और हुआ करती हैं, पर जब विदेशी साम्राज्य जाति में से राष्ट्रीयता को प्रथक करना चाहता है, तो वह सबसे प्रथम स्वाभिमानी वीर राष्ट्रीयता की प्रतीक जातियों को कुचल कर अपनी स्वार्थपरता से हमारे विनाश का उपक्रम करता है। सामाजिक दोष राष्ट्रीय चेतना के समय अपने आप गौण होकर समाप्त हो जाते हैं और गुलामी के समय भयानक

रूप मे सामने आते हैं। हम दृढ भाव से कहते हैं कि बलफोर या दूसरे अंग्रेजों द्वारा तथाकथित सामाजिक व्यवस्था की बुराइयों में से हम में कोई ऐसी नहीं है—किसी जाति के विषय में पूर्व से किसी खास दोष का मान लेना एक ऐसी निर्मूल कल्पना है, जिसका कोई मूल आधार नहीं होता—जो हमें प्राचीन गौरव प्राप्त करने में रुकावट डाल कर रोक रही है। अगर यह बुराइयाँ, जिनका अंग्रेज सिविलियनों ने वर्णन किया है, जाति में सामूहिक रूप से जन्मजात होती, तो वे दूसरे स्थान पर भी जाति में पाई जानी चाहियें थीं। सचाई को छिपाने के लिये प्रयत्न करने पर भी सिविलियन सफल न हो सके। मध्य प्रदेश के गूजरों का वर्णन करते हुए अंग्रेज अधिकारी लिखते हैं कि "मध्य प्रदेश के गूजरों ने अपने उत्तर प्रदेश के इलाकों की लूट मार, उपद्रव करने वाली आदत बिलकुल छोड दी है और अपने को आदर्श कृषक, प्रतिष्ठित नागरिक, कानून तथा राज व्यवस्था मानने वाली श्रेष्ठ जाति सिद्ध किया है।[२३६]

इसी प्रकार जिन प्रान्तों के गूजर विद्रोह से अलग रहे और जिन प्रान्तों में इसका असर नहीं था, उनके सम्बन्ध में भी यही लिखा गया। पेशावर, हजारा, गुजरात, होशयारपुर, कांगडा, रावलपिंडी आदि प्रदेशों के गूजरों के सम्बन्ध में लिखा है कि वे श्रेष्ठ ऊची जाती के हैं और सुव्यवस्थापूर्ण तरीके से रहने वाले अच्छे नागरिक, चरित्रवान व्यक्ति हैं। आकर्षक सुन्दर, हृष्ट पुष्ट, नम्र, शान्त स्वभाव के उत्तम कृषि पेशा हैं।[२४०] इसी प्रकार मि० विलसन ने गुडगॉव के गूजरों की बाबत लिखा है कि "गुडगाव जिले के गूजरों के सम्बन्ध में मेरी राय बहुत ऊची है। वे जाट, अहीर आदि से बहुत उत्तम, शान्त प्रकृति के और अच्छे बर्ताव, आचरण वाले हैं।"[२४१] इससे स्पष्ट है कि जो

[२३६] The tribes and castes of the Centeral Provinces of India by R V Russell 1916 assisted by Rai Bahadur Hira Lal E A C Gujar—The Gujars of the Central Provinces prove, however, entirely given up the predatory habits of their brethren in northren India and have developed into excellent cultivators and respectable and abiding citizens'

[२४०] पजाब गजटम (सर डन्बील इबटसन क० सी० एम० गर्डे०) पृष्ठ १६३-१६४

कुछ समय समय पर लिखा गया, वह विदेशी जाति के प्रति गूजरों की सामूहिक विद्रोहभरी हिंसात्मक कार्य प्रणाली के कारण ही लिखा गया। यही कारण है कि बाद में, जब देश में अंग्रेजों का एकदम निरंकुश साम्राज्य स्थापित हो गया, तो अंग्रेजों ने गूजरों के सम्बन्ध में लिखा कि "पहले की उपद्रवशील, अराजकतापूर्ण गूजर जाति अब शान्ति पूर्ण उद्योग धन्धे, कृषि आदि में व्यवस्थित रूप में लगी हुई है और उन्होंने अपनी पहली प्रकृति को बदल दिया है।"[२३८] इससे पता चलता है कि यह सब देन अंग्रेजों की दी हुई है।" ई० सन १८७९ के पूर्व की लिखी हुई लन्दन के प्रसिद्ध विद्वान शेरिंग ने 'अपनी जातियां और कबीले' नामक पुस्तक में गूजरों के राजपूत-क्षत्रिय वर्ण के अंतर्गत लिखते हुए, जो नोट दिया है, वह भी हमारे इसी आशय को स्पष्ट करता है। वह लिखता है कि "गूजर उत्तर भारत के जिलों की प्रसिद्ध कृषि पेशा जाति है, जो कृषि, पशु पालन आदि व्यवस्थित उद्योग धंधों में लगी हुई है"।[२३९] उन्होंने कहीं भी उनके सम्बन्ध में इस प्रकार की अनर्गल बातें नहीं लिखीं।

भिन्न भिन्न राजक्रान्तियों के उलट फेर में गुर्जरों (गूजर) परास्त एवं छिन्न भिन्न होने पर, उनके महान आदिरश्र में उनके विभिन्न कुलों का संगठन, शौर्य, आत्म विश्वास, जातीय, उच्च आर्य चरित्र सहायक रहा और वे संघर्षशील बने रहे। प्रत्येक परिस्थिति में उनका सामूहिक जीवन संघर्ष करने, हरेक कठिनाई को पार करने में सहायक रहा। उनकी ग्रामों की ठोस जत्थेबन्दी, सामूहिक पंचायन प्रणाली, उनके विकास में सहायक रही। जडवत स्थिर होकर बैठना वे नहीं जानते, इसलिये उपनिवेशों के रूप में बसे हुए, वे शीघ्र ही अपनी राजनीतिक स्थिति दृढ़ कर गये। यद्यपि ग्रामों की सत्ता उनसे छीन कर अंग्रेजों ने या दूसरी सत्ता हथियाने वाली जातियों ने उनके हाथ से लेली, किन्तु आन्तरिक व्यवस्था स्वयं उनके हाथ में रहने से एक गोत्र कुल ने दूसरे को सहारा देकर पूर्व की उच्च स्थिति को पहुंचा दिया। इसलिये इतिहास

---

२३८ इलियट ग्लोसरी पृष्ट ९९

२३९ हिन्दू ट्राईब्स एन्ड कास्टस (रेवेरेण्ड एम० ए० शेरिंग एम० ए० एल० एल० बी०) पृष्ट २३५

रा ज्ञान उनकी अलग-अलग कुल तथा जाति के रूप में बसी हुई महत्वपूर्ण आबादियों से पता चलता है जहां उनकी उन्नतम स्थिति है और उसी कारण से ग्रामों की स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण रखते हुए राज्य स्थापना में फिर सफल हुए। प्रजातन्त्र पद्धति से राज्य तो उनकी संघ शक्ति पर आश्रित आबादियां स्वयं थीं लेकिन राजनीतिक हलचलों एवं क्रान्तियों के समय वे अपने राज्य स्थापित करने में भी सफल हुए। ऐसे राज्यों का ही संक्षिप्त विवरण पीछे दिया गया है।

भूमि सम्बन्धी अधिकारों का निर्णय करने वाले और महत्वपूर्ण ग्राम समस्या के अध्ययन करने वाले विद्वानों ने भी यह स्वीकार किया है कि अपनी अलग अलग आबादी (ग्राम) बसाते हुए, एक ही कुल-वंश अथवा गोत्र या खाप को एक स्थान पर प्रतिष्ठित करते हुए उन्होंने जो आदर्श ग्राम पद्धति का निर्माण किया है, वह बड़ा महत्वपूर्ण है। यह ग्राम समूह उनके एक प्रकार के उपनिवेश हैं। इनके द्वारा जमींदारी तथा रैयतवारी एवं भैयाचारे की ग्राम पद्धति का इस ढंग पर विकास हुआ है। बेडन पावल ने इस सम्बन्ध में जो लिखा है वह बड़ा महत्व पूर्ण है। इससे गूजरों और जाटों के राजनीतिक विकास का अच्छा आभास मिलता है।

"भारत में आर्यों का साम्राज्य स्थापित होने के बहुत दिनों पश्चात अन्य बहुत सी जाति अथवा कबीलों ने पूर्व के आये हुए आर्यों का पदानुसरण किया और उत्तर भारत में अपनी नई बस्तियां, कभी शासक रूप से और कभी औपनिवेशिक रूप से स्थापित करके अपनी बसावट अख्तयार की। कृषि सम्बन्धी दृष्टिकोण से इन में मुख्य जातियां जाट और गूजर हैं। स्वतन्त्र रूप से ग्राम तथा अपने सामूहिक प्रणाली के ग्रामों की स्थापना करने वालों में यह दोनों (जाट-गूजर) बहुत प्रमुख हैं। यह आश्चर्यजनक बात नहीं है कि राजपूत, जाट, गूजर तथा अन्य इनसे निकृष्टतर जातियां, जो अपने को एक दूसरे से श्रेष्ठ होने के हेतु प्रस्तुत करते हैं, इनमें आपस में पूर्णतया जातिगत सब बद्धता थी और इनके साथ-साथ बहुत से जत्थे वार गांव अनेक रूपों में स्थापित हो गए, चाहे वे जातिगत, प्रजातन्त्रात्मक ढंग के हों

अथवा शिष्ट जन अभिजात प्रतिष्ठित राजवशों द्वारा स्थापित एवं अधिकृत हों, जैसा कि सिन्ध से बनारस तक की इस काल मे भूम्याधिकार पद्धति थी। पजाब के बड़े-बड़े भूमि खण्डों मे वास्तविक प्रदेशों के भू-भागों मे ग्रामो की वास्तविक स्थापना और उसका विस्तार निर्माण जाट गूजरों द्वारा ही मुख्य रूप से हुआ है।"२११

यह समय की बात है कि भारतवर्ष की ग्राम व्यवस्था के उत्तम व्यवस्थापक जिन गुर्जरों को इतिहास मे यह महत्व प्राप्त था कि विदेशी यात्री, उनके कट्टर दुश्मन अरब पर्यटकों ने यह लिखा कि देश मे गूजरों के राज्य के अलावा कोई भी भाग (प्रान्त) चोर डाकुओं के उपद्रव से सुरक्षित नहीं है,[११२] और इसी प्रकार का वर्णन गुर्जर राज्यो के सम्बन्ध

[१११] इन्डियन विलेज कम्यूनिटी (बी० ऐच० बेडन पावल एम० ए० सी० आई० ई० (लन्दन) पृष्ठ २१५-२१६

"Indian village Community" by B H Beden Powell M A C. I E, London

Long after the Aryan Kingdoms had been founded, other tribes, as we have seen, from time to time followed the steps of the first invaders and established themselves sometimes as rulers, sometimes as colonists in upper India The most important of these races, from an agricultural point of view, are the Jats and Gujars They, too are among the most prominent of the founders of villages and of villages in the joint form

It is not surprising, then, what with Rajput clans, Jats, Gujars and other more or less closely connected races, all of whom had pretensions to superiority, and many of whom had the most complete tribal organisation, there should be varieties of joint villages, whether tribal, democratic', or held by the joint descendants of 'aristocratic' founders, as the prevailing tenure from the Indus to Benares

The Jats and Gujars are especially largely represented by original village foundations over existence tracts, in the Punjab

[११२] इलियट (इन्हिास भारत) भाग. १ पृष्ठ ४

ग्रामों का सगठन सुन्दर तथा स्वावलम्बी तरीके से प्रत्येक श्रेणी के साथ किया जाता था। गावों की आय का एक हिस्सा चाहे जिसके पास जाय उनके शासन प्रबन्ध में कोई दखल नहीं किया जाता था। सगठन में एक दस, बीस सौ हजार—या जितने भी गाव समान रक्त वश पर आश्रित कुलों की मुख्य आबादी के होते थे—सम्मिलित थे। देश का अर्थ एक हजार गावों का श्रेणीबद्ध सगठन था। उसका नाम भी जाति अथवा मुख्य कुल समूह के नाम पर प्रसिद्ध होता था। महत्वपूर्ण गाँव बसाने वाली जातियों के साथ गोप (मुखिया), प्रधान चौधरी, मेहर पटेल मुकद्दम आदि शब्द इसी महत्व को प्रकट करते हैं। बौद्ध जातकों से यह भी पता चलता है कि पहले एक गाव में ४०० व्यक्तियों के परिवार रहते थे जो पहले एक ही पेशे, जाति अथवा कुल वालों के अलग अलग होते थे क्योंकि बढ़ई लुहार लकड़हारों के गाव का प्रथक उल्लेख है।[१११] सम्भव है कि किसानों जुलाहों मजदूरों सुनारों आदि के भी गाव प्रथक २ हों। किन्तु अधिकतर गाव मिले जुले पेशे वालों के होते थे और महत्वपूर्ण ग्राम की सत्ता रखने वाली भूमि पर अधिकार रखने वाली जाति व कुलों का ग्राम पर महत्वपूर्ण प्रभाव होता था। गाव प्राय दो प्रकार के तरीकों से बने हुए होते थे।

१ रैयतवारी गाव (सरकार को सीधा लगान देने वाले मध्यवर्ती रहित गाव)

२ जमीदारों के गाव (जमीदार मालगुजारी वसूल करता था (सरकार से सीधा सम्बन्ध प्रजा का नहीं होता था) चूकि उत्तरीय भारत में निरन्तर विदेशी हमले होते रहते थे और यहाँ के निवासियों को अपनी रक्षा के लिये विशेष सावधान रहना पड़ता था, इसलिये उनके संगठन का आधार क्षात्रत्व की भावना वाली सैनिक जातियों के सगठित कुलों में था जो शान्ति के समय देश के अन्नदाता और व्यवस्थापक थे और लड़ाई के दिनों में देश के रक्षक सैनिक रूप में प्रसिद्ध थे, इसी लिये इन ग्रामों के सगठन में कुछ परिवर्तन होना स्वाभाविक था। समान रक्तवश पर आश्रित जातियों की एक प्रकार का स्वाभाविक सगठन होता था और

[१११] जातक भाग २ ४ न० १९६ १८७-४६६

ग्राम या ग्राम समूह पर उनकी सत्ता, अधिकार तथा रक्षा का भार होने से वे विशेष सुरक्षित रहते थे। इसलिये, बाहरी जातियों के आक्रमण काल मे जाट, राजपूत एवं गूजरों ने अपनी स्वतन्त्र सत्ता स्थापित करने के लिये रक्षात्मक एवं जातीय तथा राष्ट्रीय दृष्टिकोण मे गांवों की स्थापना की, या तो अपनी पूर्ववर्ती जातियों को उन्होंने खदेड़ दिया अथवा रक्षा सम्बन्धी साधन न होने मे वे जातियां वहां से निष्क्रमण कर गईं। इन जातियों ने पहले अपनी पंचायतें शासन प्रबन्ध तथा पेशे की दृष्टि से सामाजिक राजनैतिक दृष्टिकोण से एक एक कुल के सैंकड़ों गांवों की बनाई और फिर कुल समूह की पंचायतों का एकीकरण किया। आक्रमण-कारियों मे अपनी रक्षा के लिये इनके संगठन का पंचायती तरीका बहुत व्यापक था, जिसमें सभी जातियों के नेता सम्मिलित होकर आपस के वाद विवाद और भूमि सम्बन्धी झगड़े एवं विदेशियों से देश की रक्षा की निश्चित योजना निर्माण करते थे। मुसलमानी राज्यकाल मे जातियों द्वारा बनाई गई ग्राम व्यवस्था में कोई हस्तक्षेप नहीं होता था। वे गावों की चिन्ताओं से सर्वथा निर्द्वन्द्व थे। सरकारी कर्मचारियों को उसमें हस्तक्षेप की सख्त मुमानियत थी। सिर्फ एक निश्चित रकम केन्द्र को देनी पड़ती थी।[१११] केन्द्रीय सत्ता के निर्बल होने पर ग्राम संघ के नेताओं का सकट के समय अपने देश की सामूहिक रूप से रक्षा करने के कारण महत्व विशेष रूप से बढ़ जाता था और उन्हें स्वाभाविक रूप से सत्ता हथियाने का अवसर प्राप्त होता रहता था। कभी-कभी केन्द्र उनसे समझौता करके फरमान द्वारा उन्हें अपने अधिकार विवश होकर या प्रसन्नतापूर्वक देकर इलाके की सुरक्षा से मुक्त हो जाते थे।

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में गुर्जर साम्राज्य एवं राज्यों के समाप्त होने पर बाहरी आक्रमणकारियों के निरन्तर हमले होते रहने पर गुर्जरों ने अपनी आन्तरिक ग्राम सगठन व्यवस्था भंग नहीं होने दी। इस काल के भारतीय इतिहास में गुर्जर जाति की राजनीतिक अवस्था

---

[१११] It is fairly clear that during the period of Mohamma dan rule, the village communities were left more or less to their own resources and practically no connection was maintained with the King's Govern ent except the due paym nt of the taxes.

का ज्ञान उनकी अलग-अलग कुल तथा जाति के रूप में बसी हुई महत्वपूर्ण आबादियों से पता चलता है, जहां उनकी उत्तम स्थिति है और उसी कारण वे ग्रामों की स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण रखते हुए राज्य स्थापना में फिर सफल हुए। प्रजातन्त्र पद्धति के राज्य तो उनकी संघ शक्ति पर आश्रित आबादियां स्वयं थीं लेकिन राजनीतिक हलचलों एवं क्रान्तियों के समय वे अपने राज्य स्थापित करने में भी सफल हुए। ऐसे राज्यों का ही संक्षिप्त विवरण पीछे दिया गया है।

भूमि सम्बन्धी अधिकारों का निर्णय करने वाले और महत्वपूर्ण ग्राम समस्या के अध्ययन करने वाले विद्वानों ने भी यह स्वीकार किया है कि अपनी अलग अलग आबादी (ग्राम) बसाते हुए, एक ही कुल वंश अथवा गोत्र या खाप को एक स्थान पर प्रतिष्ठित करते हुए उन्होंने जो आदर्श ग्राम पद्धति का निर्माण किया है, वह बड़ा महत्वपूर्ण है। यह ग्राम समूह उनके एक प्रकार के उपनिवेश हैं। उनके द्वारा जमींदारी तथा रैयतवारी एवं भैयाचारे की ग्राम पद्धति का इस ढंग पर विकास हुआ है। बेडन पावल ने इस सम्बन्ध में जो लिखा है वह बड़ा महत्वपूर्ण है। इससे गूजरों और जाटों के राजनीतिक विकास का अच्छा आभास मिलता है।

"भारत में आर्यों का साम्राज्य स्थापित होने के बहुत दिनों पश्चात अन्य बहुत सी जाति अथवा कबीलों ने पूर्व के आये हुये आर्यों का पदानुसरण किया और उत्तर भारत में अपनी नई बस्तियां, कभी शासक रूप से और कभी औपनिवेशिक रूप से स्थापित करके अपनी बसावट अख्तयार की। कृषि सम्बन्धी दृष्टिकोण से इन में मुख्य जातियां जाट और गूजर हैं। स्वतन्त्र रूप से ग्राम तथा अपने सामूहिक प्रणाली के ग्रामों की स्थापना करने वालों में यह दोनों (जाट-गूजर) बहुत प्रमुख हैं। यह आश्चर्यजनक बात नहीं है कि राजपूत, जाट, गूजर तथा अन्य इनसे निम्नतर जातियां, जो अपने को एक दूसरे से श्रेष्ठ होने के हेतु प्रस्तुत करते हैं, इनमें आपस में पूर्णतया जातिगत संघ बद्धता थी और इनके साथ-साथ बहुत से जत्थे वार गांव अनेक रूपों में स्थापित हो गये, चाहे वे जातिगत, प्रजातन्त्रात्मक ढंग के हों

अथवा शिष्ट जन अभिजात प्रतिष्ठित राजघरानों द्वारा स्थापित एवं अधिकृत हों, जैसा कि सिन्ध से बनारस तक की इस काल में भूम्याधिकार पद्धति थी। पंजाब के बड़े-बड़े भूमि खण्डों में वास्तविक प्रदेशों के भू-भागों में ग्रामों की वास्तविक स्थापना और उसका विस्तार निर्माण जाट गूजरों द्वारा ही मुख्य रूप से हुआ है।"[३६३]

यह समय की बात है कि भारतवर्ष की ग्राम व्यवस्था के उत्तम व्यवस्थापक जिन गुर्जरों को इतिहास में यह महत्त्व प्राप्त था कि विदेशी यात्री, उनके कट्टर दुश्मन अरब पर्यटकों ने यह लिखा कि देश में गूजरों के राज्य के अलावा कोई भी भाग (प्रान्त) चोर डाकुओं के उपद्रव से सुरक्षित नहीं है,[३६४] और इसी प्रकार का वर्णन गुर्जर राज्यों के सम्बन्ध

---

[३६३] इन्डियन विलेज कम्यूनिटी (बी० एच० बडन पावल एम० ए० सी० आई० ई० (लन्दन) पृष्ठ २१५-२१६

"Indian village Community" by B H Baden Powell M A C I E, London

Long after the Aryan Kingdoms had been founded, other tribes as we have seen from time to time followed the steps of the first invaders and established themselves sometimes as rulers, sometimes as colonists in upper India The most important of these races, from an agricultural point of view, are the Jats and Gujars They, too are among the most prominent of the founders of villages and of villages in the joint form

It is not surprising, then, what with Rajput clans, Jats Gujars and other more or less closely connected races all of whom had pretensions to superiority, and many of whom had the most complete tribal organisation, there should be varieties of joint villages, whether tribal, democratic' or held by the joint descendants of 'aristocratic founders as the prevailing tenure from the Indus to Benares

The Jats and Gujars are especially largely represented by original village foundations over existence tracts, in the Punjab

[३६४] इलियट (इतिहास भारत) भाग, १ पृष्ठ ४

में ह्वेनत्सांग ने भीनमाल, भड़ौंच के गुर्जर राज्यों का किया,[२४८] इन गुर्जरों पर स्वतन्त्रता के लिये आन्दोलन करने पर १८५७ ई० में कितना अपमानजनक व्यवहार किया गया, किन्तु परिस्थिति के सामने मनुष्य विफल और विवश है। मुगलों की शक्ति गूजर जानते थे। अंग्रेजों की शक्ति का लोहा वे ले चुके थे। आपस की फूट को भी वे समझते थे किन्तु उनका विश्वास था कि गुलामी, अपमान से मृत्यु श्रेष्ठ है, वे मरना जानते थे और आदर्श के लिये सर्वस्व बलिदान करने में जातियां मिटती नहीं, इस तथ्य को भी वे समझते थे, इसलिये इस भीषण हार से वे भयभीत, त्रस्त नहीं हुए, न हिम्मत हारे। उनके चरित्र की उज्ज्वलता का प्रमाण तो विद्रोह के समय अंग्रेज बच्चों और उनकी मेमों के प्रति किया गया सद्व्यवहार ही काफी है, जिसका उल्लेख पूर्व में हो चुका है। आगे और भी दो विद्वानों के विशेष निर्णय इस सम्बन्ध में विचारणीय हैं, जो इस पक्षपात भरे आरोपों का एक सीधा सा जवाब है। श्रीयुत नरेन बी० जोशी लिखते हैं कि:—

"जाट, गूजर और राजपूत वर्ग परम्परा से लड़ाई के सब कार्यों में पूर्ण सहयोग देते रहे हैं। ये लोग भारतीय सेना में रीढ़ की हड्डी की तरह हैं"।[२४९]

"गूजर जाटों की तरह ही एक अन्य कृषक जाति है, जो अपनी ईमानदारी, नेक नीयती विश्वासपात्रता और आज्ञापालन के लिये विशेष प्रसिद्ध हैं"।[२५०]

साथ ही अन्त में लेखक इनकी अंग्रेजों द्वारा पिछड़ेपन की अवस्था पर विचार करते हुए लिखता है कि "वैज्ञानिक युग में भी इस

---

[२४८] मेडिवल हिन्दू इण्डिया भाग १ भीनमाल तथा भड़ौंच के गूजर बम्बई गजेटियर (सर जेम्स केम्पबेल) भाग ६ जि० १ पृष्ठ ४७६, जनाऊ पृष्ठ १७

[२४९] दैनिक हिन्दुस्तान (नई देहली) भारत की युद्ध वीर जातियां (श्री नरेन बी० जोशी) ६ मार्च १९४६

—[२५०] वही

वर्ग की वही पुरानी दशा है, सरकार को चाहिये कि जब दुष्काल, महामारी, हैजा, प्लेग व प्रकृति का प्रकोप या अन्य कोई दुर्दशा हो, तो इनकी सहायता करें। वर्षा के अधिक होने या न होने से जब फसल खराब हो जाती है तो ये बेचारे बड़े संकट में पड़ जाते हैं"।[११८]

कर्नल मिंगले लिखते हैं कि—

"गूजर सिपाही लम्बा कद, छरहरा, खूबसूरत होता है, उनका चरित्र दूसरे सिपाहियों के मुकाबले बहुत ऊंचा होता है। युद्ध के दिनों में उनकी वीरता शौर्य बहुत प्रसिद्ध है। गूजर सिपाही बड़े मेहनती, होशियार, दूरदर्शी, बुद्धिमान, दृढ़ स्वभाव के बहादुर होते हैं, शिक्षा की कमी खटकती है वर्ना ये आदर्श सैनिक होने के साथ उच्च श्रेणी के अफसर भी सिद्ध होते। गूजर और अहीर दूसरी सैनिक जातियों के मुकाबले ऐय्याशी से दूर—बहुत दूर हैं। उनका चरित्र ऊंचे दर्जे का होता है। लड़कियों की इज्जत करते हैं, उनका बेचना पाप समझते हैं। स्वच्छ रहना, स्नान करना, दातीन करना, नित्य प्रति व्यायाम करना–कुश्ती लड़ना, मुग्दर हिलाना तथा शारिरिक प्रतियोगिताओं के खेलों में बड़े समारोह से शामिल होना पसन्द करते हैं। सुमाली लैण्ड के युद्धों में उन्होंने अपनी वीरता से सब को चकित कर दिया।[११९]

चरित्र की उच्च परम्परा आर्यों के सामूहिक कथन की देन है। जिन गुर्जरों का प्रारम्भिक विकास भारतीय आर्य जाति की क्षत्रिय शाखा से हुआ, उनका सदाचारमय चरित्र कठिन से कठिन आपत्ति के समय भी बना रहा। उनके साम्राज्य एव राज्य वैभव काल मे जब मध्यकालीन (६००।२००) भारतीय राजनीति, धार्मिक एवं सामाजिक व्यवस्थाओं का आदर्श रूप था, उसका वे स्वय पालन करते थे और दूसरों को पालन कराने के लिये नियमों का निर्माण करते थे। इस ह्रास काल में और उससे भी पूर्व मुगल काल मे वे उसी परम्परा का पालन करते रहे, यह पिछले वर्णन से स्पष्ट है। अंग्रेजों के व्यापक प्रभाव में उनकी स्वार्थपरतावादी नीति ने और मुगल काल मे मुगलों की चरित्र सम्बन्धी दुर्बलता

—[११८] वही

[११९] किताब कर्नल मिंगले भाग २ का शहाना गूजर (खानबहादुर अब्दुल मलिक) पृष्ठ २४८ से लिया गया नोट

ने उनको कहीं भी विचलित नहीं होने दिया, यह इतिहास सम्बन्धी घटनाओं और आख्यायिकाओं द्वारा स्पष्ट है।[११०]

[११०] उत्तर प्रदेश, राजस्थान में ऐसी अनेक आख्यायिकाएँ प्रचलित हैं। गुजरात की प्रसिद्ध गुर्जर रमणी वीरांगना गुजर परिवार की साधारण घराने की, किन्तु विशिष्ट सौन्दर्य पूर्ण *मैना गुर्जरी की आख्यायिका* से यह भली प्रकार प्रकट होता है कि गुर्जर महिला और उनके पारिवारिक पुरुषों का सदाचारमय आदर्श कितना ऊंचा था। जाति एवं देश की इज्जत खतरे में पड़ने पर, निरंकुश अत्याचारी शासकों से अपने पवित्र चरित्र को सुरक्षित रखने में *गुर्जर नारी और गुर्जर युवक किस प्रकार तलवार सम्भाल* कर दगाबाजी और नारी का अपमान करने वाले शासकों का मान मर्दन तलवार से करते थे, इसका वर्णन गुर्जरों में प्रचलित आल्हा (वीर रस काव्य) में मैना गुजरी की आख्यायिका है। गुजराती भाषा के प्रसिद्ध साहित्यिक प्रोफेसर रसिकलाल पारीख ने अपने नाटक 'मैना गूजरी' में गुजरी का उच्च चरित्र, शौर्य एवं जाति का महत्व प्रतिष्ठित किया है जो निम्न प्रकार है, और लगभग इसी रूप में गुजरात तथा गुर्जरों की भारत भर की बस्तियों में प्रचलित है। "*मैना नाम की एक गूजर जाति की महिला* अपने देवर के साथ अपनी ससुराल जाने की तैय्यारी कर रही थी। आनन्द और प्रसन्नता से भरे हुए ग्रामीण जीवन की सरसता को भङ्ग करते हुए एक अप्रत्याशित घटना घटी। देहली के सम्राट ने गांव के पास डेरा डाल दिया। गांव की युवती गुर्जर बालाओं में इस समाचार की जानकारी के साथ चिन्ता, सकोच एवं एक प्रकार का कौतूहल पैदा हुआ। इसी बीच में मैना अपनी सगी सहेलियों के साथ अपने रिश्तेदारों के मना करने पर भी कौतूहलवश डेरों की ओर चलदी। इसी बीच में उसे अपना घर पर रखा हुआ विष बुझा तीर याद आया। वह खतरे से बचने के लिये अपनी आत्म रक्षा के साधन जहरीले तीर को लेने के लिये वापिस चली आती है, जब कि उसकी सहेलियाँ दूर पहुँच जाती हैं। निस्तब्ध, सुनसान, उस बीहड़ जङ्गल में उसका पीछा बादशाह करता है और उसे अपना बनाने के लिये व्यर्थ का प्रयत्न करता हुआ मैना गुजरी को बन्दी बना लेता है। मैना के जातीय बहादुर गूजर

(१७)

लगातार के संघर्षों से एक स्थान से उखड़ कर दूसरे स्थान पर स्थिर होते समय गूजरों को इस काल में, जहां विदेशी शासन का निरंकुश अत्याचार सहना पड़ा, वहां जातियों के परस्पर के स्वार्थों के टकराये जाने से अनेक नवीन कहावतों का जन्म हुआ, जिनका निराकरण समय ने स्वयं

वीरों ने भयङ्कर मार काट और खून खराबी के बाद बादशाह और उसकी सेना को परास्त कर मैना और उसकी सहेलियों को उनके पंजों से छुड़ा लिया। उसकी ससुराल वाले उसे अंगीकार नहीं करते और वह अपनी कुल देवी महाकाली से मनौती करती हुई शोकपूर्ण विलाप करती है, जो उसके निर्दोष पवित्र जीवन की साक्षी होकर प्रकट होती है।"

Extract from Hindustan Times dated 10th April, 1954.

The curtain rises on Mena, the Gurjar woman, preparing to leave for her husband's home with the younger brother of her husband. There, amidst happy rural life, the news reaches the village that the Crown Prince of the Emperor of Delhi has set up his camp nearby. This rouses curiosity among the younger women, and Mena, together with her companions, sets out for the camp, despite warnings by her inlaws. On the way she stays back for she forgot to carry the poisoned-arrow (which would protect her in distress) while her companions go ahead. Alone in the forest, she is accosted by the prince who tries vainly to seduce her but ultimately kidnaps her when she falls in a swoon. Captive in the camp Mena and her girl companions are rescued by the chivalrous Gurjar men who defeat the prince's army in battle. On return, Mena is refused a place in the family by her mother-in-law. There she prays in righteous indignation to the family deity, Maha kali, and ascends to divinity amidst lamentation of herkinsmen.

The play is based on a Gurjara ballad of the mediaeval age an inspiring tale of Gurjar womanhood and Gurjar chivalry, dramatized by the Gujerati poet, Prof. Rasiklal Parikh "Mena Gurjari".

ही समय पड़ने पर कर दिया। घटनाएँ इस बात को प्रकट करती हैं कि जातियों के अन्धकारमय युग, ह्रास काल में, दासता के बन्धन में इस प्रकार की हीन भावनाएँ शासक जातियों और अवसरवादी जातियों द्वारा जाति में पैदा करा दी जाती हैं। भारतीयों के प्रति इसी प्रकार की भावनाएँ गोरी जातियों ने संसार भर में फैलाईं। ब्राह्मण जैसी विद्वान जाति को, जिसके हाथ में देश का नेतृत्व था, एक उर्दू कहावत में पीर, बवर्ची, भिश्ती, भिखारी और खर (बोझा ढोने वाला) बनाया। इसी प्रकार जाटों, गूजरों राजपूतों, मरहठों आदि सभी जातियों के सम्बन्ध में कहावतें मनमाने ढंग पर विद्वेषी लोगों ने गढ़ी। मनोवैज्ञानिकों का मत है कि "जातियों के विषय में पूर्व निर्णय पूर्व ग्राह जन्मजात नहीं हैं, वे प्रभुत्व सम्पन्नों की श्रेष्ठता और आधीनों की हीनता के अतिरिक्त आर्थिक और राजनीतिक भय से भी गढ़ी जाती हैं. ताकि लोग राजनीतिक समानता का अधिकार पाकर अपनी पूर्वकालीन परिश्रम शीलता के कारण शासन कर्ताओं को स्थान च्युत न करदें, लोकमत जागृत करने के लिये प्रचार (प्रोपेगेन्डा) का सहारा लिया जाता है। शासक जात्याभिमान, धर्मान्धता, स्वार्थ परायणता ही इस में सहायक होती है. पिछले युद्ध में जापान तथा जर्मनी के विरुद्ध इसी प्रकार की कथाएँ गढ़ी गई थीं और गोरों ने विदेशों में भारतीयों को रक्त पिपासु, अर्धनग्न, भिखमंगों, धोखेबाजों, जादूगरों, अन्धविश्वासियों का देश प्रसिद्ध कर रक्खा था।"[१११] इसी प्रकार वीर जातियों के सम्बन्ध में भी समय समय पर ऐसा प्रोपेगेन्डा और कथानक तैय्यार किया गया, जिससे वे उभर न सकें। इतिहास के इस शङ्कर गरल पान समान विष को गुर्जरों को भी ग्रहण करना पड़ा। भगवान् श्री कृष्ण की 'माखन चोर नीति' में यही स्वार्थ निहित था कि अन्यायी, अत्याचारी कंस और उसके सहायकों को माखन खिला कर पुष्ट न होने दो। ग्वाल बाल, गोप गोपिकाएँ उसे स्वयं खाकर पुष्ट बनें और अत्याचारी का

---

१११ देखिये पूर्व निर्णय क्यों और कैसे बनते हैं (श्री गुलाब राय एम० ए० लिखित) हिन्दुस्तान साप्ताहिक वर्ष १ अङ्क ११-१२-१-८ प्रयाग १९५४

शक्ति के साथ मुकाबला करें। पवित्र नदी में महिलाओं को नंगे नहाने से उनके पवित्र सदाचार पर बुरा प्रभाव पड़ता था और उन्हें मना करने के लिये चीर हरण लीला करनी पड़ी, पर लिखने वाले 'चोर, जार, शिखामणि' कहने से नहीं चूके, तो फिर भला ऐसे लोग सारी परिस्थिति पर विचार न करने में गूजरों को कहां छोड़ सकते थे। इस सचाई से इन्कार नहीं किया जा सकता कि समय विषम स्थिति और शासन के दुष्प्रभाव से गूजरों में शिक्षा की कमी और अनेक सामाजिक दुर्गुण पैदा हो गये, किन्तु यह एक साधारण सी बात है और पराधीनता के दिनों में पहले की सत्ता सम्पन्न सशक्त जातियों में उनका उत्पन्न होना स्वाभाविक है। १८५७ ई० के विद्रोह के बाद अंग्रेजों के दमन से सभी भारतियों की आत्मा दब गई थी और लोगों का अपने ऊपर से विश्वास घट गया था। शस्त्र कानून बना कर लोगों को निहत्था और निःशस्त्र किया गया ताकि वीर जातियां फिर शस्त्र उठा कर उनका मुकाबला न कर सकें। शिक्षा का प्रसार सिर्फ मैकाले की नीति के अनुसार क्लर्कों की आवश्यकता पूरी करने के लिये किया गया। सेना में भारतीय जातियों का महत्व घटा दिया गया और सैनिक शौर्य भावना को मिटाने का उपक्रम किया जाने लगा। ताल्लुकेदारों की राजभक्ति के परिणामस्वरूप गूजरों की जमीन और गांवों के अधिकार देकर और भी कुचल दिया गया और उनका दोहरा आर्थिक शोषण प्रारम्भ होगया। राज भक्त देशी राजाओं के निरंकुश स्वच्छन्द शासन में जाति और भी पिछड़ती चली गई किन्तु समय सदा परिवर्तन शील है। राजनीतिक और आर्थिक ह्रास के बावजूद भी भारत में नवचेतना उत्पन्न हुई और ऐसे समय यह स्वाभाविक था कि जिस जाति ने अपनी जन्म घुट्टी में वीर भोग्या वसुन्धरा की शिक्षा ग्रहण की हो, वह गुर्जर जाति कब तक दासता के अपमान का कड़वा घूंट पीकर रह सकती थी।

१८ वीं, १९ वीं सदि में भारत में धार्मिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ। राजा राममोहन राय (१७७४—१८३३ ई०), स्वामी दयानन्द सरस्वती (१८२४—१८८३ ई०), प्रार्थना समाज (१८६७ ई०), रामकृष्ण परमहंस (१८३४—१८८६ ई०), स्वामी विवेकानन्द (१८६३—१९०२ ई०), थियोसोफिकल सोसायटी (१८८६ ई०), जस्टिस रानाडे द्वारा स्थापित

दक्षिण ऐजुकेशन सोसायटी (१८८४ ई०), गोपाल कृष्ण गोखले (१८६६-१९१५ ई०) आदि के द्वारा भारत भर में आत्मविश्वास और आत्मसम्मान की भावना जागृत हुई और यह सभी महानुभाव और इनके द्वारा स्थापित सभा-समिति-समाज और इनके अनुयायी देश के जागरूक प्रहरी बन कर काम करने लगे। समाज सुधार के साथ शिक्षा प्रसार भी बढ़ गया।

गूजरों की बस्तियों उनके उपनिवेशों की स्थिति में बसे हुए ग्रामों में आर्य समाज द्वारा महत्वपूर्ण काम हुए स्वामी दयानन्द ने उत्तरीय भारत, राजपूताना, पंजाब आदि में स्वयं घूम-घूम कर वैदिक धर्म का नाद सुनाया और उनके धार्मिक, सामाजिक सुधारों ने हिन्दू समाज को नवीन स्फूर्ति, साहस और बल दिया। गूजरों में जागृति की एक लहर प्रचलित होगई। स्वदेशीय शासन और स्वराज्य की भावना का प्रचार कर आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने राजनीतिक जागृति उत्पन्न करके भारतीयता को जन्म दिया। पाश्चात्य शिक्षा और सभ्यता के कुप्रभाव से बची हुई, किन्तु अन्धकार में भटकती हुई गूजर जाति का आर्य समाज के कारण सर्वांगीण पतन होने से बच गया। नैतिक उत्थान और राष्ट्रीय भावना को जाग्रत करने वाले आर्य समाज के धार्मिक आन्दोलन का गुर्जरों की सामूहिक आबादी और उनके नेताओं पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। देश के आर्थिक शोषण के विरुद्ध-जो अंग्रेजों द्वारा अपनी चरम सीमा पर पहुंच चुका था और युद्धों एवं भारतीय शासन की खर्चीली नीति के कारण भारतीय शिक्षित वर्ग में असन्तोष और क्षोभ बढ़ने पर फिर अंग्रेजी सत्ता समाप्त करने के उपाय सोचे जाने लगे। सरकार की तत्कालीन पक्षपात पूर्ण नीति तथा भारतीयों को शासन में अधिकार न देने से यह आन्दोलन जोर पकड़ता गया। १९०४ ई० में जापान द्वारा पश्चिम के रूस जैसे बड़े देश को हराये जाने से भारतीयों में पर्याप्त राजनीतिक चेतना और राष्ट्रीयता का संचार होगया। इससे पूर्व भी १८९६ ई० की इटली को हरा कर अबसीनिया द्वारा स्वतन्त्रता की घोषणा ने भारतीयों को और भी प्रोत्साहन दिया। ब्रिटिश इन्डियन एसोसियेशन (१८५१ ई०), इन्डियन एसोसियेशन (१८७६ ई०), पूना पब्लिक एसोसियेशन (१८७० ई०), मद्रास महाजन सभा (१८८४ ई०) बम्बई प्रेसि

डेक्मी एसोसियेशन (१८८५ ई०) आदि संस्थाओं ने भी जागरण काल उपस्थित किया।

ब्रिटिश इन्डियन एसोसियेशन के संस्थापक सर सुरेन्द्रनाथ बनर्जी को इस बात का प्रथम श्रेय है कि उनके द्वारा तमाम देश के शिक्षित वर्ग में उच्च नौकरियों में भारतियों के प्रवेश की सुविधा के लिये आन्दोलन एवं अधिकारों की मांग के लिये जनमत जागृत हो उठा। अंग्रेजी शासन के विरुद्ध व्यापक असन्तोष में लार्ड लिटन के समय के वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट, शस्त्र कानून और १८८३ ई० के इलबर्ट बिल ने और भी अधिक असंतोष पैदा किया। निरन्तर के अकाल, बीमारी और शोषण ने भारतीयों की आँखें खोल दीं। सिविलियन उच्च आफिसरों ने देहातों में बसने वाली गुर्जर जैसी जातियों को अवनति की ओर धकेलने के लिये मालगुजारी, लगान बढ़ाने टैक्स ज्यादा, सुविधा कम, देने नहर सम्बन्धी सुविधा न देने का निश्चय किया गया। देशी राज्यों और ताल्लुकेदारों-गदर के मुआफीदारों के देहातों में बसे हुए गुर्जरों की दशा और भी खराब थी। उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजपूताना, देहली आदि के गुर्जरों में इस काल की धार्मिक जागृति का बड़ा प्रभाव पड़ा और आर्य समाज तथा उसके संस्थापक महर्षि दयानन्द जैसे महान् सुधारकों के प्रयत्न से वे उत्तरोत्तर समाज सुधार में निमग्न होकर पूर्णरूप से भारतीय भाषा, वेष तथा संस्कृति के कट्टर उपासक हो गये। नरी थाजी, कन्या वध के विरुद्ध उनमें जबरदस्त सफल आन्दोलन हुए। भावी उन्नति के लिये एक खास पृष्ठ भूमि तैय्यार हो गई और उनके संगठन पंचायत की शकल में दृढ़तर होगये, जिससे इस शोषण एवं संकट काल में भी उन्हें बड़ा बल मिला।

जिन प्रदेशों में १८५७ ई० की राज्य क्रान्ति का असर नहीं था और विप्लव के प्रतिशोध की भावना उच्च शासकों में नहीं थी, वहां के गूजर इस काल में उभर कर राजनीतिक दृष्टिकोण से आगे बढ़ गये और उनकी गांवों की व्यवस्था उच्च सत्तात्मक रही। मध्य प्रदेश, बम्बई प्रान्त में उनकी सत्ता अपनी सामूहिक आबादियों में सर्वोच्च रही।[११०]

---

[११०] बम्बई गजेटियर भाग २० शोलापुर पृष्ठ २४२ पैरा (१)
"शोलापुर के गूजरों की स्थिति बड़ी उच्च है। उनका पेशा

उन्होंने इस काल की राष्ट्रीय जागृति में भी योग दिया।

भारतीयों के दिन प्रतिदिन के उषा के जागरण काल के समय में शासन के प्रति बढ़ते हुए असन्तोष को कुछ विचारशील अंग्रेजों ने अनुभव किया, इनमें मि० ए० ओ० ह्यूम मुख्य थे। उन्होंने भारतीय भावनाओं का आदर करते हुए शासन सम्बन्धी कठिनाइयों को दूर करने के लिये एक ऐसी संस्था के निर्माण का विचार किया, जिसके द्वारा भारतीय जनमत, शासन में दिलचस्पी ले और भारतीय भावना को शासक समय-समय पर पूर्ण रूपेण समझ सकें। लार्ड डफरिन भी इसमें

साहूकारी है वे मारवाडी लोगो की भांति हृदयहीन नही होते और अपनी सम्पत्ति के लिए प्रसिद्ध है। बडी बडी धर्मशाला, तीर्थ स्थान, मन्दिर इन्ही गूजर भाईयो के बनवाये हुए है।

—बम्बई गजेटियर भाग १० रतना गिरी सावन्तवाडी पृष्ठ १२० "सावन्त वाडी, रतना गिरी के गूजर जो बाहर से आकर किसी समय यहां बसे इस मराठी प्रदेश में भी गूजरी बोली और गुजराती भाषा व्यवहार में लाते हैं। शारिरिक दृष्टि से बड़े सुन्दर स्वस्थ एवं सुडौल हैं। उनका पवित्र उच्च रहन सहन, आकर्षक पोशाक आलीशान मकानों में रहना उनकी विशेषता प्रकट करता है। शाकाहारी दूध, गेहूं आम भोजन हैं। बड़े २ मालदार, सभ्य नागरिक, साहूकार एवं व्यापारी वर्ग है। बल्लभाचार्य वैष्णव तथा कुछ जैनी भी हैं। उनका विवाह सम्बन्ध एवं लेनदेन अपनी जाति में होता है।

बम्बई गजेटियर भाग १२ पृष्ठ ६४ से ६६ तक 'खानदेश के गूजर किसान बड़े महत्वपूर्ण हैं, उन्नत खेत वर्ग पर आश्रित उनके कुल गोत्रों की स्थिति व रहन सहन उच्च श्रेणी का है। धार्मिक सामाजिक ऊंची स्थिति के रिवाज हैं। रेवा (लेवा) डोरे दाल गरासी काड़वा भनाला, मोचारी (बडगुजर) और सापरे उनकी खास श्रेणी हैं। रेवा गूजरों के ११ गोत्र एवं ३६० वंश हैं। ३६ कुल खानदेश में हैं। ऋषि गोत्र निम्न प्रकार हैं—अम्बिका अत्रि भारद्वाज गर्ग गौतम, जमदग्नि कश्यप कौशिक कौन्डल्य, प्रयाग और वशिष्ठ। वे पूर्ण पवित्र समझे जाते हैं अपनी जाति और ब्राह्मण के अतिरिक्त किसी के हाथ का भोजन नहीं करते।

सहमत हो गये और ह्यूम ने वेडन बर्ड, दादा भाई नौरोजी, डब्लू० सी० बनर्जी, फिरोजशाह मेहता, तैय्यब जी आदि महानुभावों की सहमति एवं सहायता से इन्डियन नेशनल कांग्रेस (भारतीय राष्ट्रीय महासभा) की स्थापना की। इस महासभा का पहला अधिवेशन बम्बई में श्री उमेश चन्द्र बनर्जी की अध्यक्षता में २८ दिसम्बर १८८५ ई० को गोकुल दास तेजपाल संस्कृत कालिज में हुआ, जिसमें ऐसेम्बली के लिये निर्वाचन सम्बन्धी, उच्च सरकारी नौकरी सम्बन्धी सुविधा एवं इन्डिया कौंसिल तोड़ने की मांग रक्खी गई। इसी आदर्श पर कांग्रेस ने, आगे चलकर देश के आर्थिक, राजनीतिक जीवन को उन्नत करते हुए भारतीय स्वतन्त्रता का आन्दोलन चलाते हुए, अनेक विषम परिस्थितियों में दमन चक्रों का शिकार होकर भी स्वतन्त्रता का मार्ग प्रशस्त किया। प्रारम्भ में इसी के द्वारा १८६२ ई० का इन्डिया कौन्सिल एक्ट पास हुआ और वायसराय की कार्य कारिणी में ४ के बजाय ५ सदस्य बढ़े। व्यवस्थापक

२३ देवी (जिन में ज्वालामुखी मुख्य है) के उपासक हैं। तीन मुख्य धार्मिक त्यौहारों को समारोह से मनाते हैं। विवाह आदि सभी संस्कार पूर्ण विधि विधान से करते हैं। डोरे गुजरों के ४१ दल या कुल हैं। जिनमें पवार, चौहान, सिमाल, गहलोत, कावा, खावी, सोलंकी, चौपान, मोरी, निकुम्भ, टोंक, गोहेल, चावड़ा, भाला, डोडिया, बघेला, हूण, सरवटे, गुजरीक, पाढीकर, निम्बोल, देवाई, मागदा, कागवा, चन्होल, डोडे, तवर, खांदरे, खीची, जादव, मकवान, बरोद दाभी, हरिहर, गोड, जाव खेड्या, साखले, भटाल, सूयवंशी, बोरसी, कुरुम्दी। जिस प्रकार जामनेर की देशमुखी रेवा गुजरों के पास १३वी शताब्दि से आज तक है उसी प्रकार चोपडा के देशमुख (१६२८-१६५८) डोरे गुजरों के पास है। यह मांसाहारी, शराब पीने वाले हैं—पवार वंश के कश्यप ऋषि गोत्र के हैं। कुलदेवी हेमज माता (हाथ में नंगी तलवार है और चन्दन के वृक्ष के नीचे बैठी है) है। सिर्फ रेवा गुजरों के हाथ का भोजन करते हैं और प्राचीन क्षत्रिय वंशों से राजपूतों की तरह उच्च स्थिति मानते हैं। टाड ने जिन ३६ राजवंशों में राजपूतों को माना है यह उनमें पूरी तरह हैं।

कास्टस एन्ड ट्राईब्स सी० पी० एन्ड बरार आर० रसल १६१६ भाग १ गुजर दीपक

सभा के लिये वायसराय को गैर सरकारी मम्बर बढ़ाने का अधिकार मिला। बड़े-बड़े प्रान्तों में व्यवस्थापक सभा या कौन्सिल के अधिकार दे दिये गये।

अपनी छोटी सी शुरूआत से धीरे धीरे विकास को प्राप्त करके जनमत को जागृत करते हुए इसने देश के कोने-कोने में स्वतंत्रता का सन्देश पहुँचाया। देश की आम जनता खास कर देहातों से बल पाकर त्यागी, दूरदर्शी योग्य, कर्मठ नेताओं के नेतृत्व में एक विशाल संगठन के रूप में विकसित होकर यही संस्था भारतीय स्वतन्त्रता की प्रतीक बनी।

कांग्रेस द्वारा भारतीय जागरण काल उपस्थित हुआ, साथ ही भारतीय सेनाओं के चीन, मिश्र, अदन फ्रंटियर, तिब्बत, नेपाल आदि देशों में जाने से भी देहातों में एक नवचेतना पैदा हुई। कर्जन की दमन नीति और १८९६-१९०३ ई० के प्लेग के कारण एवं उत्तरीय भारत व गुजरात के दो बार के भीषण अकाल के कारण जनता का असन्तोष भड़क गया और कांग्रेस की माग बराबर उचित रूप से बढ़ती गई। सन् १९०५ ई० में लार्ड कर्जन के बंग भंग आन्दोलन ने कांग्रेस को आगे बढ़ने का अवसर दिया और बंगाल के स्वदेशी आन्दोलन और

"मध्य प्रदेश के गूजर उच्च सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक स्थिति के हैं। वे महत्वपूर्ण कृषक, न्याय कानून व्यवस्था के मानने वाले उच्च श्रेणी के नागरिक हैं। बड़ गूजर जो लाधारी भी कहलाते हैं अपने को उच्च श्रेणी का गूजर मानते हैं। मुण्डले नर्मदा रेवा नदी पर बसने के कारण रेवा भी कहलाते हैं। बड़ पवित्र धार्मिक आचार विचार वाले गूजर हैं। मिलोरिया, मुरलिया भी कहलाते हैं, क्योंकि वे कृष्ण के वंशज और मुरली के पहले बजाने वाले हैं। बड़ गूजरों का निकास इन्दौर भुरालया गूजरों में से है। यादव यदुवंशी हैं। गूजर विवाह शादी तथा अन्तिम संस्कार (मृत्यु) पर बड़ी बड़ी दावत करते हैं जिसे गूजर वाड़ा कहते हैं। दौज और अष्टमी अमावस्या को हल नहीं चलाते, उनके धार्मिक गुरु गूजर महन्त रामजी दास (जिनकी गद्दी होशंगाबाद में है) हैं जिनका वंश महन्त परिवार (बोर तलाई) बड़ा पवित्र माना जाता है। उनकी पोशाक उत्तर भारत के गूजरों की तरह है।

विलायती माल के बहिष्कार के सामूहिक प्रयत्नों को कांग्रेस ने देशव्यापी बना दिया और १६०८ ई० के दमन के बावजूद भी क्रान्ति की लहर बढ़ती चली गई।

देहली के चारों ओर के गूजरों मे इस काल में एक नवचेतना का अंकुर पैदा हुआ और जातीय संगठन, समाज सुधार एवं अपनी दशा उन्नत करने के लिये गवर्नमेन्ट से सहायता लेने की मांग प्रस्तावों द्वारा करते हुए १६०८ ई० में अखिल भारतीय गूजर क्षत्रिय महासभा की स्थापना मुजफ्फरनगर की जिला प्रदर्शनी-मेला के अवसर पर हुई। सिसौना के उच्च गूजर जमींदार परिवार के प्रधान हीरा सिंह, मुण्डलाने के प्रधान महाराजसिंह इस संस्था के संस्थापक थे, जिन्हें जाति ने पूरा-पूरा सहयोग दिया। इस संस्था के सबसे पहले सभापति लेफ्टिनेन्ट राजा बलवन्तसिंह लन्ढौरा निर्वाचित हुए और उसके बाद अपने जीवन के अन्तिम काल तक प्रधान महाराजसिंह रईस व स्पेशल मजिस्ट्रेट मुण्डलाना प्रधान मंत्री व राव बहादुर सरदार रघुबीर सिंह

निमाड के किसान बडे उत्तम सिंचाई तथा अन्य सब साधनों से युक्त हैं, उनका रहन सहन ऊंचा है, आमतौर पर समृद्धशाली और अच्छे जमींदार हैं। आपस में लेन देन करते हैं, जातीय सहयोग की उच्च भावना है। बढ़िया नस्ल के पशु तथा बहुत आलीशान मकान उनके पास हैं। विवाह शादियों के अवसर पर अपने बैलों को जेवरों से सजाकर बढ़िया बैल गाड़ियों में परिवार के साथ जब वे प्रतियोगिताओं की दौड़ में शरीक होते हैं और सड़क या रास्ते की परवाह न करते हुये एक दूसरे से आगे बढ़ने की उत्कण्ठा में पूरी ताकत के साथ भगाये चले जाते हैं, तब एक अजीब समा बन्ध जाता है। विजयी जोड़ियाँ और उनके परिवारों की प्रसिद्धि दूर-दूर तक होती है।"

विंध्याचल सतपुड़ा के मध्य नर्मदा के किनारे ४०० वर्ष पूर्व आगर ग्वालियर की ओर से बसते हुये गढ़ा और चौरासी तहसील गाडरवारा, सोहागपुर, होशंगाबाद में लिलोरिया की खास आबादी है। गढ़ा वाले शौक में पोहर वश प्रसिद्ध है। चौरासी में जार, रावन, मकारे, मुन्धिया है। मुख्य पेशा मालगुजारी, काश्तकारी, है निम्न गोत्र लिलोरिया में प्रसिद्ध है —

मी० आई० ई० प्रधान भरतपुर स्टेट कौंसिल इस सभा के प्रधान रहे। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि गुर्जर सभा के महत्वपूर्ण प्रयत्नों द्वारा शिक्षा, समाज सुधार के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण क्रान्ति हुई और जाति के विनाश का मार्ग प्रशस्त हुआ। आगे चलकर कांग्रेस जैसी विशाल क्रान्तिकारी संस्थाओं में भाग लेने के लिये जनता को प्रेरणा मिली। आर्य समाज के समाज सुधार सम्बन्धी आन्दोलनों में इस संस्था ने पूर्ण भाग लिया। गूजरों में हिन्दू मुसलिम एकता पैदा करने के लिये इसके निर्वाचन में मुसलमानों का भाग रहा। होशयारपुर के डाक्टर चौ० मौहम्मद दीन आई० एम० एस० सिविल सर्जन व खान बहादुर चौ० फतहउद्दीन आई० ए० एस० वर्षों इसके उपप्रधान और खास योग दान वाले रहे। भारत भर के गूजरों में इसकी शाखा-उपशाखा खुल गई। अनेक छात्रावास, स्कूल, शिक्षा प्रसारक संस्थाएँ, छात्र वृत्ति फण्ड कायम हुये। गूजर युवकों को जागृत करने और देहातों में जातीय संगठन को दृढ़ करने में इस संस्था की सेवाएँ ऐतिहासिक महत्व रखती हैं और १८५७ ई० के विद्रोह से त्रस्त, शासकों के आतंक से भयभीत गूजर जनता को जागृत करने में संस्था का महत्व भुलाया नहीं जा सकता है। जिला बोर्ड, कौंसिलों, असेम्बली के चुनाव में सबसे प्रबल आकर्षण इसी संस्था का था। सभा में भी उचित प्रतिनिधित्व की मांग इसके द्वारा की गई। आज के छात्रावास, कालेज, स्कूल और हमारा विश्वविद्यालयों के स्नातक और सरकारी नौकरियों में गूजरों का यत्किंचित भाग इसी की देन है। राजनीतिक उन्नति के लिये, प्रशस्त मार्ग करने के लिये सामाजिक क्षेत्र में जो कार्य गूजर क्षत्रिय महासभा और उसके अधिकारियों के प्रयत्न से हुआ, वह गूजरों के लिये

कोहर, करौडा, कुराडा, पवार, कुम्हार, विगहार, मटा, भाटी, नागरा, टैंचन, टिल्हा, मकारे, मवारा, मुदाफर, खान, रियाने, फ़िरमोनिया, गदारिया, उड़ायले उधाड, पन्तेले, सोतेले, बरेले, गुरगुरा, देजवार, मेले, थोरम, रठिया, नोगर, नहरवाड़, सागों, ठिनमारिया, भूरिया, म्यारा, मट बार, रिहुवा, पहिहार, कारक, चौगर, मुहासे, गिरोरिया, उरयान, दड कोल, धूमड़, पोमी, माजड, रावत, बरापत, बिंग, मराड़िया, विसोटिया बटकवार, चोहड़ा, छावड़े इत्यादि।

सामूहिक रूप से किसी अन्य संस्था द्वारा असम्भव था। इस समय के प्रकाशित गूजर गजट, गूजर हितकारी एवँ इस काल तक मेरठ से प्रकाशित होने वाले 'वीर गुर्जर' मासिक पत्र को वर्तमान जागृति का विशेष श्रेय है।

वास्तव में सन् १८५७ ई० से सन् १९०८ ई० तक हिन्दू और मुसलमान सभी गूजरों का दमन किया गया और गूजर सामूहिक रूप से राजनीतिक स्वतन्त्रता का अपहरण होने से सोगये और विद्रोह में भाग लेने के कारण उनकी हस्ती मिटानेकी कोशिश की गई। देशद्रोह के रूपमें गोरों को शरण देने वालों को सरकारी नौकरी, जमीन जायदाद की सभी सुविधा दी गई। १९०८ई० में इसी सगठित जाति की अव्यवस्था के लिये समाज सुधार द्वारा संगठित आन्दोलन प्रधान महाराज सिंह के नेतृत्व में किया गया। प्रार्थनाओं के बल पर जाति के अधिकारों के लिये अधिकार दिलाने का प्रयत्न किया गया, राजभक्ति की आड़ में जाति को फिर सगंठित किया।

हिन्दुस्तान में पुनरोज्जीवन के लक्षण कांग्रेस व दूसरी धार्मिक, सामाजिक संस्थाओं द्वारा दिखाई देने लगे और गूजर उनमें दिलचस्पी

बम्होरी कलां, भैंसा जमाड़ा, बांसखेड़ा, केसला, पचलावड़ा, गलचा, किशनपुर, चाण्डीखेड़ी, चीराहेट, भवखेड़ी, मनवासा, महुआखेड़ा, मकालसिर, ठीकरी इत्यादि गांव जो कि काफी मालगुजारी के हैं अच्छी हालत में हैं।

हरदा तहसील में सोढ़लपुर, रन्हाई, चार खेड़ा आदि प्रसिद्ध गॉव हैं। छिन्दवाड़ा में भी इनके जमुवा आदि प्रसिद्ध गांव हैं। हरसूद तहसील में नयलपुरा सेगांव आदि इनके प्रसिद्ध गांव हैं।

मेमोर आफ दी हिस्ट्री फोक-लोर एण्ड डिस्ट्रीब्यूशन आफ रेसेज सर हेनरी इलियट पृष्ठ ९९ के आधार पर नागपुर के आसपास बैतूल, भण्डारा, अमरावती, अकोला, येवतमाल आदि में इनकी आबादियां हैं। बड़े-बड़े गांव हैं, जिनके गोत्र उत्तर भारत की तरह मावई, चेची बासटे, नंधर, चन्दीला आदि हैं। सर आर० जेन्किन ने नागपुर प्रदेश के गूजरों को उनकी उपस्थिति से सूर्य वंश के महाराजा रामचन्द्र जी की सन्तान बिना किसी सन्देह के प्रमाणिक रूप से माना है।

लेन लगे। १६०७ ई० में कांग्रेस भी नर्म विचार वाले दल के हाथ में आगई और इसी समय लार्ड हार्डिंग्स के समय विश्व प्रभुता और प्रतिस्पर्धा के लिये योरोप में भीषण युद्ध (१६१४–१८ ई०) छिड़ गया। इस युद्ध में रूस, फ्रांस, इंग्लैण्ड और अमेरिका एक ओर तथा जर्मनी, आस्ट्रिया, इटली, तुर्की दूसरी ओर थे। भारत की राजनीतिक अशान्ति को युद्ध के दिनों में शान्त रखने के लिये ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री ने भारत को स्वशासन देने का वचन दिया। मिल मालिकों को प्रसन्न करने के लिये विदेशी सूत पर कर बढ़ा दिया। कांग्रेस और महात्मा गाँधी ने ब्रिटिश सरकार की पूरी २ मदद की और फौज में भारतीय लोगों की भरती केलिये कांग्रेस द्वारा खूब उत्साहित किया गया। जन तथा धन द्वारा युद्ध सम्बन्धी सहायता में भारत अग्रणीय रहा। ब्रिटिश गवर्नमेन्ट ने भारत के खर्चे पर दो लाख सैनिक फ्रांस, मेसोपोटामिया (ईराक) और मिश्र आदि को भेजे। भारत के सैनिकों की वीरता की छाप इस युद्ध में छा गई। गूजरों ने अपने जातीय एवं राष्ट्रीय नेताओं की प्रेरणा द्वारा इस युद्ध में जन-धन द्वारा खास भाग लिया। गवर्नमेन्ट की ओर से भी सब स्थानों के गूजरों की सेना में भरती खोल दी गई। यद्यपि १८५७ ई० के बाद ब्रिटिश साम्राज्य कायम होने के बाद बहुत समय तक सेना में सामूहिक रूप से गूजर सम्मिलित न हो सके थे, किन्तु राजपूताने के गूजर सैनिकों की अफगान, चीन, तिब्बत और सरहद के स्थानों में होने वाले युद्धों में प्रदर्शित की गई वीरता को और उनकी सैनिक विशिष्ट परम्परा को ब्रिटेन के शासक अधिक दिनों तक छिपा न सके। प्रथम विश्वव्यापी इस महायुद्ध (१६१४–१८ ई०) में गूजरों की नियमित सैनिक संख्या १८७६६ थी, जो भारतीय सेना में ११६, १२०, १२२, १०७ (१), १०७ (२), ११२ (१), ११२ (२), ११३ (१), ११३ (२) ४४ ३ इन्फेन्टरी तथा ६ जाट रेजिमेन्ट, १६ जाट रेजिमेन्ट, ४२ देवली रेजिमेन्ट, हैवी आर्टलरी, एनीमल ट्रांसपोर्ट में विशेष रूप से भरती हुए। इस संख्या का महत्व इससे पता चलता है कि भारतीय सैनिक जातियों में पंजाब की सभी जातियों को लेते हुए ये पांचवें नम्बर पर रहे।[१११] इस संख्या का विशेष महत्व इस बात से और है कि

[१११] देखो चार्ट युद्ध म्युजियम लाल किला देहली।

पंजाब तथा उत्तर प्रदेश एवं देहली के मुसलमान गूजरों की इतनी ही संख्या में सेना में सैनिकों की जनसंख्या और है। इसके अतिरिक्त देशी राज्यों की नियमित सेना में, जहां गूजर सैनिक व आफीसर पहले ही से चले आ रहे हैं, एक बहुत बड़ी संख्या और भी युद्ध में गई। भरतपुर की जसवन्त हाऊस होल्ड इन्फेन्टरी, धौलपुर की पलटन, ग्वालियर इन्फेन्टरी, बीकानेर शार्दूल इन्फेन्टरी, सरदार इन्फेन्टरी, मेवाड़ कोटा (उम्मेद) इन्फेन्टरी, जय पलटन व प्रताप पलटन अलवर, जयपुर इन्फेन्टरी (१), (२), इन्दौर का तोपखाना, भोपाल आदि की पलटनों में इनकी विशेष कम्पनी थी, जिन्होंने प्रथम विश्वव्यापी महायुद्ध में भाग लिया। मैसोपोटामिया के युद्ध में कोट-अलमाराह (बसरा, बगदाद के मध्य) के मोर्चे पर जनरल टोमसन के नेतृत्व में, तथा ईराक, बगदाद, बसरा के मोर्चों पर गूजर सैनिकों की वीरता, शौर्य एवं सैनिक परम्परा महत्वपूर्ण सिद्ध हुई। खेड़ला जयपुर के कप्तान भैरो सिंह, अलापुर मुरार के कप्तान गंगाराम सिंह, टोंक के कप्तान गिरधारी सिंह, चुन्धिका के लेफ्टिनेन्ट शिकारी सिंह, चिटोरा के सूबेदार गिरधौसिंह बेरपुरा के सूबेदार शिवचरन सिंह, नगला के जमादार हरवश सिंह, भरतपुर के सूबेदार मेजर बुद्धिसिंह बिड़ावल, सूबेदार मेजर जलसिंह आदि सैकड़ों सरदार एवं सैनिकों ने महत्वपूर्ण सेना के वीरता की तमगें आइ० डी० एस० एम०, आई० ओ० एम० आदि तथा बड़ी-बड़ी जागीरें प्राप्त कीं। जिला गुड़गांव तथा भरतपुर, करौली, हिन्डौन, टोंक, ग्वालियर, धौलपुर, बुलन्दशहर व मेरठ के गूजर सैनिकों की इस युद्ध में बड़ी प्रसिद्धि रही।

इस युद्ध के बाद राजनैतिक वायदे ब्रिटिश गवर्नमेंट द्वारा पूरे नहीं हुए और देश में गांधीवाद प्रारम्भ हो गया, जिसने सारे देश को जगा दिया। गूजरों को स्थायी रूप से ८ पंजाब रेजिमेन्ट में महत्वपूर्ण स्थान मिला और पंजाब रेजिमेन्ट तथा दूसरी रेजिमेन्टों में भी उनकी निश्चित संख्या युद्ध के बाद नियमित कर दी। तोपखानों में उनको बहुत बड़ी संख्या में ब्रिटिश अफसरों के पूर्ण नेतृत्व में जगह दी गई। प्रथम महायुद्ध ने भारतीय स्वतन्त्रता का नया मार्ग प्रशस्त किया। महायुद्ध के बाद क्रान्तिकारी जन नायक रूप महात्मा गाँधी

राष्ट्रीय क्षेत्र में आगे आये। १५ जून १९१७ ई० में होमरूल आन्दोलन ने बहुत जोर पकड़ा और ऐनी बीसेन्ट के पकड़े जाने पर लोग सत्याग्रह के लिये तैयार हो गये। चम्पारन के किसान आन्दोलन १९१७ ई० एवं खेडा (गुजरात) आन्दोलन १९१८ ई० मे महात्मागांधी और सरदार पटेल का महत्व देश में विशेष रूप से प्रतिष्ठित हुआ। गुजरात के लेवा खाड़वा (लौर-खारी) गुर्जरों ने स्वतन्त्रता के लिये खुशी-खुशी जेल जाना, जुर्माना देना और सख्तियां उठाना सीखा। प्रथम महा-युद्ध के बाद दिये गये शासन सुधारों में भारतीय जनमत को मान्टेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधार से सन्तोष नहीं हुआ और गान्धी जी के नेतृत्व में राष्ट्रीय आन्दोलन जोर पकड़ने लगे। १९१९ ई० के रौलट एक्ट और उसके बाद के १३ अप्रैल के अमृतसर के जलियान वाला बाग के हत्याकाण्ड मे—जिसमें जनरल डायर द्वारा ८०० से ऊपर व्यक्ति मारे गये और ४००० घायल हुए—देश क्षुब्ध हो उठा और लाहौर, शेखपुरा गुजरानवाला, कसूर, रावलपिन्डी आदि स्थानों पर किये गये अत्याचारों से भारतव्यापी असन्तोष की अग्नि और भी प्रचण्ड वेग से प्रज्वलित होगई और असहयोग आन्दोलन का नारा बुलन्द हुआ। अमृतसर (१९१९ ई०), नागपुर (१९२० ई०), कलकत्ता (४ सितम्बर १९२० ई०) के कांग्रेस के अधिवेशनों में गान्धी जी का नेतृत्व सब से ऊपर चमक उठा।

जन नायक गान्धी के नेतृत्व में ६ अप्रेल १९२१ ई० का दिन सत्याग्रह के लिये निश्चित हुआ। हिन्दू-मुसलिम एकता तथा बायकाट का आन्दोलन, यह दो दृश्य भारत में अभूतपूर्व थे। खादी को अपनाने मे वेष भूषा की सादगी लोगों में घर कर गई, कौन्सिल, कचहरी, कालिज, स्कूलों के सामूहिक बायकाट प्रारम्भ होगये, विदेशी वस्त्रों की होली अपूर्व रही। गवर्नमेंट के जुल्म भी बढ़े किन्तु जनता को स्वराज्य का मार्ग प्रशस्त दीखने लगा। बारडोली सूरत जिले का गुजरात में छोटा सा ताल्लुका है, यहां के लोग कांग्रेस की सब शर्तें मान कर सब से पहले सरदार वल्लभ भाई पटेल के नेतृत्व में अविनय अवज्ञा आन्दोलन को तैय्यार होगये। गुजरात के गुर्जरों (लेवा, पाटीदार, खाड़वा) के जागरण से राष्ट्रीय यज्ञ में महत्वपूर्ण भाग लेने के कारण खानदेश, नर्मदा, ताप्ती की घाटी के गुर्जरों में राष्ट्रीय विचारों का महत्व

बहुत बढ़ा और वे सामूहिक रूप से क्रान्ति की तैय्यारी में लग गये। अनेक नेता उनमें पैदा हुए और उन्होंने देश के रचनात्मक कार्यों में योग दिया। शाहादा में कुमारी मणिबेनपटेल के नेतृत्व में खानदेश के गूजरों ने बभूता गुलाल पाटिल शाहादा के आदेश से एक संयुक्त सम्मेलन जातीय एकता तथा राष्ट्रीय यज्ञ में पूरा २ सहयोग देने के लिये १९२४–२५ ई० में किया, जो प्रत्येक दृष्टिकोण से सफल हुआ। उत्तर प्रदेश में भी नव जागरण काल उपस्थित हुआ। जाति के प्रतिष्ठित घरानों के युवक गांधी जी के नेतृत्व पर विश्वास रखते हुए कृष्ण मन्दिर (जेल) पहुँचने लगे। लाठी और आर्डिनेन्स के राज्य में सरकारी दमन के बढ़ने के साथ २ राष्ट्रीय आन्दोलन गुर्जरों में जोर पकड़ता चला गया।[११०] राजस्थान के प्रसिद्ध क्रान्तिकारी नेता विजयसिंह पथिक देश प्रेम के दिवाने और स्वतन्त्रता के इस युद्ध में मुख्य भाग लेने वाले थे। देशी राज्यों की कुचली जनता को राजस्थान में जागृति का सन्देश देने वाले गुर्जर जाति के इस महापुरुष का नाम राजपूताने में ही क्या भारत भर में प्रथम है। हजारों व्यक्तियों ने पथिक के चरणों के पास बैठ कर देश सेवा की शिक्षा पाई। स्वयं महात्मा गान्धी ने ऐन्ड्रूज साहिब को पथिक जी का परिचय देते हुये कहा था कि "राजपूताने में काम करने वाला तो एक पथिक है बाकी तो सब बात बनाने वाले हैं।" उन दिनों राजपूताने में राजनीति की चर्चा करना तलवार की धार पर चलना था।[१११] प्रवासी नेता भवानीदयाल सन्यासी ने अजमेर में रहते हुए पथिक जी के सम्बन्ध में ठीक ही लिखा था।

[११०] सहारनपुर के प्रधान भोपाल सिंह मुण्डलाना, महन्त जगन्नाथ दास रण देवा, चौ० मंगलसिंह एम० एल० सी० और उनके साथ हजारों नौजवान जेल गये। दूधला गांव (सहारनपुर) की दशा तो गुजरात के बोरसद और बारदौली ताल्लुकों जैसी हो गई। स्मरण रहे कि गुजरात में इन स्थानों पर कर बन्दी आन्दोलन बड़ी सफलता के साथ चलाया गया था, किन्तु सरकार ने उसे दबाने के लिये जुल्म भी उसी पाशविकता से किया, जिसके कारण ८० हजार व्यक्तियों को अंग्रेजी सीमा से बाहर बड़ौदा राज्य के गांवों में बसना पड़ा।

"राजस्थान में श्री विजयसिंह पथिक को कौन नहीं जानता? सच बात तो यह है कि पथिक जी ही राजस्थान के नवजीवन और नव जागरण के जन्मदाता हैं। भारत में सबसे पहिले उन्होंने ही बिजौलिया में सत्याग्रह का सूत्रपात किया था। सत्याग्रह के प्रवर्तक महात्मा गांधी ने उसके बाद चम्पारन में सत्याग्रह का चमत्कार दिखाया था। उन दिनों पथिक के नाम से देशी रजवाडे थर थर काँपते थे। उनके लिये पथिक क्या था मानो एक भयङ्कर हव्वा था। पथिक को जिन्दा पकड़ लाने अथवा मार कर उसकी लाश लाने वाले व्यक्ति को कई रजवाडों ने इनाम की घोषणा कर रक्खी थी।"[२१४]

देशी राज्यों में कांग्रेस के आन्दोलन को बुन्देलखण्ड, ग्वालियर में कुंवर राधेश्याम वर्मा बी० ए० एल एल० बी० सुपुत्र कुंवर सुजानसिंह दीवान समथर व चौ० रामसहाय सिंह नागदा (मालवा) का जबरदस्त हाथ है। कुं० राधेश्याम वर्मा ने तो देशी राज्यों की मूक और निरीह प्रजा के कष्टों में योग देकर प्रजा मण्डल में जान पैदा करदी और अन्त में धर्मी के लिये शहीद होगये।

गूजरों में जागृति, संगठन और राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय सहयोग का परिचय जनमत द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों से चलता है।[२१५]

यह आन्दोलन गुर्जरों में निरन्तर चलता रहा और उनकी तमाम आबादियों में फैलता चला गया। जलियांवाला बाग काण्ड के बाद मेरठ, मैनपुरी, काकोरी के हिंसात्मक आन्दोलनों एवं अमर शहीद सरदार भगत सिंह के महत्वपूर्ण बलिदान एवं १९४२ की क्रान्ति के बाद तो स्वतन्त्रता प्रिय गूजरों ने इस आन्दोलन को अपनी आबादियों में पूरी तरह अपना लिया।

२११—२१४ प्रवासी वर्ष ७ अंक ७ भवानी दयाल संन्यासी के लेख का अंश वीर गुजर प्रजानन्द सन १९५० जनवरी फरवरी ११-१२ अंक वर्ष २२ पृष्ठ २९ में प्रकाशित।

२१० सबसे प्रथम चुनाव में प्रत्येक जिले में जहां भी गूजरों की आबादी है उन्हीं में से उनके सजातीय प्रतिनिधि चुने गए जिला बोर्डों में ऐसे सदस्यों की संख्या प्रतिशत उनकी आबादी के अनुपात से अधिक ही रहता

स्वतन्त्र भारत में वे अपनी महत्वपूर्ण स्थिति जनलब्ध युग मे प्राप्त कर सकेंगे, यह निश्चित है। प्रकृति के शासन ने जनसत्तात्मक भावों की युगान्तरकारी लहर उनमें सदा से ही दौड़ा रक्खी है। मनमानी लूट, अत्याचार, बेइन्साफी के खिलाफ वे सदा लड़ते रहे। गरीबी, अविद्या के कारण—जो सारे देश में छाई हुई है—उनकी प्रगति मन्द अवश्य है, पर उसके कारण मान मर्यादा पर मर मिटने की कामना उनके अन्तस्तल मे विद्यमान है। किसी भी प्रगतिशील आन्दोलन की उन्होंने उपेक्षा नहीं की। हैदराबाद के राक्षसी दमन ने, जब हिन्दुओं की धार्मिक स्वतन्त्रता पर चोटें पहुँचाई तो आर्य सत्याग्रह की जबरदस्त लड़ाई में, जिससे निज़ाम हिल उठा गुर्जरों ने महन्त जगन्नाथदास, प्रेम सेवाश्रम—राष्ट्रीय सेवाश्रम रणदेवा एवं वीतराग तपस्वी पनियाले के महात्मा सुमेरसिंह जी काली कमली वालों के नेतृत्व मे हजारों उच्च घरानों के शिक्षित युवक भेजे, जिससे निज़ाम का घमण्डी मस्तिष्क नीचा होगया। यही स्थिति १६४२ ई० के 'भारत छोड़ो' आन्दोलन के साथ रही। उसके बाद जमुना नदी के पास देहली तक पाकिस्तान बनाने की चाल के लिये चलाये गये मुस्लिम लीग आन्दोलन के प्रसिद्ध अरा मेव आन्दोलन में गुड़गाव, अलवर, मथुरा व भरतपुर के गूजरों ने जो तीन महीने तक हथियार बन्द लड़ाई लड़ी

है। यही हाल अदालती पचायतो, ग्राम सभाओ के प्रधान व मेम्बरो की तमाम उत्तरीय भारत की फेहरिस्त से जाहिर है। सहारनपुर में जिला बोर्ड के प्रथम चुनाव म चौधरी आसाराम मुख्तार चैयरमैन चुने गय, उसके बाद ले० राजा बलवन्तसिह लढौरा निर्वाचित हुय। इसी प्रकार कौंसिल चुनाव म राजा बलवन्तसिह, चौ० भगतसिह और असेम्बली के चुनाव में चौधरी भगतसिह, महन्त जगन्नाथदास, चौ० दाताराम तीतरा, पश्चिम खानदेश मे मगरा सभुता पाटिल शहादा मेम्बर लेजिस्लेटिव असेम्बली चुने गय। इसी प्रकार मुज्जफ्फर नगर जिला बोर्ड में चौ० मजलसिंह, चौ० सुल्तानसिह चैयरमैन शिक्षा विभाग रह। स्वतन्त्र भारत के असेम्बली के चुनाव में सहारनपुर से चौ० दाताराम मरठ मे प्रधान विश्वम्भरसिंह एम० ए०, एल० एल० बी०, बुलन्दशहर से मास्टर रामचन्द्र विकल बसन्तपुर, होशियारपुर से चौ० बाबूराम दान्ठ रत्तेवाल, देहली से चौ० फतेहसिंह बी०ए०,

और आक्रमणात्मक एव रक्षात्मक नीति अपनाकर उसे विफल कर दिया. वह साधारण घटना नहीं है। चौधरी मटोल चन्द हुसैनी व चौ० नेतराम नवादा इस आन्दोलन के प्रमुख नेता रहे। अर्जुन की प्रतिज्ञा को (न दीनता दिखाना और न मैदान छोड़कर भागना) उन्होंने पूरा किया। इसी प्रकार मि० जिन्हा द्वारा फैलाये गये दगों में रक्षात्मक कार्यवाही एवं भयानक रूप से प्रज्वलित द्वेषाग्नि को दूर करने में गूजरों ने पूरा पूरा योग दिया। देहली में महात्मा गांधी द्वारा शान्ति स्थापित करने के प्रयत्न में चौ० उदयचन्द कोटला मुबारिकपुर, मुजफ्फरनगर में चौ० मानसिंह, चौ० सुलतानसिंह कैराना, चौ० देशराजसिंह बनत, चौ० रणजीतसिंह, चौ० ज्ञानसिंह खिन्डा चौ० मलखानसिंह अलीपुर, चौ० अजयसिंह दिमाला आदि एव सहारनपुर में वटार तथा छोंकर खाप द्वारा अनेक स्मरणीय महत्वपूर्ण काम किए गये, जिसमें उन्होंने कर्तव्य पालन करते हुए सैकड़ों परिवारों को मौत के मुंह में जाने से बचाया। इसी प्रकार के प्रयत्न कसाने, बैंसले गूजरों ने लोनी (मेरठ) परगने में महत्वपूर्ण रूप से किये। देहली के समीप खारी तथा हेड़े गूजरों के गांव, सब्जी मण्डी तथा झील खुरजा, शाहदरा में लीग द्वारा प्रज्वलित विद्वेषाग्नि द्वारा सताये गये हिन्दू एवं मुसलमान दोनों ही की रक्षा करने में प्रयत्नवान रहे। इसी प्रकार बदरपुर के आसपास जमुना तक के खादर के गावों को बचाने के लिए मदनपुर, खानपुर मेवला महारानपुर

जगतपुर, भरतपुर (राजस्थान) में कुं० श्रीमानसिंह एम०ए०, एल०एल० बी०, मोरेना से ठा० सोवरणसिंह वर्तमान अध्यक्ष नगरपालिका मोरेना. (ग्वालियर के लिय इससे पूर्व भाग और चौधरी रामसहाय सिंह शागदा व अन्य २–३ मेम्बर चुने गये थे), शहादा (पश्चिम खानदेश—बम्बई) में डाक्टर विश्राम हरि पाटिल एम० एससी०, पी० एच० डी० पटेलवाडी प्रान्त प्रान्त प्रान्तों में मेम्बर लेजिस्लेटिव असेम्बली एव मुरैना, पलवल, रामपुर मचरहा, धूलिया आदि नगरपालिकाओं के हाल के चुनाव में ठा० सोवरणसिंह, चौ० कल्याणसिंह, चौ० आसाराम, चौ० भरतसिंह, मट शंकर नानू आदि प्रधान चुने गये। इसके अतिरिक्त प्रत्येक उनकी आबादी के स्थान में चुनाव में खड़ा होना, संघर्ष करना, सफल होना गूजरों के जागरण काल की सूचना है।

तथा निगांव के इलाके के गूजरों ने विशेष प्रयत्न किया, जिससे हिन्दू मुसलिम विद्वेष की अग्नि विशेष रूप से शान्त होगई। कार्तिक के मेले के अवसर पर होने वाले दंगों से आसपास की मुसलिम आबादियों में भयंकर रूप से प्रतिहिंसा की अग्नि प्रज्वलित थी और उन्होंने हिन्दू आबादियों एवं यात्रियों पर सामूहिक आक्रमण प्रारम्भ कर दिये। ऐसी संकट पूर्ण स्थितियों में बुलन्दशहर तथा मेरठ जिले के गूजरों ने अपने हाथी और घोड़ों पर सवार हथियारों से लैस होते हुए उनकी रक्षा करने का श्रेय प्राप्त किया।

(१८)

यह स्मरण रखने की बात है कि विश्व व्यापी द्वितीय महा-युद्ध छिड़ते ही ३३ सितम्बर १६३६ ई० को महात्मा गांधी ने ब्रिटेन की मदद बिना किसी शर्त करने के लिये कहा था, लेकिन कांग्रेस के नेतृत्व में उनकी यह बात नहीं मानी। पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने लखनऊ में प्रेस के सामने बयान देते हुए (८ दिसम्बर १६४१ ई०) कहा था "मैं सोचता हूँ कि जिस तरह की गुटबन्दी हुई है उसे ध्यान में रखते हुए इस में कोई सन्देह नहीं कि संसार की प्रगतिशील शक्तियां उस दल के साथ हैं, जिनका प्रतिनिधित्व रूस, चीन, अमेरिका और इङ्गलैंड कर रहे हैं।" पर अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष और परिस्थिति में ऐसे मौलिक कारण उपस्थित थे कि नये दृष्टिकोण और नई नीति को मौलिक रूप से लेकर कांग्रेस को नया मार्ग ग्रहण करना पड़ा और व्यक्तिगत सत्याग्रह अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के कारण ३० दिसम्बर १६४१ ई० के बारदौली प्रस्ताव के अनुसार वापस ले लिया गया। देवली और हिजली कैम्प में वामपक्षी नेताओं को बन्द कर देश में निरंकुश शासन स्थापित होने पर प० नेहरू, गोविन्द वल्लभ पन्त, मौलाना आज़ाद, आसफ अली आदि मित्र राष्ट्रों की मदद करने की इच्छा रखने वाला दल भी युद्ध नहीं कर सकता था।[११८] गुर्जरों में भी इसी तरह दो विचार धारा काम कर रही थीं।[११९]

[११८] स्वतन्त्रता संग्राम के ६० वर्ष (श्री कृष्ण दास) पृष्ठ २०६

[११९] कई बार जेल जाने वाले कांग्रेस के पहले से प्रसिद्ध कर्मठ नेता

स्वतन्त्रता के आन्दोलन तथा सैनिक वीर भावना जाति में भरने वाले दोनों ही प्रयत्न देश तथा जातिय गौरव के लिये महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुए और उनके त्याग, वीरता, शौर्य की छाप अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण में सब पर छागई। द्वितीय महायुद्ध में जो विश्वव्यापी भयानक महायुद्ध था और लगातार १६३६-४२ ई० तक महत्वपूर्ण रूप में चलता रहा, गूजर सैनिकों ने बहुत बड़ी संख्या में महत्वपूर्ण भाग लिया और ८ पंजाब रेजिमेंट की बटालियन्स सुरमा की तरह बढ़ने लगी और गूजर सैनिकों ने सिक्खों एवं मुसलमानों की कमी भी पूरी की। इसके अतिरिक्त फ्रन्टियर फोर्स राईफलस, १४-१६-११ पंजाब रेजिमेंट, ६ जाट रेजिमेंट, राजपूत रेजिमेंट, राजपूताना राईफल्स मोटर ट्रान्सपोर्ट, ऐनीमल ट्रान्सपोर्ट एवं विभिन्न यूनिटों और देसी राज्यों की पल्टनों में विशेष रूप से सम्मिलित रहे। द्वितीय महायुद्ध में अफ्रीका, इटली, फ्रान्स, बर्मा, मलाया, सिंगापुर उनके मुख्य युद्ध क्षेत्र रहे। ८ पंजाब रेजिमेंट बर्मा में फ्रन्टियर के युद्ध में विशेष महत्वपूर्ण स्थिति में रही और गूजर सरदार एवं सैनिक रण कौशल में अद्भुत शौर्य प्रदर्शित करते रहे।

८ पंजाब रेजिमेन्ट के गूजर सैनिकों ने अफ्रीका में इटली हुई इटली में जर्मन सेनाओं से सीधी टक्कर ली और उनके सरदार और सैनिकों ने जर्मन तोपखाने और सशस्त्र सेनाओं से, जो भयानक युद्ध किए वे भारतीय सेना के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेंगे। इटली के ऊबड़ खाबड़ पहाड़ी प्रदेश, तेज बहने वाली नदियों और दलदल भरे भयानक नद व नालों को पार करके गूजर नौजवानों ने लेफ्टिनेण्ट कर्नल गिरधारी सिंह, जो उस समय मेजर थे, के नेतृत्व में उनकी सैनिक स्कीम के मुताबिक

चौ० मगनसिंह एम० एल० ए० ने इस युद्ध में सक्रिय भाग लेकर—कप्तान बनकर—कांग्रेस से त्याग पत्र देते हुए ५२ वर्ष की अवस्था में नाजीवाद और जापान शाही के विरुद्ध अपनी शक्ति का उपयोग मित्र राष्ट्रों की विजय के लिये किया। दूसरी ओर महन्त जगन्नाथ दास रणदेवा, चौ० दानाराम तोंगरी, चौ० चन्दनसिंह ढिकोली चौ० रामबहादुर सिंह सिमलसन्नी, मास्टर रामचन्द्र विकल आदि ने जेल जाकर देश के प्रति अपना बलिदान किया। दोनों ही विचारधारा में हमारा स्वर्णिम प्रवाहित

जर्मन और इटेलियन शत्रुओं के छक्के छुड़ा दिये। १८ वर्ष के सिपाही कमलराम विड़रवास (मोलू पुरा करौली) ने गारी नदी को पार करके (जहां दोनों तरफ बिजली के तार बिछे हुए थे) जर्मन के तीन तोपखानों पर कब्जा कर लिया और जर्मन सरदार सैनिक या तो मार दिये या गिरफ्तार कर लिये। इस विजय के उपलक्ष में आपको स्वयं ब्रिटिश सम्राट ने युद्ध के मैदान में पधार कर सेना का सर्वोच्च वीरता का पदक (विक्टोरिया क्रास) प्रदान किया। इसी सिलसिले में कर्नल गिरधारीसिंह को दोहरा मिलटरी क्रास तथा जंगी इनाम दिया गया। आनरेरी केपटिन चेतराम सिंह, सूबेदार सुमेराराम को आई० ओ० एम० (इन्डियन आर्डर आफ मेरिट) आई० डी० एस० एम० तथा सूबेदार देशराज सिंह, सूबेदार रामफल सिंह, जमादार अन्तराम को मिलटरी क्रास तथा जमादार मन्शाराम व जमादार ज्ञानचन्द को जङ्गी इनाम प्राप्त हुए। इसके अतिरिक्त बर्मा युद्ध मे सूबेदार छोटे राम और सूबेदार राम कुमार राम को मिलटरी क्रास, कैप्टिन थानसिंह आई० ओ० एम०, नायक किशरसिंह को पित्तये और लाश्रा के मोर्चे पर आई० डी० एस० एम० तथा सूबेदार बख्तावर सिंह आदि को जंगी इनाम मिला। युद्ध सम्बन्धी अनेक और भी पदक सैनिकों एवं सरदारों को प्राप्त हुए और जातीय वीरता की छाप सर्वसाधारण पर छागई। पंजाब रेजिमेंट की बटेलियन उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रदेश में अधिकतर रहती थी और वहां स्वतन्त्र कबायली जिरगों पर गूजरों की वीरता की छाप थी। अनेक लड़ाइयों में यहां पर गुर्जर सैनिक व अफसरों को सरकारी रिकार्ड के अनुसार महत्वपूर्ण प्रसिद्धि प्राप्त हुई। नायक दिलसुख सूबेदार किरोड़ीसिंह उच्चैन, सूबेदार रिसालसिंह सिकरानी तथा कई सैनिकों को आई० डी० एम० एम० तथा युद्ध पदक व जंगी इनाम यहीं पर मिले।

द्वितीय महायुद्ध में १५ फरवरी १९४२ ई० को एक नवीन ज्योति प्रकट हुई और एशियावासी खासकर भारतीयों को नया सन्देश मिला, ब्रिटिश

होकर एक ओर कांग्रेस के आदेशों का पालन कर रहे थे और जेल जाकर असहयोग की महान भावना को जागृत बनाकर राष्ट्र को स्वतन्त्र बनाने के लिये यत्नवान थे तथा दूसरी ओर सेना में भरती होकर सहयोगात्मक

साम्राज्य में कभी अस्त न होने वाला सूर्य पूर्व में इस दिन ही मलाया में डूब गया। ब्रिटिश सिंगापुर का पतन आगे होने वाली श्रृंखलाबद्ध घटनाओं की एक श्रेणी थी। 'रिपल्स' और 'प्रिन्स आफ वेल्स' १० दिसम्बर को पहले ही हवाई हमले में डूब गये। १३ दिसम्बर को गुआम, २० को पेनाग, २२ को वेक २५ को हांगकांग, २६ को इपोह और ७ जनवरी को मनीला के पतन से जहां चारों ओर-घुर्राने वाला बब्बर शेर भीगी बिल्ली की तरह दुम दबा कर भाग खड़ा हुआ, वहां ३२ हजार भारतीय सिपाही जापान के हाथ कैद होने में और ७ लाख भारतीयों की आजादी मलाया में जापान के हाथ आने से एक नवीन स्वतन्त्रता की किरण देश भक्तों में उदय हुई। बर्मा के पतन होने पर इन्हीं मलाया के भारतीय सैनिकों और नागरिकों ने अन्धकार में प्रकाश की ओर आने का प्रयत्न किया। अङ्गरेजों द्वारा निराश्रित हालत में छोड़े गये विचारशील सैनिकों के मन में पराधीनता एवं बेबसी के प्रति घृणा और आजादी के प्रति स्वाभाविक प्रेम पैदा होगया। मेजर फुजीवारा से आश्वासन पाकर भारतीयों में रास बिहारी बोस द्वारा 'आजाद हिन्द संघ' की स्थापना हुई। भारतीय परतन्त्रता की मुक्ति के लिये प्रसिद्ध, देशभक्त सुभाषचन्द्र बोस शेर की तरह गरजते हुये मैदान में आये और उन्होंने बताया कि भारत की राष्ट्रीय मुक्ति की वेला तुम्हारे सामने है, पूर्व में ब्रिटिश साम्राज्य का सूर्य अस्त होकर भारतीय स्वतन्त्रता की पूर्णिमा का चांद उदय हो रहा है। बैंकोक में १५ से २३ जून तक पूर्वीय एशिया का हिन्दुस्तानियों का महत्त्वपूर्ण सम्मेलन हुआ। युद्धबन्दियों, सैनिकों के प्रतिनिधियों को भी इस में सम्मिलित किया गया।

गूजरों की मुख्य सैनिक स्थिति की ८ पंजाब रेजिमेंट की दो बटेलियन मुख्य रूप से मलाया व सिंगापुर में थीं इनके अतिरिक्त विभिन्न यूनिटों में गूजर बहुत बड़ी संख्या में थे। खोल (गुड़गांव) का एक नौजवान सरदार वीर बांका सूरजमल और सैदपुर (अलवर) के

भावना से युद्ध ग्रहण तथा च दा देकर मित्र राष्ट्रों की विजय को सुगम बना कर स्वतन्त्रता का मार्ग प्रशस्त होने के स्वप्न में लीन थे और इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि इस युद्ध में सैनिक सहायता एवं कांग्रेस आन्दोलन में दोनों ही वर्गों का प्रबल समर्थन जाति में काम कर रहा था।

सैनिक घराने के कप्तान मुरारीसिंह उप पलटन अलवर का सुपुत्र जन्मजात सैनिक सरदार कुंवर मानसिंह सौभाग्य से इस प्रतिनिधि मण्डल में थे और उन्होंने नेताजी को बिना किसी शर्त के अपने प्यारे गूर्जर सैनिकों के साथ अपने को आजाद हिन्द फौज के अर्पण कर दिया। जनरल शाहनवाज आजाद हिन्द फौज के सुप्रीम कमान्डर थे और उनके नेतृत्व में कप्तान सूरजमल ने चिन की पहाड़ियों में भूख, प्यास यहां तक कि मौत का सामना करते हुए भी आजाद हिन्द फौज के प्रति अपना कर्तव्य पालन करते हुये गुर्जर सैनिकों को लेकर आजादी के लिए युद्ध किये। अनेक मोर्चों को-जङ्गल की जड़ मूल झाड़ियों के फल-फूलों तथा थोड़े से चावलों के साथ खाकर भी—जयहिन्द के नारे के साथ फतह किया और विजय, सम्मान और भोजन प्राप्त करा कर सैनिकों का उत्साह बढ़ाया। मोराह से पलेल तक, कोहिमा में १५०० मील के घेरे में आजाद हिन्द सेना ने अधिकार किया, जिसका नेतृत्व जनरल शाहनवाज कर रहे थे, इसमें कप्तान सूरजमल का नेतृत्व चमक उठा और उन्होंने जनरल के आदेश पर अपने गुर्जर सैनिकों के साथ जिस साहस, सामर्थ, वीरता एवं धैर्य का परिचय दिया, वह अद्भुत और विस्मयजनक था। आमने सामने की लड़ाई में इनका सामना करना असम्भव था। ७२ जून को रंगून के जुबली हाल में नेता जी के भाषण से प्रभावित हुए गुर्जर सैनिक भारत की स्वतन्त्रता के लिये हंसते हंसते मृत्यु का आलिंगन करने वाली जांबाज सेना में अपने खून की नदी से दुश्मनों को डुबोने के लिये तैय्यार होगए। कप्तान सूरज मल का अनुशासन युद्ध कौशल प्रसिद्ध था। अङ्गरेजी पलटन की १४ वीं सेना का मुकाबिला करने पर उनके द्वारा ही रोका गया था वरना वह नदी के वेग की तरह आगे बढ़ रही थी, दुश्मनों और आजाद हिन्द सेना में इस वीर के जौहर की चर्चा थी। झांसी रानी ब्रिगेड को सुरक्षित पहुँचाना, दुश्मन को कैद न कर अङ्ग भङ्ग करके वापिस करना, जापानी सैनिकों की कमाण्ड सम्भालना, नेता जी के गुप्त सन्देशों को बैंकोक-रंगून माण्डले आदि पहुचाना इन्हीं का काम था। शोनान से इम्फाल पैदल पहुँचने के लिये ७७५४ मील का रास्ता है जिसमें १०७५ मील की मंजिल पैदल तय करनी पड़ी थी, यह एक आश्चर्यजनक नेतृत्व का काम था। सैदपुर (अलवर) के लेफ्टिनेण्ट

कर्नल मानसिंह, आजाद हिन्द फौज में अनेक उच्च पदों पर आप रहे। कमांडिंग आफिसर नं० १, मोटर ट्रान्सपोर्ट, हिन्द फील्ड फोर्सेज, ग्रेट्जूटेन्ट तथा चीफ इन्सट्रक्टर मेन रीडिंग एण्ड स्टाफ ट्यूटीन आफीमर्स ट्रेनिङ्ग स्कूल, चीफ आफ मिलिटरी पुलिस व सिक्रेट सर्विसेज सुप्रीम होमेन कमाडिंग आफिसर दूसरी बटेलियन, प्रथम इन्फेन्टरी रेजिमेंट के रहे।[१४०] प्रतिकूल परिस्थितिवश २४ अप्रैल को नेता जी को रंगून खाली करना पडा और वे बैंकोक चले गये। १८ अगस्त को नेता जी ने बैंकोक से विदा होते समय कर्नल भोंसले को आत्म समर्पण का आदेश दिया लेकिन ढोलपुरी कैम्प के जावाज सैनिकों ने यह एलान कर दिया कि आत्मसमर्पण के लिये कहने वालों को गोली से मार दिया जायगा। सभी स्थानों पर क्रान्तिकारी आजाद सेनाओं को विपरीत परिस्थिति, अधूरे साधनों से आजादी की महान् लडाइयां लडनी पडी। इटली, आयर, फ्रान्स, रूस आदि सभी प्रदेशों में ऐसे सैनिकों ने निहत्थे रहकर आजादी के मोर्चे पर कूच की है। अपने देश के बाहर प्रतिकूल परिस्थिति में आजाद हिन्द फौज ने, जो नये इतिहास का निर्माण किया, वह बहुत ऊंचा है। सैनिक गूजर जाति के वीर योद्धाओं ने १८५७ ई० की स्वतन्त्रता की लडाई का पहला पृष्ठ फिर आजाद सेना लोगों के सामने खोला गया और हालात ने यह प्रकट कर दिया कि गुर्जर भारतीय स्वतन्त्रता के लिये विद्रोह, विप्लव, युद्ध क्रान्ति सब कुछ करने के लिये आत्म बलिदान पर साथ हैं। सफलता या असफलता के कारण इन्हें लोग देशभक्त वीर अथवा बागी, कुछ कहें इसकी उन्हें परवाह नहीं। १८५७ ई० के विद्रोह को गदर का नाम दिया गया, लोगों को बागी, अराजकतावादी बताया।

---

१४० वीर गुजर वर्ष २३ अंक ८ नवम्बर १९५१ ई०

लेफ्टिनेण्ट कर्नल मानसिंह जून १९४५ ई० में भारत वापिस आये, १ मई १९४६ ई० में काबुल लाइन्स देहली से रिहाई हुई। इस समय आप आनरेरी रेज़िडेण्ट आफिसर अलवर तथा परगना टपूकडा की ६६ गावों की पंचायत के प्रधान व डिस्ट्रिक्ट सेशन्स जज अलवर के असेसर हैं, इनका निम्न संक्षिप्त परिचय है—

१६४२ ई० की क्रान्ति को दंगे, उपद्रव, लूटमार बताया। आजाद हिन्द फौज वालों को बागी सिद्ध करने का यत्न किया गया। हां यदि १८५७ ई० के स्वतन्त्रता के संग्राम की योजनाएँ सफल हो जातीं या नेता जी की सेनाएँ इम्फाल के मोर्चे पर सफल हो जातीं तो भारत का इतिहास और ही तरीके से लिखा जाता किन्तु काल चक किसी दूसरी धुरी पर घूम गया और आज़ाद हिन्द सेना का त्याग व्यर्थ नहीं गया। भारत में जनतन्त्र युग आया और आज भी अराकान, इम्फाल और पलेल की पहाड़ियों की चोटियों सिर ऊंचा उठाये हुए सैनिकों का गर्वपूर्वक स्मरण करती हुई उनकी वीरता की साक्षी दे रही हैं। आजाद हिन्द सेना के नायक नेता जी सुभाषचन्द बोस ने देश से बाहर स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिये सेना इकट्ठी करके अङ्गरेजों के लड़खड़ाते कदमों को फौरन उखाड़ने में जो श्रेय प्राप्त किया उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

भारत तथा अन्य बहुत से परतन्त्र देशों का ब्रिटेन ने बुरी तरह से शोषण किया और वह दो महायुद्धों में इन्हीं आधीन देशों के कारण विजयी हुआ, किन्तु इन्हीं युद्धों ने ब्रिटेन और उसके साम्राज्यवादी साथी राष्ट्रों की कमर तोड़ दी। पराधीन देशों की विप्लव की चिनगारी स्वाधीनता की आग को आगे बढ़ाती गई और भारत तथा उसके साथ एशियाई देश युद्ध समाप्त होने के साथ ही साथ १६४५ ई० के बाद स्वतन्त्र होते चले गये।

इसी समय इंगलैंड में पार्लियामेन्ट के निर्वाचन में क्लीमेंट एटली के नेतृत्व में मजदूर दल विजयी हुआ और ब्रिटिश सरकार के

जन्म १४ अक्तूबर १६१६। पिता—कैप्टिन मुखरामसिंह। शिक्षा—राजऋषि कालेज अलवर से इन्टरमीडियेट। खेल कूद—हाकी में कालेज कलर अलवर स्टेट कलर (Alwar State Colour) और राजपूताना कालिजेज कलर मिले।

१६ अप्रेल १६३८ ई० में अफसर कैडेट के बतौर अलवर स्टेट फोर्सेज में भरती हुये। १६ मई १६४१ ई० में स्टेट से बदलकर Indian army में सेकिन्ड लेफ्टिनेन्ट के पद पर नियुक्त हुए। काकूल (N. W. F. P.) से (A. I. A. S. C. Officers 'course), सागर से (weapons

प्रधान मन्त्री ने भारत को अपना संविधान आप बनाने और स्वतन्त्रता देने की घोषणा की। बाद में भारत सचिव पैथिक लारेन्स अलेक्जेन्डर तथा स्टेफोर्ड क्रिप्स का मिशन भारत आया और उसने एक संविधान सभा का निर्माण किया। प्रान्तों के विधान मण्डलों के द्वितीय सदनों के निर्वाचित सदस्यों ने संविधान सभा का निर्माण किया, जिसमें कांग्रेस को २६६ सदस्यों में से २०४ मिले, लेकिन मि० जिन्हा और मुसलिम लीग ने, जिस प्रकार १६ मई और १६ जून की मिशन की घोषणा में अड़गा लगाया उसी प्रकार अपनी पाकिस्तान बनने की माग में सक्रिय आन्दोलन की धमकी दी और १६ अगस्त १९४६ ई० को कलकत्ते से सक्रिय आन्दोलन आरम्भ हुआ। इस समय की कांग्रेस की नीति से भारत सरकार बडी प्रभावित हुई और उस पर यह असर पड़ा कि भारतीय जनता का विश्वास कांग्रेस पर है। लार्ड वेवल ने पंडित जवाहर लाल नेहरू को अन्तरकालीन सरकार बनाने का निमन्त्रण दिया। मुसलिम लीग ने इसका भी विरोध किया २ सितम्बर को अन्तरकालीन सरकार ने कार्यभार सम्भाल लिये। मुसलमानों के जहर भरे भाषण, आन्दोलनों से यत्र तत्र भारत म बडे बडे हिन्दू मुसलिम दंगे हुए। नेहरू मन्त्री मण्डल ने योग्यता से काम चलाया। १ अक्तूबर को लीग के ५ सदस्य अन्तरकालीन सरकार में शामिल होगये, परन्तु लीग ने संविधान सभा में भाग लेने से इन्कार कर दिया और स्वराज्य प्राप्ति की समस्या विकट होगई।

---

course) और जबलपुर स्कूल से (Ammunition Course) पास किए और जनवरी १९४२ ई म सिंगापुर जा पहुँचा। हिरासत (surrender) के बाद नेता जी की खडी की हुई A H F (इन्डियन नेशनल आर्मी) म शामिल हुए। निम्न पदों पर काम किया —

(1) Commander No 1 M T Coy Hindustani Fld Force (2) Adjt & Chief Instructor Map Reading and staff duties Officers Trg School (3) Chief of Military Police & Secret Service (Supreme Hors), (4) Commander 2nd Bn 1st Inf Regt

अन्त मे ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री ने घोषणा करदी कि वह भारत को जून १६४८ ई० तक छोड़ देंगे। लार्ड माउन्टबेटन ने वायसराय होकर गतिरोध को दूर करने के लिये भारत विभाजन की योजना बनाई और ३ जून को उसकी घोषणा होगई। १५ अगस्त १६४७ ई० को भारत और पाकिस्तान का विभाजन होगया। और इसके साथ ही बंगाल और पंजाब भी बंट गये। २१ जून १६४८ ई० को माउन्टबेटन चले गये और चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य प्रथम भारतीय गवर्नर जनरल बने। १६ नवम्बर १६४६ ई० को भारत का नया संविधान बना और इसी के अनुसार शासन चल रहा है।

(१६)

समय का प्रभाव जातियों पर पड़े बिना नहीं रह सकता। पंजाब, सीमाप्रान्त तथा स्वतन्त्र कबायली इलाकों, स्वात, चित्राल, हजारा, गुजरात, काश्मीर तथा पंजाब के सभी जिलों मे जहाँ गूजरों की बहु संख्यक आबादी है। जब वहां की पठान आदि आर्य जातियों ने इस्लाम ग्रहण कर लिया तो राजपूत, जाट, गूजर, डोगरे आदि भी स्वाभाविक रूप से इस्लाम के अनुयायी होगये लेकिन गूजरों ने अपनी भाषा, भेष और संस्कृति मे परिवर्तन नहीं किया। स्वात के गूजरों की भाषा वही है, जो पूर्वी राजपूताने की है और जयपुर के राजपूत गूजर जिस भाषा को बोलते हैं वही उनकी भाषा है।[१६१] इसी प्रकार तमाम कबायली प्रदेशों, पेशावर तथा सरहदी प्रदेशों के मुसलमान गूजर गूजरी हिन्दी बोलते हैं, जो राजपूताने से मिलती है, और उनका पहिनावा भी लहंगे तथा लाल रंग का है।[१६२] उनकी जातीय स्थिति, गोत्रों की परम्परा तथा रिवाज हिन्दू गूजरों से पूरी पूरी समानता रखते हैं।[१६३] तमाम पठानों की बहुसख्यक आबादी में सिर्फ गूजरों का ही स्वतन्त्र अस्तित्व है। रावी से स्वात दरिया तक गूजरी

---

[१६१] लेंग्वेस्टिक सर्वे आफ इन्डिया ६ वा भाग जिल्द २ पृष्ठ ३२२ (सर जार्ज ग्रियर्सन)

[१६२] पंजाब कास्टस (सर डेन्जिल इबटसन के० सी० एस० आई०) पृष्ठ १६३।

[१६३] वही पृष्ठ १६३

भाषा (हिन्दी—राजस्थानी) के अलावा वे किसी भाषा को नहीं जानते। धार्मिक भावना उनकी उच्च है। कागान, मौगर, मग आदि सभी नगरों में उनके घरों में हिन्दू आर्य सभ्यता के अनुसार स्त्रियों का शासन है जिनका चरित्र ऊंचा है। लम्बे खूबसूरत कद के गूजर अलग ही पहिचाने जाते हैं। अपनी अलग अलग कुलों की आबादियों में हर जगह बसे हैं। इतिहास व प्राचीन सनदों से पता चलता है कि १७ वीं शताब्दि में गूजर हजारा पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर चुके थे। तूरीन वश के गूजरों ने उत्तम जई पठानों को सिन्ध से पार तरवेला तक खदेड़ कर अपना अधिकार कर लिया था। नजीबुद्दौला खां व नजीबेगम और मुकद्दम मोहम्मद मुसर्रफ सिक्खों के शासनकाल में भी हजारा के मैदान पर शासन करते थे। वहां के मुख्य आदमी को अब भी मुकद्दम कहते हैं। मुकद्दम मीर अहमद, गाजी फैजआलम उनके प्रमुख सरदार हैं।[२६०] इसी प्रकार गुजरात शहर को भी गूजरों ने अकबर के समय में जाटों से शक्ति सन्तुलन करते हुये बसाया था। पेशावर के गूजरों में युसुफजई में जहां उनकी ठोस जत्थे बन्दी भारतीय रक्त के रूप में है और वह भारत की हिन्दू जाति के हैं। उनकी जिन्दगी का प्रवाह वही है, वे सुन्दर, स्वस्थ, पुष्ट बलवान अफगानों के से हैं और पठानों में और जातियों की अपेक्षा ज्यादा स्वतन्त्रतापूर्वक जीवन व्यतीत करते हैं।[२६१] इन मुसलमान गूजरों का विभाजन से पूर्व अखिल भारतीय धर्म रक्षणी गूजर महासभा से घनिष्ठ सम्बन्ध थे। नवाब सर फजलअली के० सी० एस० आई०, खान बहादुर चौ० फतेह दहीन आई० ए० एस०, खानबहादुर चौ० अब्दुल मलिक, डा० मोहमुद्दीन आई० एम० एस० चौ० मोहम्मद शरीफ खां आदि ऐसे व्यक्ति थे, जो दोनों ही सम्प्रदाय के गूजरों का नेतृत्व समान रूप से करते थे।

काश्मीर के दस लाख गूजरों का सगठन अपूर्व व ईर्षा की चीज है। उन्होंने पहले डोगरा अत्याचारों के खिलाफ रुप से अधिक सघर्ष किया और राज्य की स्थिति अस्त व्यस्त करदी और उसके बाद काश्मीर

---

[२६०] हजारा गजेटियर ६०, ६१, ६५, ६६

[२६१] पेशावर गजटियर पृष्ठ ५९, ५४, ११७

की स्थिति भारत म विलीन करने के लिये अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगादी, इनके नेता पीर हजरत निजामुद्दीन की भारत के प्रति वफादारी आदर्श है। २११

इससे पहले भी सामूहिक रूप मे काश्मीर का १० लाख गूजर डोगरा राज्य के तत्कालीन सामूहिक अत्याचार के खिलाफ बड़े वेग से खड़ा होता है। जौना गूजरी जैसी आदर्श किन्तु अशिक्षित वीर महिला

---

२११ दैनिक मिलाप नई देहली १६ अक्टोबर १९५३ ई० मे प्रकाशित 'श्री रणवीर महोदय का आखो देखा वृतान्त काश्मीर मे क्या देखा ?' पृष्ठ २

"गूजरो को अगर काश्मीर के जगलो का बादशाह कहा जाय तो गलत नही होगा। यह लोग जगलो मे और ऊचे ऊचे पहाडो पर रहते है, घोडे गाय भैसो को पालते हैं, भेड बकरी का व्यापार करते है। अगर पाकिस्तानी हमलो और हदबन्दी ने इनके रास्ते सीमित न कर दिये होते तो यह लोग काश्मीर की सीमा पार करके चीन और तिब्बत में पहुच जाते थे और फिर घूमते घूमते अपने पशुओ के साथ वापस आजाते थे, एक बार एक गूजर परिवार मुझे कोहली के पास मिला, उसके बुड्ढे बुजुर्ग ने बतलाया कि मै कई बार मगोलिया (रूस) तक हो आया हू।

"सारे काश्मीर की आबादी ४० लाख (पाकिस्तान समेत) है और भारतीय काश्मीर म १० लाख से ऊपर गूजर है। इतने जाबाज दिलेर, बहादुर, उद्योगी, परिश्रमी, हिम्मतवाले लोग जितने कि गूजर है काश्मीर में तो क्या ? किसी और जगह में एसे आदमी मिलने कठिन है। इनकी जत्थेबन्दी इतनी ठोस व मजबूत है कि उसे देख कर श्रद्धा से आदमी का सिर झुक जाता हैं। १० लाख गूजर जगह जगह बिखरे हुए, ऊचे ऊचे पहाडो पर निवास करते हुए हैं, किन्तु उन सबका नेता पथ प्रदर्शक एक है।

"घोडो पर सवार मानवो की नदी भागते दौड़ते सिन्ध नदी के किनारे श्रीनगर से २४ मील प्रागन के पास कनागिन म मन देखी। तीन हजार से अधिक गूजर और तीन हजार से ऊपर घोडो पर सवार इस तरह भाग जा रह थे, जिस तरह समुद्र म तूफान आगया हो। उनके गोरे-गोरे सुन्दर चेहरे, बरफानी हवा स सुर्ख गुलाबी गाल, काली काली बिखरी फैली हुई दाढिया और हवा में उड़ते हुये मैले मैले चोग ऐसा मालूम होता था, जैसे तूफानी नदी की लहर आसमान मे पहुँच जाने को उद्यत रही है।

पाकिस्तानी अत्याचारों के विरुद्ध खड़ी होकर भारतीयता की रक्षा के लिये सर्वस्व बलिदान कर देती है । [११]

"सिंध नदी के दूसरी तरफ (जबकि कतार दर कतार इनकी घुड़सवार फौज खड़ी हुई थी) मैंने पहली बार इनके नेता के दर्शन किये । वह काली अचकन, सफेद सिलवार और गुजरी ढंग की खालिस पगडी पहन कर आये । मेरे एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने बताया कि यह गुजर फौज स्वामी साहब का ही नहीं बल्कि हर उस आदमी का साथ देगी जो हिन्दुस्तान का साथ देगा ।"

[११] जोनी गूजरी—काश्मीर के स्वातन्त्र्य युद्ध के दिनों में प्रत्येक वर्ग तथा आयु की महिलायें अपने एक हाथ में राइफल तथा दूसरे में राष्ट्रीय पताका लेकर श्रीनगर की गलियों और अन्य स्थानों में कवायद करती हुई निकलती थीं । इनमें से बहुत सी महिलायें विभिन्न युद्ध मोर्चों तथा सीमान्तों पर सहायता करती थीं और शेष महिलाओं में से अधिकांश युद्ध क्षेत्र में जाने वाले सैनिकों के लिये युद्ध सामग्री तैयार करती थीं । ऐसा प्रतीत होता था कि मानो यह काश्मीर का दूसरा रक्षात्मक युद्ध-मोर्चा हो ।

काश्मीर की महिलाओं के इस गौरवपूर्ण इतिहास में जोनी गूजरी का भी अन्यतम स्थान है । इस वीर तरुणी ने गत दो शताब्दियों के संघर्ष काल में अपनी अद्भुत वीरता तथा कार्य क्षमता का परिचय दिया है । कबायली आक्रमण के समय उसने गुप्त रूप से कार्य किया । एक जोनी ही क्या उसके साथ सहस्रों वीर महिलायें इस राष्ट्रीय संकट के अवसर पर सामने आयीं, किन्तु काश्मीर की अज्ञात महिलाओं के इतिहास में जोनी गूजरी का नाम विशेष रूप से अंकित रहेगा ।

काश्मीर की वीरांगना जोनी गूजरी जिसका ५ वर्ष का बच्चा आजाद काश्मीर स्वातन्त्र्य युद्ध में काम आया और पति पाकिस्तान का हिमायती होकर भाग गया, परन्तु भारत को अपनी मातृ-भूमि मानने वाली वीरांगना जोनी गूजरी काश्मीर को भारत का अविभाज्य अङ्ग मानते हुए, महिलाओं का पथ-प्रदर्शन करती रही । राइफल कन्धे पर रक्खे, जाड़ों में अनेक रातें हिमपात में बीहड़ वनों में, एक कम्बल में बिताईं । आज भी जागृत वीरांगना जोनी गूजरी ३५ वर्ष की अवस्था में भारतीयता के रंग में रंग कर देश प्रेम की दीवानी बन चुकी है । (प्रेस ट्रस्ट आफ इण्डिया)

काश्मीर में गूजरों की स्थिति, संगठन तथा योग्य नेतृत्व भारत के लिये कितना महत्वपूर्ण है, यह सरदार पटेल स्वयं स्वीकार करते थे और उनके नेता का वक्तव्य हमारे इस अभिप्राय को और भी अधिक स्पष्ट करता है।[१८]

---

[१८] काश्मीर की समस्या (श्रीयुत प्रवासी) आर्गनायजर का अंग्रेजी लेख २१ अप्रैल १९५१ ई० तथा मई १९५१ ई० में प्रकाशित 'वीर गुर्जर' पृष्ठ १०-११-१२

"गूजर किस प्रकार न केवल गुजरात, गुजरानवाला (पंजाब) में बसे, बल्कि सुदूर काठियावाड़ के गुजरात को अपने नाम से प्रसिद्ध किया। इससे मुझे देश में होने वाले जातीय एकीकरण की सुन्दर भावना और चातुर्य का आभास मिला, किन्तु मुझे किसी भी प्रकार इस बात का ख्याल न हुआ और न कल्पना की, कि किस प्रकार सुदूर-जम्मू-काश्मीर के गूजर, जो सब के सब मुसलमान हैं, किस प्रकार गुजरात के गूजरों से समानता रखते हैं। इस सांस्कृतिक एकता ने मेरे लिये सचमुच सजीव मूर्त रूप धारण कर दिया, जब मैं काश्मीर के क्रियाशील, कर्मण्य व सावधान गूजर नेता निजामुद्दीन से मिला, जिसके भीतर अपनी गूजर जाति और भारत भूमि के प्रति सजीव ज्वलन्त अभिमान गौरव, का मूर्त-रूप प्रकट था। १२ लाख काश्मीरी गूजरों के नेता ने मुझे बताया कि "भारतीय नागरिक होने के नाते हम गूजर उतने ही अच्छे हिन्दू हैं, जितने कि आप लोग हैं। हमारे मुसलमान हो जाने से क्या हुआ? इस्लाम मत ग्रहण करने पर हिन्दुस्तान के हिन्दू गूजरों से हमारे रक्त सम्बन्धी अनुवांशिक सम्बन्ध तो समाप्त नहीं होते। अरब में कुरैशी जिर्गे के सब लोग मुसलमान नहीं होगये थे, किन्तु हजरत मोहम्मद ने अपने को कुरैशी कहना नहीं छोड़ा—और उनके वंशज उत्तराधिकारी आज भी अपने को कुरैशी कहते हैं, तो भला हम गूजर जो कि उनसे संख्या में कहीं अधिक हैं जिन्होंने इस्लाम मत ग्रहण नहीं किया, उन हिन्दू गूजरों से अपना सम्बन्ध क्यों तोड़ें"

"काश्मीरी गूजरों के नेता ने जब सरदार पटेल का जिकर किया, तो उसके मुंह पर पटेल की भारी प्रशंसा छाई हुई थी। उसने बताया पटेल गूजरों के सबसे बड़े नेता थे और उन्होंने मेरे साथ सच्ची भ्रातृ भावना से

(७०)

काश्मीर के गूजर, जो सबके सब मुसलमान हो चुके हैं और पाकिस्तान के आक्रमणों से आतंकित होने तथा पाकिस्तान अधिकृत काश्मीर का नेतृत्व चौधरी गुलाम अब्बास गूजर को देने पर भी पूर्ण रूप

मुलाकात की। वे अपनी सारी उमर में इतने कभी नहीं हंसे जितने १॥ घंटे की मुलाकात में प्रसन्न होकर हंसे। आज भी हम उनके उत्तराधिकारी गणों की ओर विशेषकर गुजरात की ओर (हिन्दू गूजरों) अपनी आशा का हाथ बढ़ाते हैं और उनकी प्रतीक्षा करते हैं कि वे हमारी मातृभूमि को शत्रु के निर्दय हाथों से बचाने में सहायक सिद्ध होंगे।"

"काश्मीर राज्य की आन्तरिक स्थिति से इन ओज भरे वीरतापूर्ण सुन्दर शब्दों का महत्त्व—जो काश्मीर के १२ लाख गूजरों के नेता ने प्रकट किये हैं—प्रकट होता है। युद्ध विराम सन्धि के अनुसार १० लाख आबादी गिलगिट, बाल्टिस्तान, मीरपुर, पूंछ, मुजफ्फराबाद पाकिस्तान की ओर है। शेष ३० लाख में ६ लाख लद्दाखी, १२ लाख गूजर और शेष काश्मीरी डोगरे आदि हैं। गूजर काश्मीर-जम्मू दोनों में हैं। डोगरा और लद्दाखी लोगों की भारत के प्रति वफादारी अमिट है, उनका अस्तित्व ही काश्मीर के भारत में सम्पूर्ण रूप विलीन होने में है। गूजरों का भारत के प्रति वफादार होना स्वाभाविक है, वे किसी स्वार्थ या आर्थिक दृष्टि से काश्मीर को भारत में विलीन नहीं चाहते हैं किन्तु वे तो यह स्वीकार करते हैं कि भारत उनका स्वाभाविक घर है। उनके लाखों भाई गूजर भारत में हैं। उनकी वफादारी और भारत के प्रति भक्ति कोई कीमत नहीं मांगती वे डोगरे और लद्दाखी लोगों से मिलकर भारत में काश्मीर को चाहते हैं। न्याय और राष्ट्रीय हितों का तकाजा है कि गूजर अब्दुल्ला के अत्याचारों से मुक्त हों, जो भारत को बिना कुछ निश्चित वचन दिये मनमाना पूरा-पूरा मूल्य वसूल कर रहा है और अपने विरोधी खासकर गूजरों के प्रति अत्यन्त असहिष्णु, जिद्दी, उद्धत तथा घमण्डी हो गया है।" यह गूजरों की दूरदर्शी राजनीति का एक परिणाम है कि शेख अब्दुल्ला के हाथों से काश्मीर की बागडोर अन्त में भारत सरकार को लेनी पड़ी।

मे वे अपने समर्थन के साथ काश्मीर का भारत में विलय की मांग का समर्थन, भारत को अपना घर मानते हुए प्रारम्भ से आज तक कर रहे हैं। शेख अब्दुल्ला जैसे पाकिस्तानी मानसिक स्थिति के व्यक्ति का भी अब साथ न देते हुए, उन्होंने उसके द्वारा किये गये अपने प्रति अत्याचार और दमन को भी बर्दाश्त किया किन्तु न्याय और राष्ट्रीय हित का समर्थन नहीं छोड़ा। यह वर्णन गूजरों द्वारा महत्वपूर्ण विशिष्ट संस्कृति और भारतीय आर्य आदर्शों की ओर संकेत करता है। यह गूजर वे हैं जो पंजाब में गुर्जर राष्ट्र के निर्माता और जम्मू—काश्मीर मे ८वीं ६वीं शताब्दि में यहां के स्वामी, गणतन्त्र एव राजतन्त्र के संस्थापक थे और मध्यकालीन भारत में वे विकास की उन्नत सीमा पर पहुंच चुके थे। लेकिन बाबर, शेरशाह एवं बाद के शक्तिशाली मुगल शासकों के अत्याचारमय आक्रमणों से उनकी विकास की मंजिल रुक गई और वे परास्त एव छिन्न भिन्न कर दिये गये।[१६६] यही कारण है कि वे अपनी स्वतन्त्र रहने की मनोवृत्ति न बदल सके और आज तक स्वतन्त्र किन्तु घुमक्कड अवस्था में विचरण कर रहे हैं। उन्नतिशील जातियों की कक्षा में बैठाने के लिये शासक जातियों द्वारा उनके विकास का मार्ग प्रशस्त न हो सका। भारतीय प्रजातन्त्र के सर्वोच्च नेता पण्डित जवाहर लाल नेहरु सोनमर्ग में इनकी ओर प्रभावित हुये बिना न रह सके।[१७०] इन गूजरों ने, जो १४००० फीट तक की असाधारण ऊंचाई पर रहते हैं और सुन्दर गौर वर्ण एवं स्वच्छन्द प्रकृति के

[१६६] In Gilgit and its neighbourhood are Gujars who keep by themselves live in rude hovels and pasture cattle There are large numbers in Swat valley They are scattered over the middle hills of Jammu they were unruly in Jehangir's time (A. D. 1620) in Kashmir and were planted out on the other side of river See Bidhulph's Tribes of Hindukush 40—70 Vigne's Kashmir II 224—234 Drew's Kashmir 109, Elliot's History VI, 303 Bombay Gazetteer, Vol IX, Part I, Page 881

[१७०] २४ अगस्त १६५२ ई० श्री जवाहर लाल नेहरु ने काश्मीर घाटी के सबसे सुरम्य स्थान सोनमर्ग में घुमक्कड कबीले के गूजरो के मध्य में व्यतीत किया, जहा उनका प्रत्येक क्षण वहा के गूजरों की तरह स्वस्थ,

हैं, अपना मस्तिष्क आज तक किसी के आगे नहीं झुकाया। उनके घुमक्कड़ चरवाहे जीवन की अपार वेदना और कष्टमय जीवन में स्वतन्त्रता का पूर्ण गौरव और भावी आशा उन्हें आगे बढ़ाये हुये है। उनके क्षत्रिय स्वभाव के अनुकूल खेल एवं युद्ध के विशाल नगाड़े, रणसिंगा बाजा युद्ध के समय की तुरही उनके प्राचीन सैनिक स्वभाव की सूचना देती है।[१०१] नवम्बर, दिसम्बर में जब बर्फ गिरने लगती है, तो वे प्राचीन आर्य कबीलों की तरह अपने पशु और प्राणियों के साथ नीचे इधर उधर घास के ढलानों की ओर नीची श्रेणी की पहाड़ियों के मैदानों एवं नदियों की घाटी में उतर आते हैं और उन युगीन मानव की तरह प्रकृति की गोद में अपना स्वच्छन्द, पवित्र स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करते हैं। इसी प्रकार का जीवन उनका सरहदी कबीलों में स्वतन्त्रतापूर्वक स्वतन्त्र कबायली प्रदेशों में व्यतीत होता है। इनकी भाषा, भेष, आकृति, स्वभाव सब विशेषतायें अपना एक खास स्थान रखती हैं, जो उनके पूर्व गौरव की ओर संकेत करती है। बाकी तमाम हिन्दूकुश से दक्षिण तक की आबादी सुव्यवस्थित नागरिक श्रेणी की है। कुछ लोगों ने गुर्जरों के इन घुमक्कड़ कबीलों को लक्ष्य करते हुए तमाम गूजर जाति को ही खानाबदोश, घुमक्कड़, पशु पालक कबीला मान लिया। मध्यकालीन भारतीय इतिहास में गूजरों को खजर जाति माना जाने वाले डाक्टर

स्वच्छन्द सब बाधा, चिन्ताओं से मुक्त आनन्द में व्यतीत हुआ और शारिरिक ताजगी हसने-खेलने और उनके उन्मुक्त हास्य में प्राप्त करते रहे। गुजरों ने अपने विशेष बाजों के साथ ग्रामगीत, सगीत, बहादुरी के खेल, भैंसों की लड़ाई उनके आने की खुशी में अपने समारोह में प्रदर्शित की और उनको (गुजरों की) तरह श्री नेहरु ने भी अपने को विशेष आनन्दमय बना लिया। 'हिन्दुस्तान टाईम्स' २५ अगस्त १९५२ ई० 'वीर गुर्जर' अगस्त १९५२ ई० अङ्क ५ वर्ष २५, पृष्ठ २१

[१०१] A Cujar element seem present in the Baltiband of fife's clarionets and straith six feet long brazen trumpets like the trumpet of fame and of Nepoleon's funeral and also of the Gujarat Nagara and other nands of Bhasasas or strolling players Vigne's Kashmir II, Page 220.

भण्डारकर, सर जेम्स केम्पवेल, जेक्सन के सिद्धान्त का खण्डन करते हुये चिन्तामणि विनायक वैद्य महोदय लिखते हैं कि:—

"गूजर घुमक्कड़ कबीले की पशु पालक जाति है। सच तो यह है कि न तो यह लोग व्यापारिक श्रेणी के हैं और न नगरों में बसने वाली नागरिक संगठन को अपनाने वाली जाति है।"[२५२] यह तर्क इस आधार पर दिया गया है कि खजर सुन्दर किस्म के व्यापारिक, शहरों में बसने वाली श्रेष्ठ नागरिक जाति है और गूजरों से उनका पेशा और चरित्र भिन्न है इसलिये गूजर खजर नहीं हो सकते। बात बहुत मामूली सी है, जब वैद्य महोदय गूजरों को आर्यों की दूसरी टोली का भारतीय आर्य जाति का विभाग मानते हैं और खजर जाति का भारत में आना ऐतिहासिक स्रोत से स्वीकार नहीं है, तो वे इस प्रश्न का समाधान और शब्दों में भी दे सकते थे किन्तु वे एक ऐसे प्रवाह में बह गये, जो स्वयं उन्हीं के इतिहास को स्वीकार नहीं क्योंकि वे स्वयं गूजरों को आर्य जाति व्यापारिक वैश्य वर्ग में से मानते हैं और बताते हैं कि जब क्षत्रिय कमजोर पड़ गये और उनके अनेक वंश विदेशी आक्रमणों से नष्ट हो गये या दक्षिण की ओर चले गये, तो वैश्य वंशों ने विदेशियों से लड़ने के लिये हथियार उठाये और प्रसिद्धि प्राप्त करके वे क्षत्रियों की श्रेणियों में आ गये और उनके अनेक राजवंशों का उत्कर्ष हुआ। जाट और गूजर इसी प्रकार के प्राचीन आर्य जाति के वैश्य वर्ण के हैं। अन्यत्र इसी पुस्तक में वही विद्वान भड़ौंच और भीनमाल के गूजरों का ह्वेनसांग के समय का वर्णन करते हुए, उन्हें और उनके साथ अन्य गूजरों को क्षत्रिय वर्ण में स्वीकार करते हैं। वैश्य जाति स्वयं उनके तथा हिन्दू धर्म शास्त्र के अनुसार स्थायी बसने वाली नागरिक, व्यापारिक, प्राचीन काल की कृषक एवं पशुपालक जाति है। वैद्य महोदय स्वयं गूजर जाति के राज्य करने के कारण गुजरात देशकी तथा गुर्जरों के प्रभाव व उपयोग के कारण गुजराती

२५२ History of Mediaeval Hindu India Vol I by C. V Vaidya M A LL B Page 84 " The Gujars on the other hand are nomadic peoples and cattle breaders by profession. They, in fact never trade and not a city settled people with elaborate civil organisation."

भाषा की उत्पत्ति मानते हैं।[२०२] इसके अतिरिक्त वैद्य महोदय ने जहां गुर्जरों को क्षत्रिय, वैश्य आर्य जाति का एवं उनके महत्व को पूर्ण रूप मे स्वीकार किया है, वहां अपनी प्रसिद्ध पुस्तक का दूसरा भाग लिखते समय ऐसी काल्पनिक एवं दूसरों द्वारा कही गई बातें लिखदीं, जो सचाई पर आवरण डालती हैं। यह सच है कि इतिहास हमेशा सशक्त हाथों में सुरक्षित रहता है। जाट और गूजरों को क्षत्रियों के ३६ वंशों में देखकर और स्वय स्वीकार करते हुए भी[२०३] वैद्य महोदय लिखते हैं कि "जाटों का राजपूत (क्षत्रिय) होना राजपूतों को मान्य नहीं, इसलिये जाट ३६ राजवंश में नहीं आते[२०४] और गूजर, वैश्य तथा आभीर शूद्रों की जाति है इसलिये राजपूतों के ३६ घरानों में, जो इन जातियों का नाम है, वह इस कारण है कि गूजरों और आभीरों पर शासन करने वाले क्षत्रिय शासकों के घराने भी उनके नाम से ही प्रसिद्ध हुए।[२०५] अपने इतिहास के प्रथम भाग में वैद्य महोदय स्वयं लिखते हैं कि "विदेशी विद्वानों एवं भारतीय लेखकों द्वारा सबसे ज्यादह अन्याय जाट, गूजर और मरहठा जाति पर हुआ, जो वैदिक कालीन आर्य हैं।[२०६] स्वयं गूजरों को वैद्य महोदय क्षत्रिय स्वीकार करते हैं और जैसा कि इतिहास द्वारा प्रकट है, क्षत्रिय परम्परा का पालन गुर्जरों में निरन्तर अबाध गति से हो रहा है। जातियों पर राज्य करने से कोई भी जाति शासित जाति के नाम से प्रसिद्ध नहीं हुई. फिर जब शासक जाति में शासित जाति के प्रति हीन भावना विद्यमान है, तो वह किस प्रकार अपने को हीन जाति का प्रसिद्ध कर सकती है ? व अपनी प्राचीन पूर्वजों की परम्परा, अर्जित विक्रम, शौर्य के इतिहास को समाप्त कर नवीन शासित जाति के नाम से प्रसिद्ध कर सकती है। फिर वैश्य

[२०२] मेडिवल हिन्दू इन्डिया (वैद्य) प्रथम भाग ३४६, २१, ७२ भाग २ पृष्ठ ३१

[२०३] हिन्दू भारत का उत्कर्ष पृष्ठ ८० तथा मेडिवल हिन्दू इन्डिया भाग २ पृष्ठ २५

[२०४] मेडिवल हिन्दू इन्डिया भाग २ पृष्ठ २५

[२०५] हिन्दू भारत का उत्कर्ष पृष्ठ ४३

[२०६] मेडिवल हिन्दू इन्डिया भाग १ पृष्ठ ३५४

महोदय यह कैसे समझ बैठे कि अहीर, जाट एवं गूजर सदा ही शासित रहे हैं। राजपूतों का उत्कर्षमय इतिहास लिखते समय, वे यह भूल गये कि राजपूतों से पूर्व राजपूताने के अधिकांश भाग पर गुर्जरों का राज्य था और यह देश गुर्जरों से रचित गुरजत्रा या गुजरात या गुर्जर के नाम से प्रसिद्ध था, जैसा कि अपनी प्रसिद्ध पुस्तक के प्रथम भाग में उन्होंने भी भीनमाल के प्रकरण में गूजर जाति और गूजर वंश का इतिहास लिखते समय स्वीकार किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि अपने इतिहास का दूसरा भाग लिखते समय वैद्य महोदय पहले अध्याय की सभी बात भूल गये या राजसी वैभव की चकाचौंध ने और राजपूताने के जाटों, अहीरों एवं गूजरों की राजपूत राज्यों की निरंकुश अत्याचारों द्वारा सताई गई अधिकार च्युत की गई जातियों की उपेक्षा कर गये, जो एक सच्चे इतिहासकार को शोभा नहीं देता। तभी तो आगे चल कर वैद्य महोदय यह लिखने का साहस कर बैठे कि—

"क्षत्रियों में वैश्य स्त्रियों से विवाह कर लेने की प्रथा प्राय प्रचलित थी। व्यास स्मृति में लिखा है कि "प्रथम सवर्ण स्त्री से विवाह कर लेना चाहिये, फिर यदि इच्छा हो तो आनन्द के लिये हीन जाति की स्त्री के साथ विवाह किया जा सकता है"। इन वचनों का पालन प्राय क्षत्रिय ही किया करते थे। उनकी पहली स्त्री क्षत्रिया और दूसरी वैश्य हुआ करती थी। जयपुर में हमने सुना था कि इस प्रकार की क्षत्रिय की ब्याहता वैश्य भार्या को 'गूजरी' कहते हैं। सम्भवतया ऐसी परिणीता स्त्रियां सशक्त और सुडौल जाट अथवा गूजर जाति की होती होंगी। हमने अपना तर्क पहले ही प्रकट कर दिया है कि जाट अथवा गूजर पहले वैश्य थे और प्राचीनकाल में वे कृषि और रक्षा का कार्य करते थे"।[११८]

११८ मेडिवल हिन्दू इण्डिया वैद्य भाग २ पृष्ठ १६५

* The marriage of a Kshatriya with a Vaisya wife was however, not uncommon Infact, the rule prescribed by the Vyas Smriti " that after first marrying a wife of one's own caste one may for plesure marry a lower cast wife " was generally observed among the Kshatriyas Their first wife was always a Kshatry —but the second was generally a Vaisya woman I was told

आश्चर्य यह है कि वैद्य जैसे बुद्धिमान पुरुष तर्क के आधार पर जिस जाल से दूसरों को निकालना चाह रहे थे और जिस भले बुरे का निर्णय करने वाली बुद्धि का सहारा लेकर विचारों की स्वतन्त्रता पर अंकुश लगाना आवश्यक समझते रहे, स्वयं कैसे उसी चक्कर में फंस गये। इससे पहले कि हम गूजरों के सम्बन्ध में उनके तर्कों का उन्हीं के लेखानुसार तथा दूसरे निश्चित प्रमाणों के आधार पर खन्डन करें, प्रसगवश अहीर, जाट और मरहटों के सम्बन्ध में भी कुछ लिखना आवश्यक समझते हैं ताकि इन जातियों का ऐतिहासिक महत्व प्रकट हो जाय। जाट भारत की एक वीर जाति है, जिसने ब्राह्मणवाद को कम अपनाया और प्राचीन आर्यों के रीति रिवाजों पर ही उनकी सामाजिक व्यवस्था रही। चच (सिन्ध) ने उन्हें अधिकार च्युत किया, भारत के आक्रान्ता अरबों, गौरी, गजनी तथा बाबर से उन्होंने युद्ध किये और इतिहास में इनका उत्कर्ष सिक्खों के अभ्युत्थान और मुगलों के पतन के साथ साथ अङ्गरेजों के अभ्युत्थान के समय हुआ। उनके पंजाब के सिक्ख जाट राजवंश व भरतपुर के एव धौलपुर का राजवंश राजपूतों के भाटी और यादव आदि वंशों के साथ के या उन्हीं में से हैं। साधारण श्रेणी के जाट वंश मर्यादा और वीरता में किसी भी क्षत्रिय जाति से कम नहीं हैं। वे उच्च श्रेणी के सैनिक हैं। उनमें सामाजिक व्यवस्था कठोर नहीं किन्तु वे आर्य मर्यादा का पालन करने वाले हैं। मुगलों के ह्रासकाल में पंजाब में महाराजा रणजीतसिंह, भरतपुर में महाराजा सूरजमल और महाराजा जवाहरसिंह जैसे शूरवीर, तेजस्वी, आर्य धर्म, आर्य जाति के रक्षक पैदा हुए। पहले समय में ये राजतन्त्र की अपेक्षा प्रजातन्त्र को विशेष महत्व देते थे इसलिये उनको प्रसिद्धि का विशेष अवसर नहीं मिला।

नृतत्व विज्ञान एवं परम्परा कुल गोत्रों से वे स्पष्ट आर्य और क्षत्रिय वर्ण के सिवाय कुछ नहीं हैं। राजपूतों, गूजरों, मराठों की तरह उनमें

---

in Jaipur that the practice led to the second wife being called Gujari She was generally from the healthy and strong Jat or Gujar castes and these may be taken from this very fact to represent the real Vaisyas in India to whom was entrusted the Krishi and the Gaurakshya of the country "

क्षत्रियों के सभी कुल एवं वंशों का समावेश है।[१७९] इसी प्रकार महाराष्ट्र के क्षत्रिय मराठा भी क्षत्रियों का सामाजिक राजनैतिक दृष्टिकोण से महत्व-पूर्ण संघ है, जिसमें प्रारम्भ के यादव मोरे सिन्दे, पवार और गूजर राजवंश के क्षत्रियों का समावेश है और बाद में और भी क्षत्रियवंश इनमें सम्मिलित हुये। शिर्के, शेलार, महाड़िक गूजर आदि मराठा क्षत्रिय हैं, इसको वैद्य महोदय भी मानते हैं। छत्रपति शिवाजी आदर्श क्षत्रिय राजा थे, जो शिशौदिया वंश के थे। सर यदुनाथ सरकार मराठा राजपूत को एक ही श्रेणी मानते हैं। अन्य सभी विद्वान इससे सहमत हैं, उन्हें द्राविड़ या वर्ण शङ्कर अथवा अनार्य या शूद्र कहना उनके प्रति भारी अन्याय है। उनकी विलक्षण राजनीति, शौर्य, हिन्दुत्व के लिये त्याग महान् है।[१८०] आभीर या अहीर भारत की प्राचीन जाति है, यह जाति भी ब्राह्मणवाद का शिकार रही, इनकी प्राचीनता पर भण्डारकर ने काफी प्रकाश डाला है। भागवत सम्प्रदाय का परवर्ती काल का मूल रूप इसी जाति द्वारा कहीं से उपस्थित हुआ है। महाभारत के मौसल पर्व अध्याय ७ से पता चलता है कि महाभारत काल में अर्जुन पर आक्रमण करके, इन्होंने यादव कुल के क्षत्रियों की स्त्रियां छीन ली थीं, जो कुरुक्षेत्र जा रही थीं यह आभीर (अहीर) मधुवन मथुरा से अनूप–आनर्त द्वारका तक बसे हुए थे। विष्णु पुराण तथा वराहमिहर ने इन्हें कोंकण तथा सौराष्ट्र के वासी बताया है। बृहत्संहिता में वे दक्षिणी लोग हैं। इत्यादि के लेखानुसार उन्होंने महत्वपूर्ण राज्य भी किया है। पुराणों में १० आभीर राजाओं का उल्लेख है। १८० ई० के एक लेख से भी यही पुष्टि होती है।[१८१] डाक्टर काशी प्रसाद जायसवाल ने मत्स्य पुराण के आधार पर ६७ वर्ष १० पीढ़ी का इनका राज्य होना बताया है। भागवत

---

[१७९] राजपूताना गजेटियर भाग १ जाट इतिहास कानूनगो सर हरबर्ट रिजले के आधार पर वैद्य की मेडिवल हिन्दू इन्डिया प्रथम भाग ७६–८८ जाट इतिहास (ठाकुर देशराज सिंह), मुजफ्फरनगर, मथुरा, मेरठ, अलीगढ़ डिस्ट्रिक्ट गजेटियर

[१८०] सर यदुनाथ सरकार द्वारा लिखित मराठा राजपूत एक हैं, मराठों का उत्कर्ष (न्याय मूर्ति रानाडे), हिन्दू भारत का उत्कर्ष (वैद्य)

के आधार पर ७ पीढ़ी तक आभीरों ने राज्य किया है जो प्रजातन्त्र के पोषक थे। अन्धकार युगीन भारत में उनके अनेक गणराज्य भारत में थे।[१८२] श्रीयुत कन्हैयालाल माणिक्लाल मुन्शी महोदय ने यह स्वीकार किया है, कि जिन यादवों ने शस्त्र विद्या (सैनिक वृत्ति) युद्ध छोड़कर पशुपालन एवं कृषि अपना ली थी वे ही आभीर कहलाये।[१८३]

वास्तव में क्षत्रिय जातियों में ऊँच नीच की भावना पैदा करना क्षत्रिय संघ की आधारशिला को नष्ट करने वाले कुछ वर्ग विशिष्टों के निहित स्वार्थ के अतिरिक्त कुछ नहीं है। नितान्त प्रमाण रहित इस प्रकार के काल्पनिक विचारों का आश्रय देकर सिर्फ कल्पना और सुनने के आधार पर इतिहास में जोड़ना सच्चे इतिहासकार को शोभा नहीं देता। वर्ण व्यवस्था की सही जानकारी के आधार पर ऐतिहासिक दृष्टिकोण से न अहीर शूद्र हैं और न जाट गूजर वैश्य हैं, जैसा कि वैद्य महोदय मानते हैं। वैद्य महोदय का यह लिखना कि 'ईसा की पांचवी छठी शताब्दी में गूजर या गुर्जर जाति उत्कर्ष के साथ प्रकट होती है और प्राचीन भारतीय इतिहास एवं साहित्य में यह शब्द नहीं मिलता, इस लिये यह वैश्य है,[१८४] इसी प्रकार प्रमाण रहित है, जिस प्रकार कि गुर्जरों का एकायक उत्कर्ष इस काल में मानने वाले उन्हें विदेशी मानते हैं।[१८५] क्षत्रियों का नष्ट होना और उनके स्थान पर वैश्यों के विदेशी जातियों को नष्ट करने के लिये हथियार उठाना, वैद्य महोदय की ऐसी ही निराधार कल्पना है,[१८६] जैसी कि स्मिथ आदि विदेशी विद्वानों का प्राचीन क्षत्रियों के नष्ट होने पर विदेशी गुर्जर आदि जातियों का

[१८१] प्राचीन भारतीय परम्परा और इतिहास डाक्टर राय राघव एम० ए०, पी० एच० डी० पृष्ठ ३४६–४७

[१८२] अन्धकार युगीन भारत (डाक्टर काशीप्रसाद जायसवाल) पृष्ठ ३३८

[१८३] 'दी ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश' भाग १ (के० एम० मुन्शी) पृष्ठ १२६

[१८४] मेडिवल हिन्दू इण्डिया भाग १ पृष्ठ ३४६–३५०

[१८५] आर्कियालोजिकल सर्वे की रिपोर्ट कनिंघम जि० २ पृष्ठ ०

[१८६] मेडिवल हिन्दू इण्डिया भाग १ पृष्ठ ३४६–५०

हिन्दू धर्म में दीक्षित होकर उत्कर्ष प्राप्त करने वाला सिद्धान्त है।[१८७] वैद्य महोदय यह लिखते हैं "कि आर्य होने से गूजर विदेशी नहीं हैं, इस लिये वे वैश्य हैं।[१८८] प्राचीन काल में वैश्यों का इतिहास नहीं लिखा जाता था और विदेशी जातियों के निरन्तर होने वाले आक्रमणों के समय क्षत्रियों के नष्ट होजाने पर वैश्यों ने देश की रक्षा की और राजवंश होने पर वैश्य वर्ण प्रकाश में आया और उनका इतिहास लिखा जाने लगा, इसलिये गुप्तवर्धन वंशों के समान गूजर और साथ ही साथ जाट, वैश्य वर्ण के आर्य हैं और चूंकि वैश्यों का इतिहास इससे पूर्व नहीं लिखा जाता था, इसलिये इतिहास में पांचवी छटी शताब्दि में पूर्व इन जातियों का नाम ही नहीं मिलता।[१८९] दूसरे कृषि पेशा और पशु पालक होने से भी उनका वैश्य वर्ग में होना वैद्य महोदय मानते हैं।[१९०]

जब वैद्य महोदय राजपूतों को प्राचीन आर्यों के वंशज मानते हैं और उनको सूर्य, चन्द्र तथा यदु वंश के क्षत्रिय स्वीकार करते हैं,[१९१] तो फिर क्षत्रिय जाति अथवा वर्ण के नष्ट होने का प्रश्न ही नहीं उठता। दूसरे ह्वेन-त्सॉंग के यात्रा वृतान्त से भी, जैसा कि वैद्य महोदय भी स्वीकार करते हैं, क्षत्रिय घराने नष्ट नहीं हुये थे।[१९२] उत्तर भारत में वल्लभी के मैत्रक,[१९३] भड़ौंच तथा भीनमाल के गुर्जर,[१९४] दक्षिण में बादामी, चालुक्य और काँची के पल्लवों को उन्होंने क्षत्रिय ही माना है।[१९५] वैद्य महोदय गूजरों को दूसरी टोली का आर्य मानते हैं।[१९६]

---

१८७ स्मिथ अर्ली हिस्ट्री आफ इण्डिया पृष्ठ ३२१–२२

१८८ मेडिवल हिन्दू इण्डिया भाग १ पृष्ठ ३५६–३५७

१८९ वही पृष्ठ ३५६–३५७

१९० वही पृष्ठ ३५६–३५७

१९१ हिन्दू भारत का उत्कर्ष (वैद्य) पृष्ठ ११

१९२ वही पृष्ठ ७

१९३ वही पृष्ठ ७

१९४ मेडियल हिन्दू इण्डिया भाग १ पृष्ठ २१, २५ २५१ २७१ २८३

१९५ हिन्दू भारत का उत्कर्ष पृष्ठ ७

१९६ मेडिवल हिन्दू इण्डिया २५१–५५

क्या दूसरी टोली वैश्यों की ही थी या उसमें क्षत्रिय नहीं थे ? रहा पशुपालक और कृषि का प्रश्न, जो प्रारम्भिक आर्यों का पेशा कृषि और पशु पालन था, जिसे वे अपना प्रधान पेशा मानते थे।[१९७] वैद्य महोदय ने भी इसे स्वीकार किया है कि स्मृति वचनों से यह प्रमाणित होता है कि ब्राह्मणों की तरह क्षत्रिय आदि जातियों को भी कृषि कर्म का अधिकार था। पराशर स्मृति के अनुसार सभी वर्णों को कृषि कर्म का अधिकार था किन्तु कृषि कार्य प्रधानतया ब्राह्मण क्षत्रिय ही किया करते थे।[१९८] क्षत्रियों में दो दल वैद्य महोदय मानते हैं-(१) केवल क्षात्र धर्म का पालन करने वाले, (२) क्षात्र धर्म के साथ कृषि करने वाले। इन गुर्जरों के वर्णन में यह दोनों भेद स्पष्ट हैं।[१९९] क्या इससे यह स्पष्ट नहीं है कि गूजर जाट इसी प्रकार के क्षत्रिय हैं जो शान्तिकाल में आजकल की तरह देश की अन्न समस्या का समाधान कृषि आदि द्वारा करते थे और अव्यवस्था, अराजकता के समय एवं विदेशी आक्रमण होने पर शस्त्र धारण करके देश की रक्षा महत्वपूर्ण रीति से करते थे। कृषि के साथ पशु पालन का विशेष महत्त्व है और यह क्षत्रिय पशु धन के रक्षण पर विशेष यत्न देते थे और हिंसा के सर्वथा विरुद्ध थे। यज्ञ आदि में हिंसा होने से शक्तिशाली जातियों के हाथ में ही पशु रक्षण पालन होने से इनकी रक्षा सम्भव थी, जिसे अहीर, जाट गूजर, क्षत्रिय ही कर सकते थे और आज तक भी अनेक संकटपूर्ण परिस्थितियों में गुजरते हुए कर रहे हैं। जिस गुप्त, वैस एवं मौखरी वंश को वैद्य महोदय वैश्य वर्ण का मानते हैं, वे वास्तव में क्षत्रिय ही थे। बाण महाकवि ने राज्यश्री के विवाह के समय दोनों वंशों के सम्बन्ध को सूर्य चन्द्र वंश के राजाओं का मिलन बताया है।[२००] अवध का वैस राजपूत अपने को स्वयं सूर्य वंशी क्षत्रिय मानता है।[२०१]

---

[१९७] भारत भूमि और उसके निवासी (जयचंद्र विद्यालंकार) पृष्ठ १६६

[१९८] हिन्दू भारत का उत्कर्ष २१५-१६

[१९९] वही २१६

[२००] हर्ष चरित्र उच्छ्वास ४ पृ० १४६।

[२०१] राजपूताने का इतिहास प्रथम भाग (ओझा) १६२।

वर्तमान गूजरों का सैनिक पेशा उनकी ऐतिहासिक परम्परा क्षात्रत्व एवं उत्कृष्ट शौर्य भावना उनके गरा गोत्र, कुलों की स्थिति उन्हें क्षत्रिय ही मानती है। पांचवी छटी शताब्दि से पहले के इतिहास में गुर्जरों का वर्णन न मिलने का कारण यह है कि पहले क्षत्रिय अधिक वंशों मे बंटे हुए नहीं थे। रामायण और महाभारत में तीन ही वंश के क्षत्रियों का उल्लेख है। समय के साथ साथ यह वंश भेद बढ़ता गया। जिस काल मे जो वंश उत्कर्ष को प्राप्त होता है, उसी काल से उसकी प्रसिद्धि का क्रम चलता है। राजवंश परस्पर एक दूसरे से, अलग अलग सत्ता स्थापित करने के बाद भी विवाह एवं अन्य सम्बन्धों से एक थे जो उनके मूल एकत्व की ओर संकेत करता है पृथक पृथक वंशों में जब प्रतिस्पर्धा की एक होड पैदा हुई, तब अलग अलग इतिहास लिखने की प्रथा चली, वरना एक ही क्रम से देश और क्षत्रिय शासकों का इतिहास लिखने की प्रथा ही और उनके साथ ही प्राचीन कुलों का नाम रहता था। विदेशी इतिहास लेखकों, पर्यटकों ने भी जाति तथा वंशों की प्रसिद्धि पर जोर दिया। विद्वानों ने यह भी स्वीकार किया है कि क्षत्रियों ने ही कृषि आदि का पेशा ग्रहण किया। इस सम्बन्ध मे मध्यकालीन भारतीय संस्कृति का निम्न उद्धरण विशेष महत्वपूर्ण है—

'मध्यकालीन भारत मे वर्ण व्यवस्था के विशुद्ध रूप में कायम न रहने एव बहुत से क्षत्रियों के पास भूमि न रहने के कारण वे बेकार होगये। अन्य वर्णों के समान उन्होंने दूसरे पेशे करने आरम्भ कर दिये। इसका परिणाम यह हुआ कि क्षत्रिय अनेक श्रेणियों में बट गये। बौद्ध मत के अनुसार खेती करना पाप समझा जाने लगा, इसलिये क्षत्रियों ने कृषि कर्म शुरू कर दिया और पराशर स्मृति ने क्षत्रियों के कर्म मे कृषि को स्वीकार किया।'[१०१]

तत्कालीन सामाजिक अवस्था पर प्रकाश डालते हुए वैद्य महोदय भी यह स्वीकार करते हैं कि उस समय मुख्यतया चार ही वर्ण थे। उनमे आजकल की तरह अनेक शाखा प्रशाखाएँ नहीं निकली थीं।[१०२]

---

१०१ मध्यकालीन भारतीय संस्कृति (ओझा) पृष्ठ ४४

—पराशर स्मृति अध्याय २ श्लोक १८।

क्षत्रियोऽपि कृषिं कृत्वा देवान् विप्रांश्च पूजयेत् ॥

क्षत्रियों में उपभेद नहीं थे। सब क्षत्रिय समान थे।[१०५] ऐसा प्रतीत होता है कि जिन क्षत्रियों ने राजतन्त्र पद्धति की अपेक्षा प्रजातन्त्र पद्धति को अपनाया, वे सामाजिक बन्धनों से अधिक जकड़े हुए रूढ़िवादी नहीं थे और स्पष्टतया ब्राह्मणवाद का उनपर व्यापक प्रभाव नहीं था और साहित्य एवं इतिहास के पृष्ठों में राजतन्त्र पद्धति का महत्वपूर्ण स्थान था और उन्हीं के इतिहास मिलते हैं। प्राचीन क्षत्रिय वर्ग के गुर्जर अपने प्रारम्भिक काल में अपनी अलग सत्ता स्थिर करते समय अपने विकास काल से पूर्व प्रजातन्त्र के आधार पर सगठित थे। निरन्तर विदेशी जातियों के आक्रमण काल में ही वे राजतन्त्र पद्धति पर सत्ता स्थापित करके मध्य-कालीन भारतीय साहित्य तथा इतिहास में प्रसिद्धि को प्राप्त हुए। उनके महत्वपूर्ण प्रारम्भिक राजाओं की उपाधि सामन्त, महासामन्त, सेनापति, परम भट्टारक एवं प्रतिहार जैसे विरुद इसी बात को प्रकट करते हैं जैसा कि भड़ौच, वल्लभी, भीनमाल के गुर्जर राजाओं के वृत्तान्त से जाना जाता है।

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में राजपूताना गुर्जर अथवा गुजरात के नाम से प्रसिद्ध था और गूजरों से रक्षित प्रदेश की सर्वोच्च राजनीतिक सत्ता उन्हीं के हाथ में थी। अपने राजनीतिक ह्रास के उपरान्त ही गूजर इधर उधर फैल गये। गूजरों से ही राजपूतों के अनेक वंशों का उत्पन्न होना इतिहास के विद्वान मानते हैं। अजमेर का भड़ाना गूजर पटेल रोट का पुत्र न्याजू पटेल साथियों के आधार पर यह प्रकट करता है कि झाला, चावड़ा, शक्तावत, राठौर, पवारों की श्रेणी गूजरों से सम्बन्धित है। गूजर ही राजपूत कहलाये और गूजरी जिनकी कहलाती थी जिनकी चार सन्तान प्रारम्भ में गूजर और बाद में राजपूत कहलाने लगे। भड़ाने स्वयं मेवाड़ के गहलोतों से सम्बन्धित होने से राणा कहलाते हैं और भरेड़ भड़ाना गोत्र से आने से भड़ाना प्रसिद्ध हुये। अकबर के जमाने में भड़ानों का बहुत बड़ा भूम्याधिकार था और इसी से यह भौम सरदार कहलाते रहे। मेरों की रक्षा—जिनके कारण मेरवाड़ा प्रसिद्ध है, गूजरों के

---

[१०५] हिन्दू भारत का उत्कर्ष पृष्ठ २०५

[१०६] वही पृष्ठ २०३

भडाना वंश ने पवारों के द्वारा इनका वंश उन्मूलन होते समय की थी।[१०१] राजपूताने भर में गूजरों का जाति पद विशेष महत्वपूर्ण है। भरतपुर व धौलपुर में वे राजपूतों के समकक्ष हैं।[१०९] अलवर, करौली, टौंक, जयपुर, कोटा में उनकी सैनिक विशिष्ट योग्यता भारतीय सेना और विदेशों में भी दूर-दूर तक प्रसिद्ध है। भरतपुर, झालावाड, करौली, उदयपुर, अलवर में किशनगढ, जयपुर तथा शेखावाटी में उनके अनेक महत्वपूर्ण सरदार पहले और इस काल तक भी राज्य प्रबन्ध सम्बन्धी योग्यता में प्रसिद्ध रहे। आज की साधारण स्थिति में अजमेर मेरवाडा तथा तमाम राजपूताने में इन गूजरों द्वारा सिर्फ १००-१०० मण घी खर्च होने वाली दावतों का देना एक साधारण सी बात है। पुत्र जन्मोत्सव, तीर्थ यात्रा से सकुशल वापिस आने पर तथा अपने बुजुर्ग की स्मृति में ऐसी दावतें देना राजपूताने में उनके उत्कर्ष को प्रकट करती हैं। जहां सेना में जाकर उन्हें अशिक्षित होते हुए भी उच्च श्रेणी का सम्मान प्राप्त हुआ है, वहां शिक्षा प्राप्त करने पर वे योग्य शासन कार्य सम्भालने वाले अफसर सिद्ध हुए हैं।[१००]

---

[१०१] बम्बई गजेटिर भाग ६ जि० १ पृ० ४६४, ४६६

[१०९] राजपूताना गजेटियर भाग १ पृ० १६२

[१००] सैनिकों तथा सरदारों की महत्वपूर्ण संख्या के अतिरिक्त राजपूताने की रियासतों में गूजरों के कुछ खास परिवारों को जागीर एवं राजकीय महत्वपूर्ण नौकरियों में स्थान मिले हुए थे। भरतपुर राज्य के प्रारम्भकाल से ही वहां की उच्च शासन व्यवस्था में गूजरों का पूरा २ हाथ था (देखिये इसी पुस्तक के पृष्ठ २२८, २८१, २८२) खास भरतपुर के खटाना परिवार में सभी युवक प्रायः मेयो कालिज तथा उच्च विश्वविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त किये हुये हैं और कर रहे हैं। इनमें कुंवर श्री भानसिंह एम० ए०, एल० एल० बी० राजस्थान असेम्बली के मेम्बर हैं जो राजनीति और अर्थशास्त्र में लखनऊ विश्वविद्यालय के एम० ए० हैं। कुं० विश्वम्भरसिंह बी० ए०, एल० एल० बी० मुन्सिफ, कुं० श्री नरसिंह बी० ए० आफिसर बागात अमलात, मेजर राघवेन्द्रसिंह, कुं० यदुनाथ सिंह आफिसर कस्टम एण्ड एक्साइज हैं। इनके अतिरिक्त दरसी सरदार

वैश महोदय जिन राजपूतों को क्षत्रिय वर्ण का प्रतिनिधि मानते हैं, गूजरों एवं जाटों की ग्राम व्यवस्था, वंश एवं कुलों की स्थिति, उन्हीं के समान है. वे प्राचीन क्षत्रियों के रीति रिवाजों का आज भी उसी प्रकार पालन कर रहे हैं। सैनिक-शौर्य के ये प्रतीक हैं, उनके द्वारा देश रक्षा तथा राष्ट्र निर्माण के हेतु अनेक कार्य राजवंश तथा साम्राज्यों का निर्माण हुआ। वैश महोदय को जो किसी ने यह बताया कि क्षत्रियों की दूसरी वैश्य पत्नी को गूजरी कहते हैं या सम्भावना करते हैं कि गूजरी जाटनी क्षत्रियों में दूसरी पत्नी के रूप में अपने विशिष्ट सौन्दर्य एवं दृढ़ शारीरिक बनावट के कारण आनन्द उपभोग के लिये होती थी, बिलकुल निराधार है क्योंकि इस काल

रघुनाथसिंह—जिनके बड़े भाई फौजदार सरदार निहालसिंह तहसीलदार थे—एम०ए०एम०, चौ० नत्थी सिंह एम०ए०एम०, चौ० गिरीराज सिंह सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस चौ० रामजीलाल बी० ए० तहसीलदार, चौ० अर्जुनसिंह सर्किल इन्सपेक्टर पुलिस के पद पर रहे हैं। यहां के अन्य बहुत से युवक पुलिस व माल विभाग में हैं। कामदार कल्याण बक्स (जयपुर) के सुपुत्रों ने उच्च शिक्षा प्राप्त करके राजस्थान की ऊची नौकरियों मे गौरवपूर्ण पद प्राप्त किये हैं. जिसमें धाभाई किशनलाल सिंह एम० ए० एल० एल० बी० डिस्ट्रिक्ट एन्ड सेशन जज अलवर, धाभाई रामचन्द्र सिंह सुपरिन्टेन्डेन्ट आफ पुलिस जयपुर, डाक्टर छोगालाल एम० बी० बी० एस० जयपुर, धाभाई विशनलाल सिंह कस्टम एन्ड ऐक्साइज इन्सपेक्टर उदयपुर तथा उनके पौत्र कुं० भंवरसिंह बी० ए०, एल० एल० बी०, वकील हैं। खेतड़ी के धाभाई विनयसिंह बी०ए०, एल० एल० बी० सेटिलमेण्ट आफिसर जोधपुर डिविजन जोधपुर, धाभाई श्रीकृष्ण नारद बनेड़ा तथा उनके पुत्र कुं० ब्रजेन्द्र कुमार एम० ए०, एल० एल० बी० लेक्चरार उदयपुर, मदनगज (किशनगढ़) के प्रसिद्ध इन्जीनियर धाभाई गणेशीलाल के सुपुत्र कुं० गंगाधर चीफ इन्जीनियर एव गगाविशन इन्जीनियर. कुं० रामगोपाल, एम० ए०, एल० एल० बी० वकील कोटा, प्रोफेसर हेमराज गोपालराम एम० ए०, जसवन्त कालिज जोधपुर (अब प्रिन्सिपल गूजर कालिज दादरी), कुं० रामचन्द्र वर्मा बी०ए०, एल० एल० बी० मोटवाड़ा, कुं० हनुमानसिंह रावत

में तथा इससे भी पूर्व गूजर वैश्य वर्ण के अन्तर्गत कभी प्रसिद्ध नहीं हुए और वैवाहिक बन्धन की दृष्टि से इस काल में जाट, गूजर, राजपूतों में आन्तरिक पार्थक्य स्थापित हो चुका था। गूजरों का जातीय संगठन स्वयं इतना दृढ़ एवं आदर्श व्यवस्था से युक्त है और उनकी जातीय-सामाजिक व्यवस्था इतनी पूर्ण तथा उनके द्वारा ऊंचे बन्धनों में बन्धी है कि उनकी लड़कियों का दूसरी जातियों में इस रूप में जाने का प्रश्न कभी पैदा ही नहीं हो सकता। उनकी राजसत्ता समाप्त होने के बाद भी उनके परस्पर विवाह सम्बन्ध बिना धनी निर्धन का विचार किये होते हैं। यहां तक कि मुसलमान गूजर भी अपनी लड़की दूसरे मुसलमानों को नहीं देते। राजपूतों के साथ उनके विवाह सम्बन्ध बराबर के दर्जे पर ही होते हैं। समथर और लन्ढौरा के राज घरानों से राजपूतों के उच्च घरानों के सम्बन्ध इसका नाना उदाहरण हैं। यह आदान-प्रदान उनके एकीकरण की भावना को प्रकट करने के सिवाय कुछ नहीं है। जब पत्नी के रूप में धनी—राना महाराजा वर्ग तक को कृषक

एम० ए०, एल० एल० बी० प्रिन्सिपल रावत कालिज अजमेर, कु० दिनेश राज फागना बी०ए० नसीराबाद, कु० रामखिलाड़ी वर्मा बी०ए० उदयपुर, कु० मधुसूदनवर्मा गुंजल बी० ए० अजमेर, चौ० नत्थीलाल भडाना बी० ए०, अजमेर, कु० गिरधारीलाल चन्दीला कोतवाल नसीराबाद, कु० लक्ष्मणसिंह वर्मा एम० ए० अजमेर, चौ० जुर्रीलाल व कु० अवध-बिहारीलाल (माल विभाग), सूबेदार रोडूराम (कस्टम एन्ड एक्साइज), कु० गिलहरीराम (सिंचाई) बूंदी, कु० नन्दलाल मिह (ट्रान्सपोर्ट), कु० लक्ष्मी नारायणसिंह बैंसला तथा ठा० कल्याण बक्स रावत (पुलिस) आदि प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त रेलवे, मिलस, पुलिस आदि में अनेक युवक काफी सख्या में आफिसर तथा साधारण पदों पर काम कर रहे हैं। इससे पूर्व भी अलवर में चौरहटी के मावर्डे, उदयपुर मे महाराणा सग्राम सिंह के समय से आज तक नेकाडी, चेची, हूण (सरदार वंशीलाल, सरदार मेघराज सिंह, सरदार टेमराजसिंह, सरदार चिमनलाल, सरदार हरलाल सिंह) आदि झालावाड़ में हरलाल, नाथू लाल, तुलसीराम तथा करौली में अंगद जी अनेक उच्च पदों पर प्रतिष्ठित रहे।

परिवार का साधारण गूजर भी अपनी लड़की देकर अपना अस्तित्व विलीन नहीं कर सकता। रानी मृगनयनी इसका एक खास उदाहरण है, जिसका राजपूतों से सम्बन्ध समान स्तर पर हुआ और साधारण कृषक सैनिक परिवार की कन्या ने भी अपना अस्तित्व ग्वालियर के राजमहलों में जाकर विलीन नहीं होने दिया। राजपूताने में गूजरी की तुलना सिंहनी से की जाती है।[१०८] क्षत्रिय वीर माता गुर्जरी का महत्व उसके उच्च चरित्र गर्व, दृढ़ता, परिश्रम से प्रदीप्त सौन्दर्य में निहित है। यह अपने

राव नगराज की प्रसिद्धि तो मेवाड़ राजवंश के उत्कर्ष एवं लगातार होने वाले युद्धकाल में महत्वपूर्ण थी। किशनगढ़ में श्याम जी व जयपुर में अनेक सरदारों की प्रसिद्धि उनकी महत्वपूर्ण स्थिति को प्रकट करती है। शेखावाटी के प्रसिद्ध प्रसिद्ध ठिकानों में (सीकर, खेतड़ी, चिड़ावा, शाहपुरा, बिसाऊ, नुआ, पाटन आदि) गूजर जागीरदार और सरदार बहुत बड़ी संख्या में पाये जाते हैं। राजपूत सरदारों के अलावा पैरोंमें सोना पहनने का सम्मान राजस्थान में पहले गूजरों को ही था। राजपूत, जाट, अहीरों के साथ साथ गूजर भी राजवंशों के पालक पिता (Foster Father) धाऊ पाये जाते थे, जो समान रक्त वंश पर आधारित व्यवस्था के आधार पर थे। लम्दौरा एवं समथर राजवंश के अन्तिम काल में राजपूतों के साथ विवाह सम्बन्ध होने के अतिरिक्त पालक पिता (Foster Father) धाऊ राजपूत उच्च वंश के रहे हैं, जो वंश मर्यादा और शुद्ध रक्तवंश पर था। यह प्रथा अब समाप्त हो गई है। मालवे में भी यह प्रथा थी। गुर्जरों, राजपूतों, जाटों, अहीरों आदि में इस प्रथा का पाया जाना उनके एक संघ क्षत्रिय वर्ग का सूचक है। श्रृंखलाबद्ध घटनाएँ भी इस बात को प्रकट करती हैं कि कठिन आपत्तियों के समय यह जातियां एक संघमें बन्ध जाती थी किन्तु मुगल काल में कुछ ऐसी अवान्छनीय परिस्थिति पैदा होगई और अंग्रेजों के आने पर तो वे और भी अधिक दृढ़ होगई कि इन जातियों में एक गहरी खाई पैदा होती चली गई और अविवेकी लोगों ने इन्हें एक दूसरे से पृथक करने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

[१०८] बम्बई गजेटियर भाग ६ पृष्ठ ४६४

स्थान से च्युत होने वाली नहीं है।[१०९] ग्वालियर की मृगनयनी की दोनों सन्तान (राजे व वाले) ग्वालियर के गूजरघार में तंवर राजपूत व तंवर गूजरों में बराबर-बराबर विद्यमान हैं। भाटी वंश में रीलखे की कसानी गूजरी की सन्तान भटनेर (बुलन्दशहर) के भाटी वंश में इसी विशिष्टता को प्रदर्शित करती है। जयमन्ती रानी इडड़ देव सोलंकी राजपूत की लड़की गोठण गांव के गूजर पाच राव वीर पुरुष के साथ क्षत्रिय विवाह करती है।[११०] स्वेच्छा एवं आकर्षक रूप से अनेक इस प्रकार के सम्बन्ध इतिहास द्वारा पाये जाते हैं। दोनों की इच्छानुसार समान रूप से उच्च स्तर पर समानता के आधार पर विवाह सम्बन्धों में कोई रुकावट नहीं है, किन्तु क्षत्रिय की वैश्य पत्नी का गूजरों से कोई सम्बन्ध नहीं है और न किसी ऐसी परम्परा या रिवाज का पता आज तक पाया जाता है। भारत के इतिहास में जिस स्थिति में क्षत्रिय जाति में राजपूतों का महत्व है, उसी प्रतिष्ठा एवं उच्च स्थिति के साथ गूजर जाति का महत्वपूर्ण स्थान है। जब तक जातीय जीवन में कोई विशेष घटना घटित नहीं हुई, तब तक जाति का जीवन सामान्य स्थिति में गुजरा, किन्तु घटना क्रम से वे उत्कर्ष को प्राप्त करते हुये राज्य एवं साम्राज्यों के स्वामी बने और उनको इतिहास में महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त हुई, बाद का सामान्य जीवन राजनीतिक सत्ता के ह्रास काल में भी समुन्नत एवं सुसंस्कृत रहा। खानाबदोश, घुमक्कड़ कबीलों—जंगली जातियों का जीवन कितने दिन के लिये स्थायित्व धारण करता है? यह भारत तथा भारत के बाहर के बर्बर कबीलों के इतिहास से भली प्रकार प्रकट है। जितने वेग से वे सभ्य जातियों के सामने विनाश का दृश्य उपस्थित करते हुए आते हैं, उतने ही वेग से खत्म हो जाते हैं। उनकी दृढ़ शारीरिक शक्ति, संगठित व्यवस्था, वैभव की चकाचौंध में एक दम काफूर हो जाती है और वे स्वयं की सत्ता दूसरी सभ्य जातियों में विलीन कर देते हैं।

प्रसिद्ध दार्शनिक अबुजैद अब्दुर्रहमान-इब्न-मोहम्मद-इब्न खल्दून अलहद्रामी ने (१३३२-१४०६ ई०) इस स्थिति को निम्न रूप में वर्णन

१०९ श्याम परमार का गूजरी नोट यही पुस्तक पृष्ठ ३४

११० राजपूताने का इतिहास पृष्ठ १६०

किया है जिससे गूजरों की प्रारम्भ काल से आज तक की स्थिति से कोई तुलना नहीं हो सकती। "खानाबदोश समाज की अवस्था १६० वर्ष यानी ४०-४० वर्ष की चार पीढ़ियाँ होती हैं और स्थायी राज्य की उम्र १२० वर्ष यानी ४०-४० वर्ष की तीन पीढ़िया होती हैं। स्थायी राज्य की अवस्था की पहली पीढ़ी में समाज में शक्ति, सतर्कता और सक्रियता रहती है। दूसरी पीढ़ी से लोग आराम पसन्द हो जाते हैं और घुमक्कड जीवन के रूखेपन को भूल जाते हैं। तीसरी पीढ़ी में वह भोग विलास में इतने डूब जाते हैं कि उनके अंग शिथिल, स्फूर्ति नष्ट हो जाती है। थकावट घबराहट के साथ-साथ राज्य का विनाश एवं समाज विप्लव प्रारम्भ हो जाता है।"

गूजरों की इतिहास सम्बन्धी परम्परा इस बात को प्रकट करती है कि वे सभ्य सुसंस्कृत आर्य जाति के प्रतिनिधि हैं, उन्होंने आदर्श गाँव प्रजातन्त्र एवं राजतन्त्र शैली पर निर्माण किये,[१११] जिनकी सुन्दर व्यवस्था स्वयं उनके महत्त्व को प्रकट करती है। प्राचीन-मध्य कालीन भारतीय इतिहास में वे सुन्दर नगर, भवन निर्माण, वास्तु निर्माण कला में सबसे अधिक महत्वपूर्ण भाग लेने वाले थे।[११२] ऐसी महत्वपूर्ण नागरिक जाति को घुमक्कड कबीले की मानना उनके प्रति अन्याय है

[१११] विलेज कम्यूनिटी इन इंडिया (बडन पावल) पृष्ठ २१५, २४२ २६७

[११२] बम्बई गजटियर भाग ९ पृष्ठ ४६६

"That the Gurjjars were great builders the ruins of Marwar and north Gujrat bear witness In the old Gujar capital of Bhinmal *the memory remains of the special classes of builders*—the Sompuras who are also associated with the lake at Pushkar and with the temple at Somnath and the Devala or Deora Rajputs (a branch of Chohans) whose names are punningly derived from the great Bhinmal temple to the Sun or Jag Swami of which they have the credit of building Of the value of the Gujars—a *cultivator—no addition is required to the proof given above* that the best husbandmen of western India the Leva and Khadwa Kunbi and Patidar of north Gujarat are Gujar"

और असलियत से अपनी दृष्टि ओफल करता है। सच तो यह है कि जातियां उन्नति के बाद अवनति की ओर गिरती हैं और फिर गिर कर उठती हैं। कवि गोल्ड स्मिथ ने यही भावना एक स्थान पर प्रगट की है कि 'हमारा गौरव कभी न गिरने में नहीं बल्कि गिर कर उठने में है'। गूजरों के इतिहास के प्रारम्भ से लेकर आज तक समय का यह नियमित क्रम हमारे साथ चल रहा है। आज भारतीय स्वतन्त्रता की ऊषा किरण के साथ-साथ उन्होंने शिक्षा प्राप्त करके महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त करने का उपक्रम प्रारम्भ कर दिया है, यह उनकी वर्तमान स्थिति से स्पष्ट है। कृषि, पशु पालन, व्यापार, सैनिक वृत्ति, राज स्थापन और राज सचालन में महत्वपूर्ण भाग, यह सब समाज को उन्नत एवं सम्मानित रखने में सबसे ऊंचे व्यवसाय हैं। गूजरों में इनका महत्व प्राचीन काल से ही नहीं अपितु इनकी वर्तमान स्थिति से भी स्पष्ट है।[११२]

---

[११२] देशव्यापी अन्न सकट की स्थिति में गूजरो ने महत्वपूर्ण योग दिया। कृषियोग्य उत्तम जमीनो में तो उनके फार्म उत्तर प्रदेश, पजाब, भरतपुर (राजपूताना), मालवा, खानदेश, मध्य भारत, मध्य प्रदेश में पहले ही से थे, लेकिन इस काल में हिज हाइनेस समथर ने बजड जमीन— जो सैकडो वर्षों से अनुपयुक्त रामथर में पडी हुई थी—में १००० एकड का फार्म बनाया, जिसमें कृषि के आधुनिकतम वैज्ञानिक यन्त्रो के उपयोग द्वारा प्रतिवर्ष हजारो मन अन्न पदा होता है और सिंचाई की उत्तम व्यवस्था है। जमींदारी उन्मूलन के बाद थावई के ठा० शकर सिंह, सिकरी बुजुर्ग के कु० सबदलसिंह, रुडकी चान्दपुर (होशयारपुर) के अवकाश प्राप्त सिविल सर्विस के उच्च अधिकारी सरदार सन्तसिंह बी० ए० ने ग्वालियर में, भुण्डलाने के प्रधान प्रतापसिंह ने ठोई में, चौ० भरतसिंह भजरेडा ने गगा के खादर में, हकीम पतरामसिंह वहेडी व उनके पुत्र पोनो ने अपने इलाके में, चौ० नारायण सिंह बीनडा व सिसोना के प्रधान लालसिंह के परिवार ने गगा के खादर में तथा अनेक जमीदारो ने गगा जमुना के खादर में बजड जमीनो को उपजाऊ बनाया। बम्बई लेजिस्लेटिव असेम्बली के वर्तमान मेम्बर डा० विश्राम हरि पाटील एम० एस० सी०, पी० एच० डी० (कृषि विशेषज्ञ अमेरिका) ने, जो वहा की प्रसिद्ध यूनिवर्सिटी ओहियो मे कृषि लेक्चरार थे, अब बम्बई गवर्नमेंट

काश्मीर के तथा अन्य पिछड़े अनुन्नत स्थानों के घुमक्कड़ कबीलों के रूप में बसे हुए गूजरों को अपने प्राचीन इतिहास व वर्तमान इद

द्वारा पटेल वार्ड (शहादा) नर्वदा ताप्ति की वादी में बहुत बड़े क्षेत्रफल की वजड़, अनुपयुक्त जमीन को उपजाऊ बनाने का श्रेय प्राप्त किया है। कोटला मुबारिकपुर के प्रसिद्ध गूजर धनपति चौधरी उदयचन्द बंसला ने जिस प्रकार सुभाष मारकिट (लोधी कोलोनी से मिली हुई) बसा कर नगर निर्माणशैली की गूजरों की प्राचीन परम्परा को जीवित किया था, उसी प्रकार अब 'अधिक अन्न उपजाओ' योजना में योग देकर फरीदाबाद तथा वल्लभगढ़ में कृषि क्षेत्र विस्तृत किया। वहां की कम्यूनिटी प्रोजेक्ट ऐरिया में उनका काम विशेष महत्व रखता है, जिसकी अमेरिका, इंग्लैंड, ईराक, ईरान मलाया, आस्ट्रेलिया, आर्मेनिया आदि के राजदूत तथा अन्य मुख्य व्यक्तियों ने भी मुक्तकंठ से प्रशंसा की है। इस सम्बन्ध में अनेक सम्मितियां बड़ी महत्वपूर्ण हैं, जिनमें चेयरमैन वाई० ए० सी० अमरिका, राजदूत आरमेनिया, ईराक तथा ईरान, यूनाइटिड किंगडम के हाई कमिश्नर न्यूयार्क सिटी के चेयरमैन, मलाया यूनिवर्सीटी के चांसलर, यूनाइटिड नेशन कम्यूनिटी डवलपमेंट के सलाहकार (A Shawly) की सम्मितियां बड़ी महत्वपूर्ण हैं और उन्होंने बताया है कि "बहुत समय से बंजर पड़ी जमीन को उपजाऊ बनाकर सिंचाई की उत्तम व्यवस्था करके चौ० उदयचन्द ने कृषि सम्बन्धी उत्तम परीक्षण किया और भारत की 'अधिक अन्न उपजाओ' समस्या में बड़ा योग दिया है। उनका आदर्श अनुकरणीय है और भारत की बहुत बड़ी सेवा है।" पंजाब, मालवा राजपूताने में गुर्जर बड़े-बड़े पशुपति हैं। गाय, बैल, भैंस उनके पास एक-एक परिवार में हजारों की संख्या में हैं। मिर्जापुर के ठा० देव प्रतापसिंह मतवार, जो नागड़ी सरदार दयाराम गावड़ी के वंशज हैं, के पास ३००० गाय और १००० से ऊपर भैंस हर समय उनकी पशुशाला में रहती हैं। निमाड़, होशंगाबाद में ५००-५०० हल की खेती करने वाले अनेक गूजर सरदार हैं। रन्हाई के पटेल ठाकुरलाल नन्हेलाल, नवनपुरा के पटेल लक्ष्मीनारायण सेवाराम, लोनी के चौधरी सीताराम तोताराम सेठ, पचलावड़ा तथा मलचा के पटेल मेहरबानसिंह सोढल पुर के पटेल बल्लभ कुमार जमाड़ा के पटेल जसवन्तसिंह, पटेल कोमलसिंह, सेठ

स्थिति का पता है। आज के प्रजातन्त्र युग में वे काश्मीर में अपनी प्राचीन उसी स्थिति को लाने का विचार और कार्यक्रम बना रहे हैं, जब कि उस देश की राजनीति में उनका गौरवपूर्ण भाग था। राजी से

खेमचन्द रामदयाल, चम्होरी के पटेल वीरतसिंह, जेमुघा के पटेल मगलसिंह, खैरजी के पटेल लक्ष्मणसिंह, बोरतलाई के महन्त गया प्रसाद, मोकडी (खानदेश) के ठा० लक्ष्मणसिंह बडे ऊचे दर्जे के खेती करने वाले हैं। मेरठ कमिश्नरी के गूजर तो कृषि में अपना सानी ही नहीं रखते।

भारतीय स्वतन्त्रता की ऊषा किरण के साथ-साथ गुर्जर (गूजर) जाति में शिक्षा के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण क्रान्ति का सूत्रपात हो गया और जिन अंग्रेज विद्वानों ने उनके सम्बन्ध में स्वयं ऐसी स्थिति पैदा करके लिख दिया था कि शिक्षा और नौकरियों के प्रति उन्हें स्वाभाविक घृणा है और अशिक्षित रहने में वे गौरव समझते हैं, उन्हें एक करारा जवाब दे रहे हैं। उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों में लाखों रुपया व्यय करके उन्होंने अंग्रेज राज्य की भारत में समाप्ति के साथ-साथ तीन कालिज स्थापित किये। इसके अतिरिक्त अपने धन द्वारा उन्होंने कई हाई स्कूल, जूनियर हाई स्कूल माध्यमिक एवं प्रारम्भिक शालाएं प्रत्येक वाञ्छनीय क्षेत्र में, जहां राजकीय शिक्षा विभाग द्वारा स्थापित न हो सकी थी, खोली हैं। उच्च शिक्षा प्राप्त महानुभावों में डा० विश्राम हरि पाटिल एम० एस० सी०, पी० एच० डी०, एम० एल० ए०, पटेल वाडी, (खानदेश), डा० विश्वम्भर सिंह एम० ए० एल-एल० बी०, पी० एच० डी०, चौ० सगतसिंह एम० ए०, एल-एल० बी०, चौ० ओ३म् प्रकाश एम० ए०, एल-एल० बी०, चौ० फूलीचन्द एम० ए० सी० टी० सहारनपुर, चौ० हरद्वारी सिंह एम० ए०, एल-एल० बी० चिटहेडा, चौ० महाराजसिंह एम० ए०, एल-एल० बी० सलामतपुर, चौ० लेखराजसिंह एम० ए०, एल-एल० बी० ऐडवोकेट बुलन्दशहर, चौ० रणवीरसिंह एम० ए०, एल-एल० बी०, चीती, (बुलन्दशहर) चौ० होशयारसिंह एम० ए० एल-एल० बी० मोहब्बताबाद, कु० विश्वनाथ सिंह एम० ए०, एल-एल० बी०, साकिन (अवकाश प्राप्त डिस्ट्रिक्ट तथा सेशन जज), सरदार हरदयालसिंह एम० ए०, रुडकी चान्दपुर, कु० कर्णसिंह एम० ए० पिपलका, कु० हीरालाल कालूराम एम० ए० साहित्यरत्न

काश्मीर तक के प्रदेश पर गूजरों का राज्य था।[११४] भारत की महत्वपूर्ण प्रान्तीय आबादियों में आज भी उनकी गौरवपूर्ण स्थिति की बसावट व

करनौट, प्रो० नौनिहालसिंह एम० ए०, एल-एल० बी० सहोरनना रानी चौ० रघुवीरसिंह शास्त्री एम० ए० साहित्याचार्य दरयानवी प्रिन्सिपल हमरान गोपालराम पवार एम० ए० शास्त्री, प्रिन्सिपल चौ० चिरन्जीव सिंह भेंसला एम० ए० एल० टी० मवाना चौ० हरिश्चन्द्र सिंह एम० ए० एल-एल० बी० हरी मन्ढा, प्रिन्सिपल चौ० मुलतान सिंह एम० ए० एल० टी० रामपुर, बा० बशाव जी एम० ए० इन्दौर, प्रो० शंकर गनपत पाटील एम० ए० एल० एल० बी० इन्दौर, बा० किशनलाल जी एम० ए० एल एल० बी० (डिस्ट्रिक्ट व सशन्स जज) अलवर, कु० श्री भानसिंह एम० ए० एल-एल० बी० एम० एल० ए० भरतपुर कु० हनुमानसिंह रावल एम० ए० एल-एल० बी० अजमेर, कु० रामगोपाल वर्मा एम० ए० एल० एल० बी० कोटा कु० महेन्द्र कुमार एम० ए० एल० टी० उदयपुर आदि के अतिरिक्त सार्वजनिक क्षेत्र में खास दिलचस्पी लेन वाले, चौ० श्यामल सिंह व चौ० पीताम्बरसिंह बी० ए० एल-एल० बी० वकील मेरठ, चौधरी नारायणसिंह बी०ए० एल एल० बी० वकील मुजफ्फरनगर, चौ० नन्दराम मुख्तार सहारनपुर, चौ० कैलाशचन्द्र बी०ए० एल एल० बी० बुलन्दशहर, चौ० नारायणसिंह बी० ए० एल एल० बी० सीनियर वाइस चैयरमैन डि० बो० देहली मन्नपुर, कु० अमरसिंह बी०ए० एल एल०बी० वकील इन्दौर ठा० मोहनसिंह वकील इन्दौर, चौ० भगवसिंह वकील सहारनपुर, चौ० हैयालाल बी० ए०, एल एल बी० वकील गुडगावा, नत्थूनारायण पाटील बी०ए० एल एल०बी० एडवोकेट जलगाव कु० तपसीराम बी०ए० एल एल० बी० वकील मेरठ, चौ० माधवसिंह बी० ए० एल एल० बी० वकील रुडकी कुंवर बलरामसिंह बी० ए० एल एल० बी० सीलमपुर हैं।

इसके अतिरिक्त सरकारी उच्च सर्विस में कैपटिन चौ० कृष्ण राम बी० एस सी० कलक्टर इनकमटैक्स अम्बाला, चौ० रघुवीरसिंह बी० ए० एल एल० बी० तहसीलदार पट्टी कल्याणा कु० जगपालसिंह बी० एस सी० इन्जीनियर चण्डीगढ, चौधरी तिलकराम शर्मा डिप्टी हैड मिनिस्ट्रेटिव आफीसर नई देहली, चौ० जसवन्तसिंह बी० ए० देहली स्टेट एक्साइज इन्सपक्टर, चौ० मेघराजसिंह इन्जीनियर सहारनपुर,

राजनीतिक जागरण काल उनके असाधारण महत्व को प्रकट करता है। मौलिक रूप से भारत की किसी भी श्रेष्ठ जाति से उनकी स्थिति अपनी अपनी आबादियों से कम नहीं है। वास्तव में यथार्थ दृष्टिकोण को समझे बिना कल्पना के आधार पर अनुमान को स्थिर करने से भयानक अनर्थ उत्पन्न हो जाता है। किसी भी जाति के इतिहास सम्बन्धी ज्ञान के लिये जातीय सम्पर्क में आना बड़ा आवश्यक है। प्रजातन्त्र से पूर्व ये राज्यों के स्वामी, भूमिपति, ताल्लुकेदार, जमींदार, उत्कृष्ट सैनिक, कृषक पशुपालक रूप में देश काल की स्थिति के अनुकूल रहे और आज के प्रजातन्त्र में ये आदर्श राजनीति के प्रतिनिधि, बड़े-बड़े भूमिधर, उच्च सैनिक, कृषि सम्बन्धी विशेष योग्यता वाले पशुधन के सघन बड़े स्वामी एवं प्रत्येक अनुकूल दिशा में विकास की ओर झुके हुए हैं। नवीन जनयुग

चौ० सूरतसिंह सेक्रेटरी जिला बोर्ड सहारनपुर, चौ० सारन्तसिंह बी० ए० सेक्रेटरी जिला बोर्ड गुड़गावा, चकमी कु० गजपतसिंह सेक्रेटरी नगर पालिका भरतपुर, कु० अमरसिंह बी० ए० पुलिस रिजर्व लाइन्स इन्सपेक्टर देहरादून, चौ० केशवचन्द्र बी० ए० डिप्टी कलेक्टर मुरादाबाद, चौ० रामनारायण सिंह बी० ए० डिप्टी कलक्टर सुलतानपुर, प्रधान न्यपाल सिंह बी० एस सी०, एल एल० बी० जिला कृषि नियोजन अधिकारी मुजफ्फरनगर चौ० रघुवीरसिंह इन्सपेक्टर (सर्किल) पुलिस सलामतपुर, चौ० गजराजसिंह तहसीलदार सहोजना रानी पटेल सीताराम भीकाराम गुर्जर बी० सी० एस० सिटी मजिस्ट्रेट पूना डा० गिरवरसिंह बी० ए० एल एल० बी० डिप्टी मजिस्ट्रेट नौगाँव (विन्ध्य प्रदेश) चौ० मगतसिंह पवार बी० ए०, एल एल० बी० डिप्टी सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस फतहगढ़ आदि महानुभाव हैं।

१८५७ ई० के बाद सरकार की ओर से नौकरियों में प्रोत्साहन न मिलने और शिक्षा में सरकारी विभाग द्वारा घोर उपेक्षा के बावजूद भी शनै शनै सिर्फ अपने बल पर बिना किसी रियायत व बाहरी सहायता के युवक दिन प्रति दिन नौकरियों में विकासोन्मुख हैं और बाद जो सर्विसों में—भारत भर में हजारों युवक पहुच चुके हैं। राजपूताने के सम्बन्ध में इसी पुस्तक का नोट पृष्ठ ३८१ ३८२, ३८३ देखिये।

३११ राज तरंगणी जि० ५ पृष्ठ १४६–५५

की जागृति उनके देहातों व नगरों में है। आज भी इनके द्वारा नगर और गांव बसकर कृषि क्षेत्रों का विस्तार हो रहा है। शहरों देहातों में असाधारण रूप से विकास की ओर अग्रसर हैं। 'अधिक अन्न उपजाओ' आन्दोलन में गूजरों का जबरदस्त हाथ रहा है। पशुधन भारत का सबसे बड़ा धन है। घी और दूध इस देश की महान सम्पदा है। उसका गौरव गूजरों को विशेष है। विभाजन के बाद कांग्रेसी नेताओं का जब हिन्दू मुसलिम झगड़े बन्द होने का स्वप्न धूल में मिलने लगा और गांधी जी ने इसके लिये अपनी जान की बाजी लगादी, तो गूजरों ने अपने नेता महान आत्मा का समर्थन कार्य रूप में परिणित किया यह हम पीछे लिख चुके हैं। १९४७ ई० का लूटमार उपद्रव में व्यसन-प्रसिद्ध किया जाने वाला गूजरों का इलाका किस प्रकार गांधीवाद के अनुशासन में रहा और अपने नेता सरदार पटेल की आवाज पर उन्होंने शान्ति स्थापना की और अल्पमत वालों को संरक्षण दिया, यह उनके अनुशासन और नागरिक जीवन का उज्जवल प्रमाण है।

गुजरात के लेवा पाटीदार गुर्जर सरदार वल्लभ भाई पटेल उप प्रधान व गृहमन्त्री भारत सरकार ने देशी राज्यों का एकीकरण करते हुये, जो यश और अपूर्व सफलता जनवरी १९४८ ई० व जनवरी १९५० ई० के भीतर प्राप्त की, वह बड़ी महत्वपूर्ण है और शताब्दियों का स्वेच्छाचारी शासन हटाकर भारतीय लोकतन्त्र की महान विजय का परिचय देना साधारण बात नहीं है। देश की आन्तरिक व्यवस्था को सुधारना उनका ही काम था।

अनेक कठिनाइयों को पार करके हमारे देश में अब २६ जनवरी १९५० ई० से पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य है। गवर्नर जनरल के शासन के स्थान पर गणतन्त्र राज्य स्थापित हो चुका है और भारतीय गणतन्त्र के प्रथम राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद द्वारा निम्न घोषणा पढ़ी जाने के बाद देश के प्रति हमारा अनुशासन सम्बन्धी महान उत्तर-दायित्व और भी बढ़ गया है—

"भारत की जनता ने भारत को पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोक-तन्त्रात्मक गणराज्य बनाने के सत्संकल्प के अनुसार भारतीय संविधान परिषद् में २६ नवम्बर १९४९ को संविधान अंगीकृत अधिनियमित और आत्मार्जित किया।"

"उक्त संविधान द्वारा यह घोषित किया गया है कि भारत अब तक के गवर्नरों द्वारा शासित प्रान्तों, भारतीय राज्यों और चीफ कमिश्नरों के प्रान्तों वाले देश के स्थान पर राज्यों का संघ होगा।"

"यह निश्चित हुआ है कि १६५० ई० की इस २६ जनवरी से यह संविधान कार्यान्वित होगा।" "अतः यह घोषित किया जाता है कि १६५० ई० की २६ जनवरी से इस प्रकार संघबद्ध भारत पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य होगा और उक्त संविधान के अनुसार राज्यसंघ और इसके अङ्गभूत राज्य अपने अधिकारों का प्रयोग, सरकार के दायित्व का निर्वाह और शासन सम्बन्धी कार्यों का संचालन करेंगे।"

(२१)

गुर्जरों (गूजरों) को गर्व है कि उनके द्वारा किये गये स्वतन्त्रता सम्बन्धी ८०० वर्ष के आन्दोलनों के परिणाम स्वरूप भारत के महत्व पूर्ण नेताओं के प्रयत्न से और विभिन्न जाति तथा वर्गों के सहयोग एवं त्याग व बलिदान से 'स्वतन्त्र भारत' यह महत्वपूर्ण पद संसार में हमारे देश को प्राप्त हुआ है। गुर्जर देश के लिये प्रत्येक बलिदान करने में प्रयत्न वान हैं। काश्मीर में पाकिस्तानी आक्रमण के समय, जो कबायली और पाकिस्तानी फौजों की लूटमार जारी थी, उसे रोकने में भारतीय सेनाओं ने महत्वपूर्ण काम किया। विभाजन के बाद गूजरों का सेना में महत्वपूर्ण अंश राजपूत रेजिमेंट में आगया और गूजर सरहदी कबीलों की लड़ाई में विशेष प्रसिद्धि आठ पंजाब रेजिमेंट में रहते हुए प्राप्त कर चुके थे। ७ पंजाब रेजिमेंट की मुख्य-मुख्य सभी बटेलियन युद्ध मोर्चे पर काश्मीर गई और गूजर सैनिक एवं सरदारों ने अपनी योग्यता से सबको पुनः प्रभावित कर दिया। जोजिला से आगे लेह लद्दाख की ओर जाते हुए गूजर नौजवानों ने बिटकुन्डी की पहाड़ी को फतह किया, जहां एक बटालियन की कमान लेफ्टिनेन्ट कर्नल गिरधारी सिंह एम० सी० (बार) और गूजर कम्पनी की कमान केप्टिन थानसिंह व सूबेदार अभयराम के हाथ में थी। इसके अतिरिक्त गूजर नौजवानों ने भिम्बर, जड़ी, झङ्गर के मोर्चों पर महत्वपूर्ण काम किया। अपर बटाला की ओर चीता कालम के रूप में उनका काम बड़ा महत्वपूर्ण था। लेफ्टिनेन्ट

कर्नल गिरधारी सिंह एम० सी० (बार) को इस काश्मीर युद्ध में अनेक बार अपने अनुशासन पूर्ण नेतृत्व के कारण बड़ी सफलता प्राप्त हुई। ऊंटों, खच्चरों पर लूट का सामान भगाई हुई औरतों के झुन्ड व झुन्ड लेजाते हुए अनेक कबायली काफिलों का उन्होंने सफाया कर दिया और सामान व महिलाओं को बचाकर सम्मान प्राप्त किया। ऐसा ही एक महत्वपूर्ण मोर्चा चौरढकी के पास कबायली और पाकिस्तानी सेनाओं का तोड़ा गया, जिससे काश्मीर पर हमला करने वालों के हौसले पस्त होगये। काश्मीर युद्ध में आपको वीर चक्र व नकद इनाम प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त महत्वपूर्ण वीरता, शौर्य एवं पराक्रम प्रदर्शित करने के कारण काश्मीर में युद्ध के अवसर पर हवलदार दयाराम को महावीर चक्र व जमादार वासुदेव सिंह, जमादार जमनाराम को वीर चक्र प्राप्त हुए और अनेक युद्ध सम्बन्धी मेडिल भी वितरण हुए। काश्मीर के कारण फिर स्वतन्त्र भारत में गूजर सैनिक सरदारों का नाम चमक उठा। लेफ्टिनेन्ट कर्नल गिरधारी सिंह वीर चक्र एम०सी० (बार) का अनुशासन, साहस, देश प्रेम व नेतृत्व बहुत ऊंचा है। राजपूत रेजिमेंट के बाद आप बिहार रेजिमेंट और सिक्ख रेजिमेंट की ट्रेनिंग बटेलियन के कमान्डिंग आफिसर रहे। बिहार रेजिमेंट की आपके कार्यकाल में बहुत उन्नति हुई, जिसकी प्रशंसा समय समय पर कमान्डर इन चीफ महोदय तथा बिग्रेडियर महोदय ने तो की ही, साथ ही माननीय जवाहर लाल नेहरू प्रधान मन्त्री भारत सरकार एवं माननीय गवर्नर महोदय तथा प्रधान मन्त्री बिहार सरकार ने भी की। सैनिक दृष्टिकोण से राजपूताने के जगरौटी के इलाके को तो पहले ही से प्रसिद्धि प्राप्त है किन्तु गुड़गांव, देहली, बुलन्दशहर, मेरठ, भरतपुर टौंक, ग्वालियर, धौलपुर, मथुरा करनाल, हिसार, जीन्द, कोटा, अलवर, पटियाला नाभा, रोहतक और होशियारपुर आदि स्थानों के गूजरों ने महत्वपूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त की है। तिगाव, सेहजा आदि ग्रामों की प्रसिद्धि सेना में विशेष है। तिगाव के रिसलदार राममहाय सिंह सेना में ईस्ट इन्डिया कम्पनी के जमाने में सबसे पुराने सरदारों में थे। यहीं के नागड़ी घराने के एक शिक्षित युवक ने देहरादून मिलिटरी ऐकेडमी में सबसे प्रथम महत्वपूर्ण कमीशन प्राप्त किया था, जो अब कर्नल एच० सी० नागर (हुमचन्द्र नागड़ी) के नाम

मे प्रसिद्ध है। त्रिलोच रेजिमेंट और बाद मे इन्डियन आर्टलरी की कमान्ड सम्भाल कर उन्होंने ऊंचे दर्जे की प्रसिद्धि प्राप्त की है। सेना मे उनका अनुशासन बहुत महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त उच्च कमीशन प्राप्त युवकों मे मेजर लायकरामसिंह नागड़ी बैदपुरा (बुलन्दशहर), कप्तान धानसिंह आई० डी०एस०एम०. आई०ओ०एम०, खेड़ला गुड़गांव, केपटिन महबूबसिंह (नागडी) दादूपुर (बुलन्दशहर), केप्टिन डी०सी०एम० प्रताप लालपुर (मेरठ), केपटिन मंगनसिंह चली (मेरठ), केपटिन कर्मसिंह दूधला (सहारनपुर), केपटिन सुल्तानसिंह कौड़क (करनाल) तथा लेफ्टिनेन्ट भगत सिंह गाजीपुर (देहली) धौलपुर आदि उच्च सैनिक अफसरों का सेना मे विशेष महत्व है। वर्तमान सेना मे सैनिकों के अनुपात से सूबेदार मेजर, सूबेदार तथा जमादार, रिसलदार मेजर, रिसलदार आदि पद के आफिसर काफी हैं। अलङ्कार प्राप्त (ओ० बी० आई० मेडिल प्राप्त सूबेदार मेजर केपटिन रामलाल, के० धर्मसिंह, के०भीकाराम, के० लोटाराम) तथा अन्य सैनिकों की संख्या एव पी० ए० सी० आर० ए० सी० तथा सी०आर०पी० मे गूजर काफी संख्या मे हैं, जहां सैनिकों की संख्या के अनुपात से आफिसर होते हैं।

स्वतन्त्रता के प्रथम महायुद्ध मे जब स्वतन्त्रता के युद्धप्रिय गूजरों की जमीदारी राजभक्त परिवारों को दे दी गई, तो उनकी सारी शक्ति इस बात में लगी रही कि वे अपनी महत्वपूर्ण जमींदारी के स्थान को पुनः प्राप्त करें और उन्होंने बड़ी बड़ी कीमत देकर मथुरा, गुड़गांव, बुलन्दशहर, देहली, मेरठ, सहारनपुर मे जमींदारी—भारत स्वतन्त्र होने के समय तक जमींदारी उन्मूलन से पूर्व—खरीदकर अपनी जाति मे भूम्याधिकार ही मान का कारण है, इस महत्व को सार्थक किया। थानना, मसूरी, रुकीनर एव पलवल के टप्पल के इलाकों की तथा राजभक्त सैयद, शेख, राजपूत, जाट परिवारों के सैकड़ों गावों की जमींदारियों को उन्होंने खून पसीने की कमाई से पुन खरीद लिया। जमींदारी उन्मूलन के बाद भी सबसे प्रथम और सबसे अधिक बने हुए भूमिधरों के अधिकार दस गुना देकर उन्होंने प्राप्त किये। शिक्षा सम्बन्धी सुविधा के लिये चन्दा देकर उन्होंने छात्रावास व स्कूलों का जाल बिछा दिया। व्यापार, कृषि, नौकरी सभी क्षेत्रों में १८५७ ई० का जाति का बिगड़ा ढाँचा सुधर रहा है। जाति

क्रियावान है और आप्त वचनानुसार आगे बढ़ रही है—चल रही है। संघर्षशील जातियां प्रत्येक परिस्थिति पर विजय प्राप्त करती हैं। संकीर्ण जातिवाद से दूर केन्द्रीय गूजर महासभा तथा उसकी शाखा, सभाओं एवं उनके कार्यकर्ताओं द्वारा जाति को बहुत बल प्राप्त हुआ है।[111] यह गूजर इतिहास की प्राचीन काल से लेकर आज तक की संक्षिप्त रूप रेखा है, जो इनके इतिहास सम्बन्धी बहुत समय से छाये हुए अन्धकार को दूर कर प्रकाश का मार्ग प्रशस्त कर रही है।

असतो मा सद् गमय
तमसो मा ज्योतिर्गमय।

॥ इति शुभम् ॥

---

[111] गूजर क्षत्रिय महासभा का प्रारम्भिक क्षेत्र पंजाब व पश्चिमी उत्तर प्रदेश, देहली तथा राजपूताने के कुछ भाग तक सीमित था। इस समय इस सभा द्वारा प्रधान महाराज सिंह मुण्डलाना और उनके थोड़े से साथियों द्वारा जिनमें चौ० रामसिंह व चौ० छज्जूसिंह लीवरों, चौ० लेखराजसिंह पहांसू, चौ० फतेहसिंह बिनड़ा, चौ० मानसिंह कैराना, चौ० मुन्शीसिंह बलवा, चौ० मानसिंह दूधला, हकीम पतरामसिंह बदेड़ी, चौ० भिक्कूसिंह जैलदार इस्मायलपुर, चौ० अमृतसिंह जैलदार रसदरी, जैलदार मुंगासिंह, चौ० स्वरूपसिंह, चौ० टोडरसिंह व चौ० होशियार सिंह पट्टी कल्याणा, जैलदार राव भगवतसिंह व चौ० निहालसिंह मेवला महाराजपुर, चौ० दाताराम फुलवाड़ी जैलदार जीवन सहाय व जैलदार निरखाराम मखनपुर, चौ० लिक्खी सिंह व चौ० हीरासिंह पलवल, ठा० फतेहसिंह करकौली, पटेल भारमल छालड़ी, पटेल भीमराज अजमेर, ले० ठाकुर नवलसिंह नायकपुरा, चौ० वीरनारायणसिंह चीती, चौ० चेतरामसिंह कानूनगो ससौता, चौ० चन्दनसिंह पिपलका, चौ० चन्दनसिंह ढिकौली, चौ० भूरासिंह शरफपुर, चौ० लालसिंह सिसौना, चौ० नत्थूसिंह पाल, मुन्शी दौलतसिंह सलामतपुर, चौ० मूलराजसिंह, चौ० रणजीतसिंह, चौ० देशराजसिंह व चौ० सहीरामसिंह हंगावली,

राव साहिब चौ० आसाराम मुख्तार व आ० अ० कलेक्टर सहारनपुर, चौ० जयमल सिंह रामपुर, राव रोशनसिंह बगरा, ठा० हमीरसिंह बरहल, चौ० चौहलसिंह हायकी, चौ० मानसिंह सन्द्रावली, चौ० लज्जारामसिंह बिनडा चौ० कदमसिंह कन्डेला, सूबदार शिवचरनसिंह बेदपुरा, चौ० टीकासिंह अमरपुर, केप्टिन भैरोसिंह खेडला, केप्टिन गङ्गाराम मुरार, मुन्शी कदमसिंह गगोह, राव मानसिंह साहिब मुहलाना आदि महानुभाव मुख्य थे। गूजर गजट व गूजर हितकारी का प्रकाशित होना सैंकडों विद्यार्थियों को वजीफे देकर पढ़ाना, रामपुर थोपिया में स्कूल खुलवाना एवं फौजी भरती को प्रोत्साहन देना तथा सरकारी अधिकारी वर्ग की सहानुभूति प्राप्त करके जाति की दशा सुधारना और सरकारी नौकरियों के लिये प्रयत्न करना एवं आर्य समाज तथा देश की दूसरी धार्मिक संस्थाओं के सहयोग से जातीय सामाजिक जीवन में महत्वपूर्ण सुधार करना सभा के मुख्य काम थे। प्रधान महाराज सिंह जी के स्वर्गवास के पश्चात प्रधान भोपालसिंह (इनके ज्येष्ठ पुत्र) कार्य क्षेत्र में आये, उन्होंने शुद्धि (नव मुसलिम गूजरों को हिन्दू गूजरों में मिलाने के लिये) के तथा कांग्रेस के कामों की ओर जाति का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित किया। इस काल में चौ० मगनसिंह वकील चौ० हुक्मसिंह मुख्तार, चौ० सुलतान सिंह वर्मा एम० ए० एल० टी० (अब प्रिन्सिपल गूजर मेमोरियल कालिज रामपुर), चौ० रणजीत सिंह ज्ञानसिंह बिनडा, चौ० देवीसिंह बलवा, चौ० तेहरसिंह नाचौली प्रो० हेमराज गोपालराम एम० ए० (अब प्रिन्सिपल गूजर सरकार कालिज दादरी), मास्टर बिहारी सिंह बदरौला, चौ० मलखान सिंह अलीपुर चौ० सहीराम जैनपुर की जाति के लिये सेवा उल्लेखनीय रही। मालवा में मोवडी के ठाकुर लक्षमणसिंह ने इस समय में अपने इलाके में महत्वपूर्ण सभा सम्बन्धी काम प्रारम्भ करके मालवे के गूजरों का संगठन प्रारम्भ कर दिया और उत्तर भारत के अन्दर सभा की मन्दगति पड़ने पर चौ० मलखानसिंह राव बहादुर सरदार रघुवीरसिंह सी० आई० ई० भरतपुर (जो सभा के जन्म से ही सब से बड़े सहायक व प्रधान थे) कु० यतीन्द्र कुमार वर्मा तथा मालवे के सैंकडों मित्रों-साथियों की मदद से हजारों रुपया प्रतिवर्ष व्यय करके गूजर महासभा

का भारतव्यापी क्षेत्र विस्तृत किया। पिपरिया, नागदा, माचलपुर, मम्भालका बान्दी हुई आदि सुदूर स्थानों में सभा की मीटिंग हुई। संगठन, समाज सुधार, शिक्षा प्रचार की लहर भारत भर में व्याप्त होगई। जिले जिले में इस काल में महासभा की स्वतन्त्र व शाखा सभा तथा अन्य संस्थाएँ कायम हुईं। 'वीर गुर्जर' जाति का एक मासिक पत्र इन्हीं दिनों कु० यतीन्द्र कुमार वर्मा द्वारा प्रकाशित होना प्रारम्भ हुआ जो आज तक मेरठ में प्रकाशित हो रहा है।

चौ० उजालसिंह थिनडा प्र० मन्त्री, चौ० शादीराम चीती मास्टर हरबन्शसिंह दरयानगी ले० चौ० धीरजसिंह सलामतपुर, प्र० जयकरणसिंह पीरनगर चौ० प्रहलादसिंह पचलाखडा पटेल नन्दलाल मोढलपुर मा० राम रतनलाल हरसा पटेल निर्भयसिंह रन्हाई, महन्त मोहनदास खैरलाई, चौ० रघुराजसिंह नमाडा मगेश रभूता पाटील एम० एल० ए० शाहादा, ठा० मोहनसिंह वकील इन्दौर, पटेल अतरसिंह मालगुजार गलवा, डा० विश्रामहरि पाटील एम० एस-सी०, पी० एच० डी०, एम० एल० ए० पटेलवाडी ठाकुर नारायणसिंह अन्दाना मुरार, सरदार रामगोपाल सिंह धुकरावाली धु० रूपानसिंह पारसैन, पटेल गणेश खैरवाल धा० कन्हैयासिंह खिलचीपुर, धा० केशर रतलाम धाभाई किशनलाल किशन गढ सेठ मीनाराम तोताराम चौधरी लोनी, पटेल लक्ष्मणजी भोरदा ठाकुर अमरसिंह डावडी चौ० रामसहाय नागदा, पटेल जगतराम गाहँ आदि महानुभाव इनके समय में बडी हमदर्दी से जातिय कामों मे योग देते रहे। इसके बाद महासभा के प्रधान हिज हायनेस महाराजा राधा चरणसिंह समथर व जनरल सेक्रेटरी प्रधान प्रतापसिंह मुण्डलाना रहे। इस काल के बाद प्रत्येक गूजरों की अच्छी आबादी में स्कूल, कालिज छात्रावास खुलने प्रारम्भ होगये। विश्व विद्यालयों से प्रत्येक वर्ष सैंकडों स्नातक निकलने लगे। जलगांव (खानदेश) का समस्त टाँडे गूजर बोर्डिंग हाउस इससे पूर्व ही स्थापित हो चुका था। सहारनपुर, मुजफ्फरनगर शिक्षा प्रचारणी गूजर सभा की स्थापना द्वारा रामपुर गूजर एग्रीकल्चर कालिज व सन्दरावली में गूजर हाईस्कूल, मेरठ विद्या प्रचारणी सभा द्वारा मवाना में नवजीवन गूजर कालिज, बुलन्दशहर

में गूजर विद्या प्रचारणी सभा द्वारा दादरी में गूजर संस्कृत कालिज की स्थापना हुई, जिसमें शिक्षा का स्तर ऊंचा होता चला गया। टिमरनी (होशंगाबाद) में गूजर छात्रावास व वजीफे का व्यापक तरीका हरदा तहसील के गूजरों द्वारा चालू किया गया। चिरौडी में जो शिक्षा के सम्बन्ध में पिछड़ा इलाका था और जहां पर केप्टिन नेमचन्द ए० आर० ओ० ने प्रारम्भ में सेना की भरती सम्बन्धी तथा शिक्षा सम्बन्धी उन्नति में योग दिया था, प्रधान प्रेमसिंह चिरौडी, प्रधान बहादरसिंह डूगरपुर, प्रधान धनपाल सिंह राजपुर, प्रधान बाबूराम आनरेरी मजिस्ट्रेट भेडापुर प्रधान छुट्टनसिंह, प्र० हरनारायणसिंह, प्रधान दुन्दासिंह जावली तथा कमाने बैंसले, बैंसोये, मावई आदि गूजरों का समस्त गांवों के सामूहिक (खासकर सकलपुरा गांव) प्रयत्नों द्वारा गूजरों का किसान राष्ट्रीय हायर स्कूल स्थापित हुआ, जिसका परीक्षा परिणाम बोर्ड में प्रति वर्ष ईर्ष्या की वस्तु रहती है। यद्यपि इन गूजरों की शिक्षा संस्थाओं में इलाके के गणमान्य व्यक्ति तथा प्रमुख गांवों ने सामूहिक सहायता पूरी-पूरी दी किन्तु श्रीमती पियारी देवी रामपुर ने ७०० बीघा नहरी जमीन व श्रीमती सीता देवी चौधरानी टिमली स्टेट व श्रीमती कुंवरानी गिरधरकौर (धर्मपत्नी कुंवर कर्णसिंह, बलवा व सुपुत्री रा० ब० सरदार रघुवीरसिंह सी० आई० ई० जागीरदार भरतपुर) ने ३०००-३००० (तीन-तीन हजार) रुपये रामपुर गूजर कालिज को देकर और श्रीमती भूरोदेवी गुलिस्ता ने ५० बीघे जमीन व ५०००) रुपया दादरी के गूजर कालिज को देकर गूजर महिलाओं के विशेष महत्व को प्रकट किया। ग्वालियर, मालवा, अजमेर, होशंगाबाद, हिसार, देहली (नवयुवक सभा) भरतपुर, होशयारपुर की गूजर सभाओं द्वारा जाति में महत्वपूर्ण सुधार व नवचेतना पैदा हो रही है। खानदेश (बम्बई) में नत्थू नारायण पाटील जलगांव, बभूता गुलाल पाटील शहादा, नाना किशन बड गुर्जर, शंकर शालू सेठ बड गुर्जर अध्यक्ष वड गुर्जर शिक्षण प्रचारक संस्था धूलिया व मनवेल, शहादा, शिर्डी, बाघोदा, गेनपुर, दैठाना, कोलम्बी, लोणा, पाथरी आदि गांवों के मुख्य व्यक्तियों द्वारा महत्वपूर्ण संगठन व इतिहास निर्माण के कार्य हुये।

वीर गुर्जर कार्यालय का दूसरा नवीनतम प्रकाशन

गूजर इतिहास (दूसरा खन्ड)

गूजरों की खोज तथा गूजर कौन कैसे ?

गूजर जाति का राजनीतिक, सांस्कृतिक इतिहास-वर्तमान समय तक का-आपके हाथों में है। इस पुस्तक के छपने के बाद भी गूजर इतिहास के सम्बन्ध में हजारों पृष्ठों की सामग्री शेष है, उसमें गूजर जाति का रहस्यमय गौरवपूर्ण ऐतिहासिक वृतान्त छिपा हुआ है। भारतीय एवं विदेशी विद्वानों ने जितना इस जाति के सम्बन्ध में अन्वेषण एवं अनुशीलन किया है, उतना किसी भी अन्य जाति के सम्बन्ध में नहीं किया। दूसरे भाग में ४०० पृष्ठों में गूजर जाति के १४१८ वंश-गोत्रों का वर्णन इतिहास उनकी अलग-अलग बसावट के स्थानों का महत्व एवं जनसंख्या के साथ ऐतिहासिक वृतान्त होगा। भारतीय वीर कर्मी क्षत्रिय जातियों को (गुर्जर-राजपूत) जहां विदेशी विद्वानों ने तथा उन्हीं का अनुसरण करते हुए भारतीय प्रसिद्ध प्रसिद्ध विद्वानों ने, हूण, शक, सीथियन, हूण कबीलों की देन बनाया है, वहां पौराणिक विद्वानों ने कलिकाल में ब्राह्मण, शूद्र दो ही जातियों का अस्तित्व मानकर गूजरों, राजपूतों तथा अन्य क्षत्रिय जातियों को मिश्रित एवं शूद्र जाति सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। इस पुस्तक में इन विद्वानों के सभी काल्पनिक सिद्धान्तों का प्रमाणपूर्वक खंडन होगा, जिससे इतिहास में क्षत्रिय जातियों पर छाये हुए अन्धकार को दूर करने का प्रयत्न किया जायगा। गूजरों के आचार, विचार, भाषा, वैभव, सामाजिक आर्थिक, राजनीतिक, वीरतामय जीवन का विकास और उनकी मधुर स्मृति का वर्णन होगा। गूजर जाति के सम्बन्ध में महत्व पूर्ण शिलालेख, ताम्रपत्रों का संग्रह होगा। जातीय इतिहास के सम्बन्ध में इस पुस्तक में आर्य जाति, भारत भूमि के साथ गुर्जर जाति का उसके विकास-उत्थान में क्या महत्व है ? यह सब विस्तार से दिया जायगा। जनवरी १९५५ के प्रारम्भ में यह प्रकाशित हो जायगा। मूल्य ६)

व्यवस्थापक —

"वीर गुर्जर" कार्यालय, मेरठ।